परिशिष्ट

गिरिराज किशोर



राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना

मूल्य : रु. 50.00

प्रथम संस्करण : 1984

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड,
8, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-110002

मुद्रक : रुचिका प्रिण्टर्स,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

आवरण : मूर्तिशिल्प : सुमिता चक्रवर्ती; संयोजन : चंचल

PARISHISHTA
Novel *by* Giriraj Kishor

सतत् रचनाशील व्यक्ति
ही जागता है।
वात्स्यायनजी की
रचनाशीलता के प्रति !

भूमिका

इस उपन्यास को लिखने की बात पिछले कई वर्षो से दिमाग मे पक रही थी। लेकिन जब तक मनुष्य स्वयं नही भोगता तब तक बता भी नही सकता। पिछले चार-पाँच वर्षों के दौरान 'अनुसूचित' होने की मानसिकता के प्रति संवेदना का निर्माण हो जाने पर ही कलम उठाने का साहस हुआ।

सच पूछिए तो जातियाँ अनुसूचित नही होती। मानसिकता···होती है। मानना और समझना, दोनो!

विकसित होते समाज मे अपेक्षाएँ और इच्छाएँ वेगवती नौकाएँ हो जाती है। वे सतह पर अबाध बहना चाहती हैं। ऐसे मे कुछ नौकाओ के पालों से हवा निकाल दी जाय तो वे यात्राएँ परिशिष्ट मात्र रह जाती हैं।

एक भ्रम हो सकता है कि जो कुछ इस उपन्यास मे है, वह सब वही पर घटित हुआ है जहाँ मैं हूँ। वास्तव मे एक ऐसी ही संस्था इस कथानक के विकास का माध्यम हो सकती थी जो उच्च और श्रेष्ठतम शिक्षा का केन्द्र हो। ऐसी सस्था कोई भी हो सकती थी। लेकिन मनुष्य के पास अपने ही घर या नाम के उपयोग का अधिकार होता है। सच पूछिए तो महान-से-महान सस्था मे भी यह सब घटित हो सकता है। मुख्य बात मानसिकता और उसका निरूपण है, स्थान नही। यह मानसिकता सामाजिक जीवन का अपरिहार्य अग हो गयी है, इसलिए हर किसी को प्रभावित करती है। यहाँ तक कि रोजमर्रा के सोच का अंग भी और एक स्थायी प्रतिक्रिया भी!

वैसे जैसे आई. आई. टी. नाम का उपयोग हुआ है वैसे ही पात्रो और स्थितियो का भी। कल्पना ही समझिए।

गिरिराज किशोर

एक

अनुकूल (राम) की कहानी उतनी ही बेमजा है, जितना अनुकूल (राम) स्वयं। न उसमें आनन्द ही है और न भव्यता। एकदम ठण्डी। उसी की कहानी नहीं, और भी उससे लगे-बँधे लोगों की भी। ऐसा भी नहीं कि दर्पण बनकर सबके चेहरों के सामने जा खड़ी होती हो और लोग अपने चेहरों को छुपाने लगते हों। उसमें अगर दर्पण है तो बस इतना ही, जितनी डामर की भीगी, सपाट और समतल सड़क। छायाएँ-ही-छायाएँ हिलती नजर आती है, शक्ल एको नहीं। हसीन-से-हसीन और खूबसूरत-से-खूबसूरत चेहरे भी अपनी वास्तविकता खोकर सड़क हो जाते हैं। दुख, दर्द और वेदना का भी इस कहानी में कोई स्थान नहीं। क्योंकि उन्होंने न इसे माँजा और न धो-पोछकर उजाला ही, भिनका भले ही दिया हो। जैसा आरम्भ, वैसा ही अन्त। प्रश्न उठेगा, तो ऐसी कहानी चुनी क्यों? चुनना तो रचनाकार के विवेकाधीन होता है। समझ लीजिए, उसने विवेक का ठीक इस्तेमाल नहीं किया। लेकिन एक बात है कि साहित्य में यह प्रश्न; प्रश्न नहीं होता, खल होता है। तुलसीदास ने इसी खल की वन्दना रज-रजकर की है। ऐसे प्रश्नों के जवाब में यही मुँह से निकलता है कि जितनी बालिश्त होगी उतना ही तो नापा और फाड़ा जायेगा। किसी दूसरे की बड़ी बालिश्त को देखकर उसके चक्कर में अपनी छोटी तो काट नहीं दी जायेगी। और फिर जिन्दगियाँ ही ऐसी बची हैं!

खैर, अनुकूल (राम) के पिता का नाम बावनराम। इसीलिए कोष्ठक में 'राम' लिखना पड़ा। बेटे के साथ पिता की पहचान जरूरी है। प्राचीन परम्परा है। आरम्भ में तो बेटा पिता में ही जाना जाता है। ऐसे विरले ही होते हैं जो बाद में बेटे के नाम से जाने जाने लगें। पिता ने अपनी दृष्टि से अपने बेटे का नाम अनुकूल रखा था। शुरू-शुरू में तो अनुकूल राम ही रहा। लेकिन आगे चलकर स्थितियों में बदलाव आ गया। कई बार आदमी ही नहीं, अर्थ की दृष्टि से नाम भी विरोधी प्रवृत्तियों के चगुल में फँस जाते हैं। उसी दलदल में नाम का पहिया घँसकर-घँसा ही रह जाता है। शुरू में अनुकूल के कोमल-कोमल पंख थे। परवाज भरने का अदम उत्साह था।

सदा उधर ही देखता था, जिस तरफ से गोल-गोल, लाल-लाल सूरज अपनी लाली बखेरता हुआ ऊपर आता है। लेकिन पूरब की आकांक्षा करता-करता पश्चिम की तरफ खिंचता चला गया। दिशा और गति परस्पर विरोधी हो गये। लेकिन वह भी उसे अपने लिए एक ललकार समझकर उससे लिपटता ही चला गया।

बावनराम एक फैक्ट्री में काम करते थे। आठवीं पास थे। खलासी भरती हुए थे। हालांकि काम कोई छोटा नहीं होता। लोग भी यही कहते हैं काम, काम है। न छोटा है और न बड़ा। सच पूछिए तो गुड़ की बात है। मिठास को वही नियन्त्रित करता है। जिसको मिल गया, वही मीठा हो गया। जिसको नहीं मिला, वह छिः। किसी उपन्यास के आरम्भ में ऐसी सभी बातें खल की भूमिका अदा करती हैं। पर खल को आप पूरी तरह काटकर भी तो नहीं चल सकते। खल तो हर पल पीछे लगा है। पिता के साथ भी रहा होगा और बेटे के साथ भी रहेगा। लेखक के अन्दर तो दोनों ही हैं।

बात यहाँ से शुरू होती है कि बावनराम ने अनुकूल को कभी बराबरी पर रखकर नहीं देखा। जब भी अनुकूल उनके सामने आया, उससे पहले उनकी आँखों के सामने शहर के बाहरवाली 'क्लिफ-टॉप' यानी पहाड़ी की चोटी आ गयी। किसी जमाने में उस पर गोरे जाकर कैम्प किया करते थे। देसी गये भी तो बस थोड़ी दूर जाकर लौट आये। कभी जवानी में बावनराम को भी, उस पर चढ़ने का शौक चर्राया था। घर के जानवर लेकर कुछ दूर तक चढ़े थे, फिर पिण्डलियाँ चढ़ आयी थीं। डर हावी होने लगा था। गोरे साहब ने देख लिया तो मारेगा। लौट पड़े थे। लेकिन अब वह पहाड़ी बावनराम की आँखों के सामने हर समय घूमती थी। वे धरती पर खड़े होते थे तो अनुकूल उन्हें उस पहाड़ी की चोटी पर वहीं खड़ा नजर आता था जहाँ गोरों का कैम्प लगा हुआ दिखा करता था। धीरे-धीरे वह उदय होते सूरज में बदल जाता था। लाल-लाल, गोल-गोल, बच्चा-सा। यह दृश्य ही उन्हें यह सोचने के लिए प्रेरित करने लगता था कि कहाँ उनका बेटा और कहाँ वे स्वयं! बस ईश्वर को उसे उनके घर जन्म देकर उन्हें उसका पिता होने का गौरव प्रदान करना था सो कर दिया। उन्हें तत्काल बाबा साहब भीमराव अम्बेदकर का ख्याल हो आता। वे भी इसी तरह एक अपने जैसे व्यक्ति के घर में ही जन्मे थे। हो सकता है बड़ा होकर, अनुकूल भी उन्हीं की तरह हम लोगों को रास्ता दिखाये।

बावनराम के लिए दिन-पर-दिन वह पहाड़ी की चोटी ऊँची होती गयी। उनकी नजरों में अनुकूल भी उसी के साथ-साथ ऊँचा उठता गया। कभी-कभी वह क्लिफ-टॉप इतना ऊपर उठ जाता था कि अनुकूल उस पर खड़ा अँगूठे-भर का लगने लगता था। शरीर के कटावों से उसे पहचाना जाता था। बावनराम सोचने लगते कि अरे, यह तो अपना अनुकूल ही है। फिर सोचते, ऊँचाई उतनी ही ठीक होनी है जहाँ पर खड़ा इन्सान पहचाना जा सके। ऐसी भी ऊँचाई ठीक नहीं कि ऊँचाई-ही-ऊँचाई नजर आये, उस पर खड़ा आदमी नदारद। यह सोचकर वे बच्चे की तरह हँस देते। आदमी का दिमाग भी कहाँ-कहाँ जाता है।

अनुकूल का जन्म देर से, दो लडकियो के बाद हुआ था। जिस दिन जन्म हुआ, उसी दिन बावनराम की पदोन्नति सुपरवाइजर के पद पर हुई थी। पदोन्नति के चलते बकाया भी मिला। जितना मिला उस सबको उन्होंने बेटे के जन्म की खुशी में और बिरादरी को जिमाने मे उडा दिया। बिरादरी पर उनकी दरिया-दिली की धाक जम गयी। बावनराम, बावन चौधरी के नाम से जाने जाने लगे। सोलह-सत्तरह साल बाद जब बावन चौधरी रिटायर हुए तो लोगो को वह दावत याद थी। उनके मुँह पर यही था, बाप तो बहुत बने पर बावन चौधरी जैसा बाप विरला ही होता है। जिमाया भी, साथ भी बाँधा। यह साबित कर दिया कि छोटी चिड़िया की और चीजें चाहे छोटी हो पर दिल बडा होता है। चोच के दाने तक को गाने की मस्ती में बखेर देती है। इसी का यह नतीजा था कि बावनराम जब रिटायर हुए तो प्रोविडेण्ट फण्ड के अलावा उनके पास कुछ नही बचा था। फण्ड भी क्या···जितना कमजोर तना उतनी कम पत्तियाँ। फण्ड के अतिरिक्त उनका अनुकूल था। हजार फण्ड उसी पर वारी जाते थे। अँधेरे आसमान पर एकमात्र टिमटिमाता तारा। सब ओर से हटकर उनकी नजर उसी पर टिक गयी थी। उन्ही की क्यो, समस्त सम्बन्धियों की। बहन-बहनोइयो की, माँ और मामा की। सबको वही अपना सकट-मोचन नजर आता था।

बावनराम चूंकि अपनी बेटियो को भी कम नही चाहते थे, इसलिए उन्होंने बहुत चाहा था कि वे भी पढ-लिख जायें। उनकी माँ ने रोना-धोना शुरू कर दिया कि पढी-लिखी बेटियो को ब्याहनेवाला कौन बैठा है, तुम्हारी बिरादरी मे। दो-चार जमात पढकर घर आ बैठी थी। घर बैठे-बैठे पन्द्रहियो साल गुजर गये थे। जब तक उनके ब्याह हुए घर ही बैठी रही। चूंकि बिरादरी मे पढ़े-लिखे ना के बराबर थे, इसलिए ब्याही भी ऐसे ही लड़कों से गयी थी। लेकिन बावनराम ने 'पिसन' से पहले दोनो दामादो को फैक्ट्री मे लगवा दिया था। सुख-चैन से रोटी मिलने का डौल हो गया था। दरअसल बावनराम फैक्ट्री के अन्दर एक छोटे-मोटे नेता का सम्मान प्राप्त व्यक्ति थे। फैक्ट्री मे काम करनेवाले अपने जैसे सभी लोग उनके झण्डे के नीचे थे। जो घर मे पुजता है, वह बाहर भी पूजा जाता है—यह बात बावनराम जैसे व्यक्ति के चरित्र ने सिद्ध कर दी थी। वे अपने आदमियो में बड़े माने जाते थे, इसलिए फैक्ट्रीवालो मे भी उनकी बात टलती नही थी। बावनराम अपने दामादों को तो काम दिलाने मे कामयाब हुए ही थे, अपनी बिरादरी और जान-पहचान के और भी कई लोगो को काम दिलाया था। लेकिन लोग दूसरे लोगो को काम दिलाने की बात भुलाकर दामादों को काम दिलाने की बात दिल मे सँजोकर रखते थे; और मौका मिलने पर कह भी देते थे। बावनराम ने अपने आप तो फैक्ट्री को सूँता सो सूँता अब अपने दामादो की जोडी सूँतने के लिए छोड आये।

अनुकूल बिरादरी और फैक्ट्री में काम करनेवाले लोगो के बच्चों मे पहला लडका था जो दसवीं पास कर चुका था। वह शुरू से अब तक लगातार पास होता चला आया था। लगातार पास होते चले जाना ही बिरादरी मे एक महत्त्व की बात थी। उसके साथ के और भी बहुत-से लड़को ने पढ़ना आरम्भ किया था। उन बच्चों में कुछ होशियार भी थे, लेकिन उनमे से अधिकतर चौथी से आगे नही बढ़ पाये थे।

एक-दो छठी जमात तक गये थे। वहाँ तक पहुँचते-पहुँचते उनके माँ-बाप का सब्र टूट गया था और उन्होंने छठी के बाद स्कूल से उठा लिया था। जितना पढ़ा था, वह काफी था। कलक्टर साहब थोड़े ही बनाना था। ज्यादातर बच्चो ने तो स्कूल का मुँह तक नही देखा था। दुकानो पर छोटे-मोटे काम करने की नौकरी कर ली थी। पाँच-दस रुपये महीना पा जाते थे। घरवालो को मदद हो जाती थी। जिनकी मदद बच्चो के कमाये पाँच-सात रुपये से हो जाती है, खुद-ब-खुद समझा जा सकता है कि वे घर कितने कच्चे होते हैं। लेकिन यह बावनराम का ही दम था कि इन अफ़ाओं-जफ़ाओं को अनुकूल से पूरी तरह दूर रखा था।

अनुकूल के आठवी क्लास तक पहुँचते-पहुँचते चेमेगोइयाँ चालू हो गयी थी। दरअसल आठवी तक तो बिरादरीवाले बाप और बेटे की तारीफ करते थे। बेटा तो जो है सो है, बाप भी धन्य है, जो बेटे को पढाये चला जा रहा है। सब हार मान जाते है, पर बावनराम है कि जूझे जा रहे हैं। उनकी नजरो मे बावनराम बिरादरी के लोगो से अलग थे और बेटा शेप बच्चो से। जैसा कि कहा गया है, यह स्थिति आठवी तक ही थी। अनुकूल उन लोगों को चेतन और चमकदार आँखोंवाला होनहार लगता था। उनकी मान्यता थी—दिमाग मे पड़ा अच्छर और पेट मे पड़ा दाना, आदमी का चेहरा-मोहरा बदलकर रख देता है। आठवी पास करते ही अनुकूल के रिश्ते आने लगे थे। बावनराम इन्हें लाख समझाते थे कि अभी से अनुकूल का ब्याह करना सारदा-एक्ट के विरुद्ध होगा। सब जेल काटेंगे। लोग कहते थे कि हमारा-तुम्हारा ब्याह भी तो सारदा-एक्ट के खिलाफ ही हुआ था। हम सब तो जेल के बाहर मस्ती मे घूम रहे हैं। दो-दो हाथ के बच्चे हैं। एक तो बड़ा भारी-भरकम रिश्ता था। उसकी झोक मे सारे घरवाले हिल गये थे। माँ, बहिनें और जीजा लोग तो लड़ाई-झगड़े पर उतारू हो गये थे। ऐसा बड़ा घर मिल रहा है। 'चौधरी रामपरसाद का नाम इहाँ ही नही छत्तीस गावो मे बजता है।' बावनराम ने उधर रुख ही नही मिल.या। बस, लोग समझ गये थे कि बावनराम की नजर किसी राजे-महाराजे पर है। 'जब चौधरी रामपरसाद की बेटी समझ नहीं आ रही तो म्हारी-थारी बेटी तो क्या आयेगी। चाम का ही बेटा तो पैदा किया, सोने-चाँदी का तो किया नही, जो ऐसे नखरे छांत रहा है।' चौधरी ने तो चाहे इतना बुरा ना भी माना हो पर औरो की आँखों मे अनुकूल की पढाई गड़ने लगी। ऐसी पढ़ाई किस काम की जो आदमी को आदमी न समझे। घर-घाट का ना रहे। अरे, बावन-राम तो रामपरसाद के पासग भी नही। यूँ चुटकी मसल दे तो दस बावनराम झड़ पड़ें। बेटा पढ रहा है, तो पढे। बाल भी गज-गज के रखवा दिये। शक्ल से लफगा लगता है, लफगा। हम लोगो के बूते ही तो नाख्वान्दा दामाद फैक्ट्री का माल चूस रहे हैं। जब उन्हें भी नौकरी दिलवा दी है, तो क्या दसवी पास बेटे को नही दिला सकता? चलो मान लिया, पिसन पा गया।...अब नही चलती। तो चौधरी की बिटिया से ब्याह देता। इतना कारोबार, चमड़े का थोक...जानवर की ऐसी पहचान कि क्या किसी को होगी। दिसावर तो दिसावर, विलायतो तक में रामपरसाद का चमड़ा बोलता है। उसे तो चाहिए ही था ऐसा दामाद जो कारोबार मे सहारा दे। लेकिन बावनराम ने कानो मे तेल डाल लिया था। इस तरह की बातें उनके लेखे

अनकही और अनसुनी रह जाती थी। बिरादरीवाले अनुकूल के वालो को तो कोसते ही थे ! दसवी फलांगने ही बावनराम ने अनुकूल को बुशर्ट, पैण्ट और पम्प जूता बनवा दिया था। उनके मुंह और बड़े हो गये थे —लौडे को क्रिस्तानी बना रहा है !

अपनी उम्र के हिसाब से अनुकूल का क़द लम्बा निकला था। काठी भी अच्छी थी। लोगो का कहना था, बाँभन-ठाकुर का-सा लगता है। आँखें बड़ी थी। बाल घुंघराले थे। बोलता भी धीरे-धीरे था। जवानी की गन्ध फूट रही थी। उसके घर-वालो को ही नही, औरो को भी सुंघायी पडने लगी थी। ज्यादा बोलने की तो आदत ही नही थी। *जितना बोलता भी था, वह भी दो-चार शब्दो मे ही निबटा देता था।* ज्यादातर मुस्कुराकर ही काम निकाल लेता था। किसी ने कुछ कहा तो मुस्कुरा दिया। किसी से कुछ कहना हुआ तो भी मुस्कुराकर। साथियो के मन मे उससे बात करने की बेचैनी वनी रहती थी। रिश्ते की भाभियाँ हँसी-मजाक करती थी — लाला, इतनी थाली परसी है कोई तो झूठी कर दो। या आँखों-आँखो से ही सब रस पी जाओगे। वह हँस देता—कह लीजिए, जो कहना चाहें। इससे आगे कुछ नही। हमउम्र लडकियाँ भी उसे हसरत से देखती थी। जब कभी वह अकेले मे बैठता तो इन बातो को लेकर सोच-विचार करता था। वे शक्लें और उनके द्वारा कही गयी बाते ज्यूं-की-त्यूं उसके सामने उभर आती थी। वह बुदबुदाता रहता था। आखिर कब हम इन सब बातो से उबरेंगे। हर वक्त फूहड बातें। फूहड बाते, फूहड कामो से ज्यादा फूहड़ लगती है। लेकिन साथ-ही-साथ वह यह भी सोचता कि ये लोग उसे कितना मानते हैं, प्यार करते हैं ! उनका वह निश्छल मानना उसके अन्दर उठते उस लावे को दवा देता। अपनेपन की वह तरल फुहार उसे भिगोने लगती। अकेला रहना तो उन लोगो के बीच जाकर बैठने का मन करता। उन लोगो के बीच होता तो वहाँ से भाग चलने के लिए तड़फड़ाने लगता।

कभी-कभी बावनराम उसे अपने पास बुलाते। वे उसकी तरफ मुक्त भाव से देखते। उन्हें यह सोचकर अच्छा लगता कि अनुकूल उनका बेटा है। अगर वह किसी और का होता तो वे कितने निर्धन और बेसहारा होते। अनुकूल को इस बात से थोड़ी परेशानी होती। औरो के पिता अपने बच्चों की तरफ न इस तरह देखते हैं और न उन्हे इतना महत्त्व ही देते हैं। बाबू क्यो देते है? यह बात उसे थोडा सजीदा और रजीदा कर देती। जब वे उसे भैया कहकर पुकारते तो उसके मुंह पर बात आकर रह जाती। बेटा भैया कैसे हो सकता है ! लेकिन वह सोचता कि हो सकता है उसकी बात से बाबू को तकलीफ पहुँचे। उसकी समझ में यह कभी नही आया कि मां-बाप बच्चे का नाम अपनी सुविधा के लिए रखते है या दुनिया-भर की सुविधा के लिए। वे भैया कहें और दूसरे नाम से पुकारें !

वे उससे मुग्ध भाव से कहते, "मैं चाहता हूँ कि तुम एक दिन अपनी कार से आकर घर के सामने उतरो···जिससे लोग यह तो देखें कि हम लोगों की सन्तान भी कारों और मोटरों में बैठकर चलने के लिए पैदा होती है। हम छोटे है, क्योकि हम हिम्मत हारकर, यह मान लेते हैं कि हम छोटे हैं और छोटे ही रहेंगे। अपने जमाने मे मैंने गांव का पुश्तैनी काम त्यागकर फैक्ट्री की नौकरी यही बताने के लिए की थी कि हम लोग गाँव के मरे हुए ढोरों की खिदमत के लिए ही नही बने, हम फैक्ट्रियों

मे भी काम कर सकते हैं ···"

बावनराम ने कभी किसी बड़े आदमी का कोई प्रवचन सुना था। उसका भी वे उद्धरण अपनी बातचीत मे अक्सर देते थे—आत्मज्ञान वो पारस पथरी है जो बिना भेदभाव के लोहे को सोना करती है। आत्मज्ञान बाँभन को भी सोना करता है और नीच को भी। वे अनुकूल को जात-पाँत की खन्दक से खीचकर समतल पर लाने की कोशिश मे सतत लगे रहते, "अम्बेदकरजी बचपन मे चाहे जैसे रहे हों पर जैसे ही आत्मज्ञान हुआ तो वे इतने बड़े हो गये कि बड़े-से-बड़ा भी उनके सामने बौना दीखने लगा। तुम्हे भी एक दिन उन्ही के समान बनना है। आज तुम्हारी तरफ देखने मे जिन लोगो को शर्म आती है कल वे सब तुम्हारी तरफ दौड़ेंगे। आज जो दूसरी नजर से देखते है, वे ही तुम्हे अपना कहेंगे। हम तो कुछ नही थे पर जब फैक्ट्री मे चलती थी तो लोग आगे-पीछे घूमते थे। आजकल तो जो रोटी को और मोटी कर दे वही सब कुछ है। इन्सान खुद ही अपने आपको देखने की दृष्टि दूसरो को देता है। तुम्हे अपने बारे मे स्वय निर्णय लेना है कि और लोग तुम्हें कैसे देखें !"

अनुकूल उनकी बात पूरे धैर्य के साथ सुनता था। उसके चेहरे पर एकाग्रता बनी रहती थी। लेकिन एक बात निरन्तर उसके दिल मे कसक पैदा करती थी कि बाबू बार-बार जातवाली बात क्यो उठाते हैं ? वह एक ही बात को बार-बार नही सुनना चाहता था। उसने किसी के भी चेहरे पर उसकी जात लिखी नही देखी थी। उसे सब एक-से लगते थे। उसे यही लगता था कि हम लोग बार-बार सोच-सोचकर और कह-कहकर अपने लिए जातो और वर्गों का निर्माण कर रहे है। वह हर बार सोचता था कि वह इस बार जरूर कहेगा कि बाबू, आप बार-बार इस बात का उल्लेख न किया कीजिए। आदमी-आदमी मे कोई फर्क नही। उसे यही लगता कि ये सब गड्ढे हैं जिनमे हमे बार-बार धकेल दिया जाता है। इन्हे खोदेंगे तो कभी बाहर नही आ पायेंगे। हम सब अपने-अपने गड्ढो मे पड़े एक-दूसरे पर मिट्टी फेंकते रहते हैं। बाबू के सामने एक-आध बार दबी जबान से निकल भी गया था। बावनराम का जवाब था कि जब गड्ढे ही हैं, तो हम अकेले ही गड्ढे मे थोडा पडे है। सभी लोग अपने-अपने गड्ढो मे बैठे हैं। दूसरे तो हममे भी ज्यादा बडे गड्ढो मे हैं। बस फर्क इतना ही है कि वे गड्ढे में रहकर भी अपने को पहाड़ की चोटी पर खडा हुआ महसूस करते हैं और यह मानकर हम पर थूकते हैं कि उनका थूक हमारे ऊपर ही पड रहा है। यह नही समझते कि कुछ तो उन पर भी पड़ता होगा। छीटे ही सही ! लेकिन वह उनकी बात से बहुत सहमत नहीं था। उसके मन मे यही रहता था कि बाबू की बात और है। वे दूसरी तरह से सोचते हैं। पर गड्ढे से हमे ही निकलना होगा। छोटापन हमें खाये जा रहा है। उन्हें नहीं।

इतने सब सोच के बाद भी वह दूसरे लोगो से मिलने मे कतराता था। कही कोई बात न उठ खड़ी हो। बेकार बेजायका हो जायेगी। वे लोग उस तरह का व्यवहार करने मे जितना सहज हो गये हैं, उतना हम लोग नही हुए। हाँ, सहन करने मे जरूर सहजता आ गयी। बाबू की चौथाई उम्र के दूसरे लोग बाबू का आधा नाम लेकर पुकारते हैं। मन-ही-मन बाबू को बुरा लगता हो तो लगता हो, लेकिन कभी

कहते नही। बाबू तो खैर उनमे कम ही घुसते है, लेकिन कुछ लोग जा-जाकर घुसते हैं। जब लात पड़ती है तो म्याऊँ-म्याऊँ करते हैं। दोनो ही बातें उसे एक-सी लगती थी। वह उसे नियति स्वीकार करके चलने को तैयार नही था। उसे यही लगता था, अगर नियति के रूप मे यह सब स्वीकार कर लिया तो कही वह भी गीदड़ की तरह ही शेरे को विश्रामस्थल न समझ बैठे। उसका सारा समाज उसमे गिर चुका है। वह अपने को टीले तक सीमित रखने की भावना के विरुद्ध अपने अन्दर-ही-अन्दर विद्रोह पाल रहा था। एक-दो बार अनुकूल ने अपने इन विचारो को अपने घरवालो या मित्रो के सामने रखा था तो उसे उनके व्यग्यो का शिकार होना पड़ा था। उसे यही लगा था कि वह या तो समय से पहले इन बातो को सोच रहा है या फिर वह अ-व्यावहारिक है। अपने ही लोगो मे से एक-दो ने उसे यह कहकर जेर किया कि कौवे का बच्चा उड़ना सीखता है तो पहले फुदक-फुदककर चलता है। इस बात ने उसे अन्दर तक आहत कर डाला।

ग्यारहवी कक्षा के बाद अनुकूल की आगे की पढाई की बात को लेकर उसके घर में अच्छा-खासा वितण्डावाद उठ खड़ा हुआ था। बावनराम अनुकूल को किसी अच्छी लाइन में भेजने के पक्ष मे थे। वे उसे इन्जीनियर बनाना चाहते थे। उन्होने अपनी फैक्ट्री मे इन्जीनियरो को मोटी-मोटी तनख्वाह पाते और नखरे छाँटते देखा था। वे उसी को महान नौकरी मानते थे, जिसमे नखरे उठवाने की गुजाइश हमेशा बरकरार रहे। इन्जीनियरिंग की पढाई के लिए आई. आई. टी. उनके मन में स्वप्न-रूप मे स्थित थी। वे वहाँ अपने फैक्ट्री-मैनेजर के साथ जा चुके थे। वह उनके प्रदेश के उस पार ही थी। दोनो प्रदेशो का बार्डर मिला हुआ था। इतनी ऊँची-ऊँची इमारतें और इतने कटे-सँवरे लॉन और पहाड़ियाँ…उन्होने और कही नही देखे थे। लखनऊ जाते समय वे एक दूसरी आई. आई. टी. मे भी गये थे पर वहाँ का हिसाब तो; बस राम ही मालिक था। लोग उसे ही सबसे बढिया बताते थे। लेकिन वे अपने बेटे को उसी संस्थान मे पढाने का मन्सूबा बाँध चुके थे। हालाँकि अनुकूल की माँ उसे अपनी आँखो से दूर करने के जरा भी पक्ष मे नही थी, उल्टे विरुद्ध थी। उसका कहना था कि घर में रखकर चाहे डिप्टी-कलट्टरी की पढाई पढ़ा लो पर बेटे को बाहर न भेजो। परदेश और मौत माँ को एक समान लगते थे। अनुकूल की माँ को यह भी लगता था कि जिसका मुंह देखकर हम अब जीते है वह कब विमुख हो जाये, क्या पता ! इस सन्दर्भ मे वह एक कहावत और कहती थी कि रेल चढ़ा मरद और देहली लांघी औरत की कौन परतीत ? यह सब बातें अनुकूल को तो तग करती ही थी, बावनराम को भी अव्यवस्थित कर देती थी। उन्हे कही-न-कही लगता, क्या पता पारवती ही ठीक कहती हो। पर फिर सोचते थे—नाहीं…अनुकूल, अनुकूल है। वह ऐसा नही।

बावनराम को जब मौका मिलता तभी अनुकूल की माँ को समझाना शुरू कर देते थे—पारवती, तेरा बेटा गनेस का औतार है। नही तो हम लोगो मे ऐसा कौन परताब रखा था जो इतना पढ़ जाता। माँ-बाप होने का हक ऐसा मत लाद कि वह

अन्धी गली में ही फँसा रह जाय। इसे चला जाने दे। बाहर जायेगा तो दुनिया देखेगा। नयी-नयी पढाई पढेगा। यहाँ क्या रखा है। तेरे सामने ही आधी जिन्दगी तो मैंने भट्टी के सामने बैठकर गला दी। उसी में तू अनुकूल को झोंकना चाहती है। तू इतना तो समझ, आदमी ऊसर धरती में भी खुरपी लगाता है तो कुछ-न-कुछ पैदा कर लेता है। तेरा अनुकूल तो वैसे भी समझदार है, जानवर नहीं कि हरे-भरे खेत में जाये तो उसे रौदकर ही निकले। अम्बेदकर महाराज अपने ही वड़ो मे थे··· उस जमाने में विलायत पढने गये जब बड़ो-बड़ो का जाना मुश्किल था। सात समन्दर पार। आखिर उनके माँ-बाप भी तो तेरे और हमारे जैसे ही माँ-बाप थे। उन्होने उन्हे पढने भेजा। तू अनुकूल को अपने देस मे ही सरहद के उस पार नही जाने देना चाहती।

पारबती की ओर तो पार बसाती नही, बस रोना चालू कर देती - 'दुनिया तो अपनी सन्तान को सहेजकर और सीने मे लगाकर रखती है'' ये बाप होकर घर से निकाले दे रहे हैं। जब तुम्हारी फैक्ट्री मे नौकरी लगी थी और गाँव छोड़कर आये थे तब तुम भी ऐसे ही सराहे गये थे ' पर तुमने ही यहाँ आके क्या कर लिया जो अनुकूल वहाँ जाकर करेगा।'

बावनराम की तबियत अपनी घरवाली के दुख से दुखी होती कि जिसने दुख-सुख में बराबर साथ दिया वह इस तरह दुखी हो रही है। केवल उसी की जिद के मारे चित्त डावाँडोल भी होता, पर अनुकूल उन्हे उसी 'क्लिफ-टॉप' पर खड़ा नजर आता। वे अपने आपको समझाने लगते 'नही बावनराम, जी कच्चा मत होने दे। नही तो सब खेल बखेर हो जायेगा। अनुकूल यहाँ के लिए नही बना। इसको वही जाना चाहिए जहाँ इसकी जगह है। भगवान की इच्छा से जा रहा है। हम कौन हैं टाँग अड़ानेवाले···!'

बावनराम स्थिर मन हो जाते और फिर अपने को उसी दिशा मे लगा देते।

·

अनुकूल की स्थिति अजीबोगरीब थी। वह अपने मामले मे कोई भी निर्णय लेने की स्थिति मे नही था। माँ की ममता को वह तज और शीतल हवा के झोंको की तरह अन्दर तक महसूस करता था। पिता की सलग्नता भी गहराई के साथ उसके अन्तर्मन में उतरी हुई थी। कहीं-न-कहीं वह पिता के निर्णय से निर्देशित होने की मानसिकता मे आ चुका था। माँ की भावनात्मक उथल-पुथल भी उसे प्रभावित किये बिना नही रहती थी। आखिर वह क्या करे ? अगर माँ की बात मानता है तो सदा-सदा के लिए वह उस फैक्ट्री मे ढकेल दिया जायेगा। सवेरे और शाम को बजनेवाला सायरन उसकी जिन्दगी का स्थायी नियामक बन जायेगा। माता-पिता का पूत बने रहकर जिन्दगी काटनी होगी। उसी दृष्टि से लोग देखेंगे। उसका अपना किसी तरह का कोई अस्तित्व नही रहेगा। यही आकर वह माँ के मनोभावों से द्रवित होने के बावजूद अपने को पिता के निर्णय से सम्बद्ध पाता था। फैक्ट्री उसे सबसे अधिक भयावह लगती थी। रोती हुई माँ दुबक्की बजनेवाला फैक्ट्री का सायरन हो जाती थी-- अपनी ओर बुलाता हुआ।

बावनराम अपनी फैक्ट्री के इन्जीनियरो से मशवरा करते घूमे थे कि वह कैसे अनुकूल को आई. आई. टी. मे भर्ती करायें। वे उसी आई. आई. टी. मे उसकी भर्ती चाहते थे जो उसके प्रदेश की सरहद के पार थी। चार-छः घण्टे का सफर और अनुकूल के पास। ३.पने फोरमैन के माध्यम से वे एक नये-नये आये इन्जीनियर से जा टकराये थे। उसने भी वही से बी. टेक. किया था। उसकी सूचना ने बावनराम को आह्लादित कर दिया। उसे लगा कि यह सब ईश्वर ने अनुकूल के लिए ही किया है। अगर ऐसा न होता तो इसी साल यह छूट क्यो हुई होती ? सरकार ने इसी साल अनुसूचित जाति के छात्रों को बिना किसी सामूहिक टेस्ट लिये दाखिल करने का निर्णय लिया था। यह सब दिल्ली से ही नियोजित होने की बात थी। उसी वक्त से बावनराम आश्वस्त हो गये थे कि अनुकूल वहाँ जगह पा जायेगा। उसका रास्ता देश-विदेश सब जगह के लिए खुल जायेगा। वे अपने बेटे को हवाई जहाजो पर उडते और कारों मे घूमते देखने लगे थे। बावनराम को यह भी पता चल गया था कि इन महती सस्थाओ मे इस वर्ष का दाखला इसलिए सहज होगा क्योकि इसका अभी अधिक प्रचार नही हो सका है। किसी भी प्रभावशाली ससद सदस्य को पकड लेने से काम चल सकता है। अनुकूल के लिए इससे अच्छा अवसर बावनराम को दूसरा नजर नही आया। उस इन्जीनियर ने उनको यह भी बता दिया था कि यदि इस बार चूक गये तो बेटे को आई.आई.टी. में दाखला दिलाने की बात दिल से निकाल दे। उसके लिए आयोजित होनेवाली सयुक्त परीक्षा मे बडे-बड़े सूरमा उलट जाते हैं। उनके फोरमैन ने हँसकर चिपकाया था कि बावनबाबू, यह काम ज्ञान-पथ पर चलकर नही होता। भक्ति-पथ अपनाओ। जा सको तो उसी पर टहलते चले जाओ, मकरन्द पा जाओगे।

इस बात पर सब हँसे पड़े थे। अनुकूल थोडा असमंजस में पड़ गया था।

चूंकि बावनराम स्वय एक छोटे-मोटे नेता थे और किसी-न-किसी रूप मे अपनी बिरादरी के वोटो के पुरोधा कहे जाते थे, इसलिए उनकी पहुँच क्षेत्र के ससद-सदस्य तक थी। बावनराम के लिए उन्ही के पास जाना आसान था। लेकिन उनके पास जाने से पहले बावनराम के रास्ते मे कई खाइयाँ थी जो लाँघी जानी शेष थी। पत्नी को तैयार करना, बेटियो और दामादो की नाराजगी का सामना करना और ''पैसे का प्रबन्ध। पत्नी का तो जो कहना था सो था ही। दामादो ने सख्त रुख अपना लिया था ! आखिर अनुकूल मे ही ऐसी क्या बात है कि सबकुछ उसी पर लुटा दिया जायेगा। क्या बाबू बाकी सब लोगो से अपना ब्योहार खत्म कर देना चाहते है ? न रिश्तेदारो से रिश्तेदारी और न ब्योहारियों मे ब्योहार। अगर चाहते हैं ता कह दें। रहे अकेले। आगे का भी तो दखना है। कल को अनुकूल इन्जीनियर हो गया तो क्या अपनी बेपढी बहनो और बहनोइयों को घास डालेगा ? हवा-ही-हवा मे उडेगा। अभी बोलने-बतियाने मे मुँह दुखता है। अगर उसे किसी काम का रखना है तो जितना पढ गया वही बहुत है। घर बसायेगा और काम से लगेगा तो माँ-बाप को भी कुछ आराम मिलेगा। सारी जिन्दगी हो गयी हाड गलाते। माँ-बाप को बेटे से

आराम न मिले तो लानत है ऐसी औलाद पर। सब हमको टोकते हैं कि इतने रिश्ते आ रहे हैं, तुम्हारे ससुर, बेटे का रिश्ता क्यों नहीं लेते। बताइए क्या जवाब दें? इन्जीनियर बनाना है तो बाद मे नहीं बन सकता क्या? न तो बुढापे मे शादी होगी और न तब होगी जब हाथ से निकल जायेगा। अभी तक रामपरसाद चौधरी क्वारी बेटी को घर पर बैठाये तुम्हारी हां का इन्तजार कर रहे हैं। क्या पता कुछ समझ मे आ ही जाये।

माँ इन सब बातो को सुनती जरूर पर जब मोरचा सँभालने का मौका आता तो अपने पति और बेटे की तरफ से ही बोलती—बातें तो सब अपनी जगह सही हैं पर यह तो बता दो कि इस धरती के ऊपर और आसमान के नीचे कौन-से ऐसे माँ-बाप हैं जो बेटा-बेटी की बढोत्तरी नहीं चाहते। आजकल दीया-बत्ती का उजाला ना होवे, लिखाई-पढाई का उजाला उजाला माना जावे। अनुकूल के बापू ने दुनिया देखी है। वे भी तो जो कर रहे है सोच-समझकर ही कर रहे हैं। वे भी तो घर से निकलकर ही आये थे। तभी तो आज सबके आगे थाली परसी दिखायी पड़े है। दस हाथ सलाम को उट्ठे हैं। अनुकूल भी अगर निकलकर चला जायेगा तो कुछ करके ही लौटेगा। हमारा अनुकूल औरो कों मे अलग है। बस, मैं तो यूँ ही चाहूँ थी कि पढ़े तो जरूर पर घरो रह के पढ़े। परदेस तो परदेस ही होवे। किसी का नी होता। हमारी जिन्दगी ही कितनी बची। आँखो के सामने रहता तो अच्छा था। पर फिर भी उनकी मर्जी मे ही हमारी मर्जी है।

दामाद सास से बड़ी तत्परता के साथ सहमत हो जाते थे। यही तो हम भी कह रहे थे माँ। घर पर रखकर चाहे जितना पढा लो। नौकरी भी करे, पढे भी। जितना भार हम पर डालोगे हम भी हिस्सा बँटायेंगे। बाहर जाकर पढनेवाली बात समझ मे नहीं आती। बाबू के पास जो कुछ बचा-खुचा है वह भी इसी मे चला जायेगा। बाकी लोग क्या करेंगे? बिरादरी मे नक्कू थोड़े ही बनना है। नाम निकल गया तो कोई ड्योढी पर भी नहीं चढेगा।

पारवती का काम यही रह गया था कि अनुकूल को लेकर जो भी बातें दिन-भर मे सुनने को मिलती उन सबका ब्यौरा अपनी टिप्पणी के साथ बावनराम को देती। बावनराम के लिए जब असहनीय हो जाता था तो वे अपनी लकडी लेकर बाहर निकल जाते थे। तब तक टहलते रहते थे जब तक चित्त स्थिर नहीं होता था। यही समय होता जब वह अपने आपसे घरेलू समस्याओं पर विचार-विनिमय करते थे। समझ में नहीं आता, लोग अनुकूल की सामर्थ्य और प्रतिभा को क्यों अनदेखा करना चाहते हैं! कितना प्रतिभाशाली लडका है! उसमे कितनी सम्भावनाएँ हैं! शुरू से आखीर तक अच्छे नम्बरो मे पास हुआ है। हाईस्कूल में भी फर्स्ट डिविजन कुछ ही नम्बरों मे रह गयी। गाल तो सब बजाते हैं, कोई है सारी बिरादरी मे जो आठवीं भी सांघ पाया हो। छठी तक पहुँचते-पहुँचते साँस टूट गयी। जब अनुकूल बड़ा आदमी बन जायेगा, मोटरो और हवाई जहाजों पर चलने लगेगा तो लोग कहेंगे कि हमने तो तभी उसकी सामर्थ्य को पहचान लिया था। होनहार का चेहरा देखने की जरूरत थोड़ी ही पड़ती है, पाँवों से ही पहचान मे आ जाता है। उन्हें लगता है कि वह अत्यधिक साधारण और भविष्यहीन बच्चा है। अपने साथ भी यही सब हुआ था।

अगर फैक्ट्री में न आ गये होते तो वही खानदानी काम करते और ऊँची जात के लोगों की दुर-दुर पर-पर सुनते। यहाँ आ गये तो सुपरवाइजरी तक पहुँच गये। देखता हूँ कैसे ये लोग उसे आगे बढने से रोकते है। चाहे सबकुछ बिक जाय पर लड़के को मजिल तक पहुँचाकर मानूँगा। मर भी गया तो भी इतना इन्तजाम कर जाऊँगा कि अनुकूल को पढाई मे दिक्कत न हो। वैसे मैं इस तरह अध-बीच में छोड़कर मरने-वाला नही। ईश्वर ने अपनी ही सन्तान का पिता बनाकर उसे मेरे सरक्षण मे दिया है। इसकी जगह किसी और को भी तो पैदा कर सकता था। पर नही, उसने उसे मेरे घर में ही पैदा किया। कुछ सोचकर ही किया होगा।

इतना सब सोचने के बाद और अनुकूल को जो कुछ हो रहा था, उस सबको ईश्वर की कृपा मानकर सामान्य हो जाते थे।

घर पहुँचकर घरवाली से जब दामादो की बातो को सुनते थे तो बावनराम उससे अव्यवस्थित नही होते और न उनके इरादे मे कोई परिवर्तन आता। न वे लकड़ी उठाकर ही फिर से बाहर निकलते, बल्कि अपने दामादो को ताबड़-तोड़ गालियाँ देना आरम्भ कर देते—साले जलते हैं। उन्हे लगता होगा कि यह जो प्रोविडेण्ट-फण्ड का रुपया बुढ्ढे को मिला है कही सारा-का-सारा अनुकूल की पढाई पर ही खर्च न कर दे। इन नाखवान्दाओ को नौकरी दिलवा दी, यह क्या कुछ कम है। पल्ली ढोते घूमते। बदजात कही के। नौकरी इसलिए दिलवायी थी जिससे अनुकूल के सुख पर नजर न डालें। अनुकूल की माँ ने उन्हे ऐसी बातें करने से बरजा—ऐसी बातें मुँह से न निकालो, दामाद का मामला है। यह लोहे का बर्तन नही, लालटेन में लगी काँच की चिमनी है। जरा-सा बाल पडा और लौ भभकी। दुनिया देखेगी सो अलग। बावनराम किसी तरह ठण्डे पड़ते। लेकिन उनकी बुडबुड़ाहट काफी देर तक चलती रहती। मन अनुकूल के भविष्य को लेकर एकाएक शंकित होने लगता। जब अपने ही रोक लगा रहे है तो भाग्य का क्या पता, कब पलट जाय। वे प्रार्थनालीन हो जाते—हे प्रभो, यदि कोई सकट आना है तो तू उसे मेरे नाम लिख दे। उन्हे अफसोस होता कि यह सब उन्ही की वजह से हुआ। सारे रिश्तेदारो से सलाह-मशवरा करने की जरूरत ही क्या थी। जो करना था कर क्यों नही डाला।

उन्होने अनुकूल को लेकर दिल्ली जाने का फैसला कर लिया और वे उसी दिन रवाना हो गये।

बावनराम का अक्सर दिल्ली जाना होता था। ज्यादातर पुरानी दिल्ली से ही लौट जाते थे। नयी दिल्ली यानी दक्षिणी दिल्ली की तरफ एक-आध बार ही आये थे। दिल्ली के स्टेशन पर उतरते ही अनुकूल को झुरझुरी-सी आ गयी। स्टेशन जैसा स्टेशन! ऐसा स्टेशन तो उसने पहले देखा ही नही था। जहाँ तक नजर जाती थी, बिछा पड़ा था। वह चारो तरफ आँख फाड़-फाड़कर देखता रहा। कई गोरे साहब और मेमें भी उसे स्टेशन पर नजर आये। उनमे से कुछ अधनगे-से थे। उसने सुना था कि हिन्दुस्तान आजाद हो गया। गोरे चले गये। पीठ पर बुगचा लादे गोरे उसे आश्चर्य में डाल रहे थे। उसे शक होने लगा—देश आजाद हुआ भी या नही। या लोग यूँ

ही कहते हैं ! इतनी मेमे, इतने साहब सुना है गुलामी के दिनो मे हुआ करते थे। उन्हे यह छूट थी कि वे सटकर चलें'''या इस प्रकार के अन्य व्यवहारो का खुला प्रदर्शन करें ! कुछ साहब लोगों के रंग-बिरंगे बक्सों मे पहिये लगे थे और वे उन्हे लुढकाकर ले जा रहे थे। हिन्दुस्तानियो के छोटे-छोटे बक्से भी कुली सिर पर उठाकर चल रहे थे। इस बात से उसे लगा कि हम अभी भी गोरों से ज्यादा अमीर हैं। फिर उसे कुलियों का ध्यान आया। उसने मन-ही-मन सोचा, हो सकता है कुली वैसे हिन्दुस्तानी न हों। इस बात ने उसे अनजानी-सी खुशी दी। कुछ हिन्दुस्तानी हैं जो गोरो से भी ज्यादा अमीर हैं। उनके पास दो ही थैले थे। बडावाला थैला उसने पीठ पर लादा हुआ था। छोटा बाबू लिये थे। उसमे एक जोडी कपड़े और तौलिया वगैरह थे। बडे मे ओढ-बिछाकर लोट रहने के लिए एक-आध चादर और बाबू के हजामत का टूटा-फूटा डिब्बा और छोटी-मोटी चीजें थी। उसकी नजर मे हिन्दुस्तान एकाएक गरीब देश हो गया। इस बार का उसका अहसास पहलेवाले अहसास से बिल्कुल विपरीत था।

रात जब वह बाबू के साथ गाड़ी पर सवार हुआ तो उसका डिब्बा अंग्रेजी मे लिखे ए. सी. सी. वाले डिब्बे के पास ही था। डिब्बे की खिडकियो पर शीशे जड़े थे और अन्दर अँधेरा था। दरवाजे पर खाकी कपड़ोवाला एक आदमी था जिससे हर अन्दर जानेवाला आदमी बात करता था। वह आदमी बड़े अदब के साथ उसे अँधेरे डिब्बे मे ले जाकर अन्दर छोड़ आता था। अनुकूल को असुविधा हो रही थी कि अँधेरे मे ये लोग क्यो रह जाते हैं ? जो लोग बीच-बीच में बाहर आते थे उन्हे देखकर उसका साहस बँधता था कि वे लोग अँधेरे में भी वैसे-के-वैसे ही हैं। उनके चेहरे-मोहरे बडे सज-धजवाले और दिप-दिप करते थे। फैक्ट्री तक मे ऐसा चेहरे-मोहरेवाला उसे एक भी नही दीखा था। बच्चेवाली औरतें तक तरोताजा थी। बच्चे तो तरोताजा थे ही।

सवेरे जब वे लोग अपने डिब्बे मे उतरे तो उसे और भी आश्चर्य हुआ। एकदम धुले-पुँछे ! जैसे रात-भर उसी तरह तस्वीर जड़े-से बैठे रहे हों ! सोने या लेटने की उन्हें जरूरत ही न पड़ी हो ! बच्चों तक की आँखों मे कीचड नही थी, जबकि उसके गालो पर सूखे हुए लुआब की लकीर थी। एक आँख मे आले के फूल के तिल जितनी सूखी कीचड़ चिपकी थी। उसने वह उखाड़कर फेंक दी। वह सोया तो दोनो आँखो से ही था। एक ही आँख मे कीचड क्यो आयी ? वे भी तो गाडी मे चले। उनके नही आयी, तुम्हारे आयी। अपने इस सोच ने उसे चमत्कृत कर दिया।

एक महिला सामान उठाने के लिए कुली को पुकार रही थी। उसके साथ छोटा बच्चा था। वह तरह-तरह के सवाल पूछकर उसे तंग कर रहा था।

"कुली क्या होता है मम्मी ?"

बाबनराम ने सुना तो हँसकर बोले, "यह बच्चा कुली भी नही जानता'''!"

उसका ध्यान औरत की बात पर चला गया। वह उसे बता रही थी, "कुली लाल कपड़े पहने स्टेशन का एक मजदूर होता है"'सामान बाहर ले जाता है और अन्दर लाता है।"

"लाल कपड़े तो वो अंकल भी पहने हैं।" एक सज्जन लाल कोट पहने खड़े थे। वे भी उसी डिब्बे से उतरे थे।

औरत ने होठों पर उँगली रखकर कहा, "हिस्ट'''ऐसी बात नही कहते।"

"क्यो ? कुली क्या गाली होती है ?"

"हाँऽ !"

"कुली गाली कैसे हुई'''सामान ले जाना गाली है ?"

उसकी माँ नाराज हो गयी और बच्चे को डपट दिया, "बोले चला जा रहा है, चुप नही रह सकता। पता नही कुली कहाँ मर गये'''इतना सामान कैसे ले जाऊँगी।"

थोडी देर मे एक कुली आया। बावनराम ने उससे कहा, "जाओ भैया, उन मेम साहब का सामान ले जाओ। उनके साथ बच्चा है'''"

वह बोला, "मेम साहब लोग पैसा देने में बहुत खिचखिच करती हैं।"

"तय कर लो'''हमने भी शुरू में कुछ दिन कुली का काम किया है। बच्चे और औरतें अकेली हो तो उनका ध्यान रखना चाहिए। जाओ ले जाओ।"

अनुकूल थोड़ा चकराया। उसने बाबू की तरफ देखा।

बावनराम हँस दिये, "लाल कुर्तीवाले कुली नही, दिहाड़े कुली। गाँव से चले आने पर जब तक फैक्ट्री मे काम मिला तब तक तो पेट भरना ही था। काम करके भरने मे कोई हर्ज नही होता। कोई भी काम क्यो न हो। बस स्टैण्ड से स्टेशन तक सामान ढोते थे। तब स्टेशन के अन्दर नम्बरवाले कुली ही आ-जा सकते थे। अब जैसा जमाना नही था। दो आने से चार आने तक मिलते थे।"

बालक और उस औरत को देखकर अनुकूल पहले से स्तम्भित था। वह पतलून पहने थी। उसकी बाँहें नगी थी। छाती नगी ही-सी थी। बारीक कपड़े मे ढके फलों जैसी ही लग रही थी। वह नगी बाँहोवाली औरत और बच्चा दोनों अलग-अलग उसे अच्छे लग रहे थे। बच्चा अपने बच्चेपन के कारण अच्छा लग रहा था, लेकिन महिला ''हम लोगो के घरो की औरतें ऐसी क्यों नही होती ? फिर उसने आप ही बुदबुदाया—शायद हो नही सकती। लेकिन इस सबके बावजूद बाबू की बात ने उसे अचम्भे के दूसरे ध्रुव पर पहुँचा दिया था। वह बाबू की कुलीगिरी के जमाने की कल्पना करने लगा। बहुत चाहा कि बाबू की जवानीवाली शक्ल के साथ कुलीगिरी की बात को जोड़े पर उसे बार-बार वही शक्ल याद आती थी जो उसने होश सँभालने के बाद से देखी थी। उस शक्ल के साथ कुलीगिरी की बात को जोड़कर देखने पर वह अपने को उलट-पुलट होता हुआ अनुभव करने लगा था।

बावनराम ने अपने आप ही कहा, "चलो चलें !" दोनों चल दिये। बाबू की आँखें कीचड़ से सनी थी। अपने पिता को लेकर शुचि की जो तस्वीर अनुकूल ने अपने मन में बना रखी थी वह आहत-सी होती हुई महसूस हुई। उस डिब्बे पर के लोग भी आने लगे जो ए. सी. सी. के डिब्बे से धुले-पुँछे निकले थे। उनमें कुछ के

परिचित

अनुकूल को उसकी बात बुरी लगी। लेकिन बावनराम उस सबसे बेपरवाह थे।

बावनराम ने बस के पास पहुँचकर ही साँस लिया। एक आदमी से पूछा तो पता चला कि वह बस उधर ही जा रही है। बावनराम बोले, "बस, काम बन गया। नही तो स्कूटरवाले को झऊआ-भर पैसे देने पड़ते। यह भी क्या पता, साला कहाँ से घुमाकर ले जाये और कहाँ पहुँचा दे!"

वह जल्दी से बस पर चढ़ गये। छूटने में दस मिनट थे। दोनों अन्दर जाकर बैठ गये। बावनराम को एकाएक लगा, कहीं किसी ने झूठ ही न कह दिया हो। वे उठे और अनुकूल से बोले, "जगह देखना, मैं अभी आया।"

बाहर जाकर फिर तहकीकात की, "यह बस साउथ ऐवन्यू ही तो जा रही है ना?"

जिस आदमी से पूछा था वह बोला, "बस-कण्डक्टर उधर गया है, उसी से जाकर पूछिए।" और टरक गया।

वे कण्डक्टर के पास गये। कण्डक्टर ने बिना पूरी बात सुने उचार दिया, "उधर ही चलिए, अभी वहीं आते हैं।" फिर बड़बड़ाया, "सबेरे-सबेरे का वक्त आ गये, बस कहाँ जाती है!"

बावनराम लौटकर दरवाजे पर खड़े हो गये।

एक आदमी एक बक्सा लिये आया तो बावनराम ने पूछा, "क्यों साहब, यह बस साउथ ऐवन्यू ही जायेगी ना?"

"पता नही, मुझे तो पंचकुइया रोड के चौराहे तक जाना है।"

वे निपहियावालों के बारे में सोचने जा रहे थे। सुना है, बड़े जालिम होते हैं। उसमें बैठते ही दिल में खट-खट शुरू हो जाती है। आदमी सवारी चढ़ता है, सवारी उस पर चढ़ जाती है। पहिये सवारी के नीचे रहते हैं, और सवारी पहियों के नीचे लिथड़ने-लिथड़ने लहूलुहान हो जाती है। बस हो तो आदमी बैठा रहे। दिल में खट-खट नहीं होती जाती। बाहर चाहे जितनी होती रहे पर अन्दर सन्नाटा। नया आदमी तो और भी पिसटता है। लेकिन जायेगी भी या नहीं? चली गयी हवाई अड्डे तो वहाँ से कैसे लौटा जायेगा?

इस बीच कई लोग बस में चढ़ गये थे। सब जाकर अनुकूल के पास ठिठका मारते थे।

"कोई बैठा है?"

अनुकूल गर्दन हिलाकर हाँ कह देता था। आखिर अनुकूल को पुकारना पड़ा, "बाबू आओ। सीट घिर जायेगी।"

उसके पुकारने पर लोग उसकी तरफ देखने लगे। उसे लगा शायद उससे गलती हो गयी। दिल्ली में इस तरह पुकारने का चलन नहीं। अनुकूल ने उन लोगों की तरफ देखा ही नहीं। वह पीछे ही देखता रहा।

बावनराम वहीं से बोले, "पता तो लगा लूँ साउथ ऐवन्यू जाती है या नहीं।"

अनुकूल बोला, "तो मैं भी नीचे आ जाऊँ?"

आगे बैठा एक आदमी नपाक से बोला, "जायेगी, जायेगी।" फिर वह आदमी उठकर हँसता हुआ बावनराम के पास दरवाजे पर पहुँचा, "आप आकर बैठ जाइए। लडका अकेला घबरा रहा है। बस तो हौजखास तक जायेगी ' साउथ ऐवन्यू रास्ते मे पडेगा। यह बस स्टेशन से उस दिशा मे जानेवाले मुसाफिरो के लिए ही चलायी गयी है। अगर आप इन्क्वारी से भी पूछते तो बता देते। बताने में किसी का कुछ नही जाता···"

इस बात से बावनराम को काफी सकून मिला। दुनिया मे भले आदमी भी होते हैं। उस आदमी से बोले, "देखिए साहब, एक आप है जो बताने के लिए अपनी सीट से उठकर आये ' वो कण्डक्टर खडा है, उससे पूछने गये तो बोला—जाइए, वही आते है। बाहरी आदमी को क्या पता कौन-सी बस कहाँ जाती है। इतना ही कह देते कि साउथ ऐवन्यू जायेगी तो हम यहाँ ऊँट की तरह गर्दन उठाये तो ना खडे रहते। जाकर आराम से बैठते।"

बावनराम अभी बहुत सहज हो गये थे। उनके माथे का तनाव ढल गया था। वह आदमी वही खड़ा-खडा बतियाने लगा, "किसी एम. पी.-सैम. पी. के यहाँ जाना है?"

"जी।" बावनराम ने छोटा-सा उत्तर दे दिया।

"किसके यहाँ?"

"एक सौ उन्चास मे रहते है।"

"जहाँ बस रुकेगी, उससे बस थोड़ा ही दायी तरफ चलना पड़ेगा···वही एक सौ उन्चास है। लेकिन सा'ब आजकल के ये एम. पी. भी बस-कण्डक्टरो से कम नही है। बात का सीधा जवाब नही देंगे। आपको उतरना कही है, पहुँचा कही और देंगे। आप कुछ कहेंगे तो फिर आपको दुगना दौडा देंगे। पता चला कि साउथ ऐवन्यू की जगह आप 'किंग्स-कैम्प' पहुँच गये। टालू मिक्सचर तो गैलनो बना रखा रहता है। जो गया उसे ही पिला दिया। बिना पैसे बातो-ही-बातो मे पिला देंगे। पीनेवाले को पता तक नही चलेगा। सीधा-साधा हुआ तो कम पोटेन्सी के मिक्सचर से ही काम चला देते हैं। घाघ के लिए जरा तगड़ा चाहिए। एक-आध बार फोना-फानी भी करनी पड़ती है। कभी-कभी मिनिस्टर या सेक्रेटरी का कमरा भी दिखाना पड जाता है···" वह जोर से हँस दिया। बावनराम को भी उसकी बातें अच्छी लगी। मन-ही-मन इतना जरूर सोचा कि ये सब बातें कम-से-कम चौधरी साहब पर लागू नही होती।

इतने मे कण्डक्टर ने पुर्र-से सीटी बजा दी। वे सज्जन भी आगे अपनी सीट पर जा बैठे। बावनराम ने जूते निकालकर, अगली सीट के नीचे तक पाँव फैलाकर, जोर की जँभाई ली। अनुकूल ने उनकी तरफ देखा। उनका मुँह काफी देर तक खुला रहा था और फिर आँखो में पानी आ गया था। उसे लगा, उनकी आँख की कीचड़ अब गीली हो गयी होगी।

कण्डक्टर खिड़की से गर्दन निकालकर चिल्लाया, "ओरे भाई खजानसिंह··· बैट्ठाई रैंगा क्या···यो गड्डी ना चलने की?"

खजानसिंह ड्राइवरवाली खिड़की से चढ़कर आ गया और ताव में बोला, "यार तू आदमी है अक पज्जाम्मा। जब तू बात्तो मे लगा रा तब तो कुछ नी था। दूसरे को पलक मारने-भर की भी देर-सबेर होज्जा तो लग्या कुडकुडाने। भाई, ऐसा मतलबी होना किस काम का।" उसने झट मे चाबी घुमा दी। गाडी जोर-से धड़धडाने लगी और धुआँ छोडने लगी।

बावनराम ने कण्डक्टर से भी पूछा, "साउथ ऐवन्यू तो जायेगी ना कण्डक्टर सा'ब ?"

"अरे बाब्बा, तू तो रजिस्ट्री करवावन लग रिया···कह नी दिया था कि जा गाडी में जा के बैठ जा। उँई कह देत्ता क्या, भले मानस। ला निकाल पैसे।"

बावनराम का चेहरा खुशी से फूल आया। उन्होने फटाफट एक रुपया निकाला और पकड़ा दिया, 'दो टिकट।' वह दो टिकट और बीस पैसे देकर आगे बढ गया। बावनराम मजे मे पीठ टिकाकर बैठ गये।

अनुकूल खिडकी की तरफ था। जब गाडी मुडती थी तो उसे लगता था कि बस गाड़ी उलटी। वह अगली सीट को कसकर पकड लेता था। सामान्य चाल पर आते ही वह थोडा-थोड़ा निश्चिन्त होने लगता था। खिडकी से अपनी दायी तरफ के भवन देखना शुरू कर देता था। सवेरे का वक्त था। जैसे-जैसे रोशनी बढ रही थी··· वे भवन झुटपुटे से उभरकर ऊपर आ रहे थे। अँधेरे की पर्तें मैल की बतियों की तरह एक-एक करके उतर रही थी। धीरे-धीरे उसे साफ, धुली-पुछी-सी बिल्डिंगें मिलने लगी। उसे लगा, आगे-आगे कोई धोता-पोंछता चला जा रहा है। वह बीच-बीच में बावनराम से बतियाता भी जा रहा था। उसकी आवाज मे उत्साह और आश्चर्य दोनो समान मात्रा में थे। कभी-कभी सन्तुलन गड़बडा जाता था। जब उत्साह ज्यादा हो जाता था तो आवाज मे तेजी आ जाती थी। आश्चर्य के बढ जाने पर वही आवाज रुक-रुककर आने लगती थी।

"देखो बाबू, यह बिल्डिंग कितनी ऊँची है·· यहाँ की सड़कें कितनी चिक्नी हैं!"

बावनराम या तो ऊँघते होते थे या फिर सोचते। वे यही कहते, "दिल्ली जो ठहरी, यहाँ के लोगो से बिल्डिंग बडी और लोग बिल्डिंग से बडे। पहले देखो, फिर कहना।" और हँस देते।

संसद भवन बावनराम ने पहले से देखा हुआ था। उसके सामने से गुजरते हुए वे चौकस होकर बैठ गये। अपने आप ही बोले, "यह संसद भवन है, भैया। पण्डिज्जी के हमने यहीं दर्शन किये थे ! वो हिन्दुस्तानी नही थे·· एकदम अंग्रेज ! अंग्रेज ही नही, अंग्रेजों के भी अंग्रेज ! समझे ? हमने गांधीजी के भी दर्शन किये। वो पूरमपूर हिन्दुस्तानी थे। गांधीजी को देखकर अपने काका की याद आती थी। बिल्कुल, उन्हें उठा दो और गांधीजी को बैठा दो।" बावनराम एकाएक वहाँ से दूर चले गये गांधीजी के पास या काका के पास' यह अनुकूल नही समझ पाया। थोड़ी देर बाद लौटे तो बोले, "अब यही अपने चौधरी साहब भी बैठते हैं।"

अनुकूल इस अण्डे जैसी गोल इमारत को अपनी इतिहास और भूगोल की पुस्तकों में देख चुका था। तस्वीर देखकर उसने यह बिल्कुल नहीं समझा था कि

संसद भवन इतना बड़ा होगा और उसके खम्भे भी इतने वडे-वडे होगे। उसने कान पर हाथ रख लिये। दुनिया मे क्या-क्या इमारतें है! इमारतो से ही ये लोग अमर हो जाते हैं।

"अंग्रेज भी इसी भवन मे वैठते थे क्या बाबू ?"

"और नही तो क्या जहाँ हमारे मन्त्री, प्रधानमन्त्री वगैरह बैठते है···वे सब इमारतें अंग्रेजो ने बनाकर दी है।"

"इन्हे बुरा नही लगता ?"

"बुरा क्या लगना···वे भी राजा, ये भी राजा! वे गोरे थे, ये अपने लोगो में से है।"

"अब देश आजाद है।"

बावनराम उसकी बात पर हँस दिये, "तू कहता है तो सही ही होगा···हम तो इतने पढे-लिखे है नही।"

विलच करके जबरदस्त झटके के साथ बस मुड गयी। बाप बेटे के ऊपर जा गिरा। चूँकि दोनों ही मजबूती के लिए अगली सीटें पकडे बैठे थे, इसलिए चोट-चपेट से दोनो बच गये। बावनराम को थोडा गुस्सा जरूर आया' भला कैसे चलाते हैं! चाहे कोई उलटे या मरे, इनकी बला से। उन्होने अपने हाथ-पैर सब बारी-बारी से घुमाकर देखे। सब सही-सलामत थे। अनुकूल पहले ही की तरह बाहर की तरफ देख रहा था। वह भूल गया था कि कही कुछ हुआ भी या नही।

साउथ ऐवन्यू की पूरी-की-पूरी सडक खाली और निचाट थी। हालाँकि खालीपन का कोई आकार नही होता, लेकिन प्रभाव ठसाठस भरे से कही ज्यादा और गहरा होता है। उस पूरी सडक का खालीपन वस पर हावी हो गया था। दूसरे छोर पर बुझे चूल्हो की तरह ठण्डी टैक्सियाँ खड़ी थी। उन पर लिखा देखकर ही अनुकूल को पहली बार पता चला था कि ऐसी गाड़ियो को ही टैक्सी कहते है। एक आदमी को फ्लैट से निकलकर आते देखकर अनुकूल को लगा कि उस सन्नाटे मे लथपथ जड़ सडक को उस अकेले आदमी ने चलना सिखा दिया। चलना ही नही सिखाया बल्कि स्तब्धता के उस सम्पूर्ण सन्तुलन को विगाड़ दिया। सच पूछिए तो इस बात का सही पता ही उस आदमी के चलने से लगा कि वह सडक है। बस में बैठे सड़क का सड़क होना पता नही चल रहा था।

जहाँ वस रुकी और वे लोग उतरे उस स्थान से चौधरी साहब का क्वार्टर बहुत ही नजदीक था, लेकिन बावनराम को तलाश करने मे कुछ देर लगी थी। भवन-ही-भवन हो और वतानेवाला कोई न हो तो पता कौन बताये! अनुकूल उन भवनों और सड़कों को ही निहारता रहा। चौराहे पर एक स्तम्भ था। उसके चारो ओर तीन मूर्तियाँ थी। वल्लम से लैस। उसे लगा कि पहले लोग डरते बहुत थे। आदमी नही मिले तो हाथो में वल्लम लिये मूर्तियों की फौज ही खड़ी कर दी! उसके बाद तोपें। उनमे से दो मूर्तियाँ साफ दिखायी दे रही थी। आकार उतना साफ नही था। मूर्तियो के उस पार चहारदीवारी से घिरा एक हाता था। उसे लगा, सम्पूर्ण

खजानसिंह ड्राइवरवाली खिड़की से चढ़कर आ गया और ताव में बोला, "यार तू आदमी है अक पज्जाम्मा। जब तू वात्तो मे लगा रा तब तो कुछ नी था। दूसरे को पलक मारने-भर की भी देर-सवेर होज्जा तो लग्या कुड़कुडाने। भाई, ऐसा मतलबी होना किस काम का।" उसने झट मे चाबी घुमा दी। गाडी जोर-से धड-धडाने लगी और धुआँ छोडने लगी।

बावनराम ने कण्डक्टर से भी पूछा, "साउथ ऐवन्यू तो जायेगी ना कण्डक्टर सा'ब?"

"अरे बाब्बा, तू तो रजिस्ट्री करवावन लग रिया···कह नी दिया था कि जा गाडी मे जा के बैठ जा। उँई कह देत्ता क्या, भले मानस। ला निकाल पैसे।"

बावनराम का चेहरा खुशी से फूल आया। उन्होने फटाफट एक रुपया निकाला और पकडा दिया, 'दो टिकट!' वह दो टिकट और बीस पैसे देकर आगे बढ़ गया। बावनराम मजे मे पीठ टिकाकर बैठ गये।

अनुकूल खिडकी की तरफ था। जब गाडी मुडती थी तो उसे लगता था कि बस गाडी उलटी। वह अगली सीट को कसकर पकड लेता था। सामान्य चाल पर आते ही वह थोडा-थोड़ा निश्चिन्त होने लगता था। खिड़की से अपनी दायी तरफ के भवन देखना शुरू कर देता था। सवेरे का वक्त था। जैसे-जैसे रोशनी बढ रही थी··· वे भवन झुटपुटे से उभरकर ऊपर आ रहे थे। अँधेरे की पर्तें मैल की वत्तियों की तरह एक-एक करके उतर रही थी। धीरे-धीरे उसे साफ, धुली-पुछी-सी बिल्डिंगें मिलने लगी। उसे लगा, आगे-आगे कोई धोता-पोंछता चला जा रहा है। वह बीच-बीच मे बावनराम से बतियाता भी जा रहा था। उसकी आवाज में उत्साह और आश्चर्य दोनों समान मात्रा में थे। कभी-कभी सन्तुलन गडबडा जाता था। जब उत्साह ज्यादा हो जाता था तो आवाज मे तेजी आ जाती थी। आश्चर्य के बढ जाने पर वही आवाज रुक-रुककर आने लगती थी।

"देखो बाबू, यह बिल्डिंग कितनी ऊँची है·· यहाँ की सडकें कितनी चिकनी है!"

बावनराम या तो ऊँघते होते थे या फिर सोचते। वे यही कहते, "दिल्ली जो ठहरी, यहाँ के लोगों से बिल्डिंग बडी और लोग बिल्डिंग से बडे। पहले देखो, फिर कहना।" और हँस देते।

संसद भवन बावनराम ने पहले से देखा हुआ था। उसके सामने से गुजरते हुए वे चौकस होकर बैठ गये। अपने आप ही बोले, "यह संसद भवन है, भैया। पण्डितजी के हमने यहीं दर्शन किये थे। वो हिन्दुस्तानी नही थे·· एकदम अंग्रेज! अंग्रेज ही नही, अंग्रेजों में भी अंग्रेज! समझे? हमने गांधीजी के भी दर्शन किये। वो पूरमपूर हिन्दुस्तानी थे। गांधीजी को देखकर अपने काका की याद आती थी। बिलकुल, उन्हें उठा दो और गांधीजी को बैठा दो।" बावनराम एकाएक यहाँ से दूर चले गये गांधीजी के पास या काका के पास' यह अनुकूल नही समझ पाया। थोडी देर बाद लौटे तो बोले, "अब यहीं अपने चौधरी साहब भी बैठते हैं।"

अनुकूल इस अण्डे जैसी गोल इमारत को अपनी इतिहास और भूगोल की पुस्तकों में देख चुका था। तस्वीर देखकर उसने यह बिल्कुल नहीं समझा था कि

ही बात करते होंगे। बाबू भी यही कहते है, बिना अंग्रेजी के कोई बड़ा नही होता ! अगर अंग्रेजी में नही बना तो हिन्दी में ही जवाब सही। नही दाखला होगा तो न सही। मरा तो जाता नहीं।

मकान के पास पहुँचने पर बावनराम ने मुड़कर कहा, "जाकर पाँ लगना। पाँ लगने पर सामनेवाले का दिल भरता है। दया-माया पैदा होती है···"

पाँव छूनेवाली बात उसे अच्छी नही लगी। आँखों देखे की अगर दया-माया नही तो पाँव छूने से कैसे दया-माया हो जायेगी ? वह थोड़ी देर तक आश्चर्य में पड़ा रहा। बावनराम अपने आप ही बोले, "देखो भैया, बड़े आदमी तो वे जो है सो है ही, लेकिन हम भी तो कोई ऐसी ऊँची जात के नहीं है कि पाँव छूने में शान मे कोई बट्टा आता हो। हमारा तो धरम ही सेवा बताया गया है। अब चूँकि थोड़ा धरम से भटकते जा रहे हैं, इसलिए परेशानियाँ पैदा होने लगी। हम मन की शान्ति को छोड़कर तन की शान्ति की तरफ दौड़ रहे है। सब दौड़ रहे है तो हम भी दौड़ने लगे। पर गठजोड़ा सेवा और शान्ति का ही है। हम तो सौ बा न की एक बात जानते हैं···भगवान ने किसी को बड़ा बना दिया तो बना दिया। उसे छोटा करना हमारे हाथ मे नही···।"

अनुकूल कुछ नही बोला। दूसरी तरफ देखने लगा। उसने बावनराम से दूसरा थैला भी ले लिया। ऐसा करके उसे अच्छा लगा। दोनो हाथ घिर गये हैं, इसलिए पाँव छूने का सवाल ही नही उठता। हाथ जोड़ने से भी छुट्टी मिल जायेगी। बस गर्दन थोड़ा ज्यादा झुका देंगे।

बावनराम की नजर चौधरी साहब के घर पर ही लगी थी। घर धीरे-धीरे नजदीक आता जा रहा था। वह मन-ही-मन रिहर्सल कर रहे थे कि कैसे क्या करना होगा।

घर का दरवाजा खुला था।

बावनराम एकदम से अन्दर नही घुसे। बाहर ठिठक गये। स्वभावतः उनके रुकने पर अनुकूल भी रुका। बावनराम ने एक तरह से अपने को सँवारा। अनुकूल को भी ऊपर से नीचे तक देखा। अनुकूल थोड़ा सचेत-सा हो गया। उसकी उँगलियाँ आप-ही-आप आँखो के कोओ को टटोलने लगी। कीढ कैसे तिल दोनों कोओं मे चिपके थे। उसने उन्हें छुड़ाया। फिर सिर के बालो पर हाथ फेरा। हाथ फेरकर कपड़ों की सलवटें निकाली। इस बीच उसने दोनों ही थैले जमीन पर रख दिये थे। लेकिन एक कुत्ता आ गया और उन थैलो को सूंघने लगा। उसने उन्हें फिर हाथो मे उठा लिया। तब तक बावनराम अन्दर दाखिल हो चुके थे और किसी से बातें कर रहे थे। लौटकर बोले, "चौधरी साहब को तो तैयार होने में अभी देर लगेगी···" उनके चेहरे पर कुछ इस ढग की सुस्ती थी जैसे सब सोचा हुआ ढेर हो गया हो, वह भी बेटे के सामने। कुछ रुककर कहा, "पीछे मेहमानों का कमरा है···उसी में चलते हैं, इतने हम भी निबटकर तैयार हो लेंगे।"

वे पीछे की तरफ चल दिये। वह आदमी बावनराम को पीछे के कमरे में जाने का रास्ता समझा चुका था। वे उसी के बताये रास्ते से मेहमानोंवाले कमरे तक

सडक उसी हाते मे जाकर लोप हो जाती है। यहीं शायद दिल्ली का अन्त है। वह सोचने लगा, जो हाता रास्ते को लील जाये वो कितना जबर होगा ! उसे मिस-मिसी-सी आयी। कम्बख्त राह रोके है। अगर वहाँ अपनी बस्ती में ऐसा हुआ होता तो यह हाता कितना भी बडा क्यो न हुआ होता, लोगो ने एक-एक ईंट निकालकर मैदान बना दिया होता। बच्चे तो खासतौर से न मानते। बच्चो को रुकावटें बहुत परेशान करती हैं। बड़े होकर चाहे जो हो पर बचपन में इस तरह की बातें बर्दाश्त नहीं होनी।

बावनराम आये तो वह उन्ही बातो में खोया हुआ था। उनके आने का अनुकूल को तब पता चला जब वे बराबर में आकर खडे हो गये। उसने उनसे पहला सवाल यही किया, "क्या यह सडक इस घेर मे ही खत्म हो जाती है ? इससे आगे दिल्ली नही है क्या बाबू !"

बावनराम को न जाने क्यो अपने बेटे की बात से बहुत खुशी हुई। क्या सवाल पूछा है ! वे बोले, "दिल्ली इससे बहुत बड़ी है। इतनी बड़ी कि अन्दाज लगाना भी मुश्किल है। यह घेर नही···यह पण्डिज्जी का मकान है। चौधरी साहब हमेशा यही कहते हैं कि हमारा क्वार्टर पण्डिज्जी के मकान और उन मूर्तियो से मिला हुआ है। पण्डिज्जी से बडा कोई नहीं हुआ। जब गाडी मे बैठकर निकला करते थे तो लोग दोनो तरफ लाइन बाँधकर खड़े हो जाया करते थे। दर्शन करके निहाल हो जाते थे। उनके जमाने मे हमारे यहाँ से पण्डित श्यामसुन्दर एम. पी थे। इसी सड़क पर कही रहते थे। एक बार मैं उनके यहाँ भी अपनी यूनियन के सेक्रेट्री के साथ आकर ठहरा था। पण्डिज्जी उन्हें बहुत मानते थे। उन्होंने ही पण्डिज्जी से कहकर फैक्ट्री से निकाले गये बावन मजदूरो को वापिस रखवाया था।"

उस घेर की तरफ से एक बस आयी, रुकी और चली गयी। अनुकूल आश्चर्य से भर गया। क्यो आयी और क्यो चली गयी ? उसका मन हुआ वह इस बात को भी बाबू से पूछे, पर पूछा नही। बाबू भी सोचेंगे, इतना पढ़ गया पर पूछना है जरा-जरा-सी बात। पर अन्दर-ही-अन्दर उसे यही लगता रहा कि या तो बस घेरा छूने आयी थी या जादू-टोना करने !

वे लोग सामान उठाकर चौधरी साहब के क्वार्टर की तरफ चल दिये। अनुकूल अन्दर-ही-अन्दर उलट-पलट रहा था। एक तो उसे वह हाता परेशान कर रहा था, दूसरे वे बल्लमवाली मूर्तियाँ। आखिर आदमी मूर्तियो के हाथ मे भी खून-खराबे-वाली चीजें क्यों थमा देता है ? अच्छे-भले आदमी को लगने लगे कि कुछ होनेवाला है। हाता चाहे पण्डिज्जी का हो या फिर किसी और का, रास्ता तो आगे जाता दिखना ही चाहिए। रास्ता न दिखायी दे तो दम घुटने लगता है। पर के नजदीक जाकर उसे एक परेशानी और शुरू हो गयी। बड़े लोग हैं, पता नही कैसा व्यवहार करें ! अपने से ही कोई गलती हो जाये। कहेंगे—पढ़ेंगे इन्जीनियरी, शऊर नही राजगिरी का भी। पर वह चुप्पी मारे बाबू के पीछे-पीछे चलता रहा। वह रह-रहकर मन-ही-मन रिहर्सल करने लगता था। हाथ जोड़कर इस तरह नमस्ते करेगा। अगर हाथ घिरे हुए ? उसने तय किया कि सामान को एक कोने मे रखकर हाथ जोड़ लेगा। अगर उन्होंने अंग्रेजी में कुछ पूछ लिया ? बड़े आदमी हैं तो अंग्रेजी मे

ही बात करते होंगे। बाबू भी यही कहते है, बिना अंग्रेजी के कोई बड़ा नही होता। अगर अंग्रेजी में नही बना तो हिन्दी में ही जवाब सही। नहीं दाखला होगा तो न सही। मरा तो जाता नही।

मकान के पास पहुँचने पर बावनराम ने मुड़कर कहा, "जाकर पाँ लगना। पाँ लगने पर सामनेवाले का दिल भरता है। दया-माया पैदा होती है·· "

पाँव छूनेवाली बात उसे अच्छी नही लगी। आँखो देखे की अगर दया-माया नही तो पाँव छूने से कैसे दया-माया हो जायेगी ? वह थोड़ी देर तक आश्चर्य मे पड़ा रहा। बावनराम अपने आप ही बोले, "देखो भैया, बड़े आदमी तो वे जो है सो है ही, लेकिन हम भी तो कोई ऐसी ऊँची जात के नही है कि पाँव छूने मे शान मे कोई बट्टा आता हो। हमारा तो धरम ही सेवा बताया गया है। अब चूँकि थोडा धरम से भटकते जा रहे हैं, इसलिए परेशानियाँ पैदा होने लगी। हम मन की शान्ति को छोड़कर तन की शान्ति की तरफ दौड रहे है। सब दौड रहे है तो हम भी दौडने लगे। पर गठजोडा सेवा और शान्ति का ही है। हम तो सौ बात की एक बात जानते है···भगवान ने किसी को बड़ा बना दिया तो बना दिया। उसे छोटा करना हमारे हाथ मे नही···।"

अनुकूल कुछ नही बोला। दूसरी तरफ देखने लगा। उसने बावनराम से दूसरा थैला भी ले लिया। ऐसा करके उसे अच्छा लगा। दोनों हाथ घिर गये है, इसलिए पाँव छूने का सवाल ही नही उठता। हाथ जोड़ने से भी छुट्टी मिल जायेगी। बस गर्दन थोड़ा ज्यादा झुका देंगे।

बावनराम की नजर चौधरी साहब के घर पर ही लगी थी। घर धीरे-धीरे नजदीक आता जा रहा था। वह मन-ही-मन रिहर्सल कर रहे थे कि कैसे क्या करना होगा।

घर का दरवाजा खुला था।

बावनराम एकदम से अन्दर नही घुसे। बाहर ठिठक गये। स्वभावत. उनके रुकने पर अनुकूल भी रुका। बावनराम ने एक तरह से अपने को सँवारा। अनुकूल को भी ऊपर से नीचे तक देखा। अनुकूल थोडा सचेत-सा हो गया। उसकी उँगलियाँ आप-ही-आप आँखो के कोओ को टटोलने लगी। ढीढ के-से तिल दोनो कोओ मे चिपके थे। उसने उन्हे छुडाया। फिर सिर के बालों पर हाथ फेरा। हाथ फेरकर कपड़ों की सलवटें निकाली। इस बीच उसने दोनों ही थैले जमीन पर रख दिये थे। लेकिन एक कुत्ता आ गया और उन थैलो को सूँघने लगा। उसने उन्हे फिर हाथो मे उठा लिया। तब तक बावनराम अन्दर दाखिल हो चुके थे और किसी से बातें कर रहे थे। लौटकर बोले, "*चौधरी साहब को तो तैयार होने में अभी देर लगेगी*···" उनके चेहरे पर कुछ इस ढग की सुस्ती थी जैसे सब सोचा हुआ ढेर हो गया हो, वह भी बेटे के सामने। कुछ रुककर कहा, "पीछे मेहमानो का कमरा है···उसी में चलते हैं, इतने हम भी निबटकर तैयार हो लेंगे।"

वे पीछे की तरफ चल दिये। वह आदमी बावनराम को पीछे के कमरे मे जाने का रास्ता समझा चुका था। वे उसी के बताये रास्ते से मेहमानोवाले कमरे तक

पहुँचे तो देखकर धक्क-से रह गये। पहले ही से उस कमरे में काफी लोग डेरा डाले थे। बावनराम को उनमें से एक-दो लोग पहचाने-से भी लगे। इस बात से उनका सकोच और बढ़ गया। वे बाहर बराण्डे में ही ठिठक गये। अगर ये लोग भी पहचानते होंगे तो पता नहीं कैसा व्यवहार करें। अगर छुआछूत का चक्कर फैला दिया तो और भी कठिनाई होगी। लेकिन उन्होंने इस बारे में अनुकूल से बिना कुछ कहे थैले बराण्डे के एक कोने में ही रख दिये। अनुकूल ने महसूस किया— बाबू परेशान तो हैं ही, थोड़े सतर्क भी हैं।

बावनराम बाहर लगे नल पर चले गये। वहीं कुल्ला-मंजन किया, मुँह धोया। वे यह तय नहीं कर पा रहे थे कि औरों की तरह बाथरूम में जाकर नहायें या वहीं नल पर नहा लें। उन्होंने बराण्डे में पड़ा एक छोटा-सा तख्त एक तरफ को घसीट लिया और उस पर बैठ गये। अनुकूल को भी वहीं बैठा लिया। वे देख रहे थे कि कमरे के अन्दर ठहरे हुए लोग बाथरूम पर टूटे पड़ रहे हैं। जहाँ तक अनुकूल का सवाल था वह अपने बाबू के इस व्यवहार से क्षुब्ध था। वह यही चाहता था कि औरों की तरह बाबू भी अन्दर जायें, सामान रखें और बाथरूम का इस्तेमाल करें। आखिर और सब भी तो कर रहे हैं। उसने दबी जबान से इशारा किया, "बाबू अन्दर चलिए, हम लोग भी एक कोने में सामान रख लेंगे।"

लेकिन बावनराम टाल गये, "इतनी भीड़-भाड़ से तो यही अच्छा है⋯शान्ति के साथ बैठे तो हैं।"

थोड़ी देर बाद उसने फिर कहा, "लोग सोचते होंगे, पता नहीं ये लोग तख्त पर इस तरह क्यों बैठे हैं!"

"कोई नहीं सोचता⋯तुम अभी बच्चे हो। अभी नहीं समझोगे। अन्दरवाले तो खुश होंगे⋯। वैसे भी दूसरा कोई किसी की इज्जत या बेइज्जती नहीं करता। हम खुद ही इज्जत कराते हैं और खुद ही बेइज्जती। अपनी इज्जत रखने का मतलब कभी किसी को कहने का मौका न देना। हम 'हाँ' की आशा करके जाते हैं हो जाती है 'ना'⋯तो हो गयी ना बेइज्जती! दूसरे को जहाँ मौका मिला, उसने टोपी उतारी। इस बात के हम सब बहुत आदी हैं। वैसे भी इन्सान को अपनी कमजोरी को ध्यान में रखकर चलना चाहिए⋯कभी कुछ नहीं होगा।"

इतना लम्बा भाषण निगलने में अनुकूल को थोड़ी असुविधा अनुभव हो रही थी। उसका मन हुआ कि कह दे —तो फिर यहाँ बैठे क्या कर रहे हैं। चलिए किसी धर्मशाला में चलें। पर बाबू के सामने बोलना उसके अपने मन को ही ठीक नहीं लगा। बावनराम ने अपने आप ही कहा, "ठहरने को तो कहीं भी ठहर सकते थे। पुरानी दिल्ली में धरमशालाएँ-ही-धरमशालाएँ भरी पड़ी हैं। जब दिल्ली आते हैं तो धरमशाला में ही डेरा जमता है। वैसे भी असली दिल्ली तो चाँदनी चौक, कश्मीरी गेट, फतेहपुरी में ही है। यह तो साहब लोगों की दिल्ली है। ठहरने को तो वहाँ ठहर जाते⋯पर एक तो पुरानी दिल्ली से यहाँ तक दौड़ने में पैसा भी लगता और परेशानी भी होती⋯फिर भी चौधरी साहब मिलते या ना मिलते। दूसरे, चौधरी साहब ने बीसियों बार कहा होगा कि बावनराम भाई, जब दिल्ली आओ तो यहीं ठहरना। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि जिससे काम हो उसी

के आसपास डेरा डालो। सामने रहोगे तो लोग याद रखेंगे। नही तो आँख ओट तो पहाड़ ओट !"

सब लोग निवृत्त हो लिये तो बावनराम ने टोह ली कि अब तो बाथरूम जाने को कोई नहीं रहा। वे बाथरूम के पास जाकर खड़े हो-गये। इधर-उधर देखा। खँखारा। सब लोग अपना सामान इकट्ठा करने, अटैचियों मे ताले लगाने और बिस्तर समेटकर रखने में लगे थे। जिन एक-दो लोगो को वे पहचानते थे वे दीवार की तरफ मुँह किये पूजा कर रहे थे। बावनराम ने वही खडे-खडे इशारा करके अनुकूल को बुलाया और बाथरूम मे निवटने के लिए भेज दिया। अनुकूल के बाथरूम मे चले जाने पर किसी ने जरा भी ध्यान नही दिया। ध्यान देने की ऐसी कोई वात भी नही थी।

जब तक अनुकूल अन्दर मे निकला, बावनराम उसके कपडे तख्त पर फैलाकर हाथ से सलवटें निकालते रहे। थैले मे पड़े-पडे अच्छे-खासे कपडे खराब हो जाते है। अगर कही अपना अनुकूल दाखला पा गया ! पाँच साल वाद जब इन्जीनियर होगा तो उसके ठाठ ही अलग होंगे। तब तो एक धोबी का लड़का सिर्फ कपड़ो पर स्त्री करने के लिए ही रख दिया जायेगा। अब जो हमे देखकर नाक-भौं चढाते हैं, उन सबकी नाक और भौंहे सतर की तरह सीधी हो जायेगी। सिफारिशें करते घूमा करेंगे। हमलोगो ने 'हट परे' और 'दूर परे' मे ही जिन्दगी गुजार दी। यह लड़का तो उस जलालत से बच जायेगा। अब तो जमाना बहुत बदल गया। नही तो उस जमाने में किसी की मजाल हो सकती थी कि इस तरह बराण्डे मे कपडे फैलाकर बैठ जाय'। अनुकूल निकल आया।

"क्या बिना नहाये निकल आये ?" बावनराम ने पट से पूछा।

"वहाँ तो'''जहाँ टट्टी जाओ, वही नहाओ। बाहर नल पर नहाये लेता हूँ।" बावनराम हँस दिये, "जब इतने बडे-बड़े पण्डित वही पर नहाते हैं तो वहाँ नहाये मे हमारी पण्डताई मे कौन-सी कमी आती है !"

"मन नही लेता बाबू !"

"सब लेगा'''बाहर नल पर बैठकर नहाना अच्छा नही लगता। तुम जब इन्जीनियर हो जाओगे और सरकारी बँगलो में रहोगे, उनमे तो सब ऐसे ही गुसलखाने होंगे। शुरू से आदत पड़ी रहेगी तो अच्छा रहेगा।" यह कहकर बावनराम के चेहरे पर एक तरह की आन्तरिक खुशी झलक आयी। अनुकूल को नहाने के लिए फिर बाथरूम मे ही वापिस जाना पड़ा।

बावनराम फिर अकेले रह गये। उनकी चकरी फिर घूमने लगी। देखा, कैसा जमाना है। दुनिया मे जाननेवालों से सहारा होता है, यहाँ जानने की वजह से ही गैर बने वाहर बैठे हैं। हो सकता है अगर ये लोग न हुए होते तो हम दोनो भी जाकर वही जमे होते। ऐसी ही बातो से बच्चो के मन मे जहर घुलता है। बच्चों के मन का जहर दुनिया-भर को जहर में बुझा देने के लिए काफी होता है। वो तो अनुकूल के संस्कार अच्छे हैं, इसलिए चुपचाप सबकुछ होते देख रहा है। सस्कारो के ही कारण तो उसका मन उस गुसलखाने मे नहाने को नही हुआ। जरा-सी बात दिल में बैठा ली। अगर ऐसा ही चला तो इस लड़के की कैसे निबहेगी ! जिन्दगी मे कुछ

बनने के लिए यह सब भी जरूरी है। हमारे बाप-दादो के साथ जो हुआ उसी का असर तो हम लोगो के मनो पर भी पड़ा है। कबसे सब सहते चले आ रहे हैं, लेकिन कभी महसूस नही किया। जबसे महसूस करना शुरू किया तो बदलाव दिखायी दिया। अब यह आगे आनेवाली पीढ़ी शायद इसे और भी ज्यादा महसूस करे। हम लोग तो उस सबको इन तक पहुँचानेवाले पुल है, पुल। पहुँचाकर टूट जायेंगे। आगे इनका काम होगा, अपने आगे के लोगों को और आगे कैसे पहुँचायें।

बावनराम आप-ही-आप मुस्करा दिये। उन्होंने एक मौलिक और महत्त्वपूर्ण बात सोच निकाली थी।

अनुकूल नहाकर तौलिया बाँधे गुसलखाने से निकला तो बावनराम की नजर उसके शरीर पर गयी। अच्छी चमक है। कद भी अच्छा निकलेगा। शरीर भी···भगवान की कृपा से ठीक ही उठान ले रहा है। बस नजर न लगे। बावनराम ने कानों को हाथ लगाया। अब तो भगवान सुन लें। दाखिला पा जाये। फिर तो नाव किनारे। मेरी या इसकी माँ की ही नही, सबकी। वे उसे निहारते रहे। इस तरह निहारते देख अनुकूल थोड़ा सिकुड़ गया। वह उनकी तरफ देखकर बोला, "जाइए, आप भी निबट आइए। गुसलखाना खाली है।"

उनके कपड़े तैयार थे। वे झटपट उठे और बाथरूम की तरफ चल दिये। जाते-जाते बोले, "मैंने कपड़ो पर हाथ से ही लोहा कर दिया। पहनकर जल्दी से तैयार हो जाओ। कंघी और छोटा शीशा तख्त पर निकालकर रख दिया है। डिब्बा साथ ले जा रहा हूँ। बस अब आया।" चुटकी बजायी, और चले गये।

बावनराम घुसने लगे तो उन दो पूजाधारियों मे से एक बोला, "जरा ठहरकर चौधरी···मेरा साबुन अन्दर रह गया।"

वे वहीं-के-वहीं खड़े रह गये। वह पूजाधारी लपककर आया और अपने कपड़ो को समेटता हुआ अन्दर चला गया। साबुनदानी लेकर निकला तो उसकी नजर अनुकूल पर गयी। वह बाल निकाल रहा था।

उसके निकलने पर बावनराम बिना कुछ बोले अन्दर चले गये। लेकिन वे भीगे फर्श पर बने उसके पैरो को बचाकर चल रहे थे। हो सकता है पैरों के निशानो पर पाँव पड़ जाने से ही कहीं उन्हें छूत न लग जाये!

अनुकूल ने इस बीच कपड़े बदले। कपड़े पहनने के बाद बाल ठीक किये। घर पर उसका क्रम बिल्कुल विपरीत था। वहाँ तो तौलिया बाँधे-ही-बाँधे, पहले वह बाल बनाता था फिर कपड़े पहनता था। यहाँ उसे ऐसा करना अच्छा नहीं लगा। कुछ भी कहिए, ऐसे मे मनुष्य अधनंगा तो होता ही है। अधनंगा और नंगा धीरे-धीरे एक-से ही लगने लगते हैं।

शीशे मे देखकर बाल बनाते समय उसके दिमाग की गति तेज हो गयी। बार-बार यही सवाल कि आखिर बाबू यहाँ ठहरे ही क्यो? कहीं भी ठहर सकते थे। अपनी बेइज्जती आप करा रहे है। दाखिला जाये भाड़ में। उस आदमी ने बाबू को अपने साबुन के मारे बाथरूम में जाने से रोक दिया। रोक तो मुझे भी देता पर

पहचाना नही। कुछ भी हो, बाबू को इतनी बडी बात पर खामोश नही रहना चाहिए था। घुस जाते···देखते वो क्या कर लेता? चौधरी साहब को अपना आदमी बताते है···अपना आदमी होकर कोई ऐसा करता है? कोई किसी के घर जाय और घर-वाला बाहर भी न निकले। आदमी बड़ा हो जाता है तो क्या ब्यौहार से भी उसे छूट मिल जाती है? काँजी हाउस में जानवर ले जाओ तो वहाँ भी मुशी मिलता है। लिखत-पढत होती है। बकरी चली गयी थी। कितना चक्कर पड़ा था। यहाँ कोई पूछनहार ही नही। ऐसे मे इन्जीनियर बन भी गये तो क्या हो जायेगा। नीचा दिखानेवाले यथावत बने रहेंगे।

अनुकूल शीशे मे देख जरूर रहा था पर उसे अपनी शक्ल तक नजर आना बन्द हो गयी थी। जो कुछ भी था वह उसका अपना सोच था। उसकी शक्ल पर वही सब-कुछ घट रहा था। भवें तनती थी। होठ फड़कते थे। नाक फूल जाती थी। एक-आध बार उसका नीचे का होठ भी थरथराया था। इस सब पर उसका ध्यान तब गया जब बाल बाहने का काम खत्म हो चुका और अन्दर से जोर-जोर से बहस करने की आवाज आयी। वे लोग किसी बात को लेकर आपस मे बंट गये थे और एक-दूसरे पर झपट पडने की तरह बोल रहे थे। वह एकाएक चेता कि वह काहे के लिए कंघा और शीशा थामे खडा है। उसने जल्दी-जल्दी रखा और घर से चलने के पहले खरीदा गया जूता पहनने लगा। जूता पहनते हुए उसे हल्की-सी परेशानी हुई। अगर किसी की नजर जूते पर गयी तो सोचेगा कि दिल्ली आने के लिए नया जूता खरीदा होगा। जैसे उससे पहले नगे पाँव ही घूमता था। चप्पल इतनी घिस गयी थी कि एडी जमीन से रगड़ खाने लगी थी। बिना जूता खरीदे काम ही नही चल सकता था। बाबू भी इस तरह जूता न खरीदवाते। जूते मे इतने पैसे लगे, ऊपर से यहाँ आने-जाने का खर्चा···। इतना सब करना कम मुश्किल नही था। वह धीरे-से बुद-बुदाया—'खैर···अब जो भी हो।' और फीते बाँधने लगा। फीते बाँधकर वह पंजो पर खडा हो गया। जूतो की चर्र-मर्र महसूस की। वह खुश था। एकदम नया और चर्र-मर्र करनेवाला जूता! कितना मजा आयेगा!

बावनराम को पन्द्रह मिनट से ज्यादा नही लगे होगें। उनके शरीर पर पानी की बूंदे थी। शायद शरीर पूरी तरह पोछा नही गया था। उनके झुले हुए कन्धो पर बूंदें अधिक टिकी थी। आधी धोती लपेटी हुई थी और आधी कन्धे पर पड़ी थी। कुछ-कुछ गीली थी। शरीर जितना भी पोछा गया था वह धोती के उसी हिस्से से पोंछा हुआ मालूम पड़ रहा था।

अनुकूल मुँह-ही-मुँह में बुदबुदाया— तौलिया ही माँग लेते। वे पूजा करते हुए आ रहे थे। रामायण के कुछ दोहे उन्हे याद थे, उन्ही को दोहराकर वे रोजाना नहाने के बाद अपनी पूजा सम्पन्न किया करते थे। उच्चारण भी उन्होंने अपना ही बना लिया था। अनुकूल ने उनकी ओर तौलिया बढाते हुए कहा, "लीजिए···पोंछ-कर कपडे बदल लीजिए।"

उन्होंने कन्धे पर पडी धोती को ही फिर मे बदन पर रगड लिया, "लो पुंछ गया। हवा लगी और सूखा। रामायण मे कहा है कि यह शरीर पंच तत्व से बना है···पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि और आकाश। शरीर जल प्रधान है। इसलिए जल

में क्या परहेज।" वे तख्त पर उकड़ूँ बैठ गये और धीरे-धीरे होंठ हिलाकर बुदबुदाने लगे। उनका इस तरह बैठना अनुकूल को थोड़ा अटपटा लगा। वह थोड़ा हटकर खड़ा हो गया।

'अगर चौधरी साहब ने टाल दिया तो?' उसकी रील चालू थी। बाबू समझते हैं कि पता नहीं वह क्या-से-क्या कर देगा। जो आदमी इतनी भी परवाह न करता हो कि कौन घर आया है…उसके उठने-बैठने की जगह भी है या नहीं… वह किसी का काम करेगा…? लगता नहीं! सवेरे से कोई यह तक तो पूछने नहीं आया कि किसका क्या हाल है। सब कुत्ते के पिल्लों की तरह एक-दूसरे में को घुसे खिलखिला रहे हैं। बाबू के पास कोई आता है, तत्काल उठकर चल देते हैं। खिलाते-पिलाते ऊपर से हैं। यहाँ आकर बाबू ने इतना पैसा भी खर्च किया और बात वही-की-वही रहेगी। बहनोई लोग बाबू को ऊपर से तोड़-तोड़कर खा जायेंगे…गये तो थे, क्यों नहीं बनवा लाये शाहजादे को इन्जीनियर! सैंकड़ों रुपये पर पानी ऊपर से फेर दिया! किस्मत की परिधि से बाहर उछाला लेने से क्या फायदा! वहीं आकर गिरोगे…जहाँ लिखा है।

बाबू धोती बाँध रहे थे। नीचे कुछ नहीं पहनते। धोती पतली पड जाती है। उघाड़े हो जाते है। बाबू ने सारी जिन्दगी इसी तरह गुजार दी। अब थोड़े ही बदलेंगे। वह दूसरी तरफ गर्दन घुमाने के लिए बाध्य हो गया। वह उधर ही देखता रहा जिधर गर्दन घूम गयी थी, बल्कि दो-चार कदम आगे भी बढ़ गया।

कमरे के लोग अपने सामान की बाँधा-जूड़ी कर रहे थे। सामान बाँधते हुए जिस तरह दिन-भर का कार्यक्रम बनाया जा रहा था उससे लगता था कि रोजाना निकलने से पहले इसी तरह सामान बाँध-जूड़कर रखा जाता है और शाम को लौटकर फिर खुल जाता है। किसी की बात से यह पता नहीं चल रहा था कि कौन किस काम से आया है और कब तक रहेगा।

"अरे दादा, ऐसा मनाओ कि बस आज लौट चलें। रोज की इस बाँधा-जूड़ी से निजात मिले।"

किसी ने जोर से कहा, "जय बमभोले की!"

एक ने पूछा, "असली बमभोले की जय बोल रहे हो या चुनावों में चुनकर आये हुए इस अपने बमभोले बाबा की? चार दिन पड़े-पड़े हो गये…बस एक टेलीफोन किया था। उधर से जो समझा दिया, वही समझकर हमें बता दिया' 'उतना तो डाकिया भी कर देता! बताओ ऐसे आदमी को सौंपें या पोंछें।"

"बस उनकी मति ना पूछो…" कोई और कह रहा था, "इतने सीधे हैं कि चाहे उल्टा लटका लो और चाहे सीधा… छूटते ही कहते हैं… चिट्ठी बनवा लाओ, दस्तखत करवा ले जाओ। मैं कहता हूँ कुछ कहो-करो भी तो… या चिट्ठी पर दस्तखत ही करते रहोगे।"

"करते भी हैं।"

"करना वो जो किया हुआ दिखायी पड़े।"

"यह तो ठीक कहते हो, पर आजकल सुनता कौन किसकी है।"

इस बार एक नयी आवाज उभरी, "देखो भैया, सच कहना दुखी रहना। वैसे

तो झूठ बोलकर भी हम सुखी ही रहेंगे। सुख झूठ-सच का नहीं, मन का होता है। इतने लोग यहाँ हैं, सबसे यही कहते हैं कि कोई किसी की नहीं सुनता। जब कोई किसी की नहीं सुनता तो हमारे इन बमभोले बाबा के कहने से साहू साहब को मिनि-सिमेण्ट-प्लाण्ट का परमिट कैसे मिल गया? सच पूछो तो मिनिस्टर हो या संसद-सदस्य, इनके यहाँ दो ही भाषाएँ चलती हैं···नोट की या वोट की।"

कोई बीच में टुप्प-से टपक पड़ा, "चोट की भी···"

पहलेवाला ही बोला, "हाँ, चोट की भाषा समझने में तो विष्णु भगवान ने भी भूल नहीं की थी। भृगु के चट-से चरण पकड़ लिये थे। लेकिन यहाँ तो नोट और वोट की बात चल रही है। अभी कोई चूढ़ा, चमार, डोम···आ जाये, फिर देखो सबके-सब कैसे खड्डी के लूम की तरह घूमने लगते है। कोई डकैत या गुट का नेता आ जाये तो ले जाकर अन्दर बैठाया जायेगा। आगे-पीछे··· सब तरफ के घोड़े सरपट दौड़ने लगेंगे। नोट की बात जैसी तो बात ही नहीं। बिन बादल बरसात करा दे। वो तो स्वयं नारायण है। बेकार हम यहाँ एक हफ्ते से···मुँह से गाली निकलती हैं··· अपनी···ऐसी की तैसी करा रहे हैं। जब कुछ कहो, हँस देंगे। या कहेंगे मौका आने दो। कब आयेगा मौका···? यहाँ तो तुम्हारे चाय के प्याले तक के मोहताज नहीं हैं। दोनों वक्त अपनी पीते हैं···।"

एक खुशामदाना अन्दाज में बोला, "चायवाली बात तो गलत है·· कोई कहाँ तक चाय पिला सकता है। अगर इतने लोगों को एक-एक प्याला चाय ही पिलायें तो अपने आप क्या खायेंगे। एक सांसद को मिलता ही कितना है···? सबकी सुनते हैं, जितना बन पड़ता है करते भी हैं।"

वही आदमी बोला, "डण्डा करते हैं···करनेवाले तो मनोहर भाई जैसे लोग होते हैं। जाकर भिड़ गये कि यह काम करना है···हम 'ना' सुनने के आदी नहीं। तुम यहाँ 'ना' करोगे तो हम वहाँ 'ना' कर देंगे। हमारा तो आज कूँच, काम ससुर हो या न हो। मन-ही मन खूब जानते और समझते हैं कि पण्डाजी कह सच्ची बात रहे हैं। पर मुँह पर स्वार्थ का छींका जो चढ़ा है। हाँ कैसे करें।"

कोई धीरे-से बोला, "स्वार्थ का छींका तो हम सभी ने चढ़वा रखा है, पण्डा-जी।" इस बात पर हँसी हो गयी। हँसी खत्म होते ही किसी ने कहा, "बाहर जो टिका है ना, जात का सरकारी पण्डत है। पास के गाँव का ही है। अब देखना, सब कुछ करा के जायेगा। हम सोचत है, इसी सरकारी महादेव पर हम भी जाकर जल चढ़ा दें।"

सब हँस दिये। अनुकूल वहाँ से खिसका और इधर आ गया। वह बार-बार मुँह पर हाथ फेर रहा था। मकड़ी का जालानुमा कोई चीज चिपक गयी थी। हटाये नहीं हट रही थी।

बावनराम कपड़े पहन चुके थे। उन्होंने अनुकूल की तरफ देखा। उसका चेहरा लाल था। वे उसके पास आये और बोले, "चलो चलकर देखें, चौधरी साहब बाहर आये या नहीं।"

से क्या परहेज।" वे तख्त पर उकड़ूँ बैठ गये और धीरे-धीरे होंठ हिलाकर बुदबुदाने लगे। उनका इस तरह बैठना अनुकूल को थोड़ा अटपटा लगा। वह थोड़ा हटकर खड़ा हो गया।

'अगर चौधरी साहब ने टाल दिया तो?' उसकी रील चालू थी। बाबू समझते हैं कि पता नहीं वह क्या-से-क्या कर देगा। जो आदमी इतनी भी परवाह न करता हो कि कौन घर आया है ''उसके उठने-बैठने की जगह भी है या नहीं'' वह किसी का काम करेगा'''? लगता नहीं! सवेरे से कोई यह तक तो पूछने नहीं आया कि किसका क्या हाल है। सब कुत्ते के पिल्लों की तरह एक-दूसरे में को घुसे सिलबिला रहे हैं। बाबू के पास कोई आता है, तत्काल उठकर चल देते हैं। खिलाते-पिलाते ऊपर से हैं। यहाँ आकर बाबू ने इतना पैसा भी खर्च किया और बात वही-की-वही रहेगी। बहनोई लोग बाबू को ऊपर से तोड़-तोड़कर खा जायेंगे'''गये तो थे, क्यों नहीं बनवा लाये शाहज़ादे को इन्जीनियर! सैकड़ों रुपये पर पानी ऊपर से फेर दिया! किस्मत की परिधि से बाहर उछाला लेने से क्या फायदा! वहीं आकर गिरोगे'''जहाँ लिखा है।

बाबू धोती बाँध रहे थे। नीचे कुछ नहीं पहनते। धोती पतली पड़ जाती है। उघाड़े हो जाते हैं। बाबू ने सारी जिन्दगी इसी तरह गुजार दी। अब थोड़े ही बदलेंगे। वह दूसरी तरफ गर्दन घुमाने के लिए बाध्य हो गया। वह उधर ही देखता रहा जिधर गर्दन घूम गयी थी, बल्कि दो-चार कदम आगे भी बढ़ गया।

कमरे के लोग अपने सामान की बाँधा-जूड़ी कर रहे थे। सामान बाँधते हुए जिस तरह दिन-भर का कार्यक्रम बनाया जा रहा था उससे लगता था कि रोजाना निकलने से पहले इसी तरह सामान बाँध-जूड़कर रखा जाता है और शाम को लौट-कर फिर खुल जाता है। किसी की बात से यह पता नहीं चल रहा था कि कौन किस काम से आया है और कब तक रहेगा।

"अरे दादा, ऐसा मनाओ कि बस आज लौट चलें। रोज की इस बाँधा-जूड़ी से निजात मिले।"

किसी ने जोर से कहा, "जय बमभोले की!"

एक ने पूछा, "असली बमभोले की जय बोल रहे हो या चुनावों में चुनकर आये हुए इस अपने बमभोले बाबा की? चार दिन पड़े-पड़े हो गये'''बस एक टेलीफोन किया था। उधर से जो समझा दिया, वही समझकर हमें बता दिया' 'उतना तो डाकिया भी कर देता! बताओ ऐसे आदमी को लीपें या पोतें।"

"बस उनकी मति ना पूछो" कोई और कह रहा था, "इतने सीधे हैं कि चाहे उल्टा लटका लो और चाहे सीधा छूटते ही कहते हैं— चिट्ठी बनवा लाओ, दस्तख्त करवा ले जाओ। मैं कहता हूँ कुछ कहो-करो भी तो या चिट्ठी पर दस्तख्त ही करते रहोगे।"

"करते भी हैं।"

"करना वो जो किया हुआ दिखायी पड़े।"

"यह तो ठीक कहते हो, पर आजकल सुनता कौन किसकी है।"

इस बार एक नयी आवाज उभरी, "देखो भैया, सच कहना सुखी रहना। वैसे

तो झूठ बोलकर भी हम सुखी ही रहेंगे। सुख झूठ-सच का नही, मन का होता है। इतने लोग यहाँ हैं, सबसे यही कहते हैं कि कोई किसी की नही सुनता। जब कोई किसी की नही सुनता तो हमारे इन बमभोले बाबा के कहने से साहू साहब को मिनि-सिमेण्ट-प्लाण्ट का परमिट कैसे मिल गया? सच पूछो तो मिनिस्टर हो या संसद-सदस्य, इनके यहाँ दो ही भाषाएँ चलती है···नोट की या वोट की।"

कोई बीच मे टुप्प-से टपक पड़ा, "चोट की भी···"

पहलेवाला ही बोला, "हाँ, चोट की भाषा समझने में तो विष्णु भगवान ने भी भूल नही की थी। भृगु के चट-से चरण पकड़ लिये थे। लेकिन यहाँ तो नोट और वोट की बात चल रही है। अभी कोई चूढा, चमार, डोम···आ जाये, फिर देखो सबके-सब कैसे खड्डी के तूम की तरह घूमने लगते है। कोई डकैत या गुट का नेता आ जाये तो ले जाकर अन्दर बैठाया जायेगा। आगे-पीछे···सब तरफ के घोड़े सरपट दौड़ने लगेंगे। नोट की बात जैसी तो बात ही नही। बिन बादल बरसात करा दें। वो तो स्वयं नारायण है। बेकार हम यहाँ एक हफ्ते से···मुँह से गाली निकलती हैं··· अपनी···ऐसी की तैसी करा रहे हैं। जब कुछ कहो, हँस देंगे। या कहेंगे मौका आने दो। कब आयेगा मौका···? यहाँ तो तुम्हारे चाय के प्याले तक के मोहताज नही है। दोनो वक्त अपनी पीते हैं···।"

एक खुशामदाना अन्दाज मे बोला, "चायवाली बात तो गलत है···कोई कहाँ तक चाय पिला सकता है। अगर इतने लोगो को एक-एक प्याला चाय ही पिलायें तो अपने आप क्या खायेंगे। एक सासद को मिलता ही कितना है···? सबकी सुनते है, जितना बन पड़ता है करते भी हैं।"

वही आदमी बोला, "डण्डा करते है···करनेवाले तो मनोहर भाई जैसे लोग होते हैं। जाकर भिड़ गये कि यह काम करना है···हम 'ना' सुनने के आदी नही। तुम यहाँ 'ना' करोगे तो हम वहाँ 'ना' कर देंगे। हमारा तो आज कूँच, काम ससुर हो या न हो। मन-ही मन खूब जानते और समझते है कि पण्डाजी कह सच्ची बात रहे हैं। पर मुँह पर स्वार्थ का छीका जो चढा है। हाँ कैसे करें।"

कोई धीरे-मे बोला, "स्वार्थ का छीका तो हम सभी ने चढवा रखा है, पण्डा-जी।" इस बात पर हँसी हो गयी। हँसी खत्म होते ही किसी ने कहा, "बाहर जो टिका है ना, जात का सरकारी पण्डत है। पास के गाँव का ही है। अब देखना, सब कुछ करा के जायेगा। हम सोचत हैं, इसी सरकारी महादेव पर हम भी जाकर जल चढा दे।"

सब हँस दिये। अनुकूल वहाँ से खिसका और इधर आ गया। वह बार-बार मुँह पर हाथ फेर रहा था। मकड़ी का जालानुमा कोई चीज चिपक गयी थी। हटाये नही हट रही थी।

बाबनराम कपड़े पहन चुके थे। उन्होंने अनुकूल की तरफ देखा। उसका चेहरा लाल था। वे उसके पास आये और बोले, "चलो चलकर देखें, चौधरी साहब बाहर आये या नही।"

वह चुप रहा। बावनराम की समझ में नहीं आया तो उन्होंने पूछा, "क्यो, क्या हुआ?"

अनुकूल का गला भर आया। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह कैसे बदला ले। वह बोला, "कुछ नही।"

"फिर भी तो···"

"गाली दे रहे थे···कह रहे थे सरकारी पण्डत···सरकारी महादेव!"

पहले तो बावनराम के होंठ फड़के फिर अपने को सँभालकर बोले, "इन सब बातो पर ध्यान दोगे तो जीना मुश्किल हो जायेगा। कदम-कदम पर सुनना पड़ेगा। कम-से-कम अब इतना तो हो गया कि पीठ पीछे कहते है। हमने तो गन्दी-से-गन्दी बातें थूक की तरह मुंह पर झेली है। धीरज रखो। जहाँ इतना सँभला वहाँ और भी सुधरेगा।"

अनुकूल इतना उत्तेजित और असहाय अनुभव कर रहा था कि उसके पैर तेजी के साथ आगे-आगे बढते चले जा रहे थे। बावनराम का समझाना चालू था, "तबियत छोटी मत करो। यह तो अच्छी अलामत है···हम लोगो के नाम तो माँ-बाप के पुकारने के लिए होते थे। लोग तो जात का नाम लेकर कहते थे कि अबे फलाँ *(जात) के के···। दो 'के' लगाकर जात और बाप दोनो को लाँघ जाते थे। अब तो* जब लोगो को जात का पता चल जाता है तब ही नाक-मुंह सिकोड़ते हैं। पता नही चलता तो अनजान बने मस्त रहते हैं।"

अनुकूल ने कुछ कहने को मुंह खोला पर खुला-का-खुला रह गया। चौधरी साहब बराण्डे में आ बैठे थे और लोग उनके चारो ओर मँडरा रहे थे।

बावनराम को देखकर चौधरी साहब तपाक से उठे और लम्बी तान में बोले, "आइए, आइए···बावनरामजी चौधरी! कैसे रास्ता भूल गये···?"

जो लोग मौजूद थे और चौधरी साहब की नजर पकड़ने के लिए उचक-मचक मचाये थे, वे थोड़ा चौंके। फुसफुसाये।

"लगता है कोई नजदीकी आदमी है।"

"बराण्डे मे यही तो डेरा डाले हैं।"

"हाँ, सरकारी पण्डत।"

तब तक बावनराम भी तेजी से दो कदम रखकर उनके पास पहुँच गये। चौधरी साहब ने उन्हे सीने से चिपका लिया।

"वाह भई खूब आये!"

बावनराम ने तपाक से परिचय कराया, "यह आपका ही लड़का है, अनुकूल! हाईस्कूल पास कर चुका···।" अधूरी बात छोड़कर उन्होंने अनकहे को भी कहने का प्रयत्न किया।

चौधरी साहब अनुकूल के कन्धे पर हाथ रखकर बोले, "अरे भई वाह! हम तो इतना भी नही पढे। अपने यहाँ के इन होनहार बच्चों पर गर्व होता है। तुमने तो कमाल ही कर दिया।" थोड़ी देर तक पीठ थपथपाते रहे।

अनुकूल लगातार चौधरी साहब की तरफ देख रहा था। बीच-बीच मे इधर-उधर इकट्ठे लोगो के चेहरो पर भी नजर डाल लेता था। जैसे ही उसकी नजर

बावनराम से मिली उन्होंने तत्काल पाँव छूने के लिए इशारा किया। पहली बार तो वह इस तरह टाल गया जैसे नजर छिटक गयी हो और देख न पायी हो। दूसरी बार बावनराम को आँखे तरेरनी पडी। अनुकूल ने झुककर गोड-भर छू लिये। चौधरी साहब ने उसके हाथ अपने हाथो मे थामकर कहा, "बावनराम, भाई आपका बेटा है होनहार ''अच्छा किया दिल्ली घुमाने ले आये। दिल्ली हिन्दुस्तान का दिल है, दिल। जिसका दिल उसकी देह। एक बार दिल्ली आ गये तो अब सारा हिन्दुस्तान तुम्हारा। हिन्दुस्तान तो वैसे भी इन्ही नौजवानो का है।" रुककर बोले, "अच्छा तो यह बताइए, आये कब ?"

"सवेरे।"

"ठहरे कहाँ हैं ?"

"पीछे की तरफ ही सामान रख लिया था।"

"मुझे किसी ने बताया ही नही।"

"हाँ, कोई एक साहब थे। उन्होने कहा, साहब अभी सो रहे हैं'''पीछेवाले कमरे में ही सब लोग ठहरते हैं, आप भी वही चले जाओ। मैंने भी सोचा, क्यो बेकार इस समय आपको हलकान किया'''वही बराण्डे मे सामान रखकर झटपट निबट लिये।"

उन्होंने बडा-सा अरेऽऽ खीचा और धीरे-से बुदबुदाये, "मुझे बताना चाहिए था'''।"

इतने मे कोई सज्जन बाहर से आये। चौधरी साहब उनसे और भी तपाक से मिले। उनसे उनका मिलना बराबर का मिलना था। मिलन खत्म हो जाने के बाद बावनराम का परिचय कराया गया, "ये हमारे शुभचिन्तक बावनरामजी है'''यह समझ लीजिए कि पिछला चुनाव इन्ही के बूते जीता गया। आठ सौ सालिड वोट डलवायी थी। कुल पाँच सौ से हार-जीत हुई' 'हमारे क्षेत्र में इतना तगडा इलेक्शन कभी नही हुआ। ये अपने जाति मे बेताज बादशाह है। ऐसे लोग अब नही होते''' खासतौर से इन जातियों मे।"

अनुकूल उनकी तरफ टकटकी लगाकर देख रहा था। उसके चेहरे पर अवाछनीय प्रकार के भाव आ-जा रहे थे। चौधरी साहब की नजर उधर गयी तो झटके मे दूसरी तरफ घुमा ली। आगन्तुक की तरफ मुखातिब होकर बावनराम बोले, "ये हमारे गहरे दोस्त और संसद के साथी राजेन्द्रसिंहजी हैं। सलेमपुर चुनाव-क्षेत्र से एम पी. हैं।" फिर राजेन्द्रसिंह की तरफ देखकर कहा, "भाई साहब, कल प्रधानमन्त्रीजी सेण्ट्रल हॉल में कह रही थी कि हरिजनों के साथ जो अत्याचार हो रहा है इसके विरुद्ध विस्तृत जन-जागरण की आवश्यकता है। उनको इतना चिन्तित मैंने कभी नही देखा। हमेशा मुस्कुराती रहती हैं। मुझसे कहने लगी कि मैं तुमको इस कमेटी मे रख रही हूँ'''जाकर पता लगाइए, सवर्ण इन लोगों को क्यो तग करते है !"

राजेन्द्रसिंह बोले, "नही चौधरी साहब, वही कुछ नही हो रहा है'' यह सब अखबार करा रहे हैं। क्या ये लोग हमारी बहू-बेटी को बुरी नजर नही देखते ? अब तो हाथ भी डालने लगे। कोई रोकता है तो कहते हैं, सवर्ण दमन के रास्ते पर

चलते हैं। आप ही बताइए, बेरहमी और बेइज्जती की आती हुई इस बाढ को कैसे रोकें ?"

चौधरी ने प्रधानमन्त्री का पक्ष लिया, "बात इतनी सहज नही जितनी आप बनाये दे रहे हैं इन लोगो पर अत्याचार तो सदियों से होता चला आ रहा है। हम लोग तो थोडा अलग पडते है, पर हम लोगो तक को आप लोग हिकारत की नजर से देखते रहे है। जख्म तो सभी के लगे है किसी के कम गहरे किसी के ज्यादा··· और कुछ नासूर की तरह पके है ··" और हँस दिये।

राजेन्द्रसिंह हँसकर बोले, "भगवान की रेटी-मेटी तो जा नही सकती। तख्ती पर कच्ची स्याही से लिखी इबारत तो है नही कि धोओ, पोतो और फिर लिख लो। जो जहाँ है वो वही रहेगा। जरूरत पडी तो मैं प्रधानमन्त्रीजी से भी कह दूँगा कि *मैडम, मानसिक स्तर उठाइए। अपने पैरो पर खड़े होने दीजिए। इनके हाथो मे* ऊँची-ऊँची बैसाखियाँ पकडाकर दूसरो को बौना न बनाइए।"

बावनराम हाथ जोडकर बोले, "सरकार, मैं तो छोटा आदमी हूँ पर माँ-बाप कमजोर और हेठे बच्चे का ज्यादा ध्यान रखते है। अगर आप लोग ही ऐसा कहेगे तो फिर हाथ पकड़कर कौन उबारेगा ?"

"सारा चक्कर ऊपर आने का ही तो है भाई साहब ! पिछले छत्तीस सालो से मालिश भी हो रही है, टॉनिक-पर-टॉनिक भी दिये जा रहे है·· लेकिन यह ऊपर [illegible] वे रस्सी डाल-डालकर [illegible] आप लोगो के बीच के [illegible]

अनुकूल बाहर की तरफ आ गया। वह एक छोटा-सा लॉन था। लॉन मे घास धूप-छाही थी तथा सूखती पत्तियोवाले फूलो के कुछ पौधे थे। उन्हें पानी तो चाहिए ही था, खाद भी चाहिए था। लगा तो दिये गये थे लेकिन परवरिश का कोई माकूल इन्तजाम नजर नही आ रहा था। देखने से लगता था, जितना भी चले हैं अपनी जिजीविषा के बल पर ही चले है। साधनो का सहयोग नही के बराबर है।

चौधरी साहब ने अभी मैदान नही छोडा था, "राजेन्द्रसिंहजी, ऐसा नही है·· *आप कुछ ज्यादा ही नाराज है। मैं यह मानता हूँ जो ऊपर पहुँच जाते हैं वे नीचे-*वालो की परवाह नही करते। यह बात उन लोगो मे नही और लोगो मे भी है। एक गरीब भाई-बिरादर सभी के लिए समान रूप से जी का जजाल होता है।"

कुछ और लोग आ गये। वे सब भी वही बिखर गये। अब अनुकूल लॉन मे अकेला नही था। कुछ खडे थे कुछ बैठ गये थे। एक जाकर बिलकुल चौधरी की कुर्सी से सटकर खडा हो गया था। चौधरी साहब पहले बातो के बहाने उसे अनदेखा करते रहे। जब वह वहाँ से नही टरका तो उसकी ओर मुखातिब होकर बोले, *"कहिए पण्डाजी, क्या हुक्म है ?"*

उसकी आवाज तनी थी, "ये हुक्म और फरमान तो एक हफ्ते से कहे-सुने जा रहे हैं। मैं सिर्फ यह पूछने आया हूँ कि अगर कुछ न होता हो तो मैं अपने घर का रास्ता लूं। बेशर्मों की तरह एक हफ्ते से मुफ्त खाट, पानी, छत और गुसलखाने का इस्तेमाल कर रहा हूँ···लेकिन खाने-पीने और आने-जाने मे भी तो खर्च हो ही रहा

है। घरवालों की जो हालत होगी सो होगी ही।"

चौधरी साहब के चेहरे पर उत्तेजना का भाव आया, पर वे उसे जज्ब कर गये। सँभलकर बोले, "पण्डाजी, आपकी बात वाजिब है। परदेस वाकई घर नहीं होता·· परेशानी का आगर है। आप जाना चाहें तो चले जायें। कागज-पत्तर छोड़ जायें, जब मौका मिलेगा टिकटिका दूंगा।"

पण्डाजी और उत्तेजित हो गये, "देखिए एम. पी. साहब, मैं साफ बात कहता हूँ और साफ बात सुनता हूँ। यह तो आप महीनों से समझा रहे हैं साफ-साफ बता दें मेरा काम करना है या नहीं? मैं कोई लखपति नहीं कि लोगों की और तरह भी सेवा कर सकूँ मेरे बस का तो केवल इतना ही है कि जहाँ आपका पसीना गिरे वहाँ खून बहाने को तैयार रहूँगा।"

चौधरी साहब को इस बार अपने आपको और भी ज्यादा सँभालना पड़ा, "देखिए पण्डाजी, फावड़े और कलम में अन्तर होता है। खेत में फावड़ा पड़ा हो तो कोई भी चला ले। कलम वही चलाता है जिसके हाथ में होता है। मैं तो आपकी बात उस तक पहुँचानेवाला हरकारा हूँ जिसे कलम चलानी है। जिम्मेदारी कुछ नहीं ले सकता···न ये ले सकते हैं न मैं ले सकता हूँ। ये भी एम. पी. हैं।" रुककर बोले, "आप मेरी सलाह मानें और शान्त मन से घर वापिस लौट जायें। काम भगवान को सौंप दें···उसका चाहना भी जरूरी है। हम तो कब से चाहते हैं, पर जब वह नहीं चाहता तो···?"

पण्डाजी बीच ही में बोले, "वो चाहेगा तो हो ही जायेगा, फिर आपकी क्या जरूरत!" तड़ से कहा, मुड़े और चल दिये। जाने के बाद थोड़ी देर सन्नाटा रहा। बीच-बीच में आनेवाली खँखारें और रह-रहकर कुर्सियाँ सरकने की आवाजें सन्नाटे को और अधिक पुनर्स्थापित कर रही थीं। दो-चार खैरख्वाह उसके पीछे दौड़े। लेकिन खाली लौट आये।

चौधरी साहब उस स्थिति से उभरे। राजेन्द्रसिंह ने उस पर अपनी प्रतिक्रिया जाहिर की, "आप बेकार के लोगों को सिर चढ़ा लेते हैं···ऐसे आदमियों के साथ सौ गज की दूरी से बात करनी चाहिए। काम भी करायेंगे और अहसान भी लादेंगे। मैंने तो अपने लोगों को समझा रखा है·· ऐसे लोग तो मेरे पास तक नहीं फटक सकते।"

चौधरी साहब ने उनकी बात गौर से सुनी और मुस्कुरा दिये, "ठाकुर साहब, आप राजा लोग हैं। आपकी बात और है। परेशानी में आदमी कुछ-का-कुछ कह जाता है। पण्डाजी चन्दर बाबू के खास आदमी हैं। जनता सरकार के जमाने में वे ही हमारे क्षेत्र से चुने गये थे। इस बार बेचारे हार गये। हम तो इस चक्कर में पड़ते ही नहीं, किसने किसका साथ दिया। जीते हुए आदमी को यही समझना चाहिए कि सबने उसी को वोट डाली है। कहते तो ये भी हैं कि इन्होंने भी मेरा ही साथ दिया था। जरूर दिया होगा। लेकिन ये बावनरामजी हैं, ये पहले भी हमारे साथ थे इस बार भी हमारे साथ रहे। हम इनको कैसे भूल सकते हैं! भूल तो उनको भी नहीं सकते···!"

बावनराम ने पूछा, "ये पण्डाजी कहाँ के रहनेवाले हैं?"

"आप इनको नही जानते होंगे ''इनका गाँव एकदम दक्खिन मे है, बिलसी।"

बावनराम हँसकर बोले, "बिलसी के बाँभन तो बहुत झगड़ालू होते हैं'''।"

चौधरी साहब ने एकदम बात बदल दी, "आपने नाश्ता-पानी कुछ किया ही नही होगा। क्या बताऊँ, बच्चे आजकल गये हुए हैं ''नौकर भी नही है। बस पत्नी है। उनका शरीर अब चलता नही 'हांफने लगती है। पत्नी को पता चलेगा कि बावनरामजी को बाहर नाश्ता करना पडा तो बहुत दुखी होगी' पर मैं जानता हूँ काम का जरा-सा भी जोर पड जाता है तो फौरन उलट जाती हैं। सत्तानवें नम्बर के पास सासदो की कैण्टीन है। वहाँ जाकर मेरा नाम ले दे'''। इतने मैं राजेन्द्रसिंहजी के साथ शिक्षामन्त्रीजी के यहाँ होकर आता हूँ।"

बावनराम बोले, "उनसे तो'''"

"हाँ-हाँ, लौटकर फुर्सत से बातें होंगी ' "

चौधरी साहब और राजेन्द्रसिंहजी उठकर चल दिये। उनके जाते ही अनुकूल बावनराम के पास आकर खड़ा हो गया। एक साहब आये और झपटकर उसी कुर्सी पर विराजमान हो गये जिस पर चौधरी साहब बैठे थे। बैठने का उनका अन्दाज भी करीब-करीब उन्ही की तरह था। बात का लहजा भी चौधरी साहबवाला ही था। वे सज्जन एकाएक बावनराम को सम्बोधित करके बोले, "देखिए साहब, मिसेज चौधरी नाराज होगी सो होगी'''आप ऐसा करें, कैण्टीन की राह लें। ठहरो, काम कराओ और बाहर खाओ। यही सिद्धान्त होना चाहिए। अगर सांसद सबको खिलाने लगें तो दो दिन मे दुकान बढा दें। *आप जावें'''हम आपकी जगह रोके है'''किसी को* नही लेने देंगे।"

बावनराम और अनुकूल को उसका इस तरह बीच मे टपक पड़ना अच्छा नही लगा। वे उठे और चले गये। दरवाजे से निकलते हुए हँसी की भभक महसूस हुई। चौधरी साहब की कुर्सी पर बैठा हुआ आदमी औरो से कह रहा था, "देखा, साला ब्राह्मणो को झगडालू कहता है। दरअसल क्षेत्र का चमार और पीहर का कहार चाचा-मामा कहलावे है! एम. पी. का घर ठहरा ना!"

. बाकी लोग भी जोर से हँस दिये। खूब कहा भई, खूब कहा!

अनुकूल एकदम गुम था। चाय का आर्डर देने के बाद से बावनराम भी चुप थे। *बस हाथ की बेंत जमीन पर टकोर रहे थे। अनुकूल की नजर सडक पर थी।* बहुत नही चल रही थी। बीच-बीच मे एक-आध बार बस या स्कूटर सर्र-से निकल जाते थे। जब से वह पहुँचा था उस सडक पर रिक्शा, ताँगा वगैरह उसने एको नही देखा था। जो लोग इन फ्लैटों से निकल रहे थे उनमे सूट-बूटवाले कम थे। सबके सब *खादी कप्पडधारी। थे भी गिनती के ही। उसे मन-ही-मन आश्चर्य भी हो रहा था* कि यह भी अपना ही देश है। लेकिन यह और वह'''दोनो देश इत्ते अलग थे कि कुछ कहना नही। एक ही देश मे यह दो देश कैसे? उसके मन मे न जाने कहाँ से ये अजीब तरह के तर्क आ रहे थे। वह अपने भूगोल का ज्ञान लगाने लगा। यह दिल्ली है। दिल्ली अपने देश की राजधानी है। हमारा प्रदेश उत्तरप्रदेश है। प्रदेश

में जिला और उस जिले मे हमारा कस्बा है। कस्बा मोहल्लों का एक समूह होता है। मोहल्ले में घर और कुछ एक टटपूंजिया दुकानें होती है। हर अच्छा आदमी अपने घर, मोहल्ले, नगर, प्रदेश और देश को प्यार करता है। जो प्यार नही करता वह देश-प्रेमी नही होता। इसलिए हम अपने देश को प्यार करते हैं'''। फिर उसे मैथिलीशरण, माखनलाल चतुर्वेदी, सुभद्राकुमारी चौहान आदि की कविताएँ याद आने लगी। सुभद्राकुमारी चौहान की कविता पढते ही वीर भाव जाग्रत हो जाता है। उसे बैरा आता हुआ दिखा। लेकिन वह उधर आते-आते दूसरी तरफ मुड़ गया। उसे काफी जोर की झुंझलाहट आयी। यहाँ भूख लगी है'''। बाबू चुपचाप क्यों बैठे हैं? बैरा दूसरे की मेज पर जा चुका था। खादी के अलीगढ़ी पाजामेवाला जल्दी-जल्दी खाने मे लगा था। खाते हुए उसकी खस-खसी दाढी हिल रही थी। साथवाले आदमी से उसने पूछा तक नही। जरूर कोई संसद सदस्य होगा! अनुकूल फिर पहलीवाली बात पर लौट आया। जिन दिनो आजादी की लड़ाई चल रही थी वह कहाँ था? उसे होना चाहिए था। और कुछ न होता तो वह कविता ही लिखता। अब हुआ, जब आदमी के हाथ में कुछ है ही नही। सब-कुछ सरकार करती है। पहले सरकार सिर्फ पीटती थी, मारती थी, जेल मे बन्द करती थी'' फाँसी पर चढाती थी। किताबों में पढते ही गुस्सा आता है। भगतसिंह को कैसे आनन-फानन मे फाँसी चढा दिया था। चन्द्रशेखर आजाद को गोली मार दी थी। अखबारो मे तो अब भी यह सब छपता है'''जरूर कोई और करता होगा। नाम सरकार का! सब पहले दिल्ली ही आते है। चाहे इंग्लैण्ड की महारानी हो या रूस का प्रधानमन्त्री। अभी कितने सारे लोग दिल्ली आये थे। खेल-खेलने और बातें करने। ये दोनो काम दिल्ली मे अच्छे हुए। अखबारो मे बडी सारी तारीफें छपी। जब लोग बाहर से सीधे दिल्ली आते हैं तो ऐसा लगता है जैसे दिल्ली बाहर हो'''देश का मर्दाना हिस्सा। बाहर तो सब ठीक-ठाक रहना चाहिए। अन्दर तो निभ जाता है। मेहमान आ जाते है तो कई बार रजाई मेहमानो को दे देते हैं। अन्दर बोरी, पुआल आदि से काम चल जाता है। यही तो यहाँ की असली बात है।

बावनराम की नजर अनुकूल पर टिकी थी। उन्होंने उससे पूछा, "किस सोच मे हो?"

"कुछ नही, दिल्ली'''।"

"दिल्ली क्या?"

"दिल्ली की सड़कें कितनी नयी-नकोर हैं। चलने मे डर-सा लगता है। मैली न हो जायें। इन पर मोटरो मे ही चलना चाहिए। अपने यहाँ की सड़को पर तो चाहे जैसे चल लो। पैदल, रिक्शा, साइकिल, ताँगा, ऊँटगाड़ी, बैलगाड़ी'''सब चलते हैं।'' मेलो तक में पहुँच जाते हैं।"

"यह दिल्ली है। बड़े-बड़े लोग यहाँ आते हैं'''सफाई तो रखनी ही पड़ती है। प्रधानमन्त्री तो रोज ही इन पर से गुजरती हैं।" फिर एकाएक रुककर बोले, "मेरे विचार से पेट भरकर खा लिया जाय। पता नही दिन कैसे और कहाँ गुजरे। कही चौधरी साहब के साथ निकलना पड़ गया तो सारा दिन खाली पेट घूम जायेगा।"

अनुकूल ने उनकी उस बात का जवाब न देकर अपना प्रश्न जड दिया, "बाबू,

वह आदमी क्यों बिगड रहा था ?"

बावनराम ने जानकार आदमी जैसी मुद्रा बनाकर जवाब दिया, "अरे ऐसे ही। जब उनका अलेक्शन पड़ा तो दूसरों के साथ थे। अब अपना काम पड़ा तो चौधरी साहब के सिर पर आ खड़े हुए। यह तो इन लोगों का रोज का काम है। तुमने देखा, चौधरी साहब हमारी कितनी तारीफ कर रहे थे। वो भी दूसरे एम. पी. से। एक के साथ रहो···दरवाजे-दरवाजे क्यो झांकते घूमते हो ? क्या मिल जायेगा ?" फिर धीरे-से बोले, "लोगो का काम ही यह है कि जहाँ मीठा देखा चीटे की तरह जा चिपके। वैसे चौधरी साहब सज्जन आदमी हैं। कोई दूसरा होता तो पण्डाजी को धक्का लगवाकर निकलवा देता। हमने उनकी पड़ी मे साथ दिया तो अब अपनी पड़ी मे आ खड़े हुए। ये लोग भी आदमी पहचानते हैं···आखिर आदमी के व्यापारी जो ठहरे !"

अनुकूल आखरी वाक्य पर उनकी ओर देखने लगा पर वे बेखबर थे। उसके मन मे एक सवाल आया और उसने सीधे स्वभाव पूछ लिया, "बाबू, अगर आपका काम नही हुआ तो पण्डाजी की तरह क्या आप भी नाराज हो जायेंगे ?"

बावनराम पहले तो उस सवाल से चौंके, फिर हँसकर बोले, "पहले ही 'ना' क्यों करते हो···काम तो होना ही है।"

चाय और दो-दो टोस्ट आ गये थे। मक्खन नही मँगाया था। दोनों चाय में भिगो-भिगोकर चाय की घूंट के साथ खाने लगे। अनुकूल खाते-खाते एकाएक बोला, "बाबू, इस तरह तो बहुत पैसा खर्च हो जायेगा" कल तक काम हो जाये तो ठीक है, नही तो फिर लौट चलो।"

"लोग चाहते है हम लोगों का कोई काम न हो···मजाक उड़ाते हैं।" बावनराम ने हताशा के-से स्वर मे कहा।

बावनराम को बायी तरफ से खाने मे तक्लीफ हो रही थी। उन्होंने बाकी डेढ टोस्ट छोटे-छोटे टुकड़े करके प्याले में डाल लिया और भीग जाने पर चम्मच से खाने लगे। अनुकूल ने इधर-उधर देखा। सब अपने खाने-पीने मे मस्त थे। उनके खाने की तरफ से सब बेखबर थे। उसके बाद वह आखीर तक बिना गर्दन उठाये टोस्ट खाता रहा और घूंट-घूंट चाय पीता रहा।

चाय पी चुकने के बाद पैसे दिये। बाहर निकलकर थोडी देर तक वे लोग पेड के नीचे खडे रहे। जो भी खादी से सजा-धजा आदमी निकलता था वही उन्हे चौधरी साहब की तरह एक एम.पी. नजर आता था। खासतौर से जब दो-चार लोग उसके आगे-पीछे चलते होते थे। बावनराम बोले, "चलो उस छोर तक हो आयें··· राष्ट्रपति भवन का पिछवाड़ा यही तो है। अंग्रेजों का बड़ा लाठ इसी में रहता था।"

बड़े लाठ की बात सुनकर अनुकूल को अजब-सा लगा। अंग्रेजो का बडा लाठ इसमें रहता था और अपने राष्ट्रपति भी इसी मे रहते हैं ? लगता है अंग्रेजो का छोडा सब-कुछ अब हमारे काम आ रहा है ! फिर उसे चौधरी साहब के घर का ख्याल आया। हो सकता है उसमें भी कोई अंग्रेज रहता हो। जब उसकी समझ मे कुछ नही आया तो उसने अपने आपको भीगे हुए जानवर की तरह झाड़ लिया। रहता होगा कोई भी, यह तो बडे लोगो के सोचने की बात थी। एकाएक उसे रात

का ध्यान आया। रात को क्या एक ही तख्त पर दोनो को सोना होगा? लोग यह भी तो कह सकते है कि आप लोग जमीन पर सोइए। बेइज्जती करनेवाले को कोई किताब थोड़े ही पढ़नी पड़ती है। बस तड़-से कोई ऐसी बात कह दी, हो गयी बेइज्जती। बेइज्जती मार से कम, बात से ज्यादा होती है। यह तो बाबू स्वय ही कहा करते हैं। लेकिन दाखले के चलते बाबू को इज्जत और बेइज्जती मे इस समय कोई अन्तर नजर नही आ रहा। जो आदमी एक गिलास पानी को न पूछे वह दाखला क्या करायेगा! जरा-सी तारीफ कर दी और हो गये सब दस्तूर पूरे।

बावनराम ने फिर दोहराया, "भैया, यही राष्ट्रपति भवन का पिछवाड़ा है। सुना है इसमें कई सौ कमरे हैं। अंग्रेजो के जमाने का नाचघर है जिसमे लाठ साहब नाचा करते थे···दरबार का कमरा है···दुनिया का बडे-से-बडा आदमी इसी मे आकर बैठता है।"

कमरो की सख्या सुनकर अनुकूल थोडा चौंका। क्या करते होगे इतने कमरो का? अपने घर का तो एक भी कमरा साबित नही। राष्ट्रपतिजी इतने कमरे कैसे साबित रख पाते होगे। फिर उसका मन हुआ कि पूछे, क्या उस नाचघर मे अपने राष्ट्रपतिजी भी नाचते है? लेकिन हिम्मत नही पड़ी।

"यह कोई किसी का व्यक्तिगत मामला थोडे ही है। देश का काम है। इतने बड़े राष्ट्र का पति क्या छोटी-मोटी जगह आकर रहेगा। दूसरे देशों के राष्ट्रपति भी तो आते है···उनके साथ इतने खिदमतगार होते होंगे, अफसरान होते होगे···इतने कमरे भी कम पड़ जाते होगे।"

"बाबू, हमारे अध्यापक कहा करते थे···कमी का नाम हिन्दुस्तान! पड़ ही जाती होगी तो क्या!"

बाबू चुप लगा गये। थोड़ी देर बाद बोले, "चलो चलें ··कभी वे आयें और निकल जाये। इन लोगो की जान को भी तो सैकडो काम लगे रहते हैं।"

वे लौट पडे। अनुकूल मुड़-मुडकर राष्ट्रपति भवन के पिछवाड़े को देखता रहा। थोडी दूर जाकर उसने मुडकर देखना बन्द कर दिया और सामने देखने लगा। सामने वही घेर दिखलायी पड़ रहा था जहाँ पहुँचकर सड़क खो जाती थी। बाबू ने बताया था कि वह पण्डित 'जवारलाल नेहरू' का घर था। हो सकता है उसमे हमेशा पण्डितजी ही रहते रहे हो। अंग्रेज बिल्कुल ही न रहे हो। बाबू को पता नही, नही तो बताते कि इसमे अमुक अंग्रेज अफसर रहता था।

वह गर्दन उठाये उसी मकान की तरफ ताकता हुआ चलता रहा। उसके पार उसकी नजर जा ही नही रही थी।

चौधरी साहब आ गये थे। कुछ आदमी चले गये थे और कुछ बैठे थे। चौधरी साहब बचे हुए लोगों से बतिया रहे थे। बीच-बीच में चुनहटी दबा लेते थे। बावनराम को आता देखकर चौधरी साहब के चेहरे पर पहले तो हल्की-सी सकपकाहट आयी, नजदीक आने पर बड़े जोश-खरोश के साथ बोले, "आइए-आइए बावनराम भाई! चाय-पानी हो गया। देखिए, हुई न वही बात। पत्नी ने सुना तो नाराज होने लगी।

पर वे भी जानती है कि मजबूरी की काट सब्र ही है।"

उन्होने हाथ पकडकर पासवाली कुर्सी पर बैठा लिया और दूसरो से बातें करना जारी रखा। अनुकूल थमले से लगा खड़ा रहा। बावनराम ने एक-दो बार इधर-उधर देखा। अनुकूल के लिए उन्हें कही खाली कुर्सी नजर नही आयी। आखिर पढा-लिखा लड़का है। पढ़े-लिखे की इज्जत करना एक जरूरी चीज है।

एक आदमी जोर-जोर से बोल रहा था, "देखिए एम. पी. साहब, आप लोग संसद मे बैठकर कानून बनाते है "कानून इसलिए बनाया जाता है जिससे इन्सान की बेहतरी हो और उसके अधिकारो की सुरक्षा मिले। व्यक्तिगत सम्पत्ति रखना एक वैध अधिकार है। जैसे समाज के अधिकारो की रक्षा करना सरकार का दायित्व है वैसे ही व्यक्ति की सम्पत्ति की रक्षा करना भी''। अगर सरकार ऐसा नही करती तो वह अपना कर्तव्य हारती है। जो लोग हमारी जमीनो को जोतते हैं वे चाहे बाँभन हो या हरिजन'''अवैध कब्जा करने का किसी का अधिकार कैसे बन सकता है। अगर कोई ऐसा करता है और सरकार हमारी सम्पत्ति की रक्षा नही करती तो यह दायित्व हमारा हो जाता है कि हम अपनी सम्पत्ति की रक्षा स्वय करें। कानूनन हो या गैरकानूनन। उन्होंने हमारी जमीनों पर कब्जा कर लिया'''खाली करवायी तो स्वाभाविक था कि चोटें आती। उनके भी आयी और हमारे आदमियो के भी आयी। हमारी चोटें कोई नही देख रहा है'''सब लोग इन हरिजनो के हिमायती बने घूम रहे है। चढ़ा दीजिए हम लोगों को सूली पर। बराबरी के नाम पर यह हरगिज नही हो सकता कि कोई कम बराबर हो और कोई ज्यादा।"

चौधरी साहब मुँह चलाते हुए शालीनता और सरोकार के साथ उस आदमी की बातें सुन रहे थे। बीच-बीच मे एक लम्बा-सा 'अच्छा ऽऽ' भी कह देते थे। जब तक वह बोलता रहा चौधरी साहब का सुनना जारी रहा। अब बन्द हो गया तो वे दूसरो की तरफ मुखातिब होने को हुए। वह आदमी हताशा और दीनता के साथ बोला, "आप ही बतायें, मैं क्या करूँ? आप लोगो ने जब भी जितना माँगा मैंने कभी इन्कार नही किया'''इलैक्शन हो, फक्शन हो, प्रधानमन्त्री फण्ड हो कुछ भी क्यों न हो। मेरे भाई, भतीजे, लड़के जेल में पड़े हैं। जमानत तक नही होने दे रहे। तीन सौ सात का मुकदमा कायम करने की जुस्तजू है। क्या हम लोग यही दिन देखने के लिए आपकी पार्टी के साथ है'''?"

"आप ठीक कहते है सेठजी, मैं तो बहुत छोटा आदमी हूँ'''चाहकर भी कुछ नही कर सकता। आपने कानून हाथ मे न लिया होता तो मैं होम मिनिस्टर के पास जाता। कहता। उनकी मिन्नतें करता। कानून की स्टॉपवाच जब चालू हो जाती है, घोडा जब तक रुकता नही तब तक वह टिक-टिक करती रहती है। सुस्त चले या तेज, यह अलग बात है। हम चाहते हैं कि अगर समय हमारे विपरीत जा रहा हो तो हम सुई पकडकर लटक जायें, जिससे वह आगे न बढ सके। समय सुई नही है, [illegible]

[illegible]

[illegible]

सम्भावना बनेगी? गांधीजी आ गये और समय चलते-चलते उस बिन्दु पर पहुँच

गया जहाँ से इन लोगों पर नजर डाली जा सके। खैर, फिर भी मैं बात करूँगा और इस बात पर जोर दूँगा कि गैरइन्साफी न हो।"

"लेकिन···!"

चौधरी साहब तपाक से बोले, "सेठजी मुकदमे की तैयारी कीजिए। कानून के आँख और पैर नही होते। इन्साफ तक पहुँचने के लिए उसे बैसाखियो-पर-बैसाखियाँ चाहिए···मश्राजात, गवाही, दलीलें, नजीरें और न जाने क्या-क्या ! तब भी पहुँच जाये तो शुक्र है। कई बार वह धृतराष्ट्र की तरह अपना हजारो हाथियों का बल लगाकर बाँहो मे कस लेता है 'फौलाद का ही हुआ तो भले ही बच जाये, नही तो राम मालिक !"

वह आदमी माफगोई पर उतर आया, "इन बातों से हम क्या समझे ? अच्छा हो इन बड़ी-बड़ी बातो को आप ससद मे ही जाकर कहे। हमे तो सीधे-सीधे बताइए कि इस मुसीबत मे आप हमारी क्या मदद करेंगे ? यह ध्यान रखियेगा कि हमने भी आपके लिए कुछ कर रखा है। यह भी न समझें, मुसीबत से दूसरो का ही सम्बन्ध होता है···।"

चौधरी साहब ने हँसकर कहा, "कह तो आप ठीक रहे है। तुलसीदास ने भी यही सब कहा है जो आप कह रहे हैं। मैं पब्लिक का आदमी हूँ···पब्लिक की तकलीफ सो मेरी तकलीफ। इसलिए आप निश्चिन्त रहे, मैं आज ही गृह-मन्त्रीजी से बात करूँगा।"

"आप उनसे बात करें तो यही कहिए कि यह मामला राजनीतिक है। क्योंकि वह अपनी पार्टी के साथ है इसलिए विरोधी दल उसे फँसा रहे है। पुलिस विरोधियों से पैसा खा गयी है 'उन्हें केवल इतना ही करना है कि केस मे फाइनल रिपोर्ट लग जाये। बस ! जो सेवा हमारे लायक होगी वह हम हाथ जोड़कर करेंगे ···" उसने बात वही छोड़ दी।

"मैं जो कुछ कह सकूँगा, 'जरूर कहूँगा। करना उनके हाथ मे है। मैं आपको यह विश्वास दिलाये देता हूँ कि पूरे सकून और पूरी जिम्मेदारी के साथ कहूँगा। आप पर अहसान करने के लिए नही, अपने सन्तोष के वास्ते।"

वह आदमी उठा और पैर पटकता हुआ चल दिया। उसके साथ दो-तीन आदमी और भी उठ खड़े हुए। थोडी दूर तक जाने के बाद वह मुड़ा और बोला, "आपमे हमारा सम्बन्ध था, इसलिए चले आये। आप मदद कर देंगे तो आपकी मेहरबानी और नही करेंगे तो···" ऊपर उँगली उठाकर, "वो करेगा। वो आपकी सरकार के भी ऊपर है और हमारे ऊपर भी। ईश्वर के लिए हमें ककहरा न पढायें।"

एम. पी. साहब तपाक से बोले, "यह बात आपने लाख रुपये की कही···उससे बड़ी न तो संसद है और न उच्चतम न्यायालय। सब उसी की शपथ लेकर काम शुरू करते हैं। अगर इन्सान हमेशा यही समझे तो यह सब काहे के लिए हो। मैं पुरजोर शब्दों से कहूँगा कि बेगुनाह को न सताया जाय···यही कहने के लिए आपने मुझे चुना है। मैं अपना फर्ज पूरी तरह अन्जाम दूंगा।"

वह बिना कुछ कहे दरवाजे मे बाहर निकल गया। चौधरी साहब थोड़ी देर खामोश बैठे रहे फिर बोले, "सबकी अपनी-अपनी फितरत है। पहली सरकार मे

ये कन्दील हो गये थे ''एकदम आकाशचारी ! तभी की आदतें बिगड़ी है'''"

बावनराम ने उनकी हाँ मे हाँ मिलायी। अनुकूल आँखें फैलाये चौधरी साहब की तरफ देख रहा था। इन आदमियो के जाते ही वे अनुकूल से बोले, "काहे खड़े हो, बैठ जाओ।" तब तक दो-तीन आदमी और आ गये। उन्होंने कुर्सियाँ हथिया ली। बावनराम को अच्छा नही लगा। जिस तरह झपटकर वे लोग बैठे ''देखकर अनुकूल को हँसी आ गयी। उसने दूसरी तरफ मुँह घुमा लिया।

चौधरी साहब फौरन बोले, "बैठना तो बुड्ढे-ठेरो का काम है'''ये तो जवान आदमी हैं।" फिर उससे बोले, "कहो तो बेटा कुर्सी मँगाऊँ ?"

"जी नही !" कहकर अनुकूल थोडा आगे को सरक गया।

जो लोग आये थे उनके चेहरो पर उतावलापन था। बार-बार घडी देख रहे थे। वे चौधरी साहब को अपनी बात से जल्दी-से-जल्दी आगाह करना चाहते थे। एक ने बोलना चालू किया तो चौधरी साहब ने टोक दिया, "अब तो ससद जाने का समय हो गया ''आप ऐसा करें, कल सवेरे आ जायें।" उन लोगो का चेहरा उतर गया।

अनुकूल ने बावनराम की तरफ देखा। बावनराम भी सुस्त पड गये थे। चौधरी साहब जाने के लिए उठने लगे तो बावनराम सुस्त आवाज में बोले, "मुझे भी आपसे कुछ बातें करनी थी।"

वे हँसकर बोले, "सवेरे तो आये ही है, आपसे तो जरा फुर्सत से बातें होगी। आपसे खड़े-खडे बात करके बात करने का नाम थोडे ही करना है। इतना पैसा खर्च करके बेटे को साथ लाये है, दिल्ली तो दिखा दीजिए। दिल्ली की ससार की सब राजधानियो मे अव्वल दर्जे की राजधानियो मे गिनती है। यहाँ जैसी हरियाली कही नही। जैसे देवता लोग अयोध्यावासियो से ईर्ष्या करते थे इसी तरह दुनिया के लोग दिल्ली मे रहनेवालो से करते हैं। दिल्ली तो तीनों लोको मे सबसे न्यारी है, बावनराम भाई ! अच्छा तो मैं चलता हूँ'''शाम को बैठेंगे।"

चौधरी साहब फूट लिये और बावनराम धम्म-से कुर्सी पर बैठ गये। बाकी लोग भी रेल बनाकर उन्ही के पीछे-पीछे निकल गये थे। थोडी देर वे चुपचाप बैठे रहे। फिर बोले, "तुम कब से खड़े हो, थोड़ा सुस्ता लो।"

अनुकूल के खडे रहने के कारण वातावरण मे जो उठाव था, उसके बैठते ही वह भीगे शामियाने की तरह नीचे आ गया।

"कहाँ चले ?" बावनराम सडक के किनारे खडे-खडे धीरे-से बुदबुदाये।

अनुकूल चाय की दुकान के पास बैठा, खोमचेवाले से मुरमुरे खरीदकर और चाय मे भिगोकर खा रहा था। बावनराम खा चुके थे। इस रूप में मुरमुरे खाना बाप-बेटे दोनो को अच्छा लगता था। बीच-बीच मे वह सड़क पर भी देख लेता था। बस, मोटर, स्कूटर वगैरह सामने दिखते नजारों को बीच से चीरते हुए निकल जाते थे। वहाँ ऐसा नही होता। व्यवधान तो पड़ता है, पर चिरते नही। सवारियाँ धीरे चलती हैं। बावनराम रेलिंग पर चूतड़ टिकाकर खड़े हो गये थे। वे सोचते-सोचते एकाएक बोले, "इस तरह काम तो दूर रहा'''बात भी नही हो

पायेगी।"

अनुकूल की चाय खत्म हो गयी थी। अब वह बचे हुए मुरमुरों को टूंग रहा था। टूंगता-टूंगता सड़क पर जा पहुँचा। उसने सड़क के किनारे खड़े होकर दोनों तरफ देखा। बहुत कम लोग आ-जा रहे थे। यहाँ आदमी कम है, मोटरें ज्यादा है। इसलिए मोटरें और फिटफिटियें चलती है। सड़कें देखकर आदमी नही लगते, बसें देखकर अलबत्ता लगते है। बस झन्नाटे से आती है, मुड़ती है और दूसरे छोर तक पहुँचते-पहुँचते बच्चोवाले खिलौने मे बदल जाती हैं। अन्दर बैठे आदमी भी बस के साथ-साथ खिलौने हो जाते होगे। मोटरें जरूर सबको पछाड देती है। जैसे सारी शक्ति उन्ही मे हो। आवाज भी नही होती। बसो मे आवाज भी होती है जैसे पूरा जोर लगा रही हो···बाजे घनी।" उसके चेहरे पर मुस्कुराहट आ गयी।

बावनराम एकाएक बोले, "चलो चाँदनी चौक चले। बाजार तो चाँदनी चौक का। कन्धे-से-कन्धा छिलता है।"

उनकी बात सुनकर उसकी आँखो मे चमक आ गयी। बोला, "चलिए।"

"पता नही कौन-सी बस जाती होगी?" अनुकूल अपनी अनभिज्ञता के कारण चुप रहा।

बावनराम ही बोले, "कोई नजर भी तो नही आता जिससे पूछा जाय। अगर नजर भी आता होता तो दिल्ली मे कौन किसको रास्ता बताता है!" फिर अपने आप ही बोले, "चलो, बिरला मन्दिर चलते है···उसका भी बडा नाम है।"

अनुकूल हँस दिया।

बावनराम उसकी हँसी का मतलब नही समझे। वे दूसरी बात पर सफाई देने लगे, "नही, ऐसी बात नही। जिन्होने मन्दिर बनवाया है···बिरलाजी···गांधीजी के कहने पर उन्होंने सब त्याग दिया था। बस देखभाली बनकर रहते है···"

"वहाँ जाने के लिए बस कहाँ से मिलेगी?"

"बस!" कहा और चुप हो गये। फिर बोले, "बसों की ही तो समस्या है। जाती इतनी है पर यह पता नही कौन कहाँ जाती है। दिल्ली की इतनी बड़ी सरकार, पर इतना नहीं कि हर बस स्टैण्ड के पास एक टाइमटेबिल लगवा दें· यहाँ से कौन बस कहाँ-कहाँ जाती है। दिल्ली के लोग टाइम-टेबिल का टाइम-टेबिल घूंटी में पीकर आते हैं। सब याद रहता है। बाहरी लोग क्या करें? दिल्लीवालो का सब-कुछ दिल्लीवालो के लिए ही है!" फिर अपने आप ही कहा, "संसद भवन तो चला ही जा सकता है। बस यह रहा सामने···सवेरे आते हुए रास्ते में नही पड़ा था। बस वही है···गोल-गोल।"

"चलिए।" अनुकूल वहाँ चलने के लिए भी तैयार हो गया।

बावनराम उसे बताते रहे, "ससद भवन के एक तरफ साउथ-ऐवन्यू है, दूसरी तरफ नार्थ-ऐवन्यू और सबसे ऊपर राष्ट्रपति भवन।"

"वैसे तो संसद सबसे ऊपर होती है।"

"यह सब अंग्रेजो का बनवाया हुआ है ना।"

"यह ससद-भवन भी अंग्रेजों ने ही बनवाया था! इसका मतलब सब-कुछ उन्ही का बनवाया हुआ है···अपना कुछ नही?"

"आजकल ऐसे मजबूत भवन कौन बनवा सकता है ? एक बार नार्थ-ऐवन्यू में भी आ चुके हैं। तब वहाँ अपने यहाँ के शास्त्रीजी रहते थे, मजदूर नेता। बहुत पुरानी बात है। तब गिरि साहब लेबर मिनिस्टर थे। बाद में राष्ट्रपति हो गये थे। उन्ही से हमारा डेपुटेशन मिलने आया था। तब ससद भवन भी देखा था'''और राष्ट्रपति भवन भी।"

अनुकूल चुपचाप खड़ा सुनता रहा था। बावनराम का बयान चालू था।

"वो जो मजदूर नेता शास्त्रीजी थे ~ सुनते थे। सुनते ही नही थे, करते भी थे। दूसरों के लिए लड़ जाते थ। जैसे-जैसे समय बदला वैसे-वैसे नेताओं का स्तर भी गिर गया। अब सुनना तक नही चाहते'''!"

अनुकूल भी रेलिंग पर टिक गया।

"लगता है तुम थक गये'''छोड़ो। आराम कर लिया जाय। रात-भर ट्रेन में भी कटर-कटर ही होती रही। आराम नही मिल पाया। वो तो बस मिल गयी''' नही तो मर लेते।"

अनुकूल जैसे बैठा था वैसे ही बैठा रहा। बावनराम पीछे से कपडे झाडते हुए बोले, "चलो तो फिर थोडी देर लेट लिया जाय'''!"

"कहाँ ?"

"वही'''अब वहाँ कौन होगा ? सब काम से निकल गये। वो तो हम भी निकल लिये होते पर चौधरी साहब से बात ही नही हो पायी। जब तक उनसे बात न हो जाये तब तक यह भी तो पता नही कि कहाँ जाना है'''किससे मिलना है।"

"पर'''" अनुकूल कहता-कहता रुक गया।

बावनराम दो-चार कदम आगे थे। अनुकूल ने 'पर' इतने धीमे से कहा था कि उन्होंने नही सुना। वह भी पीछे-पीछे चल दिया। बावनराम की बुलास छूटी हुई थी। वे आगे-आगे बोलते चले जा रहे थे, "अपने काम के लिए दूसरों की दाब सहनी पड़ती है। तुम्हारा दाखला हो जाये, मेरी जिन्दगी सकारथ लग जाये। अभी तक तो मैंने लोहा-लंगड़ ही ढोया'''सबकी नजरो मे मूरख बनकर ही जिन्दगी गुजारी। जिस दिन तुम इन्जीनियर बनकर निकलोगे उस दिन मेरी यह सारी मूरखता अकलमन्दी मे बदल जायेगी। यह जो जात-पात की भिनकन जान को लगी है यह भी धुल-पुछ जायेगी। सब तुम्हे देखेंगे, तुम्हारे ओहदे को देखेंगे। ऊपर पहुँचकर धुआँ निर्मल जल बन जाता है। बाबूजी हैं, सब उनके चरणो में सीस नवाते हैं। वो कौन बाँभन है, पर बडो के भी बड़े हैं। बस तुम एक बार यह खाई फलाँद जाओ फिर तो सब-कुछ समतल है। मैंने कभी भगवान तक मे कुछ नही माँगा। जो दे दिया चुचकारकर माथे लगा लिया। यह पहला मौका है जब मैं इन लोगो के आगे-पीछे झोली फैलाये घूम रहा हूँ। इस बार अगर इन्होंने मेरी नही सुनी तो मैं समझूँगा, ना इन्सान कुछ है और भगवान'''भगवान को तो क्या कहूँ, अब तक तो उसने ही पार लगाया है।"

अनुकूल इस तरह की बात सुनकर स्तब्ध रह गया। दाखला बाबू की भावना में समा गया है। अगर सफलता नही मिली तो बाबू सँभल पायेंगे ? बाबू समझते हैं पता नही मैं कितना पढ़ गया। मेरे जैसे एक नही सैकडों हैं ''हो भी गया और वहाँ

कुछ न कर पाया तो···!

वह बोला कुछ नही। चुपचाप पीछे चलता रहा। बावनराम भावुकता के अन्तिम छोर तक पहुँच गये थे। बस केवल आँसू ही नही निकले थे।

अनुकूल और भी सहम गया था।

चौधरी साहब के घर पर पीछेवाले हिस्से मे इस समय कोई नही था। उनके थैले एक तरफ लिपटे हुए रखे थे। जरूर किसी ने उन्हे छुआ है। झाड़ू लग चुकी थी। शायद झाड़ू लगानेवाला ही रखा गया हो। बराण्डे मे धूप थी। तख्त भी खिसका हुआ था। आधे तख्त पर भी धूप आ गयी थी। बावनराम अन्दर कमरे में घुस गये। दोनो तरफ आमने-सामने खटियों की दो कतारें थी। गाँवों और कस्बो में जब बरातें आती है तो इसी तरह खाटें डालकर जनवासा बना दिया जाता है।·कुछ पर सामान रखा था। मुसाफिरखानों मे भी सफर शुरू करने के क्षण के इन्तजार में कभी-कभी सामान इसी तरह खाटो पर रखा रहता है। जो खाटे खाली थी वे कमरे के अन्तिम छोर पर थी। ठीक उनके ऊपर खिडकियाँ थी। पंखे उनसे काफी दूरी पर थे। खिड़की से तो हवा आ सकती थी पखों से बिल्कुल नही। हो सकता है इन्ही में से किसी खाट पर रात पण्डाजी सोये हो। पंखे की हवा न मिलने के कारण उनका पारा चढ़ गया हो। लेकिन एक ही जगह दो-तीन खाटें खाली हैं। हो सकता है और भी एक-आध आदमी उनके साथ रहा हो। वैसे हमे सिर्फ दो ही खाट चाहिए। अनुकूल तो बेचारा नामचारे को ही है। लोग तो यही कहेंगे कि बावनराम और उनका बेटा ठहरे हैं। उसका तो नाम भी नही आयेगा।

अनुकूल बाहर बराण्डे मे ही रह गया था। उन्होंने उसे पुकारा, "भैया, सामान यहाँ ले आ। खाटें खाली हैं। थोड़ी देर सो भी लेंगे। एक-आध दिन रुकना पड़ा तो कमर सीधी करने की सुविधा मिलेगी।"

"नही बाबू, यही ठीक है। पता नही किसी को कैसा लगे···बाद मे हटना पडे।"

"अरे नही भैया, इसमे क्या बुरा लगना ! इतने लोग ठहरे है···हम भी ठहर जायेंगे। वैसे ही नही आये, चौधरी साहब के दस बार कहने पर आये है।"

अनुकूल ने बहस मे पड़ना उचित नही समझा। वह थैले लेकर अन्दर पहुँच गया। बावनराम खाट पर पलौथी लगाकर पूरी तरह जम गये थे। उसने थैले रख दिये।

"यहाँ वहाँ से लाख दर्जे अच्छा है। है ना, क्यो ?"

अनुकूल ने बड़े अनमने ढंग से गर्दन हिला दी।

बावनराम ने थैले से चादर निकालकर दूसरी खाट पर बैठे-ही-बैठे फैला दी, "सो जाओ, रात-भर नीद ही कहाँ आयी !"

"नही, सोना क्या···आप सो लीजिए, मैं बैठा हूँ···।"

अनुकूल बीच मे रुक गया। कोई महिला जोर-जोर से बोल रही थी। बावनराम के भी कान खड़े हुए। किसी को डाँटते हुए कह रही थी, "तुम हर एक को घर मे

घुस आने देते हो। कौन कैसा आदमी है, किसी के माथे पर थोड़ा ही लिखा होता है। हम तो इस एम. पी. होने से भर पाये। धरम-करम कुछ रहा ही नही। जो आता है बरतनों मे खाता है, कपड़ो में बैठता है'''कितने लोग पाल के आमो की तरह भरे है।"

दोनो ने एक-दूसरे को देखा। उनके चेहरो पर तनाव आ गया था। अनुकूल के खासतौर से। बावनराम ने अनुकूल का तनाव कम करने की गरज से उसकी तरफ देखा और मुस्कुरा दिये। उसका चेहरा सिकुड़ता जा रहा था। मन-ही-मन उसे लगा कि इन लोगो के आक्रमण से पहले ही यहाँ से भाग चलना चाहिए। पता नही हम यहाँ क्यो है ? वह अपने बाबू से यह प्रस्ताव रखने को तैयारी कर ही रहा था कि वह महिला अन्दर घुस आयी। उन दोनो को इस तरह कोने मे बैठे देख उसका चेहरा और सख्ती पकड़ गया। महिला होने के साथ-साथ वह काफी तन्दुरुस्त और दबंग थी। कद-काठी भी पूरमपूर थी। अपने सुनहरे फ्रेम के चश्मे से वह उन लोगो को एकटक देख रही थी। बावनराम हाथ जोड़कर तत्काल खड़े हो गये।

"आप लोग ?" उन्होने तपाक से पूछा।

"मैं ही बावनराम हूँ'''।" उन्होने कन्धे ऊँचे करके कहा।

"कौन बावनराम ?"

बावनराम के कन्धे एकाएक झुक गये। हकलाते हुए बोले, "जी बावनराम ! चौधरी साहब ने आपसे जिक्र किया होगा'।" वह कुछ नही बोली। देखती रही। बावनराम को आगे बढ़ना पड़ा, "हम लोगो की आठ सौ वोट चौधरी साहब को ही पड़ी थी।" लेकिन उनकी नजर और चेहरे के भाव मे जरा-सी भी जुम्बिश नही आयी थी। बावनराम ने बात बदली, "यह मेरा लड़का अनुकूल है''हम लोगों की बिरादरी में इसी ने हाईस्कूल पास किया है। चौधरी साहब की कृपा हो गयी तो इसकी जिन्दगी बन जायेगी'''।"

वे बिना उनकी बातो का जवाब दिये पलटी और पीछे खड़े नौकर से बोली, "तुम दिन मे ताला क्यो नही बन्द रखते ? जब लोग चले जाया करे तो बन्द कर दिया करो'''शाम को खोला करो। लोग यहाँ सोने आते है'''जैसे सराय या आरामगाह हो। नानसेन्स !"

वे पैर पटकती चली गयी।

बावनराम पहले खड़े रहे, फिर खड़े-ही-खड़े धम्म-से बैठ गये। उन्हे लगा प्रेमचन्द की कहानियो की तरह कोई साहूकार आया और कर्जे में उनके जानवर, कपड़े-लत्ते और मडैया तक'''लदवाकर चलता बना। वे नंगे-के-नंगे खड़े रह गये। अनुकूल तक की तरफ देखने का उनका साहस नही हुआ। वे गर्दन नीचे किये हुए जडवत् बैठे रहे।

नौकर फिर लौटकर आया। पहले तो वह ताला और चाबी हाथ मे लिये दरवाजे पर खड़ा हिलता रहा। फिर पूरे कमरे का एक चक्कर लगाया। बावनराम और अनुकूल अपनी-अपनी तरह से निरन्तर उस पर नजर जमाये थे। अनुकूल बहुत आकस्मिक ढंग से देखने का अहसास करा रहा था। बावनराम गौर से देख रहे थे। उनकी आँखें तक उसके साथ चलती दिखायी पड़ रही थी। अनुकूल के चेहरे

पर उसके हृदय की आशंका स्पष्ट थी। बावनराम अनिश्चय में थे। देखो क्या करता है ?

थोड़ी देर बाद वह उनके नजदीक आया। धीरे से बोला, "आप लोग बाहर बैठ जाइए "मेम साहब ने ताला बन्द करने के लिए कहा है। पाँच बजे जब ताला खुले तो आ जाइयेगा।"

अनुकूल तत्काल उठ खड़ा हुआ।

बावनराम बैठे रहे और नम्रता के साथ बोले, "अब तो गलती हो ही गयी है, यहाँ आकर ठहर गये। चौधरी साहब ने बार-बार ठहरने का आग्रह कर-करके हमारी यह दुर्दशा करायी है। हम तो हमेशा से ही पुरानी दिल्ली की धर्मशाला मे ठहरा करते थे "इस बार ही वहाँ ठहरने में हमे कौन मुसीबत आती थी। शाम तक रह जाने दो' चौधरी साहब से बात करके शाम को चले जायेंगे।"

अनुकूल थोड़ा उखड़ा, "चलो बाबू, उनका घर है, वे ताला बन्द करना चाहते हैं तो कर देने दीजिए।" वह सामान समेटने लगा।

"नही भैया, चौधरी साहब के हमारे पुराने सम्बन्ध है, ये लोग नही जानते। अब शाम को उनसे मिलकर और कहकर ही जायेंगे।"

नौकर ने उनकी तरफ नाराजगी से देखा, "सब यही करते है"'काम था तो काम करते। यहाँ काहे बैठे हैं ? इन्ही बातों से मेम साहब नाराज होती हैं। वे कहती हैं कि आयेंगे काम के बहाने और तोड़ेंगे खाट। काम नही होगा तो गाली देंगे। काम हो गया तो भूल जायेंगे। गाली देने की बात पर ही मेम साहब को गुस्सा आता है। काम न होने पर लोग गाली न दें तो मेम साहब इतनी नाराज न हों।"

अनुकूल के शरीर मे झनझनी-सी हुई। वह तत्काल बोला, "काम हो जाने के बाद वे स्वयं क्या लोगो को याद रखती है ?"

बावनराम ने चुप कर दिया और समझाने के ढंग मे बोले, "हम छोटे आदमी है, पर न तो अहसान फरामोश है और न चोर-उचक्के। हम तो चौधरी साहब से मिलने आये थे 'और तो कोई काम है नही। तुम कहो तो सड़क पर जाकर बैठ जाते हैं। शाम को जब आयेंगे तो पहले बात करके तब अपने घर का रास्ता लेंगे।"

उनका गला रुँध गया।

नौकर बिना कुछ बोले बाहर निकल गया। वे दोनो भी सामान लेकर बाहर निकल आये। अनुकूल का चेहरा तमतमाया हुआ था। पर खामोश था। बावनराम रुआँसे हो आये थे। लेकिन बार-बार अनुकूल की तरफ देखते जा रहे थे" सोचते जा रहे" पगला है ! जरा-जरा-सी बात पर कहीं इतना परेशान हुआ जाता है। जिस तरह के माहौल में जन्म लिया है उसमे तो ऐसी-ऐसी घटनाएँ रोज ही हुआ करेंगी। दरअसल बच्चा है। इसने तो वो जमाना देखा नही जो हमने देखा है। बच्चे लोग अगर अब देख लें तो पता नही इनके दिमाग की हालत क्या हो। मुँह पर मल का तोबरा चढ़ा दिया जाता था। दूसरे लोग आकर बताया करते थे कि फलाँ साहूकार के यहाँ तेरे बाबा को मुँह पर तोबरा चढवाकर खड़ा किया हुआ है। हिम्मत नही पड़ती थी, घुस तक जायें। जब समझ आयी तो गाँव छोड़ दिया और शहर भाग आये। नौकरी की। खलासी का काम किया। मार खायी। हर तरह की मुसीबत झेली। पर

उतना सुनना नही पड़ा। सुनना दिमाग जख्मी करता है, पिटना शरीर। इसलिए सुना नही जाता। ईश्वर करे यह इन्जीनियर बन जाये। यह जो थोडा-बहुत पातक लगा है वह भी धुल जायेगा। सच पूछो तो आदमी-आदमी में क्या फर्क है? गाय-गाय मे जरूर फर्क है। कोई ज्यादा दूध देती है, कोई कम। आदमी पहले लेता है, तब देता है। उनका सोच दूसरी तरफ को मुड़ गया। अगर आदमी-आदमी में फर्क नही तो फिर यह सब कैसे हो गया? जिनका सितारा डूबता गया वे गिरते गये। जिनका चमकता गया वे उठते गये। हम लोगो के भी राज-पाट थे। छिन गये तो जीत के मद मे हारे हुओं को गुलाम बना लिया। हार गये थे तो हार गये थे··· उनको और उनकी पीढ़ियों को इस तरह नीच रखने की क्या जरूरत थी? मन की हार से बडी कोई हार नही होती।

अनुकूल ने पुकारा, "बाबू·" तो वे ऐसे चौके कि उड़ते पक्षी को तीर मारकर जमीन पर गिरा दिया गया हो।

"क्या बात है?"

"कुछ नही।"

बावनराम फिर अपनी छूटी डोर को पकड़ लेना चाहते थे। उन बातों को सोचना उन्हे हमेशा अच्छा लगता था। तब तक सोचते चले जाते थे जब तक वे अपने सोच को उस बिन्दु तक नही ले जाते थे जहाँ अन्ततः वे इस बात से सन्तोष पा सकें कि हम सदा ऐसे ही नही थे।

अनुकूल ने अचानक ही कहना शुरू कर दिया, "क्या हम बिना मिले वापिस नही जा सकते? इन्जीनियरी मे ले भी लिया गया तो क्या वहाँ पर भी यही सब नही होगा? चलिए लौट चलें। जैसे और सब रह रहे हैं वैसे ही हम भी रहेंगे।"

बावनराम का दिमाग वहाँ से पलटा। वे बोले, "नही भैया, हिम्मत न हारो। अपने पुरखो को देखो। हजारो साल सन्तानहीन पितरो की तरह अपमान के कुएँ में उल्टे लटके रहे ··कोई आयेगा जो उद्धार करेगा, सम्मान दिलायेगा। गाँधी और अम्बेदकर बाबा आये···लेकिन और लोगो को भी तो आगे आना है। वे तो आकर चले गये। पितर-रिन से बडा कोई रिन नही···सब चुक जाते हैं वो नही चुकता। इसी तरह चुकेगा। ठीक है, गड्ढा बहुत गहरा है। हिम्मत हारना ठीक नही। खुद भी निकलो, औरों को भी निकालो। बिना दाँतवाले साँप धरती में ही घुसे रहते है·· बाहर नही निकलते, कोई मार न डाले। ऐसे कब तक पडे रहेंगे···निकलना तो होगा ही।"

अनुकूल को पहली बार बाबू की बात में एक भिन्न प्रकार की प्रखरता नजर आयी। उसने उन्हे कभी इस तरह बातें करते नही सुना था।

वे लोग करीब-करीब सीढियों तक पहुँच गये थे। नौकर आकर पीछे से बोला, "बूढ़े बाबा, चलो चलकर वही ठहर जाओ· ताला कल से लगा दिया करेंगे।" और वही से लौट गया।

बावनराम ने अनुकूल की तरफ देखा। अनुकूल का सीना पहले ही उठ-बैठ रहा था। नौकर की बात ने वह उठक-बैठक और तेज कर दी। बावनराम ने एक-दो बार कुछ बोलना चाहा पर बात मुँह-की-मुँह में ही बनी रही। वे दोनो कुछ देर तक

वहीं सीढ़ी के पास खड़े रहे। आगे बढ़े, न पीछे हटे।

बावनराम ने ही पूछा, "तो वापिस चलें ?"

अनुकूल ने पहली बार अपने बाबू को इस तरह देखा। अब सामान उठा लिया तो वापिस जाने का क्या मतलब ! इन्ही की मर्जी हो गयी कि जब चाहें निकाल दें और जब चाहे बुला लें। इतनी बेइज्जती के बाद क्या हमारे हाथ मे अपना-सा मुँह लेकर चुपचाप चले जाना भी नही ?

बावनराम हँसे, "इज्जत क्या है और बेइज्जती क्या है, इसको तुम हमसे ज्यादा थोड़े ही जानते हो। तुम यह कमरा छोड़कर जाने की बात करते हो'''। दुनिया की हर तरह की बेइज्जती के बावजूद रोटी का एक छोटा-सा टुकडा तक छोड़कर जाना हम लोगो के बस मे नही था। हम उसे उस बेइज्जती के साथ ही निगलकर पानी पी लेते थे। बेइज्जती के जिस तल को मैं देख आया हूँ उसमे नीचे बस पाताल ही है और कुछ नही। उसके ऊपर जो भी होता है हमे तो वह इज्जत ही मालूम पड़ती है'।" थोडी देर तक वे चुप खडे रहे। फिर आँखो को साफ करते हुए बोले, "लेकिन मेरी इन बातों का यह मतलब न समझना कि मैं तुम लोगों को अपने सम्मान की रक्षा करने के प्रति हतोत्साह कर रहा हूँ। नौजवान होते हुए लोगो के लिए सबसे बड़ी हिम्मत अपनी इज्जत ही है। आदमी काम आये या न आये, इज्जत काम आती है। पर अभी वह स्थिति नही। अभी तो हमें अपनी बेल हर उस पेड़ पर चढने देने के लिए तैयार रहना चाहिए जो सहारा देने को तैयार हो। चाहे वह सूखा, गाँठ-गठीला ही क्यो न हो। बिना सहारे के हम अभी अपनी बेल को जिन्दा नही रख सकते'''हम जिस काम से आये हैं उसमे तब तक लगे रहना है जब तक कि आशा की नाव डूब ही न जाय।"

अनुकूल खडा-का-खडा रह गया। बावनराम लगातार अपने प्याज के-से छिलके छोड़ रहे थे और अनुकूल के सामने नये रूप में प्रकट हो रहे थे। फिर भी वह अपने तर्कों को उनकी बातो के नीचे दब जाने देने के लिए तैयार नही था। वह कहना चाहता था कि हमारे निर्णय अभी भी दूसरो की खुशी और नाराजगी पर निर्भर करते हैं। अपने दम घुटने की परवाह न करके उस चीज की परवाह करना हमारे लिए जरूरी है जो हमारे दम घुटने का कारण है। जिन यातना-घरो का पुस्तको में उल्लेख है, *क्या वे ऐसे ही नही होते? हम सबको उन्ही मे रहने की आदत पड़ गयी।* वहाँ मेरा दम घुटता है'''। आखरी वाक्य उसने बोलकर कहा।

उसने एक बार और जोर लगाया, "यहाँ से चलिए'''अब यहाँ रहना सम्भव नही।"

बावनराम थोडा उत्तेजित हो गये, "एम. पी. का मेहमान बनना मेरे लिए कोई बहुत बडे सम्मान की बात नही है। मेरी आँखो के सामने इस समय तेरे सिवाय कोई नही'''सिर्फ तू है। मेरी टूटी-फूटी और अँधेरी छान के सुराख से अन्दर तक चली आ रही तेज हवा मे टिमटिमाता अकेला दीपक ! मैं चाहता हूँ कि यह दीपक अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ निरन्तर जलता रहे'''अपनी रोशनी को जहाँ तक बखेर सके, बखेरे। तुम्हें अपने को, अपने लोगो को और उन सब लोगो को जो हमारे जैसी किस्मत लेकर पैदा हुए हैं'''राह दिखानी है। यह तभी सम्भव हो सकेगा जब अपने

पैरो पर मजबूती से खड़े रहकर मशाल दिखा सको। मैं यही कहूँगा कि एक बार तू मन की निकाल लेने दे। फिर जो तू कहेगा, वही करूँगा···" बावनराम ने धोती के पल्ले से आँखें पोंछ ली।

अनुकूल को लगा उसके हाथ मे अब अधिक कुछ नही है। बाबू की दोनों आँखें उसे बरसात के बादवाले दो अधसूखे डबरो की तरह लग रही थी। वह उनके पीछे-पीछे था। जंजीर उनके हाथो मे थी और वह एक पिल्ले की तरह चलता चला जा रहा था। बावनराम जाकर चुपचाप उसी खाट पर लेट गये, जिस पर पलौथी लगाकर बैठे थे। काफी देर बायीं करवट पर वे निश्चल लेटे रहे। अनुकूल उन्हे चुपचाप बैठा एकटक देखता रहा। बैठे-बैठे उसे बीच-बीच मे लगने लगता था कि उसकी रीढ़ की हड्डी मे एक लहर-सी पैदा होती है और ऊपर जाकर लीन हो जाती है। फिर उसे अपने बाबू की अधगीली आँखो के दो डबरे नजर आने लगते। धीरे-धीरे उसे ऊँघ आने लगती और फिर वह एकाएक चौंक पडता, जैसे बाबू उससे कह रहे है—तू अकेला नही है अनुकूल! बहुत-से लोग तेरी इन्तजार में खड़े हैं। तेरे द्वारा दिया गया साथ ही जिन्दा रहेगा···। लेकिन बाबू उसी करवट पर लेटे बच्चो की तरह सोते मिलते। वह पहले उड़का, फिर लेट गया। लेटना भी उसे आरामदेह नही लगा।

उसे झपकी आ गयी। सोते-सोते मेम साहब नौकर के साथ आयी और उन्होने उसके बाबू को खाट समेत बाहर फिकवा दिया। हचककर उठ बैठा। बाबू अभी भी सो रहे थे। उनके घुटने पेट में चले गये थे। क्या बाबू यही बने रहेंगे? अगर जमीन पर सोना पडा तो हो सकता है वे जमीन पर भी सोना स्वीकार कर लें। बाबू मुझे लेकर इतने भावुक क्यो हो जाते हैं? हम दोनों मे से क्या कोई भी इस स्थिति मे है कि अपने या किसी दूसरे के हालात में कोई परिवर्तन ला सके। बाबू मुझे असलियत से ज्यादा समझने लगे। मैं वही हूँ जो पैदा होने के समय था। उससे ज्यादा न हूँ और न हो सकता हूँ। कभी-कभी पैदायश ही जिन्दगी का पर्याय हो जाती है। अपनी पैदायश से उभरना आसान नही होता। मुझे नही लगता, इन्जीनियरिंग मे दाखला पा जाना जिन्दगी में कोई बुनियादी परिवर्तन ला देगा। यह सब जानते है। अनपढ-मे-अनपढ आदमी अपनी जिन्दगी को अपने जन्म से जोडकर देखता है। बहनें, बहनोई, माँ··· सब!

अनुकूल बहुत थक गया था। बावनराम गहरी नीद मे थे। वह फिर सो गया। काफी देर तक सोता रहा। जब उठा तब भी बाबू सो रहे थे। उनके चेहरे पर थकान और हल्की-सी मायूसी थी। उसके मन में ख्याल-पर-ख्याल आने लगे। जितने बाबू निकट थे उतने ही बुरे ख्याल आ रहे थे। वे जिस तरह दुखी होकर सोये थे, उसे देखते हुए उनका इतनी देर तक सोना उसके मन की चिन्ता का कारण बन गया था। कही ऐसा-वैसा कुछ हो गया तो वह क्या करेगा? ये लोग दोनो पाँवो मे रस्सी बाँधकर घसीटकर बाहर डाल देंगे। वह उठकर बैठ गया। उसने उन्हें झकझोरकर उठाना चाहा। लेकिन उनकी कोख उठ-बैठ रही थी। उसने राहत की साँस ली। वे हैं। बाबू हमेशा कहा करते हैं, अपने निकटतम आदमी के लिए बुरी-से-बुरी बात सोची जाती हैं और दुश्मन के लिए अच्छी-से-अच्छी। हाईस्कूल का रिजल्ट रात को गाड़ी से आनेवाला था। लडकों के साथ रिजल्ट देखने वह स्टेशन चला गया था। घर में

कितना कोहराम मचा था ! बाबू खोजते-खोजते रात मे ही स्टेशन पहुँचे थे। रिजल्ट गडबड़ आ गया और लडका कुछ कर बैठा तो कही के नही रहेंगे। बाबू जब मिले तो उनका चेहरा फक्क था। देखते ही चिपट गये, जैसे 'बेवकूफी' कर चुकने के बाद भी सही-सलामत मिल गया होऊँ। उस दिन पहली बार लगा कि आदमी अपनी प्रिय मे प्रिय चीज के नष्ट हो जाने की परिकल्पना के प्रति जल्दी ही आश्वस्त भी हो जाता है। घर आकर वह खूब हँसा था—"वाह बाबू, अगर वाकई बेवकूफी कर बैठा होता तो···?" सही-सलामत लौट आने और हँसने-हँसाने के बावजूद इस बात पर रोयाराट मच गया था। उसका अन्दाज लगाकर आज भी सिहरन होने लगती है। इस तरह की हँसी करके उसे उन लोगो का दिल नही दुखाना चाहिए था। सीधे-सादे लोग···!

बाहर लोगो के कदमों की आवाज सुनायी पडी। बावनराम जग गये थे। बाहर अँधेरा झुक आने से पहलेवाला गनूदगी भरा धुँधलका था। इस तरह का धुँधलका गहरी नींद से जगनेवाले आदमी को अधिक गहरा और आरामदेह मालूम पडता है। बावनराम को भी वैसा ही लगा। वे उठते ही बोले, "बहुत सोये·· रात हो गयी !"

उनका यह कहना अनुकूल को वैसा ही लगा जैसा दानो के किस्से-कहानियों मे होता है। दिन मे राजकुमारी मरी पड़ी रहती है, रात को दाना आकर उसे जिन्दा कर लेता है। एक दिन एक राजकुमार आकर सिरहाने और पांयत को अदल-बदल देता है। राजकुमारी यह कहते हुए उठकर बैठ जाती है कि बहुत सोये···।

बावनराम ने पूछा, "क्या बजा होगा ?"

"यही कोई छ.-एक···"

"लग तो रहा था रात ही गयी !" उन्होंने अन्दर बण्डी की जेब से घडी निकाल-कर देखी तो छ बजने मे थोड़ी देर थी।

"तुम नही सोये ?"

"थोड़ी देर को लेटा था।"

"रात-भर के जगे थे। बहुत अच्छी नीद आयी। लेटकर खबर ही नही रही।" बावनराम बहुत खुश थे। अनुकूल के कान बाहर की तरफ थे। लोग लौट रहे थे। बोलने-चालने, हँसने-हँसाने की आवाजे आने लगी थी। पता नही क्या हो ? उसे लगा।

दो आदमी अन्दर आये। उन्होंने उन दोनो की तरफ देखा। देखा और काम में लग गये। उनमे शायद एक को रात की गाडी से ही जाना था। कुछ सामान भी खरीदकर लाया था। उसकी खाट उन लोगो की खाटो मे तीसरी थी। उसने बराबरवाली खाट पर लाया हुआ सामान फैला लिया और बँधा हुआ सामान खोल-कर खरीदे हुए सामान को उसमे फिट करने लगा। अनुकूल को लगा, हो सकता है इनका काम हो गया हो। तभी इतना सारा सामान खरीदकर लाये हैं।

सापवाला आदमी बाथरूम होकर आया था और अगली खाट पर पसरकर सामान बाँधते हुए उस आदमी से बतिया रहा था।

"वक्त की बात है"'आज उसको भी सलाम झुकानी पड़ी जिसके पुरखो की चबूतरे पर चढ़ने की हिम्मत नही होती थी। बस यही सन्तोष है कि काम हो गया" काम न हुआ होता तो खल जाता !"

सामान बाँधनेवाला आदमी एक क्षण को सामान बाँधना स्थगित करके बोला, "चबूतरों का मतलब यही होता था"'अधिकारी व्यक्ति ही उन पर चढ और बैठ सकता था।" फिर हाथ नचाकर कहा, "अपनी हवेली है ना"'उसके तीन हिस्से हैं। पहले दरवाजा, फिर सहन और तब चबूतरा। दरवाजा कितना बड़ा है' वह कमीन-कन्दुओं के लिए था। सहन मे नौकर-चाकर और छोटे लोग। मिलने-जुलनेवाले लोग चबूतरे पर पडी कुर्सियो या तख्त पर बैठते थे। उसके ऊपर बराण्डा था। उसमे बाबा का आसन लगता था। अब तो लोग इन बातो को जानते तक नही"'यह सब पुराने लोगो की बात और तामीर थी !" वह फिर सामान ठीक-ठाक करने मे लग गया।

"हाँ, यही तो मैं भी कह रहा था। वहाँ वह जाटव डटा था। हम लोग कितनी देर तक नीचे खड़े रहे थे। मेरा मन हुआ भी कि चबूतरे पर चढकर कहूँ कि अपने बड़ो के दिन भूल गया, हण्टरो से पीट-पीटकर चूतड़ लाल कर दिये जाते थे। सारे सहन में नाचे-नाचे घूमते थे। अब बड़े आदमी हो गये"'घण्टे-भर से खड़ा कर रखा है"'फिर सोचा, क्या फायदा !"

अनुकूल के मन मे आया कि वह बीच ही में टपककर कहे कि गनीमत है, जाटव ने खडा ही रखा"'आसन पर बैठ जाने के बाद नीचे खड़े लोगो को हण्टरो से नही पिटवाया"'उल्टा आप लोगों का काम कर दिया। आपको उसका चबूतरे पर बैठना बुरा लगता है तो मत जाइए"'वह बेचारा बुलाने तो नही जाता। जब जायेगा तो कह देना, चबूतरे से नीचे उतरकर बात करो। वह बोला नही। अलबत्ता उसे अपनी बात पर हँसी आने को जरूर हुई।

वह आदमी सामान बाँध चुका था। कमर सीधी करता हुआ बोला, "कुछ भी कहो, शराफत तो है। बड़ी जात का हो और काम न करे तो किस काम का। उस साले शर्मा को देखो, अपने चौधरी साहब ने फोन किया"'दस रुपये खर्च करके मिलने गये ! हडकाता हुआ बोला" मैं क्या करूँ ? जाइए, आप क्या और लोगो से अलग हैं ! कानून सबके लिए बराबर है। जाटव साहब ने सुना, एक मिनट सोचा और फोन कर दिया '! चाहते तो टाल जाते। कह देते, मेरा विभाग नही !"

खाट पर बैठा हुआ वह आदमी खुसर-पुसर करने के लहजे मे ही बुलन्द आवाज मे बोल रहा था, "दरअसल नया-नया मिनिस्टर हुआ है"'प्रशासन सीखते-सीखते सीखेगा। अच्छा प्रशासक कभी इस तरह फोन नही करता। दस बार दौड लगवाता है।"

सामान के नग गिनकर बोला, "यार, तुम्हारा काम कर दिया तो प्रशासन नही जानता। यह भी कोई बात हुई। उसकी शराफत का श्रेय इत्ता-सा भी नही देना चाहते ? शर्मा तो जात-बिरादरी का है "साले ने पैर तक नही टिकाने दिये।"

"उसकी बात और थी"'वह खानदानी अफसर है। असली अफसर इतनी जल्दी हाथ नही रखने देता।"

"हाँ, क्योंकि वह जानता है कि अच्छा एडमिनिस्ट्रेटर कैसे हुआ जाता है'''। अगर वह पिटवा-पिटवाकर चूतड़ लाल करा देता तो और भी अच्छा एडमिनिस्ट्रेटर होता'''क्यों ?" दोनो कहकहा लगाकर हँस दिये।

वह सामान उठाता हुआ बोला, "तुम चिट्ठी लेकर आना। एक-आध रोज और रुकना पड़े तो भी कोई बात नही। जरूरत पड़े तो चौधरी साहब से कहकर मोतवानी साहब को सीधे फोन करा देना। वे ही फाइल देख रहे है। मोटर की चाबी तो नही है ना ?"

उसने गर्दन हिलाकर 'हाँ' कर दी। वह फिर बोला, "अगर पूछें तो कहना, जरूरी काम आ गया था। जाना पड़ा। अगली बार आऊँगा तो हिसाब-किताब कर जाऊँगा। बेचारे काम में रुचि तो लेते ही है। मिसेज़ चौधरी से भी नमस्कार कह देना। उन बेचारी ने चौधरी साहब का बैठना हराम कर दिया था। उनके कहने से न हुआ हो यह काम, और तो हुए।"

वे दोनों बाहर चले गये। थोड़ा-थोड़ा सामान दोनो ने उठा लिया।

उनके जाते ही अनुकूल के मुँह से निकला, "बाबू'' !"

बावनराम भी अभी उन्ही दोनो के पास थे। तुरन्त लौट आये। झटके से बोले, "हाँऽऽ !"

वह कुछ सोचकर बोला, "कुछ नही।" फिर रुककर कहा, "आप भी निबट-निबटा लीजिए। फिर चलकर खाने-पीने का भी काम खत्म कर लिया जाय।"

"हाँ, आज सवेरे के बाद से तो पेट मे कुछ गया ही नही। मैं तो सो गया, तुम्हें भूख लगी होगी।" वे जल्दी से उठे और 'अभी आया' कहकर धोती का सुड्डा हाथ मे पकड़े बाथरूम में घुस गये।

अनुकूल को लगा, वह वाकई भूखा है। लेकिन उसने उन दोनों के बारे मे सोचने पर ध्यान लगा दिया। वह जो आदमी गया है, दूसरेवाले का मालिक होगा '''नही, बड़ा भाई होना चाहिए। दोस्त भी हो सकता है। जिस तरह से वे लोग हँसे थे उस तरह शायद मालिक और नौकर न हँसते हो। बड़ेवाला समझदार था। बात समझता था। हालाँकि गन्दगी उसके दिमाग मे भी भरी थी। उसी ने पहले चबूतरेवाली बात कही थी। पर दूसरेवाला तो बहुत ही बुरी तरह गन्दे दिमागवाला आदमी है। जात-पाँत के कारण उसकी नजर मे अच्छा आदमी भी अच्छा नही, बल्कि बुरा आदमी अच्छा है। जब वो दोनो बात कर रहे थे तो बाबू चुपचाप सुन रहे थे। ऐसी बातो का बुरा उन्हें भी लगता है। दरअसल अब वे बुरे-भले से छूट-से गये। वे यही तो कहते हैं कि इस बुरे मे डुबकी लगाकर उसके रसातल तक हो आये हैं। हम जो कुछ सामने देखते हैं हमे वही गन्दगी का भ्रष्टतम रूप लगता है।

एक आदमी और अन्दर आया। जब अनुकूल सवेरे बाथरूम से निकला था तो यही आदमी खाट पर खड़ा होकर टाँगे चौड़ाये धोती बाँध रहा था। इसी के साथी ने बाबू को बाथरूम जाने से रोका था और अपना किन्च-भर साबुन वहाँ से उठाकर लाया था। कही बाबू छू न दें। बाबू तो वैसे भी मिट्टी इस्तेमाल करते हैं। उनका

कहना यही है, जब मिट्टी अन्त में शुद्ध करती है तो क्या जिन्दा रहते नहीं करेगी ! कभी-कभी वे हँसी-मजाक की बातें भी सुनाने लगते है । एक बार जगल गये । हाथ धोने के लिए मिट्टी उठाने लगे तो हाथ सन गया । कोई फिरके···मिट्टी से ढांप गया था । सुनकर तबियत घिनायी भी और हँसी भी आयी । उस पर भी बाबू ने हाथ धोये मिट्टी से ही । बाबू का मन ही मिट्टी हो गया ।

उस आदमी की खाट बावनराम के बराबरवाली थी । अन्दर आते ही पहले तो उसने अनुकूल को घूरा । इतने मे बावनराम बाथरूम से निकल आये । वे हाथ-मुँह धोकर अपनी धोती का सुड्डा सूडते हुए आ रहे थे । बाबू को खाट की तरफ आते देखकर उस आदमी का माथा और कान खरगोश की तरह हिले ।

वह बोला, "अच्छा बावनराम चौधरी···इस खाट पर आपका बिस्तर जम गया । तनेः बैठे थे, खाली होते ही लपक ली । भैया, तुम लोग मौका नही चूकते ।"

बावनराम बोले, "आपको एतराज हो तो हम कहीं और चले जायें !"

वह कान पकड़कर बोला, "राम भजो, है किसी की मजाल जो तुमसे कुछ कह दे । भैया, राज है, राज ।"

उसने कमरे का चक्कर लगाया और सामान उठाकर उसी खाट पर चला गया जो अभी-अभी खाली हुई थी ।

बावनराम ने देखा । बोले नही । दोनों खाटों पर सामान सजाकर खाना खाने के लिए निकल गये ।

लौटते-लौटते उन्हें आठ बज गये थे । चौधरी साहब अपने कमरे मे डटे थे । चार-छ: आदमी और इर्द-गिर्द जमा थे । वह आदमी भी वही था जिसने बावनराम के बराबरवाली खाट पर से सामान उठाकर दूसरी खाट पर रख लिया था ।

वही बोल रहा था, "टोकें तो कानून की गिरफ्त मे आ जाये । अब तो ये लोग खाट-से-खाट सटाकर लेटते है । क्षेत्र का मामला है, नही तो आज निबटारा हो गया होता । वही हगना-सौचाना और वही नहाना । भला हुई कोई बात !"

चौधरी साहब बोले, "धर्म और जाति से ऊपर उठे बिना कोई निस्तार नही पण्डितजी महाराज ! गांधीजी ने जो सड़क बना दी उसी पर चलो । वही देश-धर्म है । बुरा लगता जरूर है···पर बहुत-सी बातें बुरी लगती है । सभी छोड देते हैं क्या ? *हमारी पत्नी भी आज जिक्र कर रही थी···हमने उन्हें भी समझाया कि यह* तो राजनीति है । राजनीति में रहना है, तो पानी मे महल बनाकर नहीं रह सकते । सबको गले लगाना होगा और सबके गले लगना होगा ।"

वह झुंझलाकर तत्काल बोला, "सब गांधीजी का नाम ले देते हैं । अगर गांधीजी ने ये उत्ती के ना पाये होते तो गोली खाते क्या ? अगर कही सवा सौ साल जो गये होते तो हिन्दू-धर्म देश मे ना बचा होता । मनुजी और तुलसीदासजी ने जो कुछ कहा है···तो क्या वे मूर्ख ही थे? बिना सोचे-समझे ही कह दिया ? बस जो समझते-बूझते थे गांधीजी समझते-बूझते थे ।"

चौधरी साहब ने बात बदल दी, "आप सहाय साहब से मिले ?"

"मिले तो" पर बात बनने मे नही आ रही। किसी मुशी का काम होता, फटाफट हो गया होता। नाम के आगे यह जो पाण्डे लगा है···! मेरे भाई का पुलिस ने मार-मारकर भुरकुस निकाल दिया। वह एकदम निर्दोष है। सच कहता हूँ अभी तो रेख भी नही निकली। वह लडकी के साथ बदसलूकी करता ? उस लडकी को उन लोगो ने मेरे भाई को फँसाने के लिए भेजा था । डाक्टर को पैसा देकर झूठी डाक्टरी करा ली···बस हो गया मुजरिम। ये ससुरी तो हरदम खेतों मे लेटी रहती हैं। आपने होम साहब से कहा, होम ने ज्वाइण्ट होम के पास भेज दिया, ज्वाइण्ट होम ने डिप्टी होम के पास भेज दिया। सबने एक ही गाना गा दिया। कानून को अपना काम करने दो। निर्दोष है तो उसका कोई कुछ नही बिगाड सकता···और क्या बिगाड़ेंगे ? मार-मारकर चूल तो हिला दी। कम-से-कम होम साहब इतना तो करा दें कि पुलिसवाले मारपीट न करें।"

चौधरी साहब गुम हो गये। थोडी देर बाद अपनी तरफ लौंकते हुए देखकर बोले, "अच्छा कल बात करेंगे।"

थोड़ी देर तो बावनराम बाहर खड़े रहे। सोचते रहे अन्दर जायें या नही। फिर बोले, "चलो चलते है, बात कर लेना अच्छा है। अगर काम न बनना हो तो काहे इतनी बातें सुने। अपने घर जाये।"

अनुकूल थोडा हौलदिल था। कही अन्दर भी वही नाटक शुरु न हो जाये, जिसे वे दिन-भर अपने मूल्य पर झेलते रहे। बावनराम पहले घुसे। पीछे-पीछे उसे भी जाना पडा। चौधरी साहब उन्हें देखकर पहले सकपकाये, फिर खुली आवाज मे बोले, "आइए-आइए बावन भाई, मैं तो अभी आपके पास ही जानेवाला था।"

वह आदमी उठ खडा हुआ और तन्नाकर बोला, "यही लोग तो आपके सगे हैं ···हम लोगो को कौन पूछता है !"

बावनराम ने उसकी तरफ देखा। वह दाँत किचकिचा रहा था। चौधरी साहब हँस दिये, "हम तो आपके लिए भी हैं और इनके लिए भी···बस बात धीरज की है।"

चौधरी साहब हँसे तो शेष लोग भी हँस दिये। अनुकूल को उन लोगों का हँसना मुखौटे का-सा हँसना महसूस हुआ। उसने सोचा, अन्दर से जरूर ये लोग नाराज और गम्भीर हैं। इतने गम्भीर कि ऐसे में हँसी आनी मुश्किल है।

बावनराम ने धीरे-से कहा, "अगर आप अलग से समय दे दें तो अच्छा हो··· मुझे जरूरी बात करनी है। सिर्फ आपसे बात करने के लिए ही रुका हूँ।"

चौधरी साहब बोले, "जरूर···।"

बाहर को निकले हुए दाँतवाला एक अजीब-सा आदमी बोला, "सुन लीजिए ···इनकी सुन लीजिए···दाई के पास तो पेट ही लेकर जाया जाता है, जायज हो या नाजायज।" बावनराम को बुरा लगा।

चौधरी साहब हँसकर बोले, "बहुत-सी दाइयाँ तो ऐसी होती हैं कि चौखट पर पाँव रखते ही समझ जाती हैं कि कैसा है।"

निकले दाँतवाला जोर-जोर से हँसने लगा। हँसने ही नही लगा, हँस-हँसकर जमीन पर लोटने लगा।

चौधरी साहब उसे इस तरह हँसता देखकर खुद भी हँसने लगे। बावनराम का चेहरा अतिरिक्त रूप से कड़ा हो गया। उन्हें उसे हँसमुखा बनाये रखने मे परेशानी हो रही थी। चौधरी साहब कुछ तरंग-सी मे आ गये थे। वे संसद के किस्सो को सुना-सुनाकर अपनी तारीफ करने पर उतर आये थे। सबसे बड़ी बात यही थी कि स्पीकर महोदय हर बात मे उनकी राय पूछते हैं। इसलिए हर मसले पर राय देनी पड़ती है। मिनिस्टर साहेबान तक बुलाकर कहने लगते हैं कि फलां बिल की फलां धारा पर आपको बोलना होगा। हम अपने लहजे मे कुछ मजाकिया बातें कहकर, उनमे कुछ गम्भीर मसले उठाकर, बात को निकाल ले जाते हैं। अब अपने सूचनामन्त्रीजी हैं, बड़े बहुरूपिया है। कभी कुछ पहनकर आते हैं, कभी कुछ। अभी कुछ दिन पहले वे कन्धे पर चादर डालकर हाउस मे चले आये। विरोधी दलवाले भी मौका ताड़े रहते है। एक ने चुटकी ली--क्या सूचनामन्त्री महोदय इसलिए चादर कन्धे पर डालकर आये है ताकि सरकार की गल्तियों पर पर्दा डाल सकें! हम फौरन खड़े होकर बोले, "सदस्य महोदय ने गलत अन्दाज लगाया...मन्त्रीजी की चादर विरोधी दल के बेवक्त और दिशाहीन ढंग से दौड़नेवाले अक्ल के खरगोश को पकड़ने के काम आयेगी।"

विरोधी दल सन्नाटे मे आ गया। खूब ठहाका लगा। मन्त्रीजी बाद मे आकर बोले कि चौधरी साहब, आपने बात को खूब सँभाला, नही तो आज बहुत किरकिरी हो जाती। उनके इस संसदीय चुटकले का वहाँ बैठे लोग और भी ज्यादा लोट-लोटकर खैरमकदम कर रहे थे। अनुकूल बाहर निकलकर खड़ा हो गया।

सबके हँस चुकने के बाद चौधरी साहब बोले, "अब सोया जाय, आज संसद मे भी बहुत गहमा-गहमा रही। संसद के मानसून सेशन का मानसून संसद मे ही बरसता है।"

सब लोग बेमन से ऐसे उठे, जैसे कथावाचक ने कथा अचानक खत्म कर दी हो। बावनराम भी उठने लगे। उनका चेहरे का पानी पूरी तरह उतरा हुआ था। अनुकूल भी अन्दर आ गया था। बाबू का चेहरा देखकर वह भी थोड़ा अव्यवस्थित-सा हो गया था। बाबू भी बेकार पीछे लगे हैं। साफ जाहिर है, उन्हें हमारी बात नही सुननी। अगर इन्जीनियर बनना किस्मत मे नही लिखा है तो चौधरी साहब थोड़े ही बना देंगे। पता नहीं बाबू बार-बार अपनी बेइज्जती क्यो करा रहे हैं?

चौधरी साहब ने उठकर जाने का उपक्रम करते हुए बावनराम को आँख से बैठे रहने का इशारा किया तो बावनराम का ढेट कुछ लौटा। अनुकूल उन्हें इशारा करते नही देख पाया था। उनके बैठे रहने पर वह और उत्तेजित महसूस करने लगा। क्या धक्के देने पर ही जायेंगे? लेकिन बावनराम इशारा पाते ही पूरी तरह लहलहा उठे थे। जेठ-बैसाख जैसा सूखापन जो उनके चेहरे पर बैठ गया था वह एकाएक विस्थापित हो गया। बरखा के ऐसे दौंगड़े का-सा तृप्ति का अहसास भर गया जो प्यास नही बुझाता पर बुझाने का वातावरण बनाता है। बावनराम का मन अनायास इस विचार से भर उठा कि कुछ भी कहो बावनराम, चौधरी साहब का

दिल सोना है। हमारा हित तो वे ऐसा सोचते है जैसे अपने ही भाई-बन्धुओ का हित हो। बाहर से एक खिसियाहट भरी आवाज आयी, "उन्होने मुँह खोलकर भी कह दिया, पर लोग हैं कि जमे है···"

"उनके जमने को कौन उखाड़ सकता है···अब तो ये ही जमेगे, बाकी सब तो उखडे ही पड़े रहेंगे।"

"अरे भई, शर्म भी तो कोई चीज है, चौधरी साहब भी तो आदमी है·· उन्हे भी तो आराम की जरूरत है।"

"होगी उन्हें आराम की जरूरत, इन्हे तो अपने काम की जरूरत है।"

चौधरी साहब मुस्कुराकर बोले, "आपने देखा बावन भाई, ये सब पढे-लिखे और अपने को ऊँची जात और अच्छे घरो का समझनेवाले लोग है।"

बावनराम थोड़ी खनकती आवाज मे बोले, "हम क्या जानें ऊँची जात और अच्छे घर···उन्ही लोगो के दर्शन करके कृतार्थ हो लेते है।"

"नही बावन भाई, उन लोगों की बातो का बुरा न मानो। यह लोग सदियो से दूसरो को नीच और घृणास्पद समझते आये हैं। इन्हें इस बात का अन्दाज ही नही कि दूसरों को भी इन लोगो के बारे मे राय बनाने का स्वतन्त्र अधिकार मिला हुआ है। यह बात दूसरी है कि उन लोगो ने उसका कभी उपयोग नही किया। जमाना तेजी से बदल रहा है इसलिए बुरा लगना स्वाभाविक है। जो लोग दूसरो को अपनी सुख-सुविधा का साधन मात्र मानते हैं उन्हें अचानक यह पता चले कि बाकी लोगो की सुख-सुविधाओ के भी नये पैमाने बन रहे है तो उनका तडपड़ाना स्वाभाविक होगा···मैं भी ऐसे ही लोगो मे हूँ। फर्क केवल इतना ही है कि मेरे बुजुर्गों को अलग रखे हुए बर्तनो मे रोटी दी जाती थी और तुम लोगो के सामने फेंकी जाती थी···" पहले वे हँसे फिर थोड़ा गम्भीर होकर बोले, "दूसरों की बहू-बेटी के साथ जबरदस्ती करेंगे···सफल नही होंगे तो उसे मार डालेंगे। कानूनी कार्यवाही की जायेगी तो उल्टा आरोप लड़की पर लगायेंगे कि लड़की छेड़ती थी या बलात्कार करना या करवाना चाहती थी। साले झुट्ठे ! मैं कहता हूँ कि आग सुलग रही है · सुलगते-सुलगते सुलगेगी। हम लोग तो ना आग पहचानते हैं ना पानी···पर हैं पहचाननेवाले लोग···नापैद नही हुए।"

चौधरी साहब थोडी देर चुप रहे। उनकी चढी हुई भौहे धीरे-धीरे नीचे आयी। सामान्य होने के बाद वे मुस्कुराते हुए बोले, "कोई बात नही, कभी-कभी ऐसा हो जाता है। कहिए क्या बात है ? क्या साहबजादे की नौकरी का मामला है ? हम लोग तो इस तरह के कामो मे ही काम आते हैं···इसके अलावा न हम लीपने के ना पोतने के।"

बावनराम उनकी बात सुनकर थोडा चकित थे। ऐसी बातें तो कोई नेता नही कहता-करता। लेकिन उन्होंने बिना समय खोये अपनी बात कहनी शुरू कर दी, "बात यह है कि सबकी सेवा करते हम लोगों की पीढियाँ गुजर गयी। हमे तो पता नही चला कि दुनिया बढ़कर इतनी बड़ी हो गयी। यहाँ तक कि दूसरों की भलाई की बातें भी सोची जाने लगी। अचानक पता चला कि इन बच्चो के चमार, चूढ़े, धोबी, जमादार बने रहने के अलावा इन्सान बनकर जीने के रास्ते भी खुल रहे हैं।

आपने तो देखा ही है कि खलासी के रूप मे हम लोहा-लंगड ढोया करते थे···उससे पहले हमारे बाप मरे हुए ढोर घसीटा करते थे। आपका यह इकलौता लड़का है, दसवी पास किये दूसरा साल है·· वैसे आगे पढ रहा है···"

रुककर चौधरी साहब की तरफ देखा तो वे आँखे बन्द किये बैठे थे। किसी तरह की कोई हरकत नही थी। बावनराम चुप हो गये। लगता है चौधरी साहब सो गये। लेकिन उनके चुप होते ही चौधरी साहब तत्काल बोले, "मैं सुन रहा हूँ··· आप कहना जारी रखिए। वैसे मेरा ख्याल है कि इनको बारहवी पास कर लेने दीजिए, फिर टाइप सिखाकर मेरे पास भेज दीजिए सेक्रेटेरियट मे कोटा के अन्तर्गत लगवा दूंगा।"

"मेरी बात सुन लीजिए·· मेरा बेटा है इसलिए नही कह रहा हूँ, बल्कि इसलिए कह रहा हूँ कि हम जैसे लोगो के घरो मे ऐसे होनहार लडके मुश्किल से होते हैं। सुना है इस साल आरक्षित कोटा मे आई.आई. टी. के कालिजो मे, बिना इम्तहान के पाँचसाला कोर्स मे सीधे भर्ती की जा रही है।"

"आई. टी. आई मे ? वो तो प्रदेश के लेबर डिपार्टमेण्ट में आती है।"

अनुकूल फौरन बोला, "नही, आई. आई टी. मे।"

"हाँऽऽ, अभी पिछले हफ्ते संसद मे शिक्षामन्त्री ने एक बयान तो दिया था··· शायद आप ही लोगो के दाखले को लेकर।" फिर रुककर बोले, "सुना है बहुत बडी जगह है···वहाँ पढकर तुम्हारा लड़का हाथो मे निकल जायेगा। यही सवाल पूछा गया था कि जो होशियार लडके पास करते है वे बेगाने होकर विदेशो मे चले जाते हैं···पिछड़े वर्ग के लोगो को दाखले नही दिये जाते। देश तो खुख्खल हो जायेगा। पचास प्रतिशत मेधावी लड़को के विदेशो मे चले जाने की बात तो मन्त्रीजी ने भी मानी थी। वैसे ज्यादा ही होंगे। उसी कारण शायद एस सी., एस. टी. बच्चो को खुला दाखला दिया जा रहा है। वैसे वहाँ पढनेवाले बच्चो के बारे मे अच्छी राय नही है। होते तो होशियार है पर बिगड जाते हैं। आदमी उन्हे भुनगा लगता है। अभी तो देश को, आदमी को आदमी समझनेवाले लोगो की जरूरत है। इसे किसी छोटे-मोटे काम मे लगा दो, घर बना रहेगा और बच्चा भी आँखो से दूर नही जायेगा।"

"यह बच्चा इसलिए पैदा नही हुआ कि बाप की तरह लोहा-लगड ढोये। ऊपर से बूटो की मार पडे। अगर यही लड़के आगे बढने की नही सोचेंगे तो फिर हम लोगो के सामने से तो 'आगे' शब्द ही लोप हो जायेगा। एक-आध कदम तो ये भी आगे बढ़ें, चौधरी साहब !"

चौधरी साहब सोचने लगे, "मेरी राय तो नही बावनराम, मेरा बडा लडका भी चाहता था। छान-बीन करके इसी नतीजे पर पहुँचा कि सबसे भला अपने घर का काम·· दूजे मास्टरी, तीजे बाबूगिरी। बस बी. ए., एम. ए. करा के कही कालेज-वालेज मे लग जायेगा। जैसा काम करेगा वैसा मन बनेगा। आजाद रहेगा, बन्धन टूटेंगे···"

अनुकूल उनकी तरफ चुपचाप देख रहा था और गुटर-गुटर बातें सुन रहा था।

बावनराम हिम्मत हारने को तैयार नही थे, "लडका पड़ने मे होशियार है।

होनहार बच्चा है। कुछ करा देंगे तो आप ही का नाम रोशन करेगा हमेशा आपकी जूती बनकर रहेगा।"

अनुकूल को बाबू का यह कहना एकाएक अखर गया। वह उचका। लेकिन चौधरी साहब बिना कुछ बोले हँस दिये। फिर बोले, "अपनी उम्र पर सभी अपनी-अपनी तरह होशियार होते है। हमारा बेटा भी आपके बेटे की तरह पढने-लिखने मे होशियार था।"

बावनराम तत्काल जीभ को दाँतो के तले दबाते हुए बोले, "मै तो अपने लोगो के बच्चो की बात कर रहा था। आप लोगों के बच्चे होशियार नही होगे तो किसके होगे ! हम लोगो के यहाँ तो, यहाँ तक की पढाई तक ही पहुँचना दुश्वार है। यहाँ तक पहुँचाने में ही मुझे कितनी साँमत मोल लेनी पड़ी। बाहर तो ली है अन्दर भी ली। बस रह-रहकर आँखो के सामने चाँद-सूरज की तरह यही बात बार-बार उदय होती है कि अनुकूल इन्जीनियर हो जाये। यह कुछ हो जायेगा तभी उस खन्दक से बाहर आने लायक होगे। नही तो सबकी जिन्दगी दुर-दुर, पर-पर मे ही कटेगी।"

"यह तो सब जिन्दगी के साथ लगा है। जिसकी जितनी झोली होती है, वह उतना ही पाता है।"

बावनराम ने फौरन कहा, "झोली ही बड़ी की जा सकती है चौधरी साहब, बाकी तो सब सिल-सिलाकर आया है।"

चौधरी साहब हँस दिये, "खूब कहा बावन भाई, पर उसके लिए···"

"वही तो मैं कर रहा हूँ।"

चौधरी साहब अनुकूल की तरफ घूम गये, "इन्जीनियर बनोगे ?"

"जी, जैसा बाबू कहेंगे···"

बावनराम की आँखें खुशी के मारे भर आयी। भैया ने लाज रख ली। इसी-लिए तो कहता हूँ कि ऐसा-वैसा लड़का नही। किसी बड़े का होता तो बड़प्पन के जोर से ही निकल गया होता। उन्होंने धोती के पल्ले से आँखें पोंछ ली। खँखारते हुए बोले, "इस बेटे के रूप मे बडों के पुण्य सामने आये है चौधरी साहब··"

अन्दर से एकाएक आवाज आयी, "अब सोयेंगे भी या रात-भर इसी तरह बैठे रहेगे ··एम. पी. क्या हो गये, रात को सोना तक पाप हो गया। इससे तो हम बे-एम. पी. ही ठीक थे।"

चौधरी साहब का चेहरा सिकुड़कर छोटा पड गया। वे वही से बोले, "आते है भई आते है···" फिर धीरे-से बोले, "कल मिनिस्ट्री मे फोन कर दूँगा। आप जाकर मिल लीजिए बावनरामजी···लडका हाथो से बोज्जा-बोज्जा···।"

बावनराम हँस दिये और आश्वस्त करने के ढंग मे बोले, "नही, यह ऐसा लडका नही। अपनी और अपने घर की स्थिति को समझता है। बस आप करा-भर दें।"

चौधरी साहब उठ खड़े हुए। बावनराम भी अपने अनुकूल के साथ बाहर निकल आये।

बाहर आकर बावनराम अनुकूल से बोले, "यही बड़प्पन होता है···घरवाली के

व्यवहार के लिए इन्हे कैसे दोषी ठहरा दे ? बेचारो ने हमसे बात करने के लिए सबको हटा दिया। किसी की बात ही कोई ध्यान से सुन ले तो कितना सहारा मिलता है। इन्होने तो मदद करने का वायदा भी किया है। इतना कौन करता है ? भगवान ने चाहा तो काम बनकर रहेगा। ये सब काम बनने के ही बानक हैं।"

अनुकूल चुपचाप चलता रहा।

कमरे मे पहुँचे तो सब सोये पड़े थे। उनका सामान उलट-पुलट हो चुका था। खाटें बाहर निकली पडी थी।

थोडी देर तक दोनो बाप-बेटे चुपचाप खडे रहे। सामान बटोरा। इतनी रात गये कहाँ ठिकाना मिलेगा ? अनुकूल रात सड़क पर बैठकर गुजारने के लिए तैयार था। लेकिन बावनराम चुप थे। वे बिना कुछ कहे खाट पर लेट गये। अनुकूल थोड़ी देर तक बाबू को देखता रहा। फिर उसे लगा, नीद यन्त्रणा के उस कुएँ से निकालने के लिए बार-बार काँटा डाल रही है। वह भी लेट गया। लेटते-लेटते भी उसे लग रहा था कि कमरे के लोग अभी जगे हुए है और उन्हे देख-देखकर अँधेरे मे ही मुस्कुरा रहे हैं। इस बात से वह और अधिक घायल अनुभव करने लगता था।

आँखें लगती थी और बार-बार खुल जाती थी। थोड़ी-थोडी देर बाद अनुकूल को लगता था कि कोई सिरहाने खडा है और खाट उलटने का उपक्रम कर रहा है। पुन: आँख लग जाने पर भी उसकी निरन्तरता बनी रहती थी···वह किसी गहरी खाई मे गिरता चला जा रहा है। फिर एक बहुत बड़ी झाड़ी मे अटक गया। कुछ दूर पर खड़ा वह अपने आपको ही उस झाड़ी मे चिथडे की तरह अटका हुआ देख रहा है। उसके पिता ऊपर पहाड़ी पर खडे बुला रहे हैं···भैया आ जा, मेरे भैया ! अब आई. आई. टी. मे तेरा दाखला कतई नही कराऊँगा। घर चल।···चौधरी साहब हस्बमामूल ढग से हँस रहे है। थोड़ी देर बाद वही शामवाला आदमी कुल्हाड़ी लिये आता है और उसी झाड़ी को कुल्हाड़ी से काटने लगता है। अनुकूल उस झाडी को कटते देख वही खडा-खड़ा चिल्लाता है···झाड़ी को मत काटो, उस पर मैं टँगा हूँ। उसके बाबू चिल्लाते हैं···चौधरी साहब, उसको रोकिए···मैं अपने बच्चे को वापिस ले जाऊँगा। मेरा बच्चा बहुत होनहार है···। लेकिन उस आदमी के माथे से पसीने की जितनी बूँदें टपकती है उसी की शक्ल-सूरत के उतने ही आदमी कुल्हाडी लिये पैदा हो जाते हैं और झाड़ी काटने पर जुट जाते हैं।

अनुकूल एकाएक उठकर बैठ गया। वह पसीने से तर था। बिल्कुल सामने पूरा चाँद था। उसकी चाँदनी चारो तरफ फैली हुई थी···पेडों पर, छत की मुँडेरो पर··· बराण्डे के बाहरवाले आँगन मे। बाहर के नल से टप-टप···पानी टपक रहा था। उसे लगा चाँदनी ही टपककर तो नही फैलती जा रही ? वह घबरा गया, कही सैलाब न बन जाय। फिर चाँदनी, चाँदनी-सी न लगकर एक जादुई चादर-सी लगने लगी जो उसे और उसके बापू को लपेट ले जाने के लिए फैलायी गयी थी।

बावनराम ने एकाएक पूछा, "क्या बात है भैया ? नीद नही आ रही क्या ?"

वह एकाएक बोल नही पाया। उन्होने दोबारा वही बात दोहरायी। उसने

अपने आपको बडी मुश्किल से कुछ कहने योग्य बनाया, "बाबू, घर चलो ''ये लोग'''" आगे के शब्द उस पर खो गये।

"सो जा, सो जा'''ये सब बातें तो होती ही रहती हैं। थोड़े दिनो की बात है'''जहाँ तू इन्जीनियर हुआ, कही कुछ नही होगा।"

"बाबू, कोई कुछ नही बनने देगा'''ये सब कुल्हाड़े लिये खडे हैं!" वह अभी भी उस स्वप्न की लपेट में था।

बावनराम लेटे-लेटे बोले जा रहे थे, "कहीं कुछ नही, कोई कुल्हाड़ा लिये नही खड़ा। यह तो सब इस अन्यायी वक्त का खेल है। आँखें दिखा रहा है। दिखलाकर चला जायेगा। कल चौधरी साहब से पूछ ले, फिर जैसा होगा वैसा कर लेंगे। अपने घर मे भी तो हम लोग बरामदे मे ही सोते है। यहाँ इन्होने खाट निकालकर डाल दी तो अच्छा ही हुआ। अब तक तो हम ही सेवा करते रहे'''पहले ऐसा कब हुआ कि हम लोगो की खाटे ये लोग बाहर निकालें!" वे हल्का-सा मुस्कुरा दिये।

वह फिर लेट गया। चाँद ऊपर-ही-ऊपर चढता चला आ रहा था'''थोड़ी देर मे वह उसके सीने पर आकर बैठ जायेगा। गला दबा देगा। फिर अपनी चादर में लपेटकर किसी ऐसे खड्ड मे फेंक आयेगा जहाँ वे ही सब कुल्हाड़ी लिये खडे होगे। उसे कँपकपी आने लगी। पता नही वह कब सोया।

एकाएक बावनराम सोते-सोते चिल्लाये—'है'' है'''यह क्या कर रहे हो?'

अनुकूल उठ बैठा और उन्हे हिलाकर बोला, "क्या हुआ बाबू?"

"कुछ नही'''" उन्होने धीरे-से कहा। फिर बोले, "बायाँ हाथ सीने पर आ गया होगा!"

वह फिर लेट गया। बावनराम मन-ही-मन सोचने लगे वे वाकई चिल्लाये थे या अनुकूल को वहम हो गया? अनुकूल जग रहा होगा तभी तो उसने पूछा'''उन्हें फिर नींद आने लगी।

रात का अधजगापन उन लोगो की आँखो में, चेहरे पर'''सब जगह मौजूद था।

अनुकूल पहले उठा। कमरेवाले लोग गहरी नीद मे थे। वह दवे पाँव बाथरूम गया और धीरे-से दरवाजा बन्द कर लिया। बावनराम भी तब तक जग चुके थे। उन्होंने उसे बाथरूम जाते और दरवाजा बन्द करते देख लिया था। उनकी आँखें एकाएक नम हो आयी। ऐसा होनहार लड़का और यह वर्ताव! इन्जीनियर होते ही सब ठीक हो जायेगा। उन्होंने अपने मन को उस तरफ से हटाया और लेटे-ही-लेटे जप करने मे लग गये। साथ-ही-साथ बीच-बीच मे बुदबुदाते जा रहे थे'''उसी का नाम जहाज है। वही पार लगाता है। बावनराम, उतावला न हो। तुम्हारी तावल से सूरज पहले नही निकल आयेगा। समय भी सूरज ही है। धीरे-धीरे उदय होता है। उदय होने पर सब कुछ रोशन हो जाता है। अँधेरा तक!

अनुकूल बिना आवाज किये भीतर निवृत्त हो रहा था। बीच में एक बार बाहर आया था। कमरेवाले तब भी सो रहे थे। नहाने के कपड़े लेकर तुरन्त ही गुसलखाने मे चला गया। नहाते-नहाते भी वह उतावला था। कही कोई उठ न जाय। दिन

कहीं कहा-सुनी से ही शुरू न हो। वह बाबू के यहाँ ठहरने के निर्णय से अपने को अभी भी सहमत नहीं पा रहा था। उसने जल्दी-जल्दी बदन पोंछा, जाँघिया और बनियान पहने और बाहर निकल आया। आते ही उसने बावनराम को जगाया। वे पहले से ही जगे थे। फुसफुसाकर बोला, "अभी सब सोये हैं, तुम भी जाकर निपट आओ। नहीं तो फिर भीड लग जायेगी। पता नहीं कब नम्बर आये।" वे फौरन उठे। धरती चुचकारी और बाथरूम में घुस गये।

अनुकूल जाँघिये-बनियान में ही लेट गया। आसमान उभरता आ रहा था। तारे मद्धम पडते जा रहे थे। जिनमें थोडी-बहुत चमक थी वे भी बुझने की राह पर ही थे। चाँद भी बहुत तेजी से अपने आपको समेट रहा था। चिडियों की चहचहाट सर्वोपरि थी। उन्मुक्त! गौर से न सुना जाय तो यह सब चहचहाटें एक-सी लगती हैं। हालाँकि पक्षी सभी तरह के होते हैं और हर तरह की बोली बोलते है। खासतौर से सुबह और शाम। अनुकूल का दिमाग दूसरी तरफ घूम गया। कुछ चिड़ियें मात्र भोजन ही क्यों होती हैं? चिडिएँ तक उन्हें दबोच लेती हैं "हम सब तो खाने के लिए तैयार रहते ही हैं! लेकिन गाने और चहचहाने की किसी को मुमानियत नहीं। उनका खाना-पीना भी घृणा का नहीं, भूख का है। घृणा का हुआ होता तो सब छोटी-छोटी चिड़िएँ बटोर दी गयी होतीं। घृणा उनकी पहचान न होकर हम लोगों की पहचान हो गयी है। प्रेम तो सभी का है। उसने कमरे की तरफ देखा—सन्नाटा था। ये लोग उठ गये होते तो हम लोगों को इतनी आसानी से निबटने न देते। बकते अलग। उसके ये सब विचार टूटे-टूटे थे।

बावनराम निकलकर आये तो माहौल बदला हुआ था। चन्द्रमा कलई उतरे बरतन की तरह एक तरफ को लुढका पडा था। तारे तो थे ही नहीं। चन्द्रमा का डूबना उन सबको ले बैठा था। चिडिएँ जो धावे की तरह चहचहाकर आयी थी··· रोजी पर चली गयी थी। चिडियों जैसा मस्त और आत्मनिर्भर मजदूर देखने को नहीं मिलता। चोंच में रोटी और गाने में शक्ति। आसमान में हुए सत्ता-परिवर्तन के बावजूद अनुकूल को अभी तक कोई ऐसी घटना नहीं दिखायी पडी थी जो उस नितरे वातावरण को गदला कर देती। सब अपनी-अपनी जगह उड रहे थे और अपनी-अपनी धुन में गुनगुना रहे थे। अनुकूल इस नये आसमान को देखकर शिशुवत प्रसन्न था। कल उसके आसपास कहीं नहीं था। वे लोग भी नहीं थे जो अन्दर धीरे-धीरे जग रहे थे। अनुकूल का मन उडकर आसमान का चक्कर लगा आने को हुआ। वैसे वह एक तरह उड ही रहा था।

बावनराम भीगे थे। उन्होंने धोती के पल्ले से ही शरीर पोंछा और उसे कन्धे पर डाल लिया। आये और जमीन पर रोज की तरह उकड़ूँ बैठकर पूजा करने लगे। पता नहीं बाबू को इसमें क्या मिलता है? जब पूछो यही कहते हैं कि जीने के लिए शान्ति और संघर्ष के लिए शक्ति चाहिए। यही पूजा उसका वृहद भण्डार है। अपनी पूजा को लेकर बाबू बहुत भावुक हो जाते हैं। आसमान का उदाहरण देने लगते हैं। आकाश अनन्त है। अनन्त को तो हम देख नहीं सकते, समेट नहीं सकते। जितना दीखता है उसी के जरिये हम उसकी अनन्तता से जुड़ते हैं। इसी तरह अपने अन्दर का ईश्वर उस अनन्त ईश्वर का अंश होता है। उसे देखने पर ही उस अनन्त ईश्वर

को देखा जा सकता है। यह अपने अन्दर के उस ईश्वर को देख पाने की जद्दोजहद है। काम से भी और ध्यान से भी। काम और ध्यान दोनों एक-दूसरे की रास अपने हाथ मे रखते है। पर अपने अन्दर उतरकर उसे खोजने मे ही सबसे अधिक घबराहट होती है। अक्सर हम घरो मे बिना कोनो को खँगाले ऊपर-ऊपर से बुहारी लगाकर भाग पडते हैं। इस डर से कि पता नही कब, कहाँ, क्या निकल आये। इसी तरह पूजा मे भी···ऊपर-ही-ऊपर से झाँक-झूँककर भाग पड़ने के कारण 'वह' नही दिख पाता। इसी चक्कर मे पूजा करता हूँ कि कभी गोता लगाकर नीचे पहुँच गया तो हो सकता है उसे देख पाऊँ। इसलिए बार-बार गोता लगाना जरूरी है। सस्कार तो बनेगा। बाबू की बात कभी समझ मे नही आती। यह भी पता नही चलता, बाबू के अन्दर ये सब बाते कहाँ से उपजती हैं। कभी-कभी यह भी लगता है कि कही कुछ नही। जो कुछ सुनते-देखते आ रहे है, वही कर रहे है।

पूजा करते-करते बावनराम भजन गाने लगे···'नाव तिहारी, नदी तिहारी··· हम तो डूबनहार, कौन करेगा पार···!'

थोडी देर बाद भजन गाना बन्द हो गया। आँखो से अश्रुधारा बहने लगी। फिर वे निश्चल होकर बैठ गये। बीच-बीच मे उनके गले की गाँठ गटक जाती थी और फिर ऊपर आ जाती थी। अनुकूल ने झुककर देखा। उनकी पलको के बीच आँसू की चमकीली बूँदे टिकी थी। जो बह गये थे वे खुश्क होकर गालो पर चिपके थे।··· लगता है बाबू दुखी हैं। बहुत दुखी। जो हुआ है, शायद वही सब अपने भगवान को वह बता रहे है। हम लोग भी छोटे-छोटे थे तो बाबू को बताया करते थे···अमुक ने मारा, गाली दी, कान उखाड़ा···। बाबू के चेहरे पर कुछ आता था चमचमाता हुआ, फिर बुझ जाता था। दुखी होने पर बाबू कहते थे "कोई बात नही बच्चा, जो होना था सो हो गया "किये की सजा भगवान 'उसे' देगा। बाबू का भगवान भी बाबू जैसा ही होगा। वह भी अपने भगवान पर टाल देगा।

बावनराम पूजा करके उठे तो उनके पपोटे भारी थे। आँखो के नीचे छोटी-छोटी गद्दियाँ-सी बन गयी थी। उन्होंने सिनककर नाक का पानी सिनका और धोती के पल्ले से नाक पूँछ लिया। फिर दोहरे तहमद को इकहरा कर धोती की तरह बाँधने लगे। कमरे के लोग उठ गये थे और काफी खटर-पटर हो रही थी। खाटें चरमरा रही थी। सामान उठाये-रखे जा रहे थे। अटैचियाँ सरकती थी तो दाँतो मे फिमफिमाहट महसूस होती थी।

बाथरूम मे से किसी ने कहा, "देखा, सारा बाथरूम गीला पड़ा है···इन साले भगतों की वजह से नाक में दम है। लगता है सरऊ रात-भर नहाये है।"

अनुकूल को लगा कि बात धीरे-धीरे उन पर ही आ रही है। वह उठा और बाहर की तरफ चल दिया। लेकिन कोई कह रहा था, "यहाँ तो जिन्दगी इन लोगों की वजह से दूभर हो गयी। धरम-करम को कहाँ रख आयें। कपडे-लत्ते थोडे ही हैं कि नदी पार करते हुए सिर पर धर लिये···और बल्ली पार। धरम तो शरीर भी है और आत्मा भी! पर ये तो ससुरे मास और नखन को अलग करके पर तुले हैं···।"

अनुकूल जाता-जाता ठिठक गया। हो-न-हो यह जरूर वही आदमी है जिसके

रात सामान तितर-बितर किया था और खाट घसीटकर बाहर डाली थी। जिस तरह टेढ़ी-मेढ़ी पड़ी थी उसी से लगा था कि इसका दिल हम लोगों के प्रति घृणा से कितना लबालब है।

बावनराम पर रुका नहीं गया तो बोले, "देखिए साहब, आप कल से ही अजीब व्यवहार कर रहे हैं ··कहनी-अनकहनी जो मुँह में आता है कहते जा रहे हैं। आपका घर हो तो आप घर में न घुसने दें। दूसरे के घर पर भी आप इस तरह अपमानित करते जा रहे है, यह ठीक नहीं। हो सकता है भगवान आपका ज्यादा हो और हमारा कम। पर आप व्यवहार मे तो सन्तुलित रहिए।"

दो-एक लोग जो लगातार खामोश थे वे बीच में पड़ गये, "अरे छोड़िए, आप उम्र में बड़े है। वे यही जानना चाह रहे होंगे कि गुसलखाना साफ है कि नहीं!"

"साफ होने से क्या मतलब? आपके बाथरूम से निकलने के बाद अगर हम यही सवाल पूछे तो आप हमें जिन्दा जला डालेंगे। हमारी बेइज्जती नहीं होती? मैल तो सबके शरीर से एक-सा ही निकलता है···ऐसा नहीं कि आप ऊँची जात के हैं तो आपके शरीर मे कुछ भिन्न प्रकार का निकलता हो। आप सोते हुए कुछ अलग तरह साँस लेते हो ··! माफ कीजिए, आप भी यहाँ झोली लेकर आये और हम भी। भिखारी-भिखारी में ज्यादा फर्क नहीं होता। हो सकता है आपकी झोली रेशम की हो और हमारी टाट की। पर जो मिलता है वह भीख ही होती है।"

पहला आदमी फिर उखड़ा, "जो तुम हो तुम रहोगे, जो हम हैं वो हम रहेंगे। सरकारी हुक्म से तुम वो नहीं हो सकते जो हम हैं···।"

अनुकूल बाहर खड़ा-खड़ा बड़े शशोपज में था। वह क्या करे? बाबू की तरफ से बोले या टाल जाय। उसे दोनों पर गुस्सा आ रहा था। बाबू यहाँ आकर ठहरे ही क्यों हैं? इन्जीनियर बन जाने से जात-पाँत थोड़े ही बदल जायेगी। कहनेवाले तब भी कहेंगे। बाबू को सामान उठाकर फौरन चल देना चाहिए। उसने आगे की तरफ बढ़ना चाहा।

बाबू उसी बात पर आ गये थे, "अगर पता होता कि चौधरी साहब के यहाँ ऐसा बर्ताव होगा तो कभी न आते···"

"ना आते तो चौधरी साहब की सीट थोड़े ही चली जाती।"

कोई और बोला, "ये सब साले यही समझते है कि सब चुनाव इन्हीं की वोटों से जीते जाते हैं।"

"जाकर पूछ लो चौधरी साहब से किसकी वोटों से जीते थे···?"

पहलेवाले दोनों लोग फिर बीच-बचाव करने पर जुट गये थे। गुसलखाने का दरवाजा भी धड़-से बन्द हो गया। अनुकूल आगे निकल गया।

बावनराम जब बाहर निकले तो उनकी कनपटियाँ फूली हुई थी और आँखों के कोओं मे कीचड़ जम गयी थी। वे चौधरी साहब की तरफ जा रहे थे। अनुकूल के दोनों हाथों में थैले थे। उन्होंने अनुकूल को थैले उठाये चलते हुए बड़ी दयनीयता से देखा। उन्होंने ऐसे क्यों देखा, उसकी समझ में कुछ नहीं आया। उन्होंने बढ़कर उसके हाथ

मे एक थैला ले लिया।

थैला लेकर बोले, "चलो···चलकर चौधरी साहब से बात कर ले।"

बाबू के चेहरे पर पसरी हुई उस दयनीयता को देखकर अनुकूल का खून खदबदा रहा था। बाबू इतने दयनीय क्यो बने हुए हैं ? इससे तो अच्छा था वे उनमे से किसी के दो हाथ लगा देते···सिर फोड देते। कम-से-कम उन्हे इस मानसिकता से तो न गुजरना पडा होता। वे एकाएक बोलने लगे, "मैंने कभी इन लोगो के सामने मुंह नही खोला था। हमेशा इस बात का ध्यान रखा कि हम लोग इन लोगो की जूठ पर पले हैं··· यह ख्याल हमेशा मुंह दबोच लेता था। आत्मा तडपती रही पर उनका खाया होने के कारण जबान एक बार भी नही पलटी। आज इन लोगो ने मुंह मे हाथ डालकर बुलवाया है। रात भी गुस्सा आया था' खाट ले जाकर इन लोगो के सिरो पर डाल दूं···पर जज्ब कर गया। इन लोगो ने आज पहली बार थोडे ही ऐसा किया है, जिन्दगी-भर करते रहे हैं···"

अनुकूल की आँखो में भी असहायता के भाव उभर आये थे। वह बोला नही, आँखें आस्तीन मे रगड ली।

बावनराम ने चबूतरे पर चढ़कर दरवाजा खटखटाया। चौधरी साहब ने ही खोला। चौधरी साहब के माथे पर एक बहुत बारीक-सी चुटकी-भर खाल उभरी, लेकिन तत्काल ही विलय हो गयी। बावनराम एकाएक भावुक हो उठे। गला रुँध गया। आँखो से जल बहने लगा। चेहरे की झुर्रियाँ और घनी हो गयी। अनुकूल भी अपने को सँभाल नही पा रहा था। हाथ पकडकर बैठाते हुए बोले, "क्या बात हुई बावनरामजी ! आप इतना परेशान क्यो हैं ?"

अनुकूल के अन्दर एक ज्वार-सा उमड़ने को हो रहा था। लेकिन वह पत्थर सदृश बना रहना चाहता था। उन्होंने उससे भी पूछा, "क्या बात हुई बेटा·· तुम्हारे बाबू और तुम इतने परेशान क्यो हो ?"

उसने कुछ बोलना चाहा पर जबान जैसे मुंह मे न रहकर पेट मे चली गयी थी। थोडी देर बाद बावनराम ने ही कहा, "चौधरी साहब, काम बनने की तो कोई उम्मीद नजर नही आती···सोचता हूँ घर चला जाऊँ। एक रात तो काट ली। अब छन-भर भी काट पाना मुश्किल हो रहा है।"

अनुकूल सोच रहा था कि आज बाबू चौधरी साहब को कसकर सुनायेंगे। लेकिन उनके इस तरह बात करने से उसका मन विद्रोह से भर उठा।

चौधरी साहब बोले, "आपसे रात तो बात हो गयी थी···मैं तैयार हो जाऊँ तो फिर बात करता हूँ। तब तक आप इन्तजार कीजिए।"

अनुकूल तत्काल बोला, "कहाँ···? वहाँ उन बनैले जानवरों के बीच ?"

चौधरी साहब चौंक पडे, "क्यो, रात कोई बात हो गयी ?"

"बात तो तब से हो रही है जब से यहाँ पहुँचे हैं · नीची जात मे जन्म लेना · " बावनराम ने उसके मुंह पर हाथ रखकर उसे चुप कर दिया। अनुकूल सिसक-सिसककर रो पडा।

बावनराम अपनी आँखें पल्ले मे पोंछते हुए बोले, "बच्चा है···आपके सामने बोल गया।" फिर बेटे की तरफ मुखातिब होकर बोले, "आग को बसेरा नहीं

जाता "राख के नीचे दबाकर रखा जाता है। दोबारा सुलगाने में बडा समय लगता है ''!" वह समझा नही।

चौधरी साहब कुछ बोलने को हुए तो बावनराम ने हाथ जोडकर कहा, "चौधरी साहब, मंजिल पर पहुँचना हो तो रास्ते की तकलीफो को नजरअन्दाज करना पड़ता है ''उन सब बातो को दोहराने से क्या होगा? जन्म धरे का दण्ड है, हम नही भोगेंगे तो कौन भोगेगा।"

"क्या बात हो गयी, कुछ तो बताइए!"

"हम शिकायत करने नही आये। जो हुआ वो हमारे अन्दर चला गया। अब तो बस आपका जवाब चाहिए। कुछ होना है तो हो, नही तो हम भी अपनी राह ले।"

अनुकूल इस बार तपाक मे बोला, "बाबू आप बताते क्यो नही ये सब लोग कल मे कितना दुर्व्यवहार कर रहे हैं। इस आदमी ने आपको क्या नही कहा''' सामान और खाट निकालकर बाहर फेंक दिये। आप कहते है, कुछ नही हुआ!"

बावनराम के मुंह से कराह की तरह निकला, "जब से गाँव छोड़ा, इतना कभी नही सहा। जितना कल से आज तक गुजरा है। चौधरी साहब, हम यह बात एक मिनट नही भूले कि भगवान ने हमे नीच बनाया है'''इसलिए अपनी सीमाओ का हमेशा ध्यान रखा। मेरी समझ मे नही आता कि अपने को इतनी-इतनी ऊँचाइयो पर आसीन समझनेवाले लोग हमको नीच बताने के लिए अपनी उन ऊँचाइयो से इतना नीचे क्यो उतर आते है? ये बड़े होते हमारे बच्चे, इन उच्च लोगो के बारे मे क्या सोचेंगे'' ? चौधरी साहब, ससार मे इन्सान का खून ही ऐसी वस्तु है जो बिना आँच के खदबदाने लगता है। .ब तक ठण्डा नही होता जब तक कि कारण खत्म न हो जाये। हम लोगो के खून तो कभी खदबदाये नही क्योकि उसे पानी करके ही हमारी नसो मे डाला गया था। लेकिन इन बच्चो का खून तो खून ही है। सवर्णों के शत-प्रतिशत खून की तरह खून न सही ' साठ प्रतिशत ही सही। गर्म तो हो ही सकता है ''खैर छोडिए, इन बच्चो को छोटा मुँह बडी बात नही करनी चाहिए। अगर कुछ काम बनने की उम्मीद होगी और रुकना पडा तो धर्मशाला मे जा टिकेंगे।"

चौधरी साहब शशोपज मे थे। बावनराम से खुशामद-दरामद करके उन्हे शान्त करना ही एकमात्र रास्ता था। वे बोले, "घर होते हुए आप धर्मशाला मे कैसे ठहरेंगे? उस आदमी की बात का ख्याल न कीजिए !"

"बताइए किस-किसकी बात का ख्याल न करें?" अनुकूल ने धीरे से कहा। चौधरी साहब ने या तो सुना नही या नोटिस नही लिया। वे अपनी बात करते रहे, "रात आपने तो देखा ही था, वह मेरे साथ किस तरह पेश आ रहा था। इतनी-सी बात पर ''। बच्चे को लेकर कहाँ जायेंगे। कौन जाने, कहाँ क्या मुसीबत पड जाय!"

अनुकूल को डर लगा, कही बाबू फिर न मान जायें। अब वह कदापि यहाँ नही रह सकता। लेकिन बावनराम तुरन्त ही बोले, "जिस तरह कल दिन मे कमरे से निकलने के लिए कहा गया ''!" चौधरी सा'ब ने गर्दन झुका ली। बावनराम कहते रहे, "छीटाकमी की गयी, रात सामान फेंक दिया और खाटें धमीटकर बाहर डाल दी ''सवेरे हमसे पूछा गया, बाथरूम धुला या नही'''उन बातो को आगे बढ़ाना

उचित नही। हम लोग चुप तो बने रहे पर सहा नही जा रहा।"

चौधरी साहब के चेहरे पर पस्ती नजर आ रही थी। जितना कह चुके थे उससे ज्यादा कहना उनके वस में नही रहा था। वे यह भी नही चाहते थे कि बावनराम ऐसे हालात के बीच अपने बेटे को लेकर वापिस घर चले जायें। चौधरी साहब ने पहले कुछ कहना चाहा, फिर रिसीवर उठाकर टेलीफोन का डायल घुमाने लगे। दो-तीन बार मे फोन मिला। दूसरी तरफ घण्टी देर तक बजी। जैसे ही वे रखने को हुए वैसे ही उधर से किसी ने उठा लिया।

चौधरी साहब बोले, "नमस्कार, मैं चौधरी मंगतसिंह एम. पी बोल रहा हूँ।"

उधर की बात सुनने के बाद उन्होने फिर कहा, "माफ कीजिए, मैं आपको एक व्यक्तिगत तकलीफ देना चाहता हूँ। मैने सुना है'''आई टी. आई.'' के कालिजो ने अनुसूचित जाति के बच्चो की भर्ती के लिए इम्तहान मे बैठने की शर्त निरस्त कर दी'''"

उधर से शायद कहा गया था कि आई. टी. आई. तो राज्य सरकारो के दखल मे आती है। इसीलिए शायद उन्होने तपाक से कहा, "हाँ, यह तो मालूम है'''मेरा मतलब था आई. आई. टी. ''।"

उधरवाले सज्जन थोडी देर तक बोलते रहे। स्थिति स्पष्ट कर रहे थे। चौधरी साहब उसकी बातो पर 'हाँ-हाँ' करते जा रहे थे। बीच-बीच मे एक-आध औपचारिक वाक्य जोड़ देते थे। एक बार उन्होंने कहा, "यह तो भारत सरकार की योजना के तहत हो रहा है'''आखिर इन लोगों को भी तो बराबरी पर लाना है। इन बिचारो ने सदियो तक शिक्षा के नाम पर कायदा तक नही देखा। यही लोग क्या, हम लोग भी उसी मे आते हैं।"

दूसरा वाक्य कहा, "इस बार जब आप बिना इम्तहान के बच्चो को प्रवेश दे रहे हैं, तो एक हमारे खास मित्र का बच्चा है, पढने मे होशियार, होनहार'''इसे तो मौका देना ही है। जैसे भी हो इस लडके को तो आपको लेना ही होगा!"

थोड़ी देर तक वे फिर चुप रहे। उधर की बात सुनते रहे। बात खत्म हो जाने पर बोले, "हाँ-हाँ, मैं इन्हे आपके पास भेजे देता हूँ। आप कहेंगे तो मन्त्रीजी से भी बात कर ली जायेगी। जिस तरह की परिस्थितियो मे रहकर बच्चा पढ रहा है उसे देखते हुए वह दाखले का अधिकारी है। अपनी बिरादरी मे यह पहला बच्चा होगा जो यहाँ तक पहुँचेगा। अगर इसे सफलता नही मिली तो इनके पूरे समाज मे हमारी सरकार की साख गिर जायेगी'''घोर निराशा व्याप्त हो जायेगी।"

बावनराम का चेहरा चौधरी साहब के फोन पर बात करते-करते सामान्य होने लगा था। मलाल छँटता जा रहा था। होठो पर धीरे-धीरे मुस्कान आ रही थी। होठो का शनैः-शनै. फैलना ही इस बात का द्योतक था। जितना कह दिया था उससे ज्यादा नही कहा जा सकता था। अनुकूल जरूर उनके आखिरी वाक्य से आहत और क्षत हुआ था। इतना सब कहने की क्या जरूरत थी?

बात खत्म हो गयी तो चौधरी साहब रिसीवर रखकर बोले, "आप ऐसा करें, शास्त्री भवन जाकर कृष्णन साहब से मिल लें। चौथे तल्ले पर बैठते है। चिट्ठी लिखे देता हूँ। बड़े अफसर हैं'' हिन्दी कम बोल पाते हैं'' समझ अच्छी तरह लेते है। सब

बात बता दीजिए।"

अपनी उत्सुकता को छिपाते-छिपाते भी बावनराम ने उत्सुकता से पूछा, "हो जायेगा ना ?"

चौधरी साहब चिट्ठी लिखते-लिखते बोले, "आपके सामने ही तो सारी बात हुई है अलग से तो मैंने कोई बात की नही ··" थोड़ी देर बाद बोले, "वैसे तो हो जाना चाहिए। पर कृष्णन साहब कह रहे थे कि आई. आई. टी. में पढाना हर एक के बूते की बात नही। बच्चे पर इतना तनाव रहता है कि हर साल एक-दो, एक-दो आत्महत्याएँ हो जाती हैं। सुना, एक-से-एक होशियार बच्चा आता है। होशियारो-होशियारो के बीच ठना मुकाबला या तो मौत निबटाती है या तस्फिया। पढाई-लिखाई मे तस्फिये की तो कोई गुजाइश ही नही होती।"

बावनराम एक बार को चक्कर खा गये। अनुकूल की तरफ देखा। वह निस्पृह भाव से चौधरी साहब की बात सुन रहा था। चौधरी साहब ने उससे ही पूछा, "आई. आई. टी. मे पढोगे?"

उसने संक्षिप्त-सा उत्तर दिया, "दाखला हो गया तो पढ़ूँगा।"

चौधरी साहब चिट्ठी लिख चुके थे। बावनराम को पकडा दी। यह भी समझा दिया कि शास्त्री भवन कहाँ है और किस-किस तरह से वहाँ पहुँचा जायेगा। पास बनवाने का तरीका खासतौर से समझाया। नही तो जाने को नही मिलेगा। यही बात अनुकूल को अजीब लगी। कोई सिनेमा थोड़े ही है जो पास बनाते है। पर वह चुप रहा।

जाते-जाते चौधरी साहब ने कहा, "पाँच बजे तक संसद भवन में रहूँगा। अगर जरूरत पड़े तो रिसेप्शन पर जाकर चिट भिजवा दीजियेगा···बताकर जाइयेगा कि क्या हुआ।"

बावनराम के मन मे चौधरी साहब की बिगडती छवि फिर नये कोण से उभरती आ रही थी। कल से आज तक जो हुआ था वह इस सबके सामने भूल जाने योग्य था। अनुकूल जरूर अन्यमनस्क था। जिस तरह से हो रहा था वह सब उसकी अक्ल के बाहर था। अगर इतने सबके बीच मे न गुजरना पड़ा होता तो यह सब कम-से-कम आज न हुआ होता!

अनुकूल के लिए शास्त्री भवन एक आश्चर्य की बात थी। बस मे जाते हुए भी यही प्रश्न उसे परेशान करता रहा था कि दिल्ली मे सड़कें, भवन, पार्क सभी बडे होते हैं। आदमी वैसे ही होते हैं, जैसे उसके यहाँ होते हैं। वहाँ का बाहरी फैलाव उसे सबसे अधिक चकित कर रहा था।

वे लोग उद्योग भवन के पास उतरे थे। वहाँ से शास्त्री भवन हालाँकि नजदीक था। लेकिन रुकते, पूछते, चलते और गन्तव्य तक पहुँचते-पहुँचते वे पस्त हो गये थे। अनुकूल को बीच-बीच में हाथ ऊपर उठाकर बस मे डण्डे पकड़े लड़कियाँ और औरतें परेशान करने लगती थी। वह उनकी तरफ देखना नही चाहता था, पर बार-बार नजर चली जाती थी। उनके दूध अधनिकले-से लटक रहे थे और हर झटके पर

उछलते थे। मर्दों तक को शर्म नहीं थी। एक लड़की का दूध उसके हाथ से टकरा गया था। उस स्थान पर एक तरह की तरतराहट-सी महसूस होती रही थी। उग्गे चक्कर मे एक बुड्ढे का पैर किसी के पैर से चित गया था। वह चिल्लाया तो सब लोग हँस दिये। एक गोरी औरत ने अपनी सीट से उठकर उस बुड्ढे को बैठाया, सबके हँसते मुँह एकदम बन्द हो गये। उस गोरी के उठते ही दूसरा आदमी चट-से खड़ा होकर बोला—आप यहाँ बैठ जाइए। वह नहीं बैठी तो उसने हाथ पकड़कर बैठाना चाहा। वह सटाक-से बोली, "मेरी सीट है, मैंने अपनी मर्जी से इन वृद्ध सज्जन को उस पर बैठाया है।" दो-तीन आदमियों ने और कहा। पर वह खड़ी रही। वह लड़कियों की तरह का कन्धे-कटा फ्रॉक पहने थी। उसके दूध और भी साफ थे।

दो-तीन स्टापों के बाद वह उतर गयी थी। उसके उतरते ही बैठे हुए कई लोगों के चेहरे पर सकून-सा दिखायी पड़ा था। उसका खड़े होने का तरीका हिन्दुस्तानी औरतों से बिल्कुल अलग था। वह पाँव जमाकर और अगली सीट की पीठ का डण्डा मजबूती से पकड़कर खड़ी रही थी।

शास्त्री भवन के द्वार पर ही गार्ड ने टोका। वे एक मिनट को सकपकाये। लेकिन उसके इशारा करने पर वे पास बनवाने के लिए पास-आफिस मे घुस गये।

चार-पाँच लोग एक लाइन मे खड़े थे। बावनराम जाकर सीधे बोले, "हमें कृष्णन साहब से मिलना है।"

पास बनानेवाला बाबू बोला, "ये सब पास बनवाने के लिए खड़े हैं। जाकर लाइन में लग जाइए...!" फिर धीरे-से बुदबुदाया, "आ गये पास बनवाने राष्ट्रपति के लगते!"

बावनराम ने सुना और लाइन मे जाकर खड़े हो गये। अनुकूल उनके पीछे लग गया। अनुकूल उसके इस बर्ताव से फिर क्षुब्ध हो गया था। यही बात वह शान्ति से और कम बोलकर नहीं कह सकता था? लगता है अपने देश मे बातों से दूसरों को चोट पहुँचाने का खेल खेला जाता है। कोई बोलेगा तो किसी-न-किसी के चोट पहुँचेगी ही। उसे सोचना चाहिए था कि तुम कुर्सी पर बैठे हो, दूसरा पता नहीं कहाँ से चलकर आया है...। कुर्सी पर बैठे आदमी को सामने खड़े आदमी के साथ सहूलियत से बोलना चाहिए। बैठा हुआ आराम और सकून मे होता है। यहाँ उल्टा है। बैठा हुआ आदमी नाराज होता है और खड़ा हुआ आदमी चुपचाप सुनता है। एक-आध जो बाद में आये उनको तो उसने और भी बुरी तरह से डाँटा — ऐसे चले आये जैसे ई. एम. हाथ फैंनाये बैठी है कि जनाब आयेंगे तो गले मिलेंगे। पता नहीं घर से क्या सोचकर चले आते हैं "मिनिस्टर से मिलना नहीं हुआ, मजाक हो गया! मिलना ही है तो इलेक्शन के दिनों मे मिलियेगा जब घर-घर घूमेंगी...अब चलते बनिए।

वह खुशामद करता रहा, "सा'ब, नौकरी का मामला है। मेरे बाल-बच्चे भूखों मर जायेंगे। आप भी नौकरी करते हैं "आपको तो दूसरे जरूरतमन्द आदमी से हमदर्दी होनी चाहिए।"

"यहाँ कौन नौकरीपेशा नहीं है...प्रधानमन्त्री से लेकर चपरासी तक...? हमें बताने चले हैं! शिक्षा मन्त्रालय मे आता ही कौन है, मास्टर या भुक्खड़!"

"इसीलिए तो कह रहा हूँ...।"

काउण्टरवाले आदमी ने कलम नीचे रख दिया और बोला, "मैं शराफत से पेश आ रहा हूँ, आप सिर पर चढते चले आ रहे है।"

अनुकूल के होंठ हल्के-से टेढ़े हो गये। "पढ़े-लिखे लोगो के साथ पढे-लिखोवाला व्यवहार होता था, अब तो सब धान बाइस पसेरी ! यहाँ आदमी को कुकुर मे भी बदतर कर देतें है···।" बाबनराम बुदबुदाये।

उनका नम्बर आया तो बोले, "कृष्णन साहब से मिलना है···" उन्होंने चौधरी साहबवाली चिट्ठी बढाते हुए कहा, "यह चिट्ठी देनी है···"

उस आदमी ने चिट्ठी ली और खोलकर पढने लगा। पढने के बाद बोला, "अरे साहब, आपको कौन रोक सकता है, आप लोग तो सरकार के हकीकी दामाद हैं !"

अनुकूल ने उसकी तरफ देखा। लेकिन बावनराम उस बात को नजरअन्दाज कर गये। वह बोला, "खडे क्या है, भरिए रजिस्टर मे अपने-अपने नाम।"

"मैं हिन्दी मे लिख सकता हूँ··"

"आप फारसी मे लिखो·· मुझे क्या लेना-देना। हिन्दी से ही तो यह हिन्दुस्तान चलेगा···!"

बावनराम कालम-कालम पढ-पढकर हिन्दी मे लिखने लगे। वह बोला, "क्या नाम है ?"

"बावनराम !"

"तरेपनराम या चौवनराम क्यो नही ?"

अनुकूल थोडा उखड़ने को हुआ लेकिन उससे पहले ही बावनराम मुस्कुराकर बोले, "बाबूजी, आप कहे तो पचपनराम भर दूँ। वैसे आप हाकिम है, जो जी में आये भर दीजिए।"

अपने लिए हाकिम शब्द सुनकर वह मुस्कुरा दिया। फिर बोला, "बुरा मत मानना बाबा, मेरी हँसी-मजाक करने की आदत है।" रजिस्टर के बाकी खाने वह बोल-बोलकर भरवाने लगा, "यहाँ टाइम भरिए, यहाँ काम···प्राइवेट या आफिशियल · अफसर का नाम ··इन दोनो खानो मे अपने दस्तखत···! अरे बाबा, इस खाने मे भी तो करो, कही पिस्तौल-विस्तौल तो साथ नही ले जा रहे।" फिर हँसकर धीरे-से बोला, "यहाँ दस्तखत कर दो, ले भले ही जाना···साली सरकार दस्तखत से चलती है।"

बावनराम खाने भर चुके तो बोले, "यह मेरा लडका है, अनुकूल !"

"आप भी भरिए···नाम कैपिटल वर्ड्स मे·· हैण्डराइटिंग तो बढिया है आपके बच्चे का ! अब आप लोगो मे भी अच्छे लडके होने लगे। ओ हो,···यह सब भरने के चक्कर में न रहें। अपने बाबू के लिखे हुए के नीचे एजन लगा दो। इन दोनो खानों मे दस्तखत कर दो। बच्चे, थोड़ा-सा अक्ल से काम लिया करो। आई. आई. टी. मे दाखले के लिए जो चिट्ठी लिखवाकर लाये हो·· वहाँ जाकर क्या भाड झोकोगे ?"

बाकी लोग हँस दिये। सबसे ज्यादा वो हँसा जिसे काउण्टरवाले ने कुछ देर पहले डाँटा था। फिर बावनराम से बोला, "इम्तहान भी पास कर लिया और हैण्डराइटिंग भी बन गया। अब जरा अक्ल बढ़ाने की भी जरूरत है। आप लोगो के

खिलाफ यही शिकायत है कि अक्ल भैंस के पास दूध पीने के लिए छोड़ देते हैं।" हँसकर पास पकड़ा दिये। लाइनवाले लोग उनकी तरफ मुड-मुड़कर देखते रहे और हँसते रहे।

बाहर निकलते हुए सुना, वही काउण्टरवाला कह रहा था, "यही तो देश के चौपट होने की अलामतें है'''एस. सी. हैं, एम. पी. की चिट्ठी ले आये'''! आई.आई.टी. में दाखला चाहिए। वोट चाहिए इसलिए दाखला भी दिलाना पड़ेगा। आई.आई.टीओं-जैसी संस्था को तो छोड दो'''बाबा! अभी हमारे यहाँ प्रोमोशन हुए हुए थे। अच्छे-अच्छे सीनियर और नोटिंग-ड्राफ्टिंग के हकीम रह गये। एस. सी. होने के कारण नाख्वान्दा आगे निकल गये। तबियत में आग लग गयी। मारे भी और रोवन न दे। अब सबसे पहले सेक्सन आफिसर होकर सिर पर बैठ जायेंगे'''!" खड़े हुए लोगों की तरफ देखकर बोला, "भई कोई एस. सी. हो तो बुरा मत मानना। हकीकत बयान कर रहा हूँ। आग अन्दर लगी हो तो धुआँ बाहर निकलता ही है।"

वे दोनो जल्दी बाहर निकल आये थे। बाहर खड़े गार्ड ने पास देखे और जीने की तरफ इशारा कर दिया। लोग लिफ्ट से ऊपर जा रहे थे। अनुकूल ने उधर देखा। उसके देखते-देखते चार-पांच लोगो को लेकर लिफ्ट उठा। वह उसे उठता हुआ देखता रहा। उसके उठते ही जगह खाली हो गयी। जब वे लोग पहली मंजिल पर पहुँचे तो लिफ्ट वहाँ से भी चल चुका था। लोग इसमें चढकर कैसे ऊपर जाते है? डर नही लगता? हर मंजिल पर यही हुआ। उनके पहुँचते-पहुँचते लिफ्ट चल दिया। उसकी समझ मे यह बिल्कुल नहीं आ रहा था कि यह क्या है? कमरा है? जीना है'''? आखिर ऊपर कैसे जाता है?

चौथी मंजिल पर पहुँचे तो लिफ्ट खड़ा था। बावनराम तब तक आगे बढ़कर किसी से कृष्णन साहब के कमरे के विषय मे पूछने लगे। वह वहीं पर खड़ा होकर लिफ्ट को देखने लगा।

"छोटा-सा लोहे का कमरा है'''" धीरे से बुदबुदाया।

बावनराम दाहिनी तरफ मुड़ गये। अनुकूल भी पीछे हो लिया। एक लम्बा गलियारा था। दोनों तरफ कमरे थे। कमरों पर नामों की तख्तियाँ टँगी थीं। किसी-किसी कमरे के बाहर सफेद बुशर्ट, पैंट पहने और टोपी लगाये हुए एक-एक आदमी भी था। ऐसे ही एक-दो आदमी कागज-पत्र लिये गलियारे में आ-जा रहे थे। उनमें से ही एक काँच के बर्तन में पानी भरे जा रहा था। दो-तीन साहबनुमा लोग भी वहाँ से निकले। सफेद पोशाकवालों ने सीधे खड़े होकर सलाम किया। सलाम हुआ और गर्दन हिल गयी'''यही देखते हुए वे लोग उस गलियारे से गुजरते चले गये।

सबसे अधिक आश्चर्य उसे अपने बाबू बावनराम पर था। वे हर एक को हाथ उठाकर सलाम करते जा रहे थे। जब कोई साहबनुमा आदमी निकलता था तो वे झटके से एक तरफ हो जाते थे। बाबू ऐसा क्यों करते हैं? जान ना पहचान, खालाजी सलाम। उस पर नहीं रहा गया तो उसने धीरे-से यही सवाल पूछा, "बाबू, आप सबको सलाम क्यों करते है'''?"

बावनराम इस तरह हँसे जैसे यह कोई राज की बात हो और बोले, "ये सब बातें उमर के साथ समझ में आती हैं। धेले का सलाम और लाखों का काम। सलाम

बडी पावर की चीज है।" और तुरन्त एक किस्सा सुनाना शुरू कर दिया—"एक पटवारी था। उसका कहना था कि वह अपने सलाम से किसी को भी पटा सकता है। एक बार शहर में नया कलक्टर आया। बड़ा सख्त। और पटवारियो से उसकी शर्त हो गयी कि सलाम के सहारे नये कलक्टर साहब को पटा ले तो जानें। रोज सवेरे कलक्टर साहब घुड़सवारी के लिए आया करते थे। वह सड़क के ऐसे मोड पर जाकर खड़ा हो जाता जहाँ उन्हे अपना घोडा धीमा करना पडता था। जैसे ही कलक्टर साहब मुड़ते वैसे ही सामने जाकर सलाम झुका देता। महीनों वह इसी तरह सलाम झुकाता रहा। एक दिन कलक्टर साहब ने घोडा रोककर पूछा—'तुम रोज इसी मोड पर खडे होकर सलाम क्यो करते हो ?'

" 'हुजूर हमारे हाकिम हैं ''सलाम करने के लिए बँगले मे तो कोई घुसने नही देगा'''सोचा सलाम ही तो करना है, कहीं भी किया जा सकता है।'

"कलक्टर साहब ने हँसकर कहा, 'अच्छा, तुम कल हमारे बँगले पर आना।'

"वह बँगले पर गया। कलक्टर साहब बाहर टहल रहे थे। सिपाहियो ने रोका। कलक्टर साहब ने उसे बुलवा लिया। कलक्टर साहब ने सब बातें पूछीं'''वह क्या करता है ? कहाँ रहता है'''वगैरह ?

"जब कलक्टर साहब पूछ-ताछ कर चुके तो वह रोने लगा, 'सरकार, एक ही लडका है'''बहुत सीधा। खानेवाले दस प्राणी है, गुजारा नही चलता। दो रोटी का इन्तजाम हो जाये तो सरकार के ओहदे की बुलन्दी की खैर मनायेंगे।'

"कलक्टर साहब ने अपने टाइप बाबू को बुलाया और कहा, 'इसके लड़के को कल से नजारत में तैनात कर दिया जाय।'

"यह होती है सलाम की पावर।" बावनराम ने मुस्कराकर टिप्पणी की।

अनुकूल को यह किस्सा अजीब अटपटा-सा लगा। हालांकि बावनराम ने उसे बहुत रहसकर सुनाया था। वह कहने को हुआ कि अगर पटवारी आसमान के सितारों को रोज सलाम करना होता तो शायद वे तक आसमान से उतरकर उसकी झोली मे आ गये होते। लेकिन वह बोला नही। पता नही बाबू क्या समझें।

सामने के कमरे पर हिन्दी और अंग्रेजी मे कृष्णन साहब की नेम-प्लेट लगी थी। बावनराम वहीं रुक गये। अनुकूल को भी रुक जाना पडा। उधर से आते हुए एक आदमी से उन्होंने पूछा, "कृष्णन साहब से मिलना था।"

वह बोला, "बराबरवाले कमरे में चले जाओ'''वहाँ उनके पी. ए. होंगे'''वे मिलवा देंगे।"

पी. ए. शब्द अनुकूल की समझ मे नही आया। थोडी देर बावनराम दरवाजे के बाहर ही खड़े रहे। खोलकर अन्दर जाने मे उन्हें झिझक महसूस हो रही थी। लेकिन किसी तरह हिम्मत सँजोकर उन्होंने दरवाजा धकेला। सामने की मेज-कुर्सियो पर दो आदमी बैठे हँसी-मजाक कर रहे थे। जो आदमी शीशे के बर्तन मे पानी लेकर आता हुआ मिला था, वह कागज-पत्तर छाँट रहा था।

बावनराम ने दरवाजे के अन्दर मुँह डालकर कहा, "कृष्णन साहब से मिलना है।"

सबके चेहरे ऐसे बदल गये जैसे लिटमस पेपर पर एसिड गिर गया हो। वे सामने

रखे कागज उलटने-पलटने लगे। बावनराम ने सोचा कोई गलती तो नही हो गयी। सब एकदम ऐसे क्यों हो गये। सफेदपोश आदमी बोला, "साहब व्यस्त हैं।"

अनुकूल के दिमाग में अभी-अभी, बीच-बीच में, वह लिफ्ट चलने लगता था। किस तरह लोग उसमे नीचे बन्द होते है और ऊपर निकल आते है! लेकिन इस समय उसे लग रहा था कि पता नही यहाँ के बन्द हुए कभी निकलेंगे भी या नही। कमरे के अन्दरवाले लोग उसे बड़े क्रूर और डरावने-से लगे। उसे चन्द्रकान्ता की कथा याद आने लगी। जरूर उनके पास कोई कल होगी जिसको दबाते ही हम लोग नीचे किसी तहखाने में चले जायेंगे। इसी तरह की उसने एक फिल्म भी देखी थी, जिसमे कल दबाते ही हीरो पाताललोक में चला गया था जहाँ एक भूखा शेर बन्द था। उस शेर से उसे लड़ना पड़ा था। वह तो लड भी गया था पर यहाँ वह दोनो को खा जायेगा। वहाँ तो हीरोइन एक तरफ थी, शेर दूसरी तरफ। यहाँ तो आई.आई.टी. में दाखले का ही मामला है। दाखले के लिए शेर से लडना··· धत तेरी की!

बावनराम ने गिड़गिड़ाते हुए कहा, "चौधरी साहब एम. पी ने चिट्ठी देकर भेजा है···।"

सफेद वर्दीवाले आदमी ने उन दोनो मे से एक गड्ढेदार आँखोंवाले आदमी की तरफ इशारा करके कहा, "पी. ए. साहब से बात कर लो।"

पी. ए. साहब ने भँवों को कमान की तरह बीच में से ऊपर की तरफ उचकाकर उनकी तरफ देखा।

बावनराम ने फिर वही बात दोहरा दी, "सवेरे चौधरी साहब, एम. पी. ने कृष्णन साहब से टेलीफोन पर बात की थी। उन्होने ही यह चिट्ठी दी है और साहब से मिलने के लिए भेजा है।"

पी. ए. साहब ने चिट्ठी के लिए हाथ बढ़ाया तो अनुकूल पीछे को हट गया। वह हाथ एकदम सपाट और लकडी का-सा डण्डा था। उसने बाबू को भी पीछे खींच लेना चाहा···सबसे पहले उसकी नजर पी. ए. के पैरों की तरफ गयी। कहीं वे घूमे हुए तो नही? लेकिन वे सीधे और सामान्य थे। फिर उसने बराबरवाले आदमी के पैरों की तरफ देखा, उनमे भी कोई असाधारणता नही थी। अनुकूल को थोड़ी राहत मिली।

पी. ए. साहब, चौधरी साहब की चिट्ठी मन-ही-मन में पढ़ रहे थे। उसके बावजूद होंठ हिल रहे थे। अनुकूल के मन मे लगातार यह सवाल बना था कि पी. ए. नाम है या कुछ और? 'पी' जाने और पी. ए. का तो कोई सम्बन्ध नही।

चिट्ठी पढने के बाद मेज पर रख ली और भूल गये। बावनराम चुपचाप बैठे देखते रहे कि कब गर्दन उठायें और कुछ बोलें। गर्दन उठाते भी तो बराबरवाले आदमी की तरफ देखकर कुछ बुदबुदा देते थे और फिर काम में लग जाते थे। बावनराम को मौका ही नही मिल रहा था कि कुछ कहें।

अनुकूल भी परेशान था। कब तक इसी तरह बैठे रहेंगे?

इस बीच अन्दर के कमरे से एक आदमी निकलकर बाहर चला गया था। सफेद वर्दीवाला आदमी चायवाले के साथ अन्दर आ गया था। प्याले में चम्मच बजाकर दो चाय बनायी और उन दोनो को पकड़ा दीं। वे दोनो टाँग-पर-टाँग रखकर चाय

पीने बैठ गये। सफेद वर्दीवाले ने काँच का गिलास भरकर अपने लिए चाय बना ली और बैठकर सस्वर पीने लगा। उनके द्वारा पी जा रही चाय का ताप उन दोनों के दिमाग को चढ रहा था। चुप बैठे रहें या बाहर निकल जायें? अगर बाहर निकल गये और वापिस न आ पाये तो कृष्णन साहब से उनकी मुलाकात की यह जद्दोजहद बट्टेखाते चली जायेगी। वे स्थिर बने और बिना कान हिलाये चुपचाप बैठे रहे। वे दोनो लोग आपस मे बातें कर रहे थे। जो बातें वे कर रहे थे वे उनके लिए नितान्त अर्थहीन थी। कभी-कभी लगने लगता था वे उन्ही के बारे में बतिया रहे है। जब वे लोग किसी बात पर हँसते तो बावनराम और अनुकूल की नजर अपनी ही तरफ मुड जाती थी।

चाय पीकर बरतन सरका दिये जाने पर बावनराम ने डरते-डरते उन लोगो की तरफ देखा। लेकिन उन दोनों की गर्दनें झुककर फिर मेजो में धुस गयी। बावनराम का धैर्य जवाब दे गया था। उसने हिम्मत सँजोकर पूछा, "साहब, वो चिट्ठी··· कृष्णन साहब···?" उन लोगो ने इस तरह देखा कि वे उन्हे पहचानते ही न हो! उनके बारे मे वे सब-कुछ भूल गये थे। बावनराम ने उनकी खाली नजरें देखकर फिर दोहराया, "वो चौधरी साहब एम. पी. की चिट्ठी···उसी के बारे में पूछ रहा था। भेंट के लिए भेजा था।"

बड़ी मुश्किल से पी. ए. साहब अपनी याद को रिप्ले कर पाये। बोले, "अच्छा, है, चिट्ठी पहुँच जायेगी।"

"मिलना था साहब, एम. पी. साहब ने मिलकर आने की बात कही थी।"

"सब तो मिलना चाहते हैं···एम. पी. लोगो का क्या खर्च होता है, मुँह बाया और कह दिया।"

मुँह बाकर कोई बोल सकता है! सोचकर अनुकूल को हँसी आ गयी।

बावनराम दोनो हाथ बाँधे मुलजिम की तरह खड़े थे। पी. ए. के मुँह से बडी मुश्किल से आवाज निकली, "बैठिए···।"

बावनराम मन मारकर फिर बैठ गये, लेकिन उनकी नजर उन दोनो की तरफ ही लगी रही। वे फिर बेखबर हो गये थे। उनका मन बार-बार होता था कि फिर याद दिला दें। अनुकूल का मन भी हुआ कि वह बावनराम से कहे, चलो बाबू, यहाँ किसी को फुर्सत नहीं। लेकिन कह नही पाया। वही डर, कही कमरे से बाहर निकलवा दिया गया तो अन्दर कैसे दाखिल होगे। हर हालत मे आज वापिस लौट जाना था। जितना हो चुका था वह काफी था।

एक दूसरा चपरासी रजिस्टर लिये अन्दर दाखिल हुआ। चाय के खाली बर्तन रखे देखकर बोला, "मेरी चाय कहाँ है?"

दूसरा आदमी जो अभी भी डाक खोलने मे लगा था, बोला, "कहाँ चले गये थे···? चाय घण्टों थोड़े ही रखी रहती है। तुम्हारे हिस्से की भी मुझे ही पीनी पड़ी···।"

वह आपे से बाहर हो गया, "देखिए बाबूजी···" उसने छूटते ही पी. ए. को सम्बोधित किया, "यह तो सरासर बेईमानी है···कोई किसी की चाय भला कैसे पी जायेगा? दिन-भर सरकारी पैसे की चाय पी जाती है···मैं बाहर चला जाता

हूँ तो सब मँगाकर चाय पी लेते है और मैं टापता रह जाता हूँ । अपनी जेब से पी रहे हों तो भी बात है । मैं लाता हूँ तो इसके लिए भी रखता हूँ'''जनता का पैसा है, जनता की आँखो मे सब बराबर'''हम भी और ये भी ।"

उसकी बातो से पी. ए. को बहुत असुविधा हो रही थी। वह बारी-बारी से बावनराम, अनुकूल और जोर-जोर से बोलते हुए आदमी की तरफ देख रहा था। एक-दो बार पी. ए. ने हाथ से चुप हो जाने का इशारा भी किया। उसके लिए चाय की मार बहुत बड़ी मार साबित हुई थी। पी. ए ने एक-दो बार अन्दर की तरफ भी इशारा किया कि साहब सुन लेंगे। आखिर उसने चौधरी साहब की चिट्ठी उठायी और बोला, "यह जाकर साहब को दे दो'''कह दो, मिलने के लिए बैठे हैं।"

'इसी को दो जिसने चाय निगोटी है'''" कहकर चीनीदानी की बची हुई चीनी का फक्क-से फका मार गया। अनुकूल ने हँसना चाहा तो उन सब लोगो के कारण हँसते नही बना।

"तुम जाओ, तुम ही अन्दर जाते हो'''साहब को यही इन्तजाम पसन्द है। मैं तुम्हारे लिए चाय मँगाता हूँ।"

उसने चिट्ठी ली, गले के पट्टे से लटकती दो तनियो के बीच रखकर बाँधा और बोला, "हमें नही चाहिए चाय-वाय'''ऐसी चाय से क्या फायदा जो दिल जलाकर रख दे।" दरवाजा खोला और चिट्ठी लेकर अन्दर चला गया। दूसरे आदमी ने मुस्कुराकर पी. ए. की तरफ देखा। वह भी मुस्कुरा दिया।

पी. ए. ने उसी से खुशामदाना अन्दाज मे कहा, "जा यार, इसके लिए भी एक प्याला चाय ले आ। मरा जा रहा है।"

वह उलझ पड़ा, "अब मैं किसी के लिए चाय नही लाऊँगा। पचास पैसे की चाय'''और इतनी बातें सुना दी। पचास पैसे की क्या औकात'''धार पर मारता हूं। सीनियर न हुआ होता तो साले के फनल लगा दिया होता'''नीचे से डालकर मुंह से निकाल दी होती।"

पी. ए. के बराबरवाला आदमी बोला, "अब तक मैं चुप बैठा था'''लेकिन तुम लोगों ने तो हद ही कर डाली। न यह देखना कि बाहर के भी दो भले आदमी बैठे हैं। मै तो शरीफ आदमी हूँ'''कोई और होता तो एम. पी. से जाकर जड़ देता। पता चल जाता कितने पचास पैसे धार मे बहाने की ताकत रखते हो। जाओ, चाय लेकर आओ'''दो इन मेहमानो के लिए और एक उसके लिए।"

बावनराम हाथ जोड़कर और दाँत फैलाकर खड़े हो गये, "नहीं सरकार, आपकी मेहरबानी है। चाय तो हम पीकर आये थे। बस इस बच्चे का दाखला हो जाय, हमारी तो यही चाय है''आप ही लोगो की जूतियाँ सीधी करते जिन्दगी गुजरी है!"

पी. ए. बोला, "तो जूतो का काम करते हो?"

अनुकूल का चेहरा तमतमा आया। लगता है, बापू अपनी सारी इज्जत यही मिट्टी मे मिलाकर जायेंगे।

लेकिन बावनराम बोले, "यही समझ लीजिए, मालिक! छोटा आदमी'''

या तो जूते का काम करेगा या बुहारने का !"

इस बात पर वे दोनो हँस दिये। कुर्सी पर बैठे आदमी ने दो बार कहा, "जाओ, चाय ले जाओ।"

वह चला गया। अन्दरवाला आदमी अब उतना उत्तेजित नही था। उसने आकर कहा, "भेज दीजिए, लाइन किलियर।"

वे दोनों दरवाजा खोलकर अन्दर कर दिये गये।

अन्दर जाने मे पहले बावनराम ने अपनी टोपी ठीक की थी और अनुकूल को ऊपर से नीचे तक देखकर जाँचा था। उसके बाल थोडा आगे आ गये थे। उनको अपने हाथ से पीछे को कर दिया। बेंत को वही कोने मे खड़ी करने के बाद वे अन्दर गये थे।

उन दोनो के चेहरे पर अगाध भयमिश्रित संकोच था। चलते हुए उन्हें लग रहा था कि फिसलन-ही-फिसलन है। पता नही कब फिसल जायें और कहाँ जा गिरें। बावनराम ने अंग्रेजो के जमाने मे कहावत सुनी थी कि ऊपरवाले की नाराजगी से परलोक बिगड़ता है, नीचेवाले की नाराजगी से इहलोक बिगडता है। परलोक तो जब जायेंगे तब जायेंगे, अभी तो इसी लोक की चिन्ता है।

कृष्णन साहब का-सा कमरा उन्होने पहले कभी नही देखा था। कमरा खुलते ही दोनों को लगा कि धुर तक बिछा वह पीला मखमली बिछावन उनके जूतो से गन्दा हो जायेगा। वे जूते वही उतारने लगे। घुमन्तू कुर्सी पर बैठे खल्वाट, काले-कलूटे और लम्बे-चौडे साहब ने टूटी-फूटी हिन्दी में कहा—'जूता पहने चले आइए।' दाँत मोतियो की तरह से चमक रहे थे। उन दाँतों को देखकर अनुकूल को लगा कि कही काटनेवाले तो नही? बचपन मे जब से वह बन्दर द्वारा काटा गया था तब से सफेद दाँतो से उसका एसोसियेशन काटने का हो गया था।

कमरे में घुसने के बाद वह पहली बार तब होश में आया जब बावनराम ने कोहनी के इशारे से साहब को सलाम करने के लिए कहा। उसने अचानक हाथ जोड़ दिये। कृष्णन साहब हँस दिये। अनुकूल और नरवस हो गया। वे हँसे क्यों? उसका मन हुआ, मुँह छिपा ले या भाग जाय। पर भागने के रास्ते उसे मालूम नही थे। मन-ही-मन सोचा, कहाँ आ फँसे? पता नही अब कभी निकल भी पायेंगे या नही?

जब उसने बावनराम की तरफ देखा तो वे हाथ जोडकर कह रहे थे, "नही हुजूर, आपके सामने बैठना नारायण के मन्दिर मे जूता पहनकर जाने से बदतर है।"

साहब भी हिन्दी मे बोले, "नही, बैठो, बात करो···" फिर उन्होंने दो-तीन बार लगातार बैठने के लिए कहा। बावनराम को बैठना पड़ा। अनुकूल खड़ा रहा। अनुकूल से भी यही कहा, "बैठो···बैठकर किया हुआ बात अन्दर तक पहुँचता है···" और हँस दिये।

अनुकूल बैठा जरूर। पर उसका बैठना उतना सहज नहीं था, जितना बावनराम का था। बैठते ही दिमाग को खबर पहुँच गयी थी कि कुर्सी गद्देदार और चिकनी है। वह और ऊपर को होकर बैठ गया। कही फिसल न जाये!

कृष्णन साहब ने कहा, "चौधरी साहब हमसे फोन पर बोला'''आई आई. टी. वीक वच्चे के लिए'''क्या कहता है उसको'''आइ मीन, ग्रेवयार्ड'''यानी कब्रिस्तान है। हमारा राय नही'''बच्चा आई. आई. टी. को मत भेजो।"

बावनराम बात शुरू करने में पहले हर बार हाथ जोड़ते थे। हाथ जोड़कर बोले, "सरकार, यह बच्चा होनहार है। हम लोग गरीब आदमी है ''इतना ध्यान नही दे पाते। अगर साधन होते तो यह और भी होशियार हो गया होता। हुजूर, आपने हम लोगो का स्तर उठाने के लिए रियायतें दी हैं'''जब इतना करा दिया तो सरकार इसका आई. आई. टी. की इन्जीनियरिंग मे दाखला भी करा दीजिए। हमारी जात मे ऐसा बच्चा दूसरा नहीं हुजूर! अगर ऐसा न हुआ होता तो मैं आपको कभी तकलीफ देने ना आया होता।"

कृष्णन साहब ने अनुकूल से पूछा, "तुम आई आई. टी जायेगा ?"

अनुकूल ने गर्दन हिला दी—"जायेगा।"

उन्होंने फिर पूछा, "अंग्रेजी बोलता है ?"

अनुकूल का चेहरा पीला पड गया। उसकी जगह बावनराम बोले, "बोलेगा, हुजूर, जरूर बोलेगा। अंग्रेजी में हमेशा इसके अच्छे नम्बर आते है। इसके मास्टर लोग भी इसकी अंग्रेजी की तारीफ करते हैं। बेचारा बोले कहाँ'''हम लोग तो जानते नहीं। जिस स्कूल में पढता था वहाँ भी छोटे तबके के ही बच्चे पढ़ते हैं। सब देसी भाषा बोलते हैं। पर यह अंग्रेजी बोलेगा, जरूर बोलेगा।"

अनुकूल अपने पिता की बात से बड़ी अड़दय मे फँस गया था। कृष्णन साहब के हँस देने से और भी ज्यादा।

कृष्णन साहब बोले, "मिस्टर बावनराम, नया स्कीम है'''शेड्यूल कास्ट कोटा में सीट मिल सकता है। चौधरी साहब हमारा फ्रेण्ड ने कहा। वहाँ हर साल कोई-न-कोई लड़के का गड़बड़ हो जाता है। सुसाइड'''होता है तो आप क्या करेगा ?"

बावनराम को लगा, काम बन रहा है। जोश में उन ही की-सी भाषा मे बोले, "हमारा लड़का ऐसा नही करेगा'''कभी नही करेगा। इन्जीनियर हो जायेगा तो आपके चरणों में लाकर डालेगा। फलेगा'''फूलेगा तो आपके लगाये पौधे के फूल का खुशबू गुलचीना के फूल की तरह दूर-दूर तक महकेगा। बस, एक बार हुकम कर दीजिए मालिक! सब कोई कहेगा कि कृष्णन साहब का लगाया पौधा फूल रहा है।"

"खर्चा करेगा ?'''वेरी कास्टली !"

बावनराम के चेहरे पर दौड़ लगाती आस एकदम थम गयी। अब क्या कहे ? लेकिन तुरन्त ही बोले, "इन्तजाम है सरकार, दो बीघा जमीन बाप-दादा के जमाने से चली आ रही है। उसे निकाल देंगे। इसकी माँ का छल्ला-चूड़ी जो भी है'''कुछ उससे आयेगा। भगवान रामचन्द्रजी ने तो चौदह साल काटे थे, हमें तो चार-पाँच साल काटने हैं। सब कट जायेंगे।"

"मिस्टर बावनराम'''अपना बच्चे को आई. आई. टी. में जरूर भेजेगा! हम कहता है नही भेजो'''पिस जायेगा। लडका लोग भी तंग करेगा और मास्टर लोग भी कहेगा कि कुछ नही जानता'''भगाओ!"

"बच्चा होशियार है, हुजूर ! सब बात समझता है'''अपना हाथ इसके सिर पर रख दें।"

कृष्णन साहब ने घण्टी बजायी। घण्टी के जवाब में पी. ए. के बराबरवाला आदमी आया। घण्टी बजना और साथ-ही-साथ आदमी का आ जाना अनुकूल को आश्चर्यजनक लगा। यह कैसे हो गया कि घण्टी यहाँ बजी और वहाँ से आदमी प्रकट हो गया ! अगर घण्टी सुनायी भी पड गयी होगी तो यह कैसे पता चल गया कि उसे ही बुलाया जा रहा है ? लगता है इशारेबाजी की तरह कोई बात है। क्लास मे भी लड़के इसी तरह किया करते है। किसी से क्लास छुडवानी हो तो कोई लड़का तीन या चार बार साइकिल की घण्टी टुनटुना देता है और लडका क्लास से बाहर। इतने बडे-बडे लोग भी इस तरह की बाते करते हैं। हद् ही है !

वह हाथ बाँधे चुपचाप खड़ा था। कृष्णन साहब ने चिट्ठी उसकी तरफ बढ़ा दी, "यह चिट्ठी रख लो। इनके पार्टीकुलर्स भी ले लेना। एस. सी. एस. टी. के दाखले के लिए परसो डाइरेक्टर्स की मीटिंग है। मुझे याद दिला देना'''पहला साल है'''इस साल तो हमे एस. सी. एस. टी. लड़के खोद-खोदकर निकालने पड़ेंगे। नही तो कोटा नही पूरा होगा।" उनकी बात बावनराम समझ तो गये थे पर अंग्रेजी मे बोलने के कारण उतना नहीं समझे थे। अनुकूल भी समझ ही गया था। लेकिन अनुकूल को दूसरी समस्या सताने लगी। दाखले के बाद की। अगर वहाँ जाकर कुछ न कर पाया तो ? अपने पाँवो के तलवों मे उसे गीलापन महसूस हो रहा था। उसके साथ परेशानी मे हमेशा ऐसा होता था।

कृष्णन साहब ने उन लोगो से कहा, "तुम बाबू के पास जाइए। अपना पार्टीकुलर दीजे'''खबर बाद में पहुँचेगा।"

बावनराम हिले नही, वहीं खडे रहे। कृष्णन साहब ने उनको तरफ प्रश्नवाचक मुद्रा मे देखा। बावनराम हाथ जोड़कर हकलाते हुए-से बोले, "हुजूर, हो तो जायेगा !"

"तुम भगवान को मानता है मि. बावनराम'''? मानता है तो उसको भी कुछ करना चाहिए। उससे कहिए'''बच्चा का एडमिशन होगा। फेथ जरूरी है'''!"

"सरकार, आप ही भगवान है।"

"ऐसा मत बोलो ''हम भगवान कैसे होगा ? हमको आप देखेगा'' भगवान को भी क्या देगा ! नही देखेगा ना ! तो फिर गलत बात मत बोलो। भगवान भगवान होता है'''आदमी नही होता।"

बावनराम ने बहुत झुककर सलाम किया। अनुकूल को जैसे कुछ याद आ गया। उसने भी हाथ जोड दिये। तब तक कृष्णन साहब वहाँ नहीं रहे थे। फाइलों मे गायब हो गये थे।

बावनराम जब तक वहाँ रहे, उन दोनो को यह बताते रहे कि वे दोनो कितने बड़े आदमी हैं और वे क्या नही कर सकते। अगर वे चाहेंगे तो उनके बच्चे की जिन्दगी बन जायेगी। आपके गुण गायेगा। अनुकूल को अलबत्ता अपने पार्टीकुलर्स लिखकर

देने में परेशानी हो रही थी। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि उसे क्या-क्या लिखकर देना है। पहले उसने नाम लिखा, हिन्दी मे। तत्काल बाबू ने टोक दिया, 'अंग्रेजी में लिखिए।" अंग्रेजी मे लिखने लगा तो उसे गुस्सा आ गया। दूसरा कागज बढाकर बोला, "इस पर लिखिए ''यह कटा-फटा बुचड़ा हुआ कागज क्या इतने बड़े-बड़े आदमियो के सामने रखा जाने लायक है ! लिखे कागज और पहने कपड़ो से आदमी के स्तर का पता चलता है।"

अनुकूल मिटपिटा गया। बावनराम को भी उसका इस तरह बोलना अच्छा नही लगा। तत्काल बोले, "अरे साहब, बच्चा है। आप लोगो से पूछ-पूछकर सीख जायेगा।" फिर अनुकूल से कहा, "अंग्रेजी में तुम आगे रहते हो, जरा हाथ सँभालकर, ऐसा खुशखत लिख दो कि साहब भी खुश हो जायें। बाबू साहब भी ठीक कहते है, अब तो कागज के रूप में तुम साहब के सामने जाओगे'''वहाँ तुम थोडे ही होगे। यह कागज ही बोलेगा।" फिर घूमकर बाबू से कहा, "बस अभी लिखे देता है, समझदार बच्चा है।"

बावनराम का बात-बेबात बोलते चले जाना अनुकूल के लिए परेशानी का बायस हो रहा था।

पी. ए. बोला, "यार, यह क्या मजाक बना रखा है'''घण्टे-भर इसी मे चिपटे रहोगे। ये लोग वर्ग-विशेष के आदमी हैं। ऐसा करो, टाइपराइटर पर कागज चढ़ा लो और पूछ-पूछकर टाइप कर डालो। एक मिनट भी नही लगेगा। इनके जिम्मे रहोगे तो अपनी जगह बाप का नाम और बाप की जगह अपना नाम लिख देंगे। या फिर कह दो वहाँ मे जाकर डाक मे भेज दें।"

"नही साहब, साहब ने यही नोट करके देने के लिए कहा है।"

"बस तो फिर वही करो जो मैंने बताया'''"

दूसरे आदमी ने टाइपराइटर सँभाला और कागज लगाकर पूछ-पूछकर टाइप करना शुरू कर दिया। टाइप कर लेने के बाद एक कॉपी उसे दी और अपनी कापी पर दस्तखत कराकर कहा, "जाइए, अपने घर।"

बावनराम ने उनमे भी हाथ जोड़कर पूछा "दाखला तो हो जायेगा ना ?"

पी. ए. झल्लाकर बोला, "मैं क्या कोई ज्योतिषी हूँ ''अन्दरवाले जानें ! जितना उन्होंने कहा उतना हमने कर दिया।"

"फिर भी आप हाकिम है।"

दूसरा बोला, "जब साहब ने कह दिया तो हो जायेगा'''जाइए, घर जाकर चिट्ठी का इन्तजार कीजिए।"

बावनराम का चेहरा दो दिनो मे पहली बार इतना खिला। अनुकूल के चेहरे पर तनाव था। हो गया तो आगे क्या होगा ? लेकिन उसे एकाएक लिफ्ट का ख्याल आ गया। ऊपर ही जाता है या नीचे भी उतरता है ? नीचे भी जरूर जाता होगा, नही तो ऊपर कैसे जायेगा ? बावनराम पी. ए. के कमरे का दरवाजा खोल रहे थे। जोर लगाने पर भी दरवाजा नही खुल रहा था। अनुकूल को घबराहट होने लगी। अगर इन लोगो ने दरवाजा नहीं खोला तो बाहर कैसे निकलेंगे ? बावनराम को जोर लगाते देख वहीवाला चपरासी हँस रहा था जो चिट्ठी अन्दर ले गया था।

बावनराम उसे हँसते हुए देखकर परेशान हो उठे। उनकी घबराहट चेहरे पर आ गयी। बावनराम ने उन लोगों की तरफ देखकर कहा, "हम लोग तो छोटे आदमी हैं···ऐसे दरवाजे खोलना तो खोलना, देखने को भी नहीं मिलते···हँसते काहे हो भाई !"

पी. ए. बोला, "हाँ-हाँ, दरवाजा खोल दो···इसमें हँसने की क्या बात है !" वैसे हँसी पी. ए. के चेहरे पर भी थी। उसकी हँसी बस चेहरे की खुशी जितनी ही लग रही थी। उसका साथी नीची गर्दन करके बिना आवाज जोर से हँस रहा था। गनीमत यही थी कि चेहरा नजर नहीं आ रहा था। शरीर अलबत्ता हिलता हुआ दिखायी पड रहा था। आखीर में पी. ए. ने ही उठकर दरवाजा खोला। अनुकूल की नजर बेंत पर पड गयी। उसने उठा ली। बाहर निकले और इधर-उधर देखा तो जान में जान आयी। वही गलियारा था, जिससे होकर आये थे। सफेद वर्दीवाले आदमी अभी भी कमरों के सामने मौजूद थे। उन लोगों को इत्मीनान हो गया कि अब निकल सकेंगे। लेकिन उस गलियारे मे चलते हुए उन्हें एक-आध बार ऐसा लगा कि गलियारा लम्बा हो रहा है। इसी ख्याल में वे चलते-चलते लिफ्ट तक पहुँच गये। लिफ्ट का दरवाजा खुला था। चालक बैठा बीडी पी रहा था। अनुकूल ने बेंत बावनराम को पकडा दी। बावनराम को यह सोचकर अच्छा लगा कि लड़का अभी से चेतन है। बेंत उठाता लाया !

अनुकूल ने बावनराम की तरफ देखा तो उनका भी ध्यान लिफ्ट पर था। उसने धीरे-से कहा, "बाबू, यह भी तो नीचे ले जाता होगा ?"

वे बिना जवाब दिये नदी में डुबकी लगाने के अन्दाज मे उसका हाथ पकड़कर अन्दर घुस गये, "बाहर जायेंगे···।" चालक से दबगपने से कहा।

चालक ने उनको नीचे से ऊपर तक देखा। अनुकूल को लगा, निकाल देगा। कहेगा, जीने से जाओ। लेकिन चालक ने जल्दी-जल्दी दम लगाया और बीडी फेंक दी। इतना सब करने के बाद बोला, "बाहर तो अपने आप जाना होगा···यह तो आपको नीचे की मंजिल पर पहुँचा देगा, बस।"

वे चुप रहे। उसी ने पूछा, "कहाँ रहते हो बाबा ?"

बावनराम फौरन ही बोले, "यहीं नहीं, यहीं पास ही।"

उसने दरवाजा बन्द करके 'जी' वाला बटन दबा दिया। लिफ्ट नीचे उतरने लगा। वे दोनों पहले तो पाँव जमाये रहे, फिर दीवार पर हाथ रख लिया। ऐसा लग रहा था, रात हो गयी है और बत्ती जल गयी है। फिर सिर पर चलते पंखे का आभास हुआ। वह तेजी से चल रहा था। पगडियों पर लहरें-सी बन रही थीं। अब वे अपने को किसी अन्तहीन गड्ढे में उतरना अनुभव कर रहे थे। बीच-बीच में घण्टी बजने लगती थी। पहली घण्टी बजी तो वे दोनों चौंक गये। लिफ्टमैन हँस दिया। उन्हें दुबका खड़ा देख उसे मजा आ रहा था। जाते हुए तो यह रुक-रुककर जा रहा था। अब सीधे नीचे ही क्यों उतरता चला जा रहा है ? कहीं रुकेगा भी या नहीं ? उन्हें एकाएक लगा, लिफ्ट नीचे को दरक गया। झटका-सा लगा। फिर रुक गया। ऊपर एक पट्टी पर एक के बाद एक नम्बर बदलते जा रहे थे। चार के बाद तीन, तीन के बाद दो···दो पर वह रुक गया था। बावनराम ने चौकन्नेपन से

उसे देखा। पता नही क्या करेगा? उसने दरवाजा खोला। वे बाहर निकलने को हुए तो उसने हाथ के इशारे से रोक दिया।

अन्दर एक महिला आयी। कन्धे, सीना करीब-करीब आधा बदन उघडा था। बाल कटे थे। सुगन्ध से नाक फटी जा रही थी। उसके अन्दर दाखिल होते ही लिफ्टमैन ने खड़े होकर सलाम किया। महिला ने सलाम का जवाब देकर हाथ के चमड़े के थैले से शीशा निकाला और चेहरा देखा। आँखों की पलकों और भँवों को सँवारा। फिर शीशा उसी मे वापिस रख लिया। इस तरह की महिला को अनुकूल ने पहली बार इतने नजदीक से देखा था। रग इतना गोरा था कि रोशनी उसके कन्धो पर चमक रही थी। बाँहे बोतल-सी गोल-गोल लग रही थी। अनुकूल ने उसके वक्ष पर से कई बार नजर हटानी चाही लेकिन हटा नही सका। घर पर पड़े सफेद पत्थर के चकले की तरह था। बावनराम ऊपर बदलते नम्बरो की तरफ देख रहे थे। महिला ने अनुकूल की तरफ देखा तो अनुकूल को लगा कि उसके ताकने ने उसे दीवार से सटा दिया। वह एक नजर मे उन दोनो को देख गयी थी। चेहरे पर गहरी नापसन्दगी का भाव आकर गायब हो गया था। लिफ्ट-चालक की तरफ घूमकर बोली, "सेक्रेटरी साहब आ गया ?"

"जी नही, अभी नही आये।"

"मिनिस्टर साहब···?"

"वे भी नही आयी।" लिफ्टवाला रुककर बोला, "मेम साहब, हमारे भाई का अभी कुछ नही हुआ।"

लिफ्ट रुक गया। ऊपरवाली पट्टी पर 'जी' आ गया था।

लिफ्ट चालक ने दरवाजा खोला। उनसे बोला, "चलिए, निकलिए ··वो रहा बाहर का रास्ता।"

वे बाहर निकल आये। निकलते ही लिफ्ट फिर ऊपर को उठने लगा। बावनराम की उँगली दाँतों के बीच मे दबी थी और अकेले आदमी के साथ वे उस अकेली औरत को ऊपर जाते हुए अनुभव कर रहे थे। दरवाजा बन्द हो गया था। इसलिए उन्हे कुछ दिख नही रहा था।

अनुकूल ने धीरे-से कहा, "एकदम सुरग-सी है !"

बावनराम हँस दिये और बोले, "मौत का कुआँ !" फिर वे उत्साह भाव से बोलते रहे, "हमारे जमाने मे नुमायश हुआ करती थी। उसमे मौत का कुआँ आया करता था। एक आदमी का एक आने का टिकट। तब इकन्नी चलती थी। इकन्नी मे चार डबल पैसे होते थे। ताँबे के। तुमने नही देखे। खैर, उस मौत के कुएँ मे एक आदमी मोटर साइकिल चलाता था···ऊपर से नीचे···नीचे से ऊपर। लकड़ी की दीवारें यूँ ' यूँ ··हिलती थी ··" हाथ के इशारे करके बोले, "उसके तीन भाई तो उसी मे काम आ गये थे। मोटर साइकिल पलट गयी, जलकर मर गये। वह आखरी था। पता नही उसे कैसा लगता होगा···हमें तो देखते समय लगता था कि लोटा लो और जगल जाओ।" कहकर हँस दिये। अनुकूल को भी हँसी आ गयी।

बाहर कारें खडी थी। कुछ कतारो मे, कुछ बिखरी हुई। बावनराम की चाल थोड़ी बदल गयी थी। उनकी बेंत भी जमीन पर कुछ ज्यादा बज रही थी।

चौधरी साहब ने उन्हें समझा दिया था कि शास्त्री भवन से निकलते ही बायीं तरफ चौराहा पार करने के बाद दाहिने हाथ पर पन्तजी का बुत है। उसी सड़क पर सीधे चले जायेंगे तो आगे चलकर दाहिने हाथ संसद भवन है। जहाँ सड़क खत्म होती है, वहाँ एक गेट है'''उसे पार करने की जरूरत नही। बस वही, उसी गेट की जड मे पूछ लीजियेगा, रिसेप्शन कहाँ है। कोई बता देगा। रिसेप्शन मे जाकर कह दीजियेगा—चौधरी साहब से मिलना है। वे बुलवा देंगे।

रिसेप्शन ढूँढने मे उन लोगो को ज्यादा परेशानी नही हुई। लाल पत्थर का गोल-गोल-सा हाल देखकर उन्हें अच्छा लगा। खासतौर मे बीच में जो गोल जगह थी उसे देखकर तो अनुकूल मुग्ध हो गया। उसका मन हो रहा था कि वह ताली बजाकर उसकी भव्यता का स्वागत करे। वहाँ बहुत सारे लोग थे और शोर था। बीच-बीच मे माइक भी बोलता रहता था। उसे एक बात सोचकर बडा मजा आया। अगर उसने ताली बजायी और उसकी देखा-देखी और लोग भी बजाने लगे तो वह और उसकी आवाज वही नमक के ढेले की तरह गल जायेंगे। असल शोर दाहिनी तरफ के काउण्टर पर हो रहा था। लोग झुके पडे थे। सबको किसी-न-किसी एम. पी. से मिलना था। नाम देने के बाद लोग जाते थे और अन्दर और बाहर के वृत्तो मे सजी कुर्सियों पर जम जाते थे। बाहर के मुकाबले अन्दर इतना ठण्डा था कि कुछ लोग सो रहे थे।

बावनराम ने काउण्टर पर जाकर एक साहब से कहा कि हमे चौधरी साहब, एम. पी. से मिलना है। उसने पर्ची उठाकर पकडा दी, "जिस एम. पी. से मिलना है उसका नाम, जिला ऊपर के खाने में लिख दो। नीचे की तरफ अपना नाम और काम लिख दो। भरकर उधर दे दीजिए।" उसने दूसरी तरफ इशारा कर दिया। वे पर्ची एक कोने मे खडे होकर भरने लगे। उनके हरुफ बच्चों की तरह मोटे-मोटे और अनमेल थे। उनकी बनावट खासी थी। उन्होंने भरकर निर्देशित आदमी को दे दी। वह झुंझलाकर बोला, "यह तो लिखा ही नही, लोकसभा मे हैं या राजसभा मे ?"

"साहब, हम तो इतना ही जानते हैं, हमारे यहाँ से चुनकर आये हैं।"

"चुनकर आये है तो लोकसभा लिखना चाहिए था'''।"

उसने अपने हाथ से लिख दिया और बोले, "जाइए, वहाँ बैठकर प्रतीक्षा कीजिए। जब आयेंगे तो लाउडस्पीकर पर नाम पुकारा जायेगा।"

अनुकूल की समझ मे तब आया कि बार-बार ये माइक पर क्या कहते हैं। दर-असल वे पर्चीवालो का नाम पुकारते थे। वे दोनों अन्दरवाले वृत्त मे आकर बैठ गये। बावनराम तो थोड़ी ही देर बाद सो गये। बावनराम जिस तरह मुँह खोले सो रहे थे उसे देखकर अनुकूल को अच्छा नही लग रहा था। एक-दो बार इधर-उधर हिला-कर उसने उन्हें जगाना भी चाहा पर वे नींद मे काफी गहरे उतरे हुए थे। थोड़ी देर बाद उसकी अपनी गर्दन झटका खाने लगी। वह बार-बार डूबता और निकल आता था। निकलने पर अपने से बहस करने लगता—सोने की क्या बात है ? बाबू तो बूढ़े हैं'''। उनकी बात और है। अगर चौधरी साहब आ गये और आवाज लगी और वे सोते रहे तो'''? उसकी रीढ़ फिर मुलायम पड़ने लगती। खोलते-खोलते आँखें बन्द

हो जाती। उसकी आँख एकाएक तब खुली जब उसके पिता का नाम दो-तीन बार पुकारा गया। उसने बावनराम को झकझोरकर उठाया। उन्हें जगह मिल गयी थी और वे लुढ़के हुए थे।

वह हड़बड़ाकर उठे, "क्या है?"

"नाम पुकारा जा रहा है।"

वे टोपी ठीक करते हुए दौड़े गये। चौधरी साहब इन्तजार करते मिले। बावनराम की आँखों से अभी भी लग रहा था कि सोकर आये हैं।

"बस आ ही गयी नींद ''रात-भर सो नहीं प ये थे। वो तो अनुकूल ने जगाया '''नहीं तो सोते ही रह जाते।"

"इसमें आपकी खता नहीं'' यहाँ की हवा में ही नींद है। जो आता है सो जाता है। बताइए क्या-क्या हुआ?"

"कृष्णन साहब से मुलाकात तो हो गयी। भले आदमी हैं। आपको बहुत मानते हैं।" चौधरी साहब गद्गद् भाव से हँस दिये। "उनका कमरा भी इतना ही ठण्डा है'''बल्कि इससे भी ज्यादा। वहाँ बैठे-बैठे तो पैर ही ठण्डे होने लगे थे। पर सा'ब, शास्त्री भवन पूरा तिलिस्म है'''रास्ता ही नहीं मिलता।" रुककर अनुकूल से पूछा, "क्या था वह जिसमें ऊपर से नीचे आये थे?"

चौधरी साहब ने हँसकर जवाब दिया, "लिफ्ट होगा।"

"हाँ, उसने दरवाजा बन्द किया तो लगा हो गया पार्सल। अब क्या लौटकर दुनिया देखेंगे। पता नहीं कहाँ पाताल लोक मे उतरता जा रहा था।"

चौधरी साहब पहले तो हँसे; फिर पूछा, "वहाँ हुआ क्या, पहले यह बताइए। यह तो भारत सरकार है'''हर काम लिफ्ट से होता है। जो ऊपर जा रहा है वह लिफ्ट की तरह ऊपर ही चढ़ता चला जाता है'''नीचे आना शुरू होता है तो नीचे ही उतरता चला जाता है। रोकनेवाला कोई नहीं। इसलिए उसकी बात छोड़िए। अपनी बताइए।"

"आपकी चिट्ठी ने काम किया'''चौधरी साहब! पहले तो कृष्णन साहब टालते रहे। वही एक गाना वहाँ पढ़ पाना हर एक बच्चे के बस की बात नहीं। लड़के आत्महत्या कर लेते हैं'''खर्चा बहुत होता है। फिर बोले, चौधरी साहब हमारे दोस्त हैं। इसलिए हम देखेंगे। अपने बाबू को आपकी चिट्ठी देकर बोले, परसों मीटिंग है'''तब याद दिलाना। अफसर खुश, तो बाबू भी खुश। बाबू ने अपने आप ही भैया की तफसील टाइप करके कापी हमें दे दी एक अपने पास रख ली। लगता है'''कृष्णन साहब मदरासी हैं। उनका बोलना अपने लोगों जैसा बोलना नहीं था।"

दोस्तवाली बात सुनकर चौधरी साहब के चेहरे पर आश्चर्य का भाव आ गया था। पहले तो उनका मुँह खुला ही रह गया था। फिर मूँछों के मुगालते में उन्होंने मूँछों की खाली जगह पर हाथ फेरा'''।

बावनराम बिना रोक-टोक बोले जा रहे थे, "वे कह रहे थे कि हालांकि वहाँ की पढ़ाई सख्त है लेकिन चौधरी साहब की सिफारिश के कारण'''हम देखेंगे क्या कर सकते हैं। सब आपका ही प्रताप था। हम तो वहीं से सोचकर चले थे कि दाखला

तो चौधरी साहब के बायें हाथ का काम है। आखिर एम. पी. हैं, मजाक थोड़े ही है। वही हुआ। वैसे अनुसूचित जाति के बच्चे अभी उनके पास कम हैं ···"

"ओह नही, किस मुगालते मे हो बावन भाई·· एक हज़ार बच्चे मिल जायेंगे। वो तो सवेरे बात हो गयी थी···नही तो मुश्किल पडती। ये अफसरान लोग परवाह थोडे ही करते हैं जब तक व्यक्तिगत सम्बन्ध न हो। मैंने इनकी बडे कठिन समय मे मदद की है ··!"

"सो तो है ही। आपकी चिट्ठी न हुई होती तो पास ही न बनता। पास-दफ्तर के बाबू ने ही कुनेठ कर दी थी···साले ने जब चिट्ठी पढ ली तब पास बनाया। कहने लगा, आप तो भारत सरकार के हकीकी दामाद हैं···जी मे तो आया गला पकड लूं ··पर टाल गया।" सजीदा होकर बोले, "अभी हम लोगो को गिरी हुई नजर से देखा जाता है ! मेरा ख्याल था भारत सरकार मे काम करनेवाले लोगो का रवैया वैसा नही होगा···बडे लोगो के साये मे काम करके सुधर गया होगा। इनकी बातो को सुनकर यही लगता है कि पता नही हम कितने अछूत हैं !"

"अरे छोडो···बस काम होना चाहिए। हम लोग चुनाव मे जाते हैं · कहनेवाले क्या नही कहते ! जब तक वोट मिलती है तब तक सब चलता है !"

अनुकूल का मन हुआ, बीच मे बोल पड़े और कहे कि सबकुछ काम ही है, आदमी और उसकी बात कुछ नही। लेकिन बाबू ही जब नही बोल रहे थे तो वह क्या बोलता।

चौधरी साहब अपनी तारीफ पर आ गये थे, "केन्द्र मे ऐसा कोई नही जो चौधरी की बात न सुनता हो। कृष्णन की बात तो आपने स्वयं ही सुन ली। अब यही हो जाता है कि इस बार जब कृष्णन का काम पड़ेगा तो मना करते नही बनेगा। ये लोग बड़े भारी अफसर हैं···विदेशो मे पढे और कढ़े हुए ! इसलिए पढाई-लिखाई के बारे मे इनसे ज्यादा कौन समझेगा। बुरा न मानो तो उनकी बात ठीक ही है··· अपना बच्चा सबको होनहार लगता है। आपको भी लगता है, हमें भी। लेकिन पहलवान जब मैदान मे उतरता है, जोर का तो तब पता चलता है। वहां तो अपने-अपने अखाडे के एक-से-एक पहलवान जमा हैं···बेटे को उनमे हाथ मिलाना पडेगा। इसलिए बावन दादा, सोच-समझ लो। कभी बाद मे कहो, हमे तो चौधरी साहब और उनके दोस्त कृष्णन साहब ने फँसा दिया।"

"नही, ऐसा कुछ नही·· जब हमारा अनुकूल इन्जीनियर बनकर निकलेगा··· हवाई जहाजो मे बैठकर उड़ा फिरेगा, तब हमारा दिल तो दुगना होगा ही, आपका सीना भी फूलेगा कि हमारे हाथ का लगा पौधा है···"

चौधरी साहब का चेहरा पहले तो खिल गया। फिर हँसकर बोले, "हवाई जहाज मे तो घूमे ··हवा मे नहीं !" कह लेने के बाद भी थोडी देर तक हँसते रहे। उस बात से बावनराम और अनुकूल थोडे सुस्त पड़ गये। अनुकूल को लगा, इससे अच्छा तो यही होता कि कह देते — अपने घर जाओ।

अनुकूल थोड़ा हटकर खड़ा हो गया। हाल मे लोग मक्खियो की तरह भन-भना रहे थे। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि ये लोग मिठाई की डली हैं या चोप। चौधरी साहब बाबू की दृष्टि मे उसे मिठाई की डली ही लगे। बस से अब

तक वे कई बार उसे दूसरे रूप मे भी दिखलायी पड चुके थे।

बावनराम अभी भी उसी मानसिकता मे थे। हाथ जोडकर बोले, "आपकी वजह से यह बच्चा किसी काबिल हो जायेगा। आपने हाथ ना पकडा होता तो हम कहाँ जाते? आजकल जब तक हाथ पकडनेवाला ना हो तो आँखें होते हुए भी सब सूरदास बने, ठोकर खाते, घूमते रहते हैं। कृष्णन साहब जैसे बडे अफसर की तो झलक भी ना मिली होती'''।"

चौधरी साहब एकाएक बोले, "तो आप आज रात की गाडी से ही चले जायें '''दिल्ली मे धक्के खाने के सिवाय रखा ही क्या है। घर जाकर आराम करिए'' "

"यही सोचता था'''परसों कृष्णन साहब से मिलकर चला जाता। पता चल जाता, मीटिंग मे क्या हुआ।"

"वो तो मैं अपने आप कह-सुन लूंगा। उसके लिए आप लोगो को रुकने की जरूरत नही। एक बार गाडी लाइन पर आ जाये तो फिर मुश्किल से उतरती है। इसलिए अब आप जाइए। आपको वैसे भी बहुत परेशानी हुई'' !"

"अच्छा!" बावनराम ने बड़े बुझे मन से कहा और हाथ जोड दिये।

चौधरी साहब ने उनके कन्धे पर हाथ रखा और अलग को ले गये। अनुकूल की *नजर दो आदमियों पर पड़ी। वे वहीं ठहरे थे। वे चिढ़-से गये।*

चौधरी साहब बावनराम के कन्धे पर हाथ रखकर कह रहे थे, "बावनजी, मैं उन सब बातो के लिए बहुत शर्मिन्दा हूँ। दरअसल हम लोग राजनीतिक गुलामी से छुट्टी पा गये हैं, हमारी अपनी मानसिक गुलामी जस-की-तस बनी है'''" कहकर हँसे। फिर बोले, "मैं राजनीति मे सेवा करने के ख्याल से आया था'''पर है नौकरी ही। जिस मिलावट को निकालना चाहता था वह दो आने से बढकर पन्द्रह आने हो गयी। अब सच्चाई कहीं नहीं'''! पानी मे दूध की तरह मिलावट है। देखनेवाले को दूध का अहसास बना रहता है। बस एक आना-भर जो सच्चाई है उसी के तहत मैं आपसे कहना चाहता था कि मैं राजनीतिक आदमी के रूप मे नौकर हूँ'''मैं न तो उन लोगो को रोक सकता हूँ जो इन्सानियत मे गिरना ही इज्जत की बात समझते है'''" रुककर खिसियानी हँसी हँसकर बोले, "और न'''दरअसल मेरी पत्नी भी उसी परम्परा की हैं। ये सभी अपने ख्यालातों की इकाइयो मे जीना पसन्द करते है। सब बर्र के छत्ते हैं, छुआ नही कि भनभनाकर टूट पडेंगे'''" वे फिर हँसने लगे।

चलते-चलते बोले, "यही कहना था कि बुरा मत मानियेगा'''बच्चे को भी समझा दीजिए। बच्चो के मन पर इन बातो का ज्यादा असर पड़ता है।" अपने आप ही नमस्ते की और बिना मुड़कर देखे चल दिये।

बावनराम की आँखें नम थीं। अनुकूल ने भी उनकी बातें उचटती हुई सुन ली थी। वह अन्दर-ही-अन्दर भीग गया था। हो सकता है उन बातो की उस पर रासायनिक ढंग की कोई प्रक्रिया हुई हो। उसे लगा हो कि सच्चाई और ईमानदारी अपने ही को मुक्त नही करती, दूसरों को भी सोधती है।

चौधरी साहब के बारे मे उसकी राय बदल रही थी।

दो

राजधानी मे लौटे बावनराम कुछ दिन तो उपलब्धि और मुक्ति के अहसास से पूरे रहे। उनकी चाल प्रयत्नमुक्त और सहज हो गयी थी। जब वे चलते थे तो यही लगता था कि न कोई रुकावट है और न कोई घर्षण। उडते-से थे। अनुकूल के दाखले को लेकर परिवार में उभरे विरोधो पर भी उन्होने एक तरह से नियन्त्रण पा लिया था। घर के अन्दर के विरोधियो ने भी दाखले की चिट्ठी की प्रतीक्षा में अपने को पूरी तरह निवेदित कर दिया था। अब आपस में चर्चा करते समय वे यही मानने लगे थे कि सब बाबू के रसूख का फल है। उन्ही के चलते अब हम भैया को इन्जीनियर बना देखेंगे। भैया के इन्जीनियर होते ही हमारा घर सारी बिरादरी का सिरमौर हो जायेगा। लोग बाबू के पास अनुकूल से सिफारिश कराने आया करेंगे। अनुकूल चाहे और कुछ करे या न करे, बाबू का और बिरादरी का मान तो उसे रखना ही पड़ेगा। बिरादरी ही बनाती है और बिरादरी ही बिगाडती है। चाहे आदमी लाठ हो जाये और बिरादरी न माने तो कुछ नही। हुआ न हुआ बराबर! राम का दिया भी तभी दिया-सा लगता है जब उसका थोडा-बहुत अंश अपने समाज तक भी पहुँचाते रहे। अपनी झोली मे उनकी झोली भी शामिल हो। नही तो सूम का सिक्का। देख लो और धर लो। ये लम्बी-लम्बी बातें अनुकूल के कान मे भी पडती थी पर वह कुछ नही कहता था।

अनुकूल की चिन्ता का मीटर कृष्णन साहब से मिलने के बाद से ही चालू हो गया था'''हो गया तो क्या होगा? कैसे निबाहेगा? अपने स्तर पर पूछताछ करके उसने वहाँ की पढ़ाई और लोगों के बारे में भी जानकारी एकत्रित की थी। ज्यादा तो कुछ नही पता चला था, केवल इतना ही ज्ञात हुआ था कि देश-भर से चोटी के लड़के जाते हैं। वे ही जब आपस में एक-दूसरे का जोर नही झेल पाते तो पिछड़ जाते हैं। यही बात उसकी चिन्ता का विषय थी। वह उस रेल-पेल मे अपने पांव कैसे टिका पायेगा? एक-दो शुभचिन्तको ने यह भी सुझाया था कि इससे तो पॉलिटेकनीक ठीक रहेगा। यह विचार उसे जँचा भी था। इससे इन्जीनियर बनने की बाबू की इच्छा भी पूरी हो जायेगी और वह भी उस व्यर्थ की गहमागहमी से बच जायेगा। जो बर्तन अपने पर उठ नही सकता, जोर लगाने से क्या लाभ! उसने बावनराम से दबी जबान मे कहा भी, "बाबू, लोग पॉलीटेकनीक की बहुत तारीफ करते हैं'''सभी कहते हैं कि हम जैसे साधारण छात्रों के लिए वही ठीक है। आई. आई. टी. भारी पड़ेगी। एक-से-एक उम्दा लड़के आते हैं'''उनसे टकराना पहाड़ से टकराना समझिए।"

बावनराम सुस्त हो गये थे। चेहरे पर उतनी ही थकान उभर आयी थी जितना मुक्ति का अहसास पहले रहा था। वे बोले, "बेटा, जहाँ नदी नही होती वहाँ पोखरे की भी तारीफ होती है। गंगाजी के किनारे खड़े होकर पोखरे को कोई नहीं सराहता। जब तैराक हिम्मत हारनेवाला हो तो समझो बस डूबने का वक्त आ गया। तुम अभी से हिम्मत हार रहे हो। डुबानेवाला और तैरानेवाला कोई और है। तुम्हें तो हाथ-

पैर चलाने हैं। तुम समझ रहे हो तुम अपने ही बल तैरोगे और अपने ही पार लगोगे। अगर ऊपरवाले की चाह नही होती तो वह कृष्णन साहब के दरबार तक ही क्यो ले जाता? हम लोगो की गिरावट का यही कारण है। सामर्थ्य का अन्दाज न लगाकर सीमाओ का अन्दाज लगाने बैठ जाते हैं। अपनी असामर्थ्य की बात सोचकर भी कभी कोई आगे बढा है? आगे वे बढते है जो अपनी कमजोरी को भी शक्ति के रूप में इस्तेमाल करने की सामर्थ्य रखते है। हम तो खलासी से सुपरवाइजरी तक पहुँचे हैं···" फिर एक लम्बी साँस लेकर बोले, "अगर तुम समझते हो कुछ नही कर पाओगे, हाथ लगा अवसर मिट्टी मे मिला दोगे, तो यही अच्छा है कि इन्जीनियरिंग में जाने का इरादा बिल्कुल ही छोड दो। बाकी घरवालो की राय से चलो। मैंने तो यही सोचा था कि तुम्हारा इरादा मजबूत है···इरादे की बुलन्दी के कारण तुम कुछ कर गुजरोगे। अपने लायक तो बनोगे ही, दूसरो को भी सहारा दोगे। अपने को सहारा देनेवालो से ज्यादा···दूसरो को सहारा देनेवाले चाहिए··तब हम अछूत से छूत हो पायेंगे। काम पडने पर ही आदमी झाड़ू को भी छूता है।"

बावनराम ने इतना सबकुछ पहली बार अनुकूल से कहा था। कह लेने के बाद वे निढाल-से लेट गये थे।

अनुकूल अपने पिता की बातो मे उलझा कई दिनो तक इस तरह उलटता-पलटता रहा जैसे जाल में लिपटी किसी बड़ी-सी मछली को अपने ही जल मे रास्ता न मिल रहा हो। रात को सोते-सोते भी उसे लगता था कि सुरसा-जैसा खुला कोई मुख साँस की ताकत से उसे अपनी तरफ खीच रहा है। बचपने में सुनी सुरसा की कहानी अब सार्थक हो रही थी। उसके मुँह मे जाने से बचने की वह हरचन्द कोशिश कर रहा था। उसे यही लगता था कि हनुमान तो निकल आया था, वह भी निकल पायेगा या नही?

उसकी चुप्पी और अन्यमनस्कता देखकर बावनराम भी हतोत्साह थे। बार-बार उनके सामने भी यही सवाल आ खडा होता था कि जो कुछ वे कर रहे हैं, क्या गलत कर रहे हैं? जिसके लिए कर रहे हैं जब वही उसे उस रूप में नही ले रहा तो करने या न करने का कोई अर्थ नही रह जाता। लगता है हम लोगो के बच्चे निराशाओ के गहरे अन्धकार मे पलते रहने के कारण रोशनी से चौंधियाते और भडकते हैं। झरोखों की तरफ से आँखें बन्द कर लेना उनकी आदत बन गयी है। अच्छे परिवर्तनो को भी स्वीकार करने मे डरते हैं। हो सकता है उसके अन्दर भी वही भय काम कर रहा हो। हमारे बापू ने इतने बेपढ़े होने पर भी, हमे जब स्कूल मे दाखिल किया था तो हम पर कितना बडा पहाड टूट पड़ा था। कैसे-कैसे फूट-फूटकर रोते थे। स्कूल में अलग टाट पर बैठाया जाता था। जब सब बच्चे पानी पी लेते थे तब हमारा नम्बर आता था। बापू यही कहते थे, जब पढ़-लिख लोगे तभी इस पाप से छुट्टी पाओगे। नही तो इसी नरक मे घिसटते रहोगे। नही जाते थे तो मार-मारकर खाल उधेड़ देते थे। आठवी पास की···दसवी में गाड़ी ऐसी धँसी कि निकल ही नही पायी। बापू किनारा कर गये। तब अलग टाट-पट्टी पर बैठने और सबके बाद पानी पीने की बात समझ मे आयी थी। तब आठवी पास छत्तीस जातों में नही था···बापू ने जबरदस्ती न पढ़ाया होता तो यह नौकरी भी न मिली होती।

सुपरवाइजरी भी छोटी-मोटी अफसरी ही है। इसी नौकरी के सहारे सारी खाई-खन्दक पार कर आये। अनुकूल अभी घबरा रहा है। जब पहुँच जायेगा तो सँभल जायेगा। ये बच्चे अभी नही समझते। कुएँ मे पड़े हो और बाहर निकलना है तो सीधी दीवार पर चढना होगा। चोट-चपेट भूलनी होगी। अपने को ही निकलना हो तो भी बात है···वहाँ फँसे अपने भाई-बन्धुओ को भी निकालना है।

बावनराम ने उसे उसी दृष्टिकोण से बार-बार समझाया। अनुकूल समझा भी। उसके दिमाग में सुरसा का फैला हुआ मुँह रात-दिन फैलता जा रहा था। उस मुँह मे उसे अपने जैसे सैकडो-हजारो कुचले हुए, दाढो से चिपके या लटके नजर आते थे। वह उससे बाहर निकलना चाहता था।

बावनराम उस मुख से निकलने मे उसकी अपने ढग से सहायता कर रहे थे।

एक लम्बे इन्तजार के बाद···आई आई. टी. में प्रवेश मिलने की सूचना आयी। वह इतनी मन्थर-मन्थर आयी थी कि इस बीच बावनराम लगभग हताश हो चुके थे। चौधरी साहब और कृष्णन साहब को चिट्ठियाँ और तार दे-देकर वे इस नतीजे पर पहुँच चुके थे कि उन बातो के पीछे वे स्वयं नही थे, केवल उनकी जबानी लपा-लपी थी। एक बार उन्होंने डाकखाने जाकर चौधरी साहब को फोन भी मिलाया था। चौधरी साहब बोले भी थे। लेकिन फोन पर उनकी बात अव्वल तो सुनायी ही नही पडी थी और थोडी-बहुत जितनी सुनायी भी पडी थी वह समझ नही आयी थी। उसके बाद से उन्होंने आई. आई. टी. मे बेटे के प्रवेश पाने की आशा त्याग दी थी। अनुकूल भी एक तरफ हुआ-सा महसूस करने लगा था। नयी परिस्थितियाँ कभी-कभी उसे इतना डराने लगती थी कि वह ईश्वर मे हाथ जोडकर प्रार्थना करने लगता था कि उसे नयी परिस्थितियो की इस भयावहता से बचाये।

जब प्रवेश की सूचना आयी तो बावनराम गगा नहाये सो तो नहाये ही, अन्धकार मे खोये हुए उनके दोनो नयन भी वापिस लौट आये। अब वे नये वर्तमान के साथ वह सब भी देख रहे थे जो पहले उनकी दृष्टि से निकलकर अन्धकार की नजर हो गया था। अनुकूल अब क्या-से-क्या हो जायेगा। कहाँ-से-कहाँ पहुँच जायेगा। फैक्ट्री के चीफ इन्जीनियर एक हाथ से गाडी चलाया करते हैं···अनुकूल भी चलायेगा और उनसे अच्छी चलायेगा। फिर वे कल्पना करने लगे—उसकी शादी एक लम्बी, सुन्दर··· गिटपिट अग्रेजी बोलनेवाली, बालकटी···नही, लम्बे और खुले बालोंवाली लड़की से हो गयी है। ऐसी लडकी जो सवर्णो की लड़कियो को मात करती है। उसके बच्चे हुए हैं तो क्या के सुन्दर! अनुकूल घर से बाहर निकल रहा है···लोग झुककर सलाम करते हैं। 'हुजूर', 'सरकार,' कहते मुँह नही थकता। वह प्रेम से सबकी सुनता है, आश्वासन देता है। उसकी पत्नी सदा बावनराम को धन्यवाद देती है··· यह आप ही की सूझ-बूझ थी कि ये यहाँ तक पहुँच गये। बहू-बेटा उन्हें कही भी बिना गाडी के नही जाने देते। जरा भी कहीं जाना होता है तो ड्राइवर गाड़ी लेकर मौजूद रहता है। बावनराम पहले हँसते हैं, फिर अपने आपको ही हँसते हुए पकड लेते हैं। पकड लिये जाने पर मामला गम्भीर हो जाता है।

अनुकूल पर इस बात की भिन्न प्रतिक्रिया हुई। वह और गम्भीर हो गया। उसकी आँखों में एक तरह का तनाव रहने लगा था। हालांकि साथ के लड़कों को हसरत से अपनी तरफ देखते हुए पाकर, गम्भीर रहते हुए भी, वह अपने को थोडा भिन्न महसूस करता था। दूसरे लडके उस पर टीका-टिप्पणी भी करते थे। वह बिना कुछ बोले निकल जाता था। पर टिप्पणी तो टिप्पणी ही होती है। बिना अपना असर किये नहीं छोड़ती। उन टिप्पणियों का उस पर असर होता था। एक-दो लडको ने तो उसे चाय पर आमन्त्रित किया। चाय पिलाकर बोले, "यार अनुकूल, इस जन्म में तो आशा नहीं कि हमारा कुछ हो पायेगा ''अगले जन्म के लिए तू भी प्रार्थना कर कि हमे भी तेरी तरह ही, तेरे जैसे घर में जन्म मिले। जो तूने इस जन्म मे पाया वह कम-से-कम हम अगले जन्म मे तो पा जायें।"

दूसरा बोला, "भैया, यह सब अनुकूल के पुण्य कर्मों का फल है कि ऐसे पिता के घर, ऐसी जाति मे जन्म लिया कि सबकुछ पका-पकाया मिल गया। हमने तो अपना जन्म यूँ ही गँवाया। पीसते ही पीसते कट जायेगी, पकाने का मौका ही नहीं आयेगा। पता नहीं कौन से पाप किये जो यहाँ पैदा हुए···"

अनुकूल चुपचाप उठा और चला गया···भगवान करे तुम लोगों को ऐसा जन्म कभी न मिले जैसा मैंने पाया। वह उन लडकों का ठहाका सुनता था और चुप लगा जाता था। कुछ लोग वाकई दिल से बधाई देते थे। उनकी आँखों मे उनका दिल होता था। ऐसे कम ही थे। स्कूल के एक मास्टरजी ने उससे कहा था कि जीवन में अच्छे अवसर मुश्किल से आते हैं। जो समय पर पकड़ सके वही भाग्यवान। उसे यह सोचकर अच्छा लगता था कि वह उसे पकडने मे सफल हो गया। फिर उसकी आँखों मे बावनराम घूम जाते। अगर उन्होंने भाग-दौड़ न की होती तो कहीं कुछ न हुआ होता। लेकिन अगले क्षण ही नये माहौल की परिकल्पना करने लगता। वहाँ क्या होगा? और धीरे-से उसी मे गहरे उतर जाता।

माँ की अजीब स्थिति थी। वह समझ नहीं पा रही थी, सुखी हो या दुखी। दुखी होना उसकी भावनाओं के ज्यादा नजदीक था। वह कदापि नहीं चाहती थी कि उसका बेटा उससे दूर किसी अनजान जगह मे जा बसे। दो-चार दिन के लिए नहीं, सालों के लिए। गया आदमी तो गया हुआ ही होता है। जब भी वह सामने आता तो वह आँख भर लाती और यही कहती, "बेटा, तू ना जा, तेरा मुँह देख-देखकर ही तो दिन काट रही हूँ। बहुत बडा होकर भी आदमी बेगाना हो जाता है। ऐसा बडा हुए से क्या कि आदमी अपनों का भी न रहे। बस इस बात का डर लगता है, बहनें तो अपने घर-बाहर की हो गयीं···तू ही है जिस पर आँख टिकी है ''कहीं तू भी बेगाना न हो जाय!" अनुकूल बडे पशोपेश में पड जाता था। उसका मन होता कि वह माँ से लिपट जाये और उससे कहे कि माँ, तू मुझे मत जाने दे, रोक ले। पर बापू? बापू एक इमारत तामीर कर रहे हैं···मैं गिरा दूँ? इस सवाल के बाद वह चुप लगा जाता।

बिरादरी मे यह खबर कि बावनराम का बेटा आई. आई. टी. मे ले लिया गया''बवण्डर की तरह फैल गयी। ऐसा लग रहा था कि बावनराम का बेटा भी उसी तरह पढ़ने जा रहा है जैसे पहले बड़े आदमियों के लड़के विलायत पढ़ने जाते

थे। वे लोग बावनराम को बधाई-पर-बधाई पहुँचा रहे थे। ऐसे लोग भी बधाई देने आये थे जो नाक से भी ऊँचे थे और मान से भी। बावनराम को अनुभव हो रहा था कि उन्होंने अपने पुण्य की कमायी इसी दिन के लिए रख छोड़ी थी। जब दाखले पर यह हाल है·· अनुकूल पढ़ाई खत्म करके आयेगा तो क्या होगा! हो सकता है मालिक लोग ही कार लेकर चले आयें। अगर वे लोग आ गये तो वह उन्हें कहाँ उठायेगा, कहाँ बैठायेगा। बड़े आदमी तो हैं ही, मालिक भी हैं। उनकी इधर-उधर नजर जाती है। फिर ख्याल आता, अरे अभी तो वनवास के चौदह साल हैं! जब राम आयेंगे तब तक क्या यह वही अयोध्या रहेगी? फिर वे अनुकूल के बारे में सोचना चालू कर देते। अनुकूल किसी जन्म की पहुँची हुई आत्मा है। किसी कारण पथ-भ्रष्ट होकर यहाँ आ गयी। बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों तक के साथ यही होता था। तपस्या भंग हो जाती थी। दोबारा जन्म लेकर भुगतान भुगताना पड़ता था। अनुकूल के साथ भी यही हुआ होगा। कुछ भी कहो, सब भगवान का किया है, नहीं तो हम किस करम के थे। अब देखो चौधरी साहब ही हैं···टेलीफोन तक पर बात नहीं हो पायी थी। पर भले आदमी थे···समझते थे कि बावनराम ने हमारे लिए क्या नहीं किया, इसलिए जुट गये। कराकर ही माने। कृष्णन साहब ने भी अपनी बात रखी।

दो-चार विरादरी के बड़े आदमी भी चक्कर लगा गये थे। दबी जबान में संकेत भी कर गये थे। जब से सुना कि बावनराम का बेटा इन्जीनियरी की पढ़ाई करने जा रहा है तो सिर का बोझा-सा उतर गया। सीना फूल आया कि बेटा हो तो ऐसा हो। बावनराम चिन्ता मत करना, पैसे की वजह से अनुकूल बाबू की पढ़ाई में कोताही न होने पाये, हाँऽऽ!

इस सबके बीच अनुकूल अकेला पड़ गया था। कोई उसे गले लगाता। कोई उसका हाथ पकड़कर हिलाता। घर पर आने के लिए आमन्त्रित किया जाता। उसकी समझ में बिल्कुल नहीं आता कि यह सब क्या हो रहा है और क्यों हो रहा है। बावनराम इन्हीं बातों से खुश थे। हालाँकि रोज थककर चकनाचूर हो जाते थे। या इस स्तर की खुशी से उनका इससे पूर्व कभी साक्षात्कार नहीं हुआ था। वे बैठे-बैठे अनुभव करने लगते थे कि उनके घर की कुर्सी ऊँचे उठ रही है। थोड़ी देर बाद उनका घर 'क्लिफ टॉप' के समकक्ष महसूस होने लगता। इस बात को सोच-सोचकर वे प्रसन्न होते कि सारे बिरादरीवाले नीचे से उन्हें देख रहे होंगे···उन तक पहुँचने के लिए उनमें होड़ लगी होगी···।

अनुकूल के जाने का वक्त ज्यूँ-ज्यूँ नजदीक आता गया वैसे-ही-वैसे तैयारियों का सिलसिला तेज होता गया। चादरें खरीदकर लायी गयीं। गिलाफ बने। कमीजें और पतलूनें सिलीं। पट्टे के जाँघियों की जगह बाजार से इस्टरलोक जाँघिये खरीदे गये। उनमें उसे बेचैनी महसूस होती थी। जाँघिये की पट्टियाँ सब तरफ से दबाती थीं। दबाती क्या थीं, गड़ती थीं! उतना सहज मामला नहीं रहा था जितना घर का सिला जाँघिया पहनकर लगता था। एक होलडोल और चमड़े की अटैची भी खरीदकर लायी गयी। चप्पल और जूते भी नये ही लिये गये।

इस सब तामझाम के साथ बावनराम स्वयं उसे छोड़ने जाना चाहते थे। अनुकूल को बाबू का छोड़ने जाना बिल्कुल समझ में नहीं आ रहा था। पता नहीं वहाँ कौन कैसा व्यवहार करने लगे? किसी ने बाबू को कुछ कह ही दिया तो उसका मन और उचाट हो जायेगा। आखिर हम लोगों में किसकी नजरें साफ हैं? हम लोगों के सन्दर्भ में सबकी नजरें एक ही जगह टिक जाती हैं! कौन क्या है?

इत्तफाक से जाने के पहले दिन एक विवरण-पत्र मिला। उसमें पूरा विवरण दिया था। स्टेशन से आप कैम्पस कैसे पहुंचेंगे? स्टेशन के कैण्ट-साइडवाले प्लेटफार्म पर उतरें। बाहर फलां-फलां नम्बर की बसों में से जो भी बस मिले उसी में बैठ जायें। स्टूडेण्ट-वालिण्टियर को अपना नाम बतायें। वह आपको बस से कैम्पस पहुँचवाने का प्रबन्ध करेगा। वालिण्टियर ही आपको हॉस्टल और रूम-नम्बर बतायेगा। हॉस्टिलों की संख्या और हॉस्टिल में गाइड करनेवाले स्टूडेण्ट-वालिण्टियर्स के नाम भी लिखे थे।

उसके बाद मौसम और उसके अनुसार लाये जानेवाले कपड़ों का उल्लेख था। पहले सेमिस्टर की शुरुआत वर्षा की सम्भावना से भरपूर होती है। जाड़ों के कपड़े पूजा की छुट्टियों में लाये जा सकते हैं। जो लड़के दूर रहते हैं और बार-बार घर नहीं जा सकते वे अपने कपड़े साथ ही ले आयें तो उनके लिए सुविधाजनक रहेगा। कमरों में संस्थान की ओर से पंखे लगे हैं। टेबिल-फैन साथ लाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। उसके बाद फीस का ब्यौरा था। छात्रों के रजिस्ट्रेशन के समय उन्हें कितनी फीस जमा करनी होती है। लेकिन अनुसूचित जाति और जनजाति के छात्रों के लिए छूट का भी उल्लेख था। एक पाद-टिप्पणी के रूप में इस बात का उल्लेख भी किया गया था कि इस वर्ग के छात्रों को डेढ़ सौ रुपया प्रतिमाह सम्बन्धित प्रदेश सरकारों और भारत सरकार द्वारा संयुक्त रूप से वजीफे के रूप में दिया जाता है।

इस सूचना ने बावनराम के सिर का आधा बोझ हल्का कर दिया था। शेष प्रबन्ध तो वे कर ही देंगे। कर्जा भी मिल सकता है और भविष्यनिधि में मिलनेवाले रुपये से भी वे इसका पूरा पाट सकते हैं। मौका देखकर अनुकूल ने अपनी बात कही, "बाबू, इस पत्रक में सम्पूर्ण सूचना संकलित है···आप छोड़ने जायेंगे, परेशानी तो जो होगी सो होगी ही···पैसा भी खर्च होगा। इससे पता चलता है कि उन्होंने पूरा इन्तजाम किया हुआ है···वहाँ पहुँचकर किसी तरह की कोई परेशानी नहीं होगी। वैसे भी इस पत्रक में इस बात का कहीं उल्लेख नहीं कि छात्रों के साथ आनेवाले अभिभावकों के ठहरने और लाने-ले जाने का भी प्रबन्ध है या नहीं। लगता है कि वे लोग चाहते हैं कि छात्र अकेले पहुँचें। अगर आप कहें तो मैं अकेला ही चला जाऊँ···परेशानी हुई तो मैं चिट्ठी लिखकर आपको बुला लूँगा।" रुककर बोला, "मुझे अकेला ही जाने दीजिए···बाबू!"

बावनराम का चेहरा उतर गया। जितना उत्साह इस बीच एकत्रित हुआ था वह गुब्बारे की हवा की तरह धीरे-धीरे रिस गया। पहली बार अनुकूल के बारे में लगा कि वह उन्हें काटना चाह रहा है। बस में से धक्का थोड़े ही दे देते। वहाँ नहीं ठहरने देते तो किसी धर्मशाला में जा टिकते। वे अपनी आँखों में अनुकूल को आई.

आई. टी. मे जाते, पढते देखना चाहते थे। वे उसे बताते कि हॉस्टिल में किस प्रकार रहेगा। इससे उनको सकून मिलता। वे उन लड़को को भी अपनी आँखो से देखना चाहते थे जिनके बारे मे वे सुनते चले आ रहे थे कि किसी साधारण छात्र के लिए उनकी बराबरी कर पाना बड़ी भारी हिम्मत और अक्ल का काम है। वे यही जानने के लिए परेशान थे कि ऐसे लड़के आखिर कितने भिन्न और अनोखे होते हैं! उनमे वह क्या चीज है जो उनके बेटे मे नही है? लेकिन उन्होंने बिना कुछ कहे अनुकूल के साथ न जाने का निर्णय ले लिया।

उस समय तो वे खामोश ही रहे थे। लेकिन अगले दिन सवेरे स्वय ही अनुकूल के पास जाकर बोले, "तुम ठीक कहते हो भैया'' सब इन्तजाम तो है ही। मैं ही वहाँ जाकर क्या कर लूंगा। वहाँ से बस मे बैठकर तुम चले जाना।" रोकते-रोकते भी उनके मुँह से निकल गया, "अगर मैं चला भी चलूँ तो बेपढ़ा-लिखा, गाँव का आदमी'''अपने साथ-साथ तुम्हे मेरी भी चिन्ता करनी पड़ेगी। वैसे भी मैं वहाँ इतने पढ़े-लिखो के बीच जाता क्या अच्छा लगूंगा?"

अनुकूल उनकी बात से आहत हो उठा। उसकी आँखें भर आयी। लेकिन बोला कुछ नही। बावनराम को भी कहने के बाद पछतावा हुआ। उन्हे ऐसी बात कहकर अनुकूल का मन नही दुखाना चाहिए था। उसने भी कुछ सोचा-समझा ही होगा।

अनुकूल चला गया था। बावनराम के दिल मे अपने संवाद का आखरी वाक्य और उसकी दो भरी हुई आँखें बहुत गहरे पैठ गयी थी। एक ही बात रात-दिन सालती थी कि ऐसी बात कहकर उन्होंने उसका दिल क्यो दुखा दिया! स्टेशन पर भी उसकी आँखें जल-भरी कटोरियो की तरह थरथराती रही थी। लेकिन जब तक गाड़ी चली नही उसकी पलकों ने उन्हे बहने नही दिया। थामे रही। गाड़ी के चलते ही झटके से या स्वभावत ही वे ढलक गये थे। बावनराम को अपने आपको समेटने मे अन्दर-ही-अन्दर निरन्तर होने भावात्मक फैलाव का सामना करना पड़ रहा था।

अनुकूल की माँ भी बाढ़ की तरह उफनी नदी थी। लेकिन जल्दी ही उतार आ गया था। बहाव ऊपर से पूर्ववत हो गया था। कभी-कभी यही-वही बुलबुले उठते थे या सर्री-सी फूटती थी, लेकिन गति फिर सामान्य हो जाती थी। शायद माँ की सादृश्यता यहीं होती है। वह अपने से तो अन्दर-ही-अन्दर बात करती रहती थी, पर बाहर अनुकूल का जिक्र इतना कम करती थी कि उसकी बातो से यह समझना कठिन था कि अनुकूल कभी यहाँ रहता था और अब चला गया।

बावनराम के सामने यह प्रश्न निरन्तर रहता था कि उन्होंने अनुकूल को भेजकर गलती तो नहीं की। इस प्रश्न के उठते ही बहुत-सी बातें उठने लगती थीं। कहीं कुछ हो गया तो? जो कुछ होगा वह सारे परिवार की ही नियति हो जायेगा। उसके दोषी वे खुद ही होंगे। यही कहा जायेगा, अनुकूल तो बच्चा था लेकिन बावनराम ने तो दुनिया देखी थी। लड़के का मोह न देखकर, ऊपर उठता हुआ अपना घर देखा। यहाँ से घर को ले जाकर 'क्लिफ टॉप' पर रख देना चाहते थे। बेटे को कुर्बान कर डाला। यह सोचते-सोचते उनका छाती पीटने को मन कर आता

था। लेकिन फिर एकाएक ध्यान आता था कि अरे, अनुकूल तो सही-सलामत है। पढ़ने गया है। फिर यह बदशकुनी क्यों हो रही है? बच्चे की सलामती के लिए क्या कोसना जरूरी होता है? फिर धीरे-धीरे वे सब सवाल अपने आप मे एक-एक अनुकूल होते जाते। अनुकूल की दाढ़ी बढ़ी है। अनुकूल बारिश में भीग रहा है। लड़के उसे अन्दर नहीं घुसने दे रहे। अनुकूल बाबू को पुकार रहा है। अनुकूल धक्का-मुक्की मे गिर गया। उसके सिर से खून बह रहा है। लडके उसके खून पर हँस रहे हैं''' अरे, इससे दूर रहो, यह अनुकूल का खून है। बावनराम को अपने पिता की याद आ जाती। उन्होंने उन्हे, पिता को धक्के की मार से गिरते, सिर से खून का फुव्वारा छूटते देखा था। जब वे 'बाबू-बाबू' कहकर उनसे लिपटने लगे थे तो उनको धकेल दिया गया था। बच्चे को धकेलकर वे लोग खूब जोर-जोर मे हँसे थे। फिर माँ को घर से बुलाकर बाबू का वह खून धुलवाया गया था। माँ रोती गयी थी और धोती गयी थी। एकाएक वही हँसी उन्हें अनुकूल के सन्दर्भ मे सुनायी पडने लगी थी जो बच्चे के रूप में उन्हें तब सुनायी पड़ी थी। वे सब उन्ही लोगो मे से ही तो कुछ लोगों के बच्चे नही? वे भी सब क्या उतने ही जालिम और खूनी है? वे आँखें बन्द कर लेते और अपने अन्दर उस सबको देखते-देखते सिसक पड़ते। मेरा बच्चा! लेकिन फिर उन्हें ध्यान आता, अनुकूल आई. आई. टी. में इन्जीनियरी पढने गया है। वह इंजीनियर बनकर आयेगा। वह यह साबित कर देगा कि हम लोगो के बच्चे भी घृणा की इस आग से निकलकर सही-सलामत बाहर आ सकते हैं। उन्हें लगा, कोई फुसफुसा रहा है'''अगर ऐसा न हुआ? घृणा की आग मे जल गया? उन्होने इधर-उधर देखा, वहाँ कोई नही था। उन्हें लगा, वह कोई बाहरी चीज थी। बाहरी सवालो का जवाब खोजना जरूरी नही होता। बावनराम को फिर वैसी ही-सी फुसफुसाहट महसूस हुई'''जरूरी है'''और होता है। उनका चेहरा उतर जाता। अगर है तो इसका कोई जवाब नही'''। यह प्रश्न प्रश्न ही बना रह गया तो सब ो ख़ा जायेगा। वे उद्विग्न हो उठते।

कई बार ऐसा होता कि बावनराम सोते-सोते जग उठते। अनुकूल उन्हें खिड़की के पास चुपचाप खड़ा दिखायी पड़ता। वह खून पोछता हुआ उनकी तरफ देखता रहता। अच्छी तरह देखते तो वहाँ कोई न होता। बूँद-बूँद रक्त टपकता होता। वे सिसक-सिसककर रोने लगते। जब उनकी पत्नी उन्हे हिलाकर जगाती तो उन्हें पता चलता'''। पत्नी बार-बार पूछती, "यह तुम्हे क्या होता जा रहा है'''? तुम तो औरतो से भी बदतर हो गये। बेटा इतना ही प्यारा था तो भेजा क्यों? मैं तो पहले ही जानती थी, अनुकूल के बिना यह घर भाड़ की तरह हमारे दाने-से भूनेगा। लोग अपने बच्चों को लाम तक पर भेज देते हैं, हमने तो पढ़ने को ही भेजा है!"

"भेजा तो है'''लेकिन पता नही गलत किया या सही? तुम भी भेजना नहीं चाहती थीं। पता नही अनुकूल जाना चाहता था या नही? मैंने अपनी बात रखने के मारे किसी की भी मर्जी का ख्याल नही किया।'''पता नही उसके साथ कौन कैसा बर्ताव करे?"

"तुमने भेजा है तो उसकी भलाई सोचकर ही भेजा होगा। बाप हो न कि

दुश्मन। राजा दशरथ ने तो बेटा-बहू को वनवास दे दिया था। हँसते-हँसते चले गये थे। बाप की तो मारी मार भी गुन करती है। इस बात को यूँ क्यों नहीं समझते कि नाल कटने तक बच्चा माँ का। नाल कटते ही जग-भर का। तुम समझो अनुकूल की नाल अब घर से भी कट गयी, अब वह सारे जग का हो गया !"

बावनराम पहले चुप रहे फिर बोले, "कहती तो तुम ठीक हो ' पर अन्दर-ही-अन्दर कुछ खदबदाता रहता है। यही लगता है कि बिसात के बाहर खेल-खेल बैठा हूँ'''उसी का उबाल गिर-गिरकर जगह-जगह पर जला रहा है।"

बावनराम को जब नींद न आती तो उनकी पत्नी उनके सिर में तेल ठोकती। तेल ठोकती जाती और समझाती जाती, "तब तुम मुझे समझाते थे'''अनुकूल बड़ा आदमी बनने के लिए पैदा हुआ है। वो नाम करेगा ''सुगन्धी को बन्द करके नी रखा जा सकता। मैं तो मान गयी कि जो तुम कहते हो ठीक ही कहते हो'''पर लगता है तुम नहीं माने। तुम इधर दुखी तो वो उधर दुखी। दुख एक ही कोने पर नहीं टिकता, दोनों कोने दबाता है। माँ-बाप का अन्त:करण औलाद से जुड़ा रहता है। यहाँ लावा उठेगा तो वहाँ आग लगेगी'''यहाँ आग लगेगी तो वहाँ लावा उठेगा। बच्चे भी पितर ही होवे। जो दोगे वो ही पहुँचेगा। दुख दोगे दुख पहुँचेगा, सुख दोगे सुख पहुँचेगा।" बावनराम पत्नी की बात बड़े ध्यान से सुनते'''सुनते-सुनते सो जाते।

बावनराम को सुलाने के बाद अनुकूल की माँ देर तक आँखें खोले आसमान निहारती रहती। चाँद-सितारे होते तो उसे अच्छा लगता। अनुकूल उसे चाँद के बीचोंबीच बैठा मेमना-सा लगता। फिर वह तारों-तारों दौड़ने लगता। बादल आते तो वह परेशान हो जाती। उसका अनुकूल न चाँद में दिखायी देता और न तारों में। उसका मन होता कि वह अनुकूल के बापू को झकझोर के कहे कि अभी तो अनुकूल चाँद-तारों के साथ खेल रहा था'''पता नहीं खेलता-खेलता कहाँ निकल गया। कहीं बादलों की रेल-पेल में रल तो नहीं गया। जरा ढूँढकर लाओ। बादल चले जाते तो चाँद और तारे बच्चे बने फिर अनुकूल के साथ-साथ खेलते नजर आने लगते। धीरे-धीरे वे सब तारे और एक-दूसरे में समाते जाते और देखते-देखते अनुकूल बन जाते। उसमें अनन्त प्रकाश निसृत हो रहा होता। वह और उसके बापू उस प्रकाश के झरने में खूब नहाते। नहाने की बात सोचते-सोचते वह सोचने लगती कि सवेरे उठकर वह अनुकूल के बापू को बतायेगी। जब अनुकूल आयेगा तो अनुकूल से कहेगी। अनुकूल खूब हँसेगा और कहेगा—माँ, तू तो पागल हो गयी। भला चाँद-सितारों में मैं क्या करने जाऊँगा ! जाऊँगा भी तो तू मुझे जाने थोड़े ही देगी'''रो-रोकर घर भर देगी। वह मुस्कुराते-ही-मुस्कुराते सो जाती।

जब तक अनुकूल की चिट्ठी नहीं आयी घर के कोने-कोने में उसकी अनुपस्थिति बर्फ की तरह जमी रही। अनुकूल की चिट्ठी आते ही जैसे अनुकूल आ गया। जगह-जगह उसकी मौजूदगी नजर आने लगी। भाग-दौड़-सी मच गयी। बावनराम ने तो चिट्ठी को आते ही पढ़ लिया। इसलिए उनकी आँखें और खुशी एक हो गये थे।

तत्पश्चात घर-भर को बैठाकर सत्यनारायण की कथा कहने के भाव से बावनराम ने उस चिट्ठी को बाँचा। पढ़ते-पढ़ते कभी-कभी बावनराम बीच-बीच में भाव-विगलित होकर चुप लगा जाते थे और कभी सुननेवाले की आँखें आपा बिसारकर धारो-धार बरसने लगती थी।

चिट्ठी उसने बाबू और माँ को संयुक्त रूप से सम्बोधित की थी —

पूज्य माँ और बाबू,

मुझे चिट्ठी लिखने में थोडी देर हो गयी। आप लोग सोच रहे होंगे कि अनुकूल कितना गैर जिम्मेदार है···!

बावनराम ने तो···तो···की और बुदबुदाये··'बावला है, कहीं ऐसा लिखा जाता है! धोती के किनारे से आँखें पोछकर फिर पढ़ना शुरू कर दिया---

···जब मैं स्टेशन पर उतरा तो डिब्बे के सामने ही बेंच थी। उतरकर उसी पर बैठ गया। तब तक बैठा रहा जब तक गाडी चली नहीं गयी। दिमाग में तरह-तरह के ख्याल आते और जाते रहे। अगर बस न मिली? किसी ने बस में चढ़ने ही नहीं दिया, धकेल ही दिया? मार-पीटकर कोई सामान ही छीन लिया? कभी-कभी मुझे ये घटनाएँ घटती हुई-सी महसूस होने लगती थीं। उस समय मैंने सोचा, अगर बाबू साथ हुए होते तो कितनी हिम्मत रहती···!

बावनराम पर रोके नहीं रुका गया। वे सिसक पड़े। माँ तो रोये ही जा रही थी। बहनों ने तो बिल्कुल मोहर्रम के दिनों का मर्सियाख्वानी वाला दृश्य उत्पन्न कर दिया। बहनोई अपेक्षाकृत सन्तुलित थे। वे इतना ही बोले, "बच्चा ही तो है··· पहली बार घर से निकला है···!" बावनराम सँभल गये और फिर पढ़ना शुरू कर दिया--

···गाड़ी के छूट जाने के बाद मेरी नजर सामनेवाले प्लेटफार्म पर गयी। कपड़े की झण्डी पर अंग्रेजी में लिखा था— आई. आई. टी. में प्रवेश पानेवाले नये छात्र यहाँ सम्पर्क करें। मैंने सोचा, सामान लादकर उस प्लेटफार्म पर चला चलता हूँ। लेकिन फिर ख्याल आया कि सामान उठाकर स्वयं ले चलने में कहीं मजाक का कारण न बन जाऊँ। इसलिए कुली से उठवाकर उस प्लेटफार्म पर ले गया। हालाँकि मन को लगा भी कि अगर पैसा इसी तरह खर्च करता रहा तो···बेकार इस लोक-दिखावे के चक्कर में अपने को फिजूलखर्ची का शिकार बना बैठूँगा! खैर, वहाँ दो लड़के थे। उनके पास आनेवाले नये लड़कों की सूची थी। वे अंग्रेजी में ही बोलते थे। अंग्रेजी के सिवाय कुछ नहीं बोलते थे। लेकिन मैं उनसे हिन्दी में ही बोला। हालाँकि मुझे लगा भी कि कहीं वे अंग्रेजी के अलावा कोई और भाषा समझते ही न हों। मैंने सोचा कि हिन्दुस्तानी होने की यह कोई शर्त थोड़े ही है कि हिन्दुस्तानी भाषा बोलनेवाला ही हिन्दुस्तानी होता है। इसलिए वे मेरी बात न भी समझें तो कोई बात नहीं! लेकिन वे समझ गये। पर उन्होंने मुझसे अंग्रेजी में ही सवाल किया कि आपका ऑल इण्डिया रैंक क्या है? मैं समझा नहीं। पसीना आ गया। उन्होंने फिर पूछा। तब भी मैं नहीं समझा। समझता कैसे···इम्तहान तो दिया ही नहीं था। रैंक उन्हीं को मिलता है जो इम्तहान के जरिये आते हैं।

दूसरे लड़के ने अपने आप ही अंग्रेजी मे पूछा, "आप क्या एस. सी. एस. टी. कोटा से आये हैं ?" एक क्षण को तो मुझे लगा कि इस सवाल का जवाब दिये बिना ही वापिस लौट जाऊँ। नही तो यही सवाल रोज-रोज पूछा जायेगा। लेकिन फिर सोचा, अपनी वास्तविकता से भागना गलत होगा। गर्दन हिलाकर हाँ कर दी। पहलेवाले लडके ने हल्का-सा 'ओह' किया और होंठ के नीचे होंठ दबाकर कागज छाँटने मे लग गया। दूसरे लड़के ने कहा, "माफ कीजिए··· हमें मालूम नही। दरअसल यह किस्सा इसी साल से शुरू हुआ है। पहले सभी जे. ई. ई (ज्वाइण्ट एण्टेरेंस एक्जामिनेशन) के माध्यम से आते थे। एनी वे' 'फिर वोला—आप प्लेटफार्म के बाहर चले जायें। दहिनी तरफ बस खड़ी होगी, जाकर उसी में बैठ जायें। बाहर वालिण्टियर होगा। उसे बता दीजिए कि आप रिजर्व कोटा से आये है। उसे नाम खोजने मे आसानी हो जायेगी। आखिरी वाक्य वे लोग हिन्दी मे ही बोले।

मुझे यही लगा कि अपनी मेहनत से आये होते तो यह सब न भोगना पडा होता। यहाँ जो भी मिलता है वही ऑल इण्डिया रैंक पूछता है। या तो चुप लगा जाते हैं या सच बताना पड़ता है। वे लोग हँसकर अंग्रेजी मे तत्काल कहते हैं—ओ, वी. वी. आई. पी. यानी अत्यधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति। कुछ विदेशी छात्र भी आये हैं। उन्हें भी टेस्ट नही देना पडा। उनसे कोई इस तरह की बात नही करता। वे फटाफट अंग्रेजी जो बोलते हैं। उनमे कुछ तो हम लोगो से भी ज्यादा काले हैं। वैसे यहाँ की छुआछूत वैसी नही जैसी चौधरी साहब के घर पर देखने को मिली थी। न कोई बाथरूम धोने को कहता है और न बाहर सोने के लिए। उस घटना को सोचकर तो मेरे अभी भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। दूसरे वर्ग के लड़के हम लोगों से कम बोलते है। बात करते हैं तो इतनी ही···आपको बहुत मेहनत करनी पड़ेगी। बहुत मुश्किल कोर्स है। कोर कोर्स तो हम लोगो तक की जान निकाल लेता है। आप लोगो को इस परेशानी मे डालकर सरकार ने ठीक नही किया। यह बात विदेशी छात्रों को भी सुनायी जाती है। लेकिन कम !

विदेशी छात्रों के कमरे एक साथ हैं और हम लोगो के कमरे भी एक ही विंग मे हैं। अपन लोगों की भी एक बात मुझे बहुत बुरी लगती है। हम लोगो मे भी आपस मे वही भावना है जो एस. सी. और नॉन एस सी. छात्रों के बीच रहती है। एक वाल्मिकी लड़का है। उसे कोई अपने साथ रखने को तैयार नही था। मैंने उसे अपना रूम-पार्टनर बना लिया। अपनों मे ही से बाकी लडको ने मेरा नाम गाँधीजी रख दिया···। चलो अच्छा है · काम से तो नही हो सकते, नाम से ही सही !

माँ बीच ही मे बोली, "अनुकूल ने यह क्या करा · ? बिरादरीवालो को पता चलेगा तो कोई पास नही पटकेगा। उससे कह दो, कमरा बदल ले।" बावनराम झल्ला पड़े, "चुप भी रहो···आखिर वो भी तो मूरख नही। वो औरो को सहारा नही देगा तो उसे कौन देगा। परदेश मे तो परदेश की तरह ही रहा जाना है···।" वह फौरन बोली, "धरम-करम मे आग लगाने थोड़ी ही भेजा था।" बावनराम

बिना जवाब दिये आगे पढ़ने लगे—

"'इन सब बातो की तरफ ध्यान देकर आप चिन्ता मत कीजियेगा। यहाँ का यही तौर-तरीका है। लेकिन खाना अच्छा है। सवेरे नाश्ते मे एक टिकिया मक्खन, जेली टोस्ट, दो प्याले चाय मिलती है। जो दूध लेना चाहे उसे पैसे देकर दूध भी मिल सकता है। खाने मे चावल, दो सब्जी, दाल, रोटी'''कभी-कभी दही और एक-आध मीठा वगैरह भी देते हैं।

बाबू, कभी-कभी लगता है जैसे समन्दर के किनारे खड़े हों और चारो तरफ से आनेवाली लहरें पैरो को जमने न दे रही हों। मैंने समन्दर देखा तो नही। किताब मे पढा है। नदी की धारा मे तो पाँव जमा लेता हूँ'''इतना जोर समन्दर की लहरो मे ही हो सकता है'''पर मैं समझता हूँ सब ठीक हो जायेगा।

नये लडको की पुराने लडके रैगिंग करते हैं। रैगिंग माने रगडाई। उनका कहना है, इसमे उनकी शर्म खुल जाती है। हम लोगो को ज्यादा तग नही करते। जब पता चलता है कि एस. सी हैं तो एक-दो सवाल पूछा और चल दिये। सोचते होंगे, इन छोटे लोगों के मुँह कौन लगे। एस. सी. होने का अभी तो यही एक फायदा नजर आता है। आपस के लडके कभी-कभी ज्यादती कर बैठते हैं। एक लडके के मुँह तक से खून आ गया था। रामउजागर दादा फोर्थ इयर मे है, उन्होंने सँभाला। वे सबका ख्याल रखते हैं। कहते हैं, बदतमीजी भी मत करो और आत्मसम्मान के मामले पर झुको भी नही। अभी मेरा उनसे ज्यादा परिचय नही। पर दूसरे वर्ग के लोग भी उनसे डरते हैं। हम लोगो में से किसी का सब पर इतना दबदबा हो सकता है, मैंने तो कभी सोचा ही नही था।

यहाँ सबकुछ अंग्रेजी में पढाया जाता है। कृष्णन साहब ठीक कह रहे थे'''अंग्रेजी जानना बहुत जरूरी है। शुरू-शुरू मे थोडी कठिनाई होगी। बाद मे ठीक हो जायेगा। जहाँ तक एस. सी. होने की और दूसरे लडको द्वारा हिकारत की नजर से देखे जाने की बात है, उसके बारे मे सोचना छोड देना पडेगा।

अभी रुपये हैं। देख-भालकर खर्च करता हूँ।

माँ की बहुत याद आती है। माँ को चरणस्पर्श। दोनो दीदी और जीजाजी लोगो को प्रणाम।

वहाँ के हाल लिखियेगा।

आपका बेटा,

अनुकूल।

चिट्ठी पढे जाने के बहुत देर बाद तक अनुकूल वहाँ मौजूद रहा। हालाँकि बाबनराम खुश थे लेकिन उन्हें यह बराबर अनुभव हो रहा था कि अनुकूल ने सब बातें सही-सही नही लिखी। उनका दिल एक बात से पकड़ा गया था। वे निरन्तर यही सोच रहे थे कि कही अनुकूल को ही न मारा-पीटा गया हो। उसी की नाक मे खून न निकला हो। हालाँकि उन्होंने इस बात को मुँह से नही निकाला पर अन्दर-

ही-अन्दर काँटा-सा गडा रहा। सोच-सोचकर पछताते भी रहे। पर दोष दें तो किसे दें? कम-से-कम उन्हें साथ तो जाना ही चाहिए था। उसने मना कर भी दिया था तो ऐसा कौन वह इतना बड़ा था कि उसकी बात मानना जरूरी हो गया! कई बार बच्चों के निर्णय लेने का ढग दूसरा होता है। वहीं बड़ों के दखल की जरूरत पड़ती है।

बहनोई लोग तो काम पर चले गये थे। बहनें रह गयी थीं। घूम-फिरकर वे इसी बात पर आ जाती थीं कि हमारा अनुकूल तो लौकी की गोभ जैसा है। कभी घर से बाहर पैर तक नहीं रखा। वहाँ जालिमों के बीच कैसे रहेगा? वह तो माँगकर भी नहीं खा सकता। किसी ने दे दिया तो खा लेगा नहीं तो भूखा ही बैठा रहेगा। उसने तो कभी जाँघिया तक भी अपने हाथ से नहीं धोया। वो सब काम अपने आप कैसे करेगा? कहीं बड़ी जात के लौंडे उसे तग न करते हों"'उल्टे-सीधे काम न कराते हों। उसके तो मुँह में जबान ही नहीं जो मना भी कर दे। आग लगे इन बड़ी जातवालों के बारदाने में। कमबख्तों को जात-ही-जात नजर आवे, आदमी नजर ही नहीं आता। अरे भगवान ने तुम्हें कौन पिंडोल मिट्टी से बना दिया, जो हमें काली मिट्टी से बनाया है! एक सहारती, दूसरी पूरती। माँ बीच-बीच में टुपुक-से कुछ बोल देती। बावनराम को उनकी बातें अच्छी नहीं लगतीं'''पर वे चुप थे।

माँ अनुकूल के चले जाने के रज से तो जो रंजीदा थी सो थी ही, लेकिन जबसे बावनराम ने वाल्मिकी लड़के को कमरे में रखने की बात पढ़कर सुनायी थी, उसका मन बेचैनी से भर गया था, "क्या इसी दिन के लिए अनुकूल को पाल-पोसकर बड़ा किया था कि वह अगत बिगाड़ दे? जनम-करम में थूक दिया। इन्हें ही लग रही थी इन्जीनियरी पढ़ाऊँ'''इन्जीनियरी पढ़ाऊँ'''लो पढ़ा लो इन्जीनियरी। ना जात का रहा ना धरम का। इन्जीनियर ही इन्जीनियर रह जायेगा। बड़ों की तरफ से तो उसने अपना मूँड ही छिलवा लिया!"

बावनराम ने उसे टोका, "चबर-चबर क्यों किये जा रही है? इस समय तू कौन कम बड़ी जातवाली बनी हुई है। तू भी वही कर रही है'''फिर उन्हें क्यों गाली देती है? रेल में बैठकर नहीं चलती क्या? कौन तेरे लिए डिब्बा रिजर्व होना है। रेल मोटर तो बेजान सवारी है, काहे बैठती है?"

"मैं बताये देती हूँ कि बिना सुद्धि के उसे घर में नहीं घुसने दूँगी'''चाहे प्राण ही क्यों न चले जायें।"

बावनराम बिगड़ गये। उनकी आँखें एकाएक बाहर आ गयीं। पहली बार वे अपनी पत्नी की तरफ लपके। पत्नी सहम गयी। बेटियों ने बड़ी कठिनाई से बाबू को कब्जे में लिया।

"यह क्या हो गया बाबू तुम्हें! भैया के लिए क्या आज माँ पर हाथ उठाओगे'''तुमने तो कभी बच्चों को भी नहीं छुआ।"

"इसने कैसे कहा कि अनुकूल को घर में नहीं घुसने देगी? लड़का ही घर में नहीं घुसेगा तो कौन घुसेगा? यह घर बच्चों का नहीं तो क्या इसका या मेरा है?" बावनराम को बोलते-बोलते फिर किचकिची-सी आयी। वे फिर उफने, "इसने माँ होकर ऐसी बात कैसे कही'''? और लोग तो जो कहते थे सो कहते ही थे, आज इसने

भी कहकर बदशुगनी कर दी।"

माँ हतप्रभ थी। उसकी समझ में ही नही आ रहा था कि बावनराम को यह क्या हो गया? कभी अपने मुँह से 'बे' तक नही कहा था। आज मारने को दौड रहे है। "अब मैं कहाँ जाऊँ?" कहकर वह जोर-जोर से रोने लगी।

बावनराम ने अपनी बेंत उठायी और बाहर निकल गये। धीरे-धीरे वे सामान्य होते जा रहे थे। जैसे-जैसे सामान्य हो रहे थे वैसे-वैसे उन्हें पश्चाताप हो रहा था कि उन्होने अनुकूल की माँ के साथ ऐसा व्यवहार क्यो किया? वह भी जिन्दगी के आखीर के दिनो मे। पता नही कौन कब चला जाय। लेकिन उसने लडके के लिए ऐसा क्यो कहा? वह अनुकूल को सबसे ज्यादा प्यार करती है। मुझ से भी। उसे घुसने न देने की बात नही कहनी चाहिए थी। पता नही कितने पुण्यो का फल था कि वह इस घर मे पैदा हुआ···फिर भी ऐसी बात कह दी। वह तो भगवान की सन्तान है! उसने अपनी सन्तान के लालन-पालन की जिम्मेदारी इस घर के लोगो पर डाल दी। वह चाहता तो किसी और को दे देता। अनुकूल को पता चलेगा तो उसे कैसा लगेगा···?

हर कदम के साथ सोच गहरा होता जा रहा था। उनका मन अनुकूल के पास जाने को रह-रहकर आतुर हो उठता था। हर बार वे अपने को यही कहकर समझाते थे कि किसी तरह उसने अपने को जमाया होगा···उनके जाने से फिर अव्यवस्थित हो जायेगा। जब छोटा था तो कभी जब वे स्कूल चले जाते थे तो अनुकूल बस्ता उठाकर पीछे लग लेता था···लाख समझाने पर भी नही बैठता था। मोह-माया गाद की तरह नीचे बैठी रहती है, जरा-सी हिली नही कि झट से ऊपर आ जाती है! फिर कौन बैठाये? बड़े-बड़े नही बैठा पाते, वह तो बच्चा है।

उन्हें एकाएक पता चला कि वे कस्बे के दूसरे छोर पर पहुँच गये। भट्टे-ही-भट्टे लगे थे। ईंटें पक रही थी। चिमनियों से धुआँ निकल-निकलकर फैल रहा था -बहुत-सी लम्बी खुली चोटियो-सा।

वे वापिस लौट पड़े। लौटते समय थकान और बढती है। उन्होंने सोचा।

तीन

अनुकूल पहुँचने के बहुत दिन बाद तक पत्र नही लिख पाया था। इस बात का उसके मन पर निरन्तर भार बना रहा था। कई दिन तो इसी सोच-विचार मे गुजर गये थे कि वह लिखे तो क्या लिखे? एक तो पहले उसने कभी माँ-बाबू को चिट्ठी नहीं लिखी थी। दूसरे उसे बहुत-सी ऐसी बातें देखने को मिली थीं जो लिखे जाने पर उन लोगो को परेशान ही करती। बहुत सोच-विचार के बाद उसने चिट्ठी लिखी थी। लेकिन चिट्ठी लिखकर डालने के बाद अगले दिन से ही उसे जवाब का इन्तजार शुरू हो गया था। इन्तजार के बारे में उसे बहुत ही मजेदार बात सूझ पड़ी थी कि

इन्तजार सैकेण्ड की सुई की तरह ही एक बार चालू हुआ तो तब तक चलता रहता है जब तक खत्म होने की नौबत नही आ जाती। इसकी कोई अवधि नही। खत्म होने को अब हो जाये, नही तो मुद्दतों न हो। जब इस तरह की बातें सोचा करता था तो उसकी नजर अपने पार्टनर के टाइम पीस पर रहती थी। वह टकाटक-टकाटक एक गति मे चलती रहती थी। अनुकूल इससे बहुत परेशान हो उठता था। वह सोचा करता था, क्या यह हल्के नही चल सकती। अगर इसी रफ्तार से चलती रही तो वक्त का पता नही चलेगा। उसके शरीर मे हड़बड़ाहट-सी भर जाती। हाथ-पाँव फूलने लगते। यह सब कैसे निबटेगा? कब चिट्ठी आयेगी? कब उसे पता चलेगा?

कभी जब कमरे मे अकेला होता तो टाइम पीस को उलटकर रख देता। उस हालत मे उसे महसूस होता, वक्त रुक गया। लेकिन चलते चले जाने की सदा आती रहती! यानी पदचाप! जब कुछ समझ मे नही आता तो वह बाहर निकल आता। सामनेवाला खुला मैदान उसे और ज्यादा खुला लगने लगता। वह उसके बीचो-बीच जा खड़ा होता और महसूस करता कि वह उस मैदान का केन्द्र हो गया है, या उसके केन्द्र मे है। दो-चार बार लम्बी-लम्बी साँस लेता। साँस लेने के साथ उसे अनायास महसूस होता कि वक्त यहाँ से न गुजरकर कही और से गुजर रहा है। लेकिन वह खुद ही अपने कान के पास फुसफुसाने लगता'''नही, यहाँ से भी गुजर रहा है। तुम न उसे गुजरते हुए देख पा रहे हो और न उसकी पदचाप सुन पा रहे हो। इसको घड़ी की सुई के माध्यम से मत समझो'''वह बहुत अपर्याप्त है। उसे उलटकर तुम वक्त को नही उलट सकते। काफी देर बाद जब सोचना बन्द कर देता और शान्त होने की तरफ लौटता तो वह सोचा हुआ उसके अन्दर रिक्ते होने लगता। उसे तब पता चलता कि वह बहुत-सी ऐसी बातें सोच गया है जिनकी पहले कभी कल्पना तक नही की थी'''समझने की बात तो अलग रही।

अन्त मे वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचता कि वह अनावश्यक रूप मे भावुक है। भावुकता मे वह उन बातो को भी खंगोलने लगता है जिनसे उसका कोई सीधा सरोकार नही होता। उसे अपने एक प्रोफेसर की याद याद हो आती। उन्होंने अपने भाषण मे ही इस बात को कहा था कि बच्चे जब माता-पिता से पहली बार अलग होते हैं तो अनावश्यक रूप से भावुक हो जाते हैं। हर बात उनके सोचने का माध्यम होती चली जाती है। ऐसी-ऐसी बातें सोच बैठते हैं जिनकी कल्पना बड़े-से-बड़े कवि भी नही कर पाते। इस सबका कारण परिवर्तन है। मनुष्य की जिन्दगी और सोचने की सामर्थ्य सीमित है। किसी लावल्द की अनायास मिली दौलत की तरह नही है कि उसे यूँ ही उड़ा दिया जाय। इसे सँभालकर रखिए। यही बात वह अपने को समझाने की कोशिश करता था। और एक सीमा तक समझाने मे सफल भी हो जाता था।

इस तरह के सोच-गुचम्बल से पहली बार वह तब मुक्त हुआ था जब उसके बाबू की चिट्ठी आयी थी। हालाँकि उसे चिट्ठी का इतना इन्तजार नही करना पड़ा था, जितना उसने उन्हे कराया था। काफी देर तक वह बाबू की उस चिट्ठी को हाथ मे लिये उलटता-पलटता रहा था। इस बात को सोच-सोचकर वह काफी भावुक हो रहा था कि वह अपने माता-पिता से आज इतनी दूर है कि उनके बीच चिट्ठियाँ ही

एकमात्र सेतु रह गयी हैं। वह पिता के पास जाता था और आ जाता था। चिट्ठी लिखते समय बाबू को कैसा लगा होगा ? बाबू कैसे बैठे होंगे ? अपनी पीतल की दवात में कलम डुबा-डुबाकर कैसे लिखी होगी ? हर डोवे पर उन्हे कलम को छटकना पड़ना होगा। जब तक चिट्ठी लिखकर खत्म की होगी तब तक स्याही की छोटी-छोटी बुँदकियाँ सारे फर्श या दीवार पर छीट गयी होगी। चिट्ठी खत्म करके उस पर बालू छिड़का होगा···जिससे हरुफ सूख जाये। बालू की दवात वे जगदीश साहू के यहां से मँगाया करते थे। अब शायद खुद लेने जाना पड़ा होगा। या फिर कागज को कोने से पकड़कर काफी देर फूंक मार-मारकर सुखाते रहे होंगे। पुछा हुआ गीला शब्द उन्हें बहुत घिनौना लगता है। शब्द के खून होने का-सा आभास देता है। एक शब्द हो तो वे काटकर लिख देते है। कई हो तो वे पूरी चिट्ठी दोबारा लिखते हैं। उसने यह कभी नही सोचा था कि बाबू एक दिन उसे भी इसी तरह चिट्ठी लिखेंगे !

उसने चिट्ठी खोली तो उसे झटका-सा लगा। दवात की रोशनाई मे चिट्ठी न लिखी होकर कलम से लिखी गयी थी। उसे यह लगा, यह हाथ बाबू का नही है। किसी बहुत ज्यादा पढ़े-लिखे आदमी का है। बाबू तो एक-एक शब्द बनाकर लिखते हैं। खुशखत। साफ होते हुए भी यह घसीट है।

बावनराम ने केवल अन्त मे दस्तखत किये हुए थे···बावनराम।

इस बात से वह और भी ज्यादा परेशान हो गया। बाबू ने स्वय क्यो नही लिखी ? दूसरे से क्यो लिखवायी ? बाबू नाराज हैं ? वे तो सरकारी चिट्ठियो का मसौदा दूसरों से बनवाते थे पर लिखते अपने ही हाथ थे। उनका यही कहना था कि हाथ मे लिखी चिट्ठी पढनेवाले के दिल से जाकर जुड़ती है। उसकी भावनाएँ उसमे रहती हैं ना ! उसे चिट्ठी धुँधली-धुँधली दिखायी पड़ने लगी। फिर अच्छी तरह आँखें साफ करके उसने चिट्ठी को पढना शुरू किया। शब्द उसे बाबू के ही लगे। पढते हुए उसे यही लगता रहा कि बाबू ही उसे पढकर सुना रहे हैं···बीच-बीच मे वह रुक जाता था —

प्यारे बेटे अनुकूल,

तुम्हारी माँ तुम्हे रात-दिन याद करती है। कल रात बारिश हुई तो वह उठकर बैठ गयी। रात-भर बैठी रोती रही···पता नही अनुकूल कहाँ होगा ? भीगता तो नही होगा ? ऐसी धुआँधार बरखा मे खाना भी मिल पाया होगा या भूखा ही सोना पड़ा होगा ? पगली है ना। कौन समझाये। उसे मैंने कई बार समझाया कि जहाँ अनुकूल रहता है वह जगह तुम्हारे इस टूटे-फूटे घर से लाख गुना अच्छी है। पर वह तो समझती है कि घर का क्या···आँचल फैला देगी तो सारी बारिश रुक जायेगी। कही ऐसा होता है। माँ की ममता कोई तम्बू थोड़ा ही है···! पर उसे कौन समझाये ?

अनुकूल पढ़ता-पढ़ता रुक गया। थोड़ा ठहरकर फिर पढ़ने लगा—

तुम्हारी चिट्ठी आयी तो घर मे सत्यनारायण की कथा-जैसा माहौल हो गया। चारों तरफ खुशी-ही-खुशी। बस घण्टा-घरतावल की कमी थी। मुझे यही लगा कि इस घर मे आनेवाली खुशियो के लिए तुम ही एकमात्र खिड़की हो। तुम्हारी चिट्ठी आने पर जब यह बात है, तुम आओगे तो क्या होगा—

मुझे तुमसे एक यही बात कहनी है, अपना हौसला बुलन्द रखना। हम लोगों के पास न धन है और न जाति, सिर्फ हौसला है। कमजोर आदमी हौसले के सहारे ही अपनी कमजोरी को ताकत में बदल लेता है। तुम्हारा हौसला बना रहा तो हम सब अफाओं-जफाओं को झेल जायेंगे।

हाँ, तुमने अपने पत्र में लिखा था कि किसी लड़के की नाक से खून निकल आया था। उसे पढ़कर मन चिन्तित-सा हो गया। मेरी आँखों के सामने तुम्हारी शक्ल घूम गयी। मुझे लगा, तुम्हारी ही नाक से खून तुर्रं बाँधकर बह रहा है। मैं जानता हूँ, तुम नहीं होगे। नहीं तो तुम मुझे लिखते। लिखते ना? पता नहीं यह एस. सी. वाला चक्कर हम लोगों का कब पीछा छोड़ेगा? आदमी बाद मे पहुँचता है, यह पहले पहुँच जाता है। लेकिन हतोत्साह होने की जरूरत नहीं। लोगों की इस प्रकार की मान्यताओं के सामने कभी घुटने मत टेकना और न अपने को हेय समझना। यह तो सौभाग्य की बात है कि सैकड़ो-हजारो साल का उत्पीडन भी हमें तोड़ नहीं पाया। हमने अपने धैर्य और जीवित रहने की इच्छा को बरकरार रखा। अपनी सेवा के बल पर अपने को जीवित रखा। छोटे-से-छोटा काम किया परन्तु अपने को नष्ट नहीं होने दिया। युद्ध की मार से तो अपने को बचाया जा सकता है परन्तु इस मानसिक युद्ध के दबाव से बच पाना कठिन था। इस बात का हमें गौरव है कि हम वक्त की कसौटी पर खरे उतरे। लोग हमसे नफरत करते हैं, उन्हें करने दो। नफरत दीमक की तरह उसी घर को खाती है जिसमें रहती है। हमें अपनी तरफ से किसी को नफरत करने की जरूरत नहीं। जाति के कारण क्या नफरत और क्या प्यार! हम तो हिन्दू हैं···कौन जाने मरने के बाद कहाँ जन्म लें।

तुम्हारे बाबा की कही एक बात याद आती है। वे बताते थे कि हम लोग ही इस देश के मूल राजा हैं। गैर-मुल्की लोगों से युद्ध मे हारकर हम राज-पद खो बैठे थे। हमारे कुछ भाई-बन्धु जंगलों मे जाकर कबीलों मे रहने लगे। जो जंगलों मे नहीं गये···उनका अहं तोड़ने के लिए, गैर-मुल्की राजाओं ने उनसे गन्दे-से-गन्दा और नीच-से-नीच काम कराया। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए उन्हें करना पड़ा। बाद मे चलकर वही उनकी रोजी-रोटी का साधन बन गया। उन्हीं लोगों ने हमारी राजनीतिक स्वतन्त्रता छीनकर हमे नीच और शूद्र बनने पर मजबूर किया, लेकिन रोजी-रोटी से अधिक हमने इसे सेवा के रूप मे माना। वक्त ने हमें इतना कमजोर बना दिया था कि हम अपनी आवाज उठाने लायक भी नहीं रहे थे। लेकिन गांधीजी और बाबा साहब ने हमें सोने से जगा दिया। हमारे सोचने के ढंग को उलट दिया। अब वक्त आ गया है। हमे वक्त की पुकार को सुनना चाहिए। यही सोचकर मैंने तुम्हें इस झंझट में धकेला है। तुम इसे अहित समझो या हित!

लेकिन मुझे लगता है···कि हम अपने को सवर्णों की मानसिकता से अलग नहीं कर पा रहे हैं। मुझे यह लिखते हुए दुख होता है कि तुम्हारी माँ को जबसे पता चला है कि तुम वाल्मिकी लड़के के साथ रहते हो तब से वह दुखी भी है और नाराज भी। कहा-सुनी भी हो गयी। जो कभी नहीं हुआ वह

उस रोज हो गया। हम लोग भी आपस मे इस तरह घृणा करेंगे तो फिर ऊँची जातवालो की घृणा के विरुद्ध आवाज किस मुँह से उठायेंगे? मैंने तुम्हे वस्तु-स्थिति से अवगत कराने के लिए यह सब लिखा है। मन मे जरा-सा भी मैल मत लाना। ये सब बातें इसलिए भी लिख दी कि पता नही कब भेंट हो और तुम इन सब बातो को कब जान पाओ।

हाँ, तुम दूध पी लिया करो। पैसे देने पड़ते हैं तो दो। अभी तो मैं बैठा हूँ। *तुम्हारे वजीफे की क्या स्थिति है? अगर न भी मिले तो चिन्ता की कोई* बात नही। सब इन्तजाम है। बस तुम मन लगाकर पढते रहो। अगर तुम ठीक समझो तो अपनी माँ को लिख देना कि वह लडका दूसरे कमरे मे चला गया। शायद उसके अशान्त मन को कुछ शान्ति मिले। उस दिन के बाद वह कहती तो कुछ नही पर अन्दर-ही-अन्दर बहुत दुखी हो गयी है। कभी-कभी अपने बहनोई लोगो को चिट्ठी लिख दिया करो। क्योंकि तुम ही सुख की खिड़की हो, इस-लिए इसे सबके लिए खुली रहने दो। बन्द कर लोगे तो दम घुटने लगेगा।

माँ तुम्हें बहुत प्यार लिखती है। मुझे अपनी माँ के बारे में भी लगता था और तुम्हारी माँ के सन्दर्भ मे तो और भी ज्यादा लगता है एक माँ का प्यार बच्चे को ही नही पालता, बल्कि सम्पूर्ण सृष्टि को पालता है। आवश्यकता पडने पर सूखी धरती को भी हरिया सकता है। मुझे लगता है, यही प्यार तुम्हारा भी सम्बल बनेगा और निरन्तर तुम्हे आगे-ही-आगे ले जायेगा।

तुम बुरा मत मानना कि मैंने यह पत्र अपने हाथ से नहीं लिखा। मास्टरजी आ गये थे, मैंने सोचा उनसे ही यह पत्र लिखवा दूँ। अगर मैं लिखने बैठा तो हो सकता है शायद कभी न पूरा कर पाऊँ। वैसे भी मैं आठवी पास, दसवी फेल आदमी, भाषा लिखना क्या जानूँ! माँ और मास्टरजी तुम्हें बहुत आशीर्वाद लिखते हैं।

तुम्हारा बाबू,
बावनराम।

पत्र पढकर अनुकूल देर तक चुप बैठा रहा। मन अन्दर-ही-अन्दर मनका-सा घूमता रहा। निरन्तर बोलता रहा···। बाबू की चिट्ठी···। बाबू की चिट्ठी! जब उसे इस बात का एकाएक अहसास हुआ तो उसने सोचा वह ऐसा क्यो कर रहा था? चिट्ठी उसके हाथ मे ही थी। अभी तक बाबू उसके कानों में अपनी चिट्ठी पढकर सुना रहे थे। लेकिन उसे एकाएक लगा···नहीं, बाबू की चिट्ठी को अपने हाथ मे लिये वह स्वयं पढ़ रहा था। फिर चिट्ठी में से सबकुछ गायब हो गया···केवल उसके अपने बारे मे और माँ के बारे लिखा हुआ बचा था। वह कहने को हुआ कि अनुकूल क्या है, कुछ नही! सिर्फ माँ-बाप के मन की उपज। वे लोग अपने आप को पूरी तरह भुलाकर अनुकूल को जमाने में लगे हैं। अन्दर-बाहर दोनों जगह। आखिर क्यो! अगर अनुकूल न हुआ होता या होकर न रहा होता···? बाबू ने जो कुछ लिखा है उसमे माँ ही नही है, वे स्वय भी हैं। माँ को जरूर लगा होगा कि मैंने रूम-पार्टनर उसे क्यो बना लिया! इसका जवाब मैं क्या दूँ? बाबू ने अपने आप ही अपने पत्र मे लिख दिया। उसमे कमी ही क्या है? मुझसे ज्यादा होशियार, इयाम

रखनेवाला, हर समय अपना समझनेवाला। बस डरता है। वही क्या डरता है" हम सभी डरते हैं। इतने दिनों का डर एकदम से कैसे निकल जायेगा? मेरा इतना ही कसूर तो है कि उसके साथ रहने की रजामन्दी दे दी। वार्डन ने खुद ही उसे मेरा पार्टनर बना दिया होता तो मैं क्या कर लेता? वार्डन हम सबसे जान-जानकर पूछताछ रहा था कई लोगो ने बहानेबाजी की। वार्डन ने सोचा था मैं भी मना कर दूंगा। मैंने हाँ कर दी। वार्डन को यह कहने का अवसर नहीं मिला कि हम लोगो के दिलों मे भी भेदभाव है। बाबू को मैंने यही सोचकर लिखा था"'खुश होंगे। पर उल्टा हुआ। उनके जन्म-जन्मान्तर का यह सोच" मेरे यह लिख देने पर कैसे मिट सकता था? वहां तो भूचाल-सा आ गया होगा। ऐसे मे तर्क काम ही नही करता। कुण्ठित हो जाता है। लेकिन मैं मां को यह नही लिखूंगा" यही लिखूंगा कि अगर मैं उससे नफरत करूँगा तो मेरे प्रति भी दूसरो के दिलो मे नफरत की पर्तों-पर-पर्तें जमकर मोटी होती जायेंगी। उन्हें कौन काटेगा?

दरवाजा खुला। अनुकूल कुछ ऐसे चौक पड़ा जैसे चोरी की तैयारी मे हो। उसका रूम-पार्टनर था। अनुकूल उसे नये सन्दर्भ मे देख रहा था। देखते-देखते वह मुस्कुरा दिया। अनुकूल भी मुस्कुराया। अनुकूल के माथे पर पसीने की बहुत बारीक बूंदें थी। अपनी बांह से पोछ लिया। लेकिन उसे ख्याल आया, रूमाल से भी पोछा जा सकता था। लेकिन आदत! हम लोग अपनी आदतो के कारण ही पिछड़ जाते हैं। अनुकूल अनायास मुस्कुराने लगा। उसकी मुस्कुराहट अपने ऊपर थी।

लेकिन उसके पार्टनर ने मुस्कुराते हुए देखकर पूछा, "तुम मुस्कुरा क्यो रहे हो? क्या तुमने मेरे अन्दर ऐसी कोई मुस्कुराने लायक बात देखी?"

अनुकूल ने अपनी मुस्कुराहट को यथावत बनाये रखते हुए कहा, "नही, तुम ऐसा क्यों सोचते हो? मुस्कुराने के लिए मुझमे ही क्या कम बातें हैं?" वह तत्काल सोच गया कि इन लमतरानियो से क्या फायदा। फिर बोला, "मुझे लगा आज तुम बहुत खुश हो।"

"हां, मैंने आज क्लास मे दो-तीन बातें अंग्रेजी मे बोली। प्रोफेसर राव ने मेरी पीठ ठोकी और कहा — गुड! इसी तरह कोशिश किया करो। फिर कहा, दुनिया की इस दौड़ में तुम्हारी हिन्दी-फिन्दी मे कुछ नहीं होनेवाला। सफलता 'अंग्रेजी ही दिला सकती है।"

अनुकूल की मुस्कुराहट और चौड़ी हो गयी, "बधाई! तुम अंग्रेजी में ही बात किया करो। बोलना और लिखना ही भाषा सीखने के सही तरीके हैं। हमारे सर हमेशा से यही कहते चले आ रहे हैं"'पर हमारे दिमाग में यह बात पहले कभी घुसी ही नहीं।"

पार्टनर बोला, "लड़के हँस जो देते हैं।"

"हँसने दो"'कब तक हँसेंगे? जब तुम सीख लोगे तो हँसना बन्द कर देंगे।"

"तुम क्यों नहीं हँसते?"

अनुकूल मुस्कुराया, "हँसता तो हूँ"'अभी जब तुम आये तो हँस नही रहा

था।"

"नहीं, ऐसे नहीं'''वैसे, जैसे लडके क्लास मे या बाहर हँसा करते हैं।"

"वैसे हंसने की भी आदत डालनी पडती है'''। अंग्रेजी मे बोलने की तरह।"

"नहीं, यह बात नहीं। हँसने को कोई भी हँस सकता है, लेकिन हमारे फादर कहा करते हैं जब हँसो तो चारो तरफ देख लो। हर एक के सामने नहीं हँसा जाता। बड़े, छोटे, मातहत, अफसर और औरतो के सामने कभी ना हँसो। बत्तमीजी में शुमार हो जाता है। यहाँ पर तो हर एक हर समय हँसता रहता है ''कोई बुरा नहीं मानता। हमारे घर मे तो किसी को हँसने की आदत ही नहीं ''वैसे कभी-कभी इन लोगों की हरकतें देखकर हँसने का मन होता है। लेकिन हँसी की जगह घबराहट लगती है।"

अपनी प्रतिक्रिया तुरन्त न देकर अनुकूल अपने पार्टनर की तरफ देखता रहा। उसकी बात अनुकूल के अन्दर बहुत धीरे-धीरे समायी। उसकी भी हँसने की आदत नहीं। वह भी हर जगह नहीं हँस पाता। लेकिन जब कभी खुलकर हँस लेता है तो काफी देर तक अन्दर फूल-सा खिला रहता है। कभी-कभी उसे ऐसा भी लगता है कि किसी मुलायम टहनी पर अनगिनत छोटी-छोटी कोपलें फूट आयी हैं। उसकी बिचली बहन बहुत हँसा करती थी। डाँट पड़ती रहती थी और हँसती रहती थी। उसके हँसने पर भी उसे ऐसा ही लगता था। माँ उसे बहुत डाँटती थी'''पराये घर जायेगी तो सास चूँडा पकडकर घर से बाहर निकाल देगी। ठी-ठी करने मे सारे लच्छन भागे जाते हैं। ही-ही करके हँसना कहीं का नहीं रहने देता। लेकिन वह भी थी कि मौका मिलते ही फक्क मे हँस देती थी। अनुकूल के चेहरे पर अनायास मुस्कुराहट आ गयी। उसे लगा, उसका पार्टनर भी वही सब कह रहा है जो उसकी बहन के साथ होता रहा था। शादी के बाद उसकी बहिन का हँसना छूट गया'' पूछो, तो रोने लगती है।

पार्टनर उसे चुप देखकर अपने आप ही बोला, "चूँकि हम लोगों मे हँसने के ज्यादा मौके नहीं आते, इसलिए उसे अच्छा भी नहीं मानते।"

अनुकूल ने बहुत धीरे से रजामन्दी की हूँऽऽ की।

"यहाँ सब हँसते हैं, इसलिए हम लोग भी हँस सकते है।"

अनुकूल ने धीरे से कहा, "मुझे ऐसा नहीं लगता।" फिर बोला, "मना तो कोई नहीं करेगा पर ये लोग हमारे हँसने को कैसे लें, कहा नहीं जा सकता।"

पार्टनर बहुत बोलने के मूड मे था, "एक बात मुझे हमेशा महसूस होती है—अपने ब्लाक में बहुत कम हँसा जाता है ''। दूसरे ब्लाकों मे हर समय कहकहे लगते रहते हैं। बस रामउजागर दादा को तो समझो'''हँसने में ठीक-ठाक हैं। और कोई नहीं मिलता तो अपने ऊपर ही हँसते रहते है'''कभी कहेंगे, मैं रामउजागर नहीं, राम अजगर हूँ। अजगर करे न चाकरी'''इसलिए मैं भी कुछ नहीं करता। इधर वो भी कम हँसने लगे हैं। कमरा भी कम खुलता है। कभी मिल जाते हैं तो कहते हैं, बाहर क्यों घूम रहे हो'''बाहर क्या मिल जायेगा? बाहर निकलकर तुम्हें नहीं लगता कि मकड़ी का जाला-सा चेहरे पर पुर गया'''छुड़ाये नहीं छूटता। और हँस देते हैं।"

अनुकूल धीरे से बोला, "सुना है इस बार उनका सी. पी. आई. दो कोर्सेज में कम है।"

सी. पी. आई. पर उसका पार्टनर जोर से हँस पड़ा। उसके हँसते ही अनुकूल की शिराएँ भी जैसे मुलायम पड़ गयी। वह हँसते-हँसते ही बोला, "यहाँ का हिसाब ही निराला है···। दुनिया मे नम्बर होते हैं, यहाँ सी. पी. आई. होता है···। कोई समझे कि कम्युनिस्ट पार्टी आफ इण्डिया की बात हो रही।"

अनुकूल भी हँस दिया, "यहाँ उसका नाम मत लेना ' ।"

पार्टनर फिर हँसने लगा। अनुकूल को लगा, वह जरूरत से ज्यादा हँसने की कोशिश कर रहा है। वह उसे देखता रहा। धीरे-धीरे उसके चेहरे की हँसी कम होती गयी और चेहरा सिकुड़ता गया। अन्त में तलछट की तरह उसके फैले हुए होठ और सिकुड़ा हुआ चेहरा रह गये। उसकी नजर एकाएक उसके हाथ की चिट्ठी पर पड़ी।

"घर से चिट्ठी आयी है क्या? क्या लिखा है!"

अनुकूल ने चिट्ठी तह करके जेब में रख ली और बोला, "हाँ, बाबू की चिट्ठी है!"

"तुम्हारे बाबू चिट्ठी लिख लेते है?" चेहरे पर आश्चर्य था।

"लिख तो लेते हैं···इस बार अपने एक दोस्त से लिखवायी है।"

"लिख तो मेरे फादर भी लेते है पर वे दूसरो से ही लिखवाना पसन्द करते हैं। लिखने की ज्यादा आदत नही···!"

अनुकूल उसकी बात पी गया। पार्टनर अपने-आप ही बोला, "फादर की हर तीसरे दिन चिट्ठी आती है। पढाई करो। पढ़ाई कैसे करें? पल्ले तो कुछ पड़ता ही नही। अंग्रेजी ही अंग्रेजी। साइंस अंग्रेजी मे, समाजशास्त्र अंग्रेजी मे···हिन्दी होती तो वह भी अंग्रेजी मे ही होती। सारे-के-सारे प्रोफेसर ऐसे अंग्रेजी बोलते हैं जैसे उन्होंने अपनी मातृभाषा मे कभी बोला ही नही। हमारे मास्टरजी कहा करते थे, बेटा अंग्रेजी तो अंग्रेजों की चाल थी। अगर अंग्रेजी न हुई होती तो सब समान रुप से पढ़े होते···अब अंग्रेजी पढ़ों के सिवाय सब बेपढ़े है!"

अनुकूल को उसकी यह बात भी जँची। वह बोला, "हाँ, मुश्किल तो पड़ती है···"

"तो फिर कैसे समझ लेते हो?"

"कोशिश करता हूँ···समझ पाता हूँ या नहीं, यह तो नहीं कह सकता।"

"तुम्हारे बाबू ने भी यही लिखा होगा कि पढ़ो··· सबके फादर यही लिखते हैं···जैसे हमने पढ़ने के अलावा कोई और काम खोल रखा हो!" फिर बोला, "बताओ तो क्या लिखा है···? किसी के घर से चिट्ठी आती है तो सुनना अच्छा लगता है।" अनुकूल ने उसकी आँखों में एक चाह देखी। इस चाह में थोड़ी उत्तेजना भी थी।

"मैंने तुम्हारे बारे में लिखा था···"

पार्टनर का क्षण-भर पहलेवाला चेहरा एकाएक गायब हो गया। जलते-जलते एकाएक फ्यूज हो जानेवाले बल्ब की तरह दोनों आँखें बुझ गयी। फिर वह अपने को सँभालते हुए बोला, "मेरा तुम्हारे साथ रहना उन्हें पसन्द नहीं आया होगा?"

"बाबू इन सब बातों को नही मानते···"

"अच्छा, तुम्हारे बाबू बहुत अच्छे हैं ··मैं उनसे मिलूँगा।" वह फिर गियर मे आ गया।

अनुकूल पहले हिचकिचाया, फिर बोला, "माँ जरूर पुराने विचार की हैं···।"

पार्टनर फिर गड्ढे-से में समा गया। धीरे से बोला, "बापू तो मेरे भी नही मानते···" रुककर पूछा, "तो तुमने क्या सोचा?"

अनुकूल ने हँसकर कहा, "इसमे सोचना क्या है?"

"नही, मैं इसलिए कह रहा था कि···"

"अब हो ही क्या सकता है···यही हो सकता है कि कुछ नहीं हो सकता।" इस बात पर पार्टनर का चेहरा खिल उठा। अनुकूल ने अंग्रेजी मे कहा, "मूर्खता की कोई गुंजायश नही।"

पार्टनर और भी ज्यादा खुश हुआ और बोला, "तुम अंग्रेजी में बोले! अच्छा बोले। इसी तरह बोला करो। मुझे भी आदत पड़ जायेगी। और लोग पता नही अपने को क्या समझते हैं···? रामउजागर दादा कितनी अच्छी अंग्रेजी बोलते हैं। उनकी अंग्रेजी के सामने कोई नही टिक पाता···। यदि वे इस बार भी प्रोवेशन पर रहे तो अगले साल निकाल दिये जायेंगे?"

"हमे दूसरों के बारे मे ज्यादा बातें नही करनी चाहिए। रामउजागर दादा वैसे भी सीनियर हैं।"

पार्टनर थोडा सकपका गया, "मैंने तो वैसे ही कह दिया था। मेरा मतलब यह नही था···।"

अनुकूल की आवाज एकदम बदल गयी थी। सजीदगी के साथ कहा, "हम सबको इसी चक्की से निकलना है ··। देखो कौन साबित बचता है। रामउजागर दादा तो फिर भी झेल गये।"

"तुम ठीक कहते हो···।" पार्टनर के चेहरे पर भय के चिन्ह थे।

"वैसे भी वे जे. ई. ई. से आये थे···हम लोगों की तरह बाढ के नीचे से घुसकर नही चले आये।"

अनुकूल का पार्टनर थोडी देर बाद बोला, "तुम नाराज हो ना?" अनुकूल हँस दिया, "मैं, और नाराज! कौन किससे नाराज हो सकता है। नाराज होने के लिए थोड़ा ऊँचाई पर खड़ा होना पड़ता है···हम दोनों ही एक-दूसरे से नीचे खड़े हैं। बल्कि अपने बिलों की तलाश मे कनसलाई की तरह रेंग रहे हैं।"

"एक बात पूछूँ?"

अनुकूल ने गर्दन हिला दी, "हाँ पूछो।"

"तुम्हारा दाखला कैसे हुआ?"

"जैसे हम सब लोगों का होता है···रामउजागर बहुत कम होते हैं। इस बारे में सोचकर परेशान होने से कोई लाभ नही।"

"मेरे फादर कहा करते थे कि मैं बहुत होशियार लड़का हूँ···कुछ भी कर सकता हूँ···सबको पछाड़ सकता हूँ···उस समय मुझे भी ऐसा ही लगता था।" फिर रुककर धीरे से कहा, "अब नही लगता। फादर अभी भी यही बात लिखते

रहते हैं। उन्हें कैसे समझाऊँ · ? अगर लिखूँगा तो उनके मन को ठेस पहुँचेगी, उनकी आशा पर पानी फिर जायेगा। मैं जानता हूँ यहाँ कुछ भी कर पाना मेरे लिए सम्भव नहीं।"

अनुकूल चुप रहा। उसे मन-ही-मन लगा, फिलहाल अपने पार्टनर बाबूराम वाल्मिकी की जगह उसे बैठाया जा सकता है, बाबूराम वाल्मिकी उसकी जगह बैठ सकता है···। दोनों के पिताओं की शक्लें और जातियाँ चाहे अलग-अलग हों पर सोच समान है। चौधरी साहब के सामने उसके बाबू भी यही कहते रहे थे कि उनका बेटा बहुत होनहार है, होशियार है ' यह तो पुरबलों का पाप है कि उनके घर पैदा हो गया वरना पता नहीं क्या से क्या हो गया होता। वह जानता है कि वह जो है, वही सही है। उसके अलावा कुछ नहीं हो सकता था।

पार्टनर ने अपने-आप ही पूछा, "तुम किस सोच में पड़ गये। मैं तो अपनी बात कह रहा था। अकेला होता हूँ तो घबराहट होने लगती है। लगता है कि सबकुछ मेरी तरफ को सिमटता चला आ रहा है। यहाँ मैं क्या कर पाऊँगा ?" लम्बी-सी साँस लेकर बोला, "तुम होते हो तो उतना नहीं लगता। अकेले में तो बड़ी जात के लड़के···अंग्रेजी गाने गाते हुए, हाथों में मशाल-जैसी जलती हुई चीजें थामे···कतार बनाये, इस कमरे में घुसते चले आते हैं। मुझे लगता है कि उनके डर के मारे मैं मक्खी बनकर दीवार से चिपक गया हूँ। ये लोग मुझे दीवार से खुरचकर और अपने अँगूठे और उँगलियों से दबाकर और मसलकर फेंक देंगे। मेरा अस्तित्व खत्म हो जायेगा···उसी से मुझे सबसे ज्यादा डर लगता है !"

अनुकूल ने उसकी तरफ देखा। आँखें बाहर को निकल पड़ने को हो आयी थीं। वह डरा हुआ था। अनुकूल उसकी पीठ पर हाथ रखकर थपथपाते हुए बोला, "बाबूराम, यह सभी के साथ है···एक कंगाल को किसी जौहरी की दुकान में घुस-कर जैसा लगता वैसा यहाँ आकर हम लोगों को लग रहा है·· " फिर हँसकर बोला, "मैंने तो सुना-ही-सुना है कि जौहरी की दुकान होती है, वहाँ हीरे-जवाहरात फैले पड़े रहते हैं। देखा कभी नहीं ' चलो चलकर देख आयें ! कभी-कभी कमरा बटलोई की तरह छोटा और घुटा-घुटा-सा हो आता है···ऐसे में तुरन्त बाहर खुले में निकल आना चाहिए। आकाश के विस्तार के नीचे हमारी अपनी बड़ी-से-बड़ी बातें छोटी पड़ जाती हैं ''लगता है वहाँ जो इतना भारी था यहाँ उसका कोई अस्तित्व नहीं रहा।"

अनुकूल उठ खड़ा हुआ। उसका पार्टनर भी खड़ा हो गया। अनुकूल के पीछे वह भी बाहर निकल आया। उसी विंग में एक-दो लड़के पट्टेदार जाँघिया पहने खम्भे से लगे खड़े थे। लड़के और भी थे पर अनुकूल की नजर उन्हीं पर गयी। उसे अजीब-सा लगा। ये लोग ऐसे ही क्यों निकल आते हैं। दूसरे ब्लाकों के लड़के इसी-लिए 'जाँघिया कण्टिन्जेण्ट' कहकर हम लोगों का मजाक उड़ाते हैं। बाबू का ध्यान आ गया। बाबू इस मामले में दूरअन्देश हैं। यहाँ आने की बात हुई तो उन्होंने तत्काल बाजार से इस्टरलोंग जाँघिये खरीदवाये और लट्ठे के पाजामे बनवाये। वे खुद भी कभी बिना धोती पहने घर से बाहर नहीं जाते। माँ-बाप की पृष्ठभूमि भी काफी बड़ी भूमिका अदा करती है। इमर्जी में फेल हो जाने से वे आठवीं पास ही रह गये···आगे पढ़ जाते तो बाबू बिल्कुल बदल गये होते ! परिस्थितियों को देखते हुए

बाबू के संस्कार अभी भी अन्य लोगों से बहुत अलग हैं। बाबू की चिट्ठी ही इस बात की द्योतक है। बाबूरामवाली बात को भी वे अच्छा मोड देना चाहते हैं। वैसे वे भी माँ की हाँ-में-हाँ मिला सकते थे। जब उन्होंने चिट्ठी मे लिखा है तो जरूर माँ को बहुत बुरा लगा होगा। माँ ने काफी कहा-सुना भी होगा।

उसकी नजर बाबूराम पर गयी। वह कुछ सोच रहा था। कुछ भी कहो, बाबूराम दिल का साफ है। सीधा-सादा है। उसके चेहरे पर मुस्कुराहट आ गयी। वह अपने 'बापू' को फादर कहना पसन्द करता है और माँ को शायद मदर! इसी तरह वह अपने को अंग्रेजी के नजदीक महसूस करने की कोशिश किया करता है। अगर वह अंग्रेजी बोलने लगे तो उसकी हताशा शायद कुछ कम हो जाय। उसे झिझकना नही चाहिए। लगातार कोशिश करनी चाहिए। रामउजागर ने भी शुरू मे कोशिश ही की होगी, तभी वे इतनी अच्छी अंग्रेजी बोल लेते है।

इस बार उसे हँसी आ गयी। रामउजागर कभी-कभी बडी मजेदार बातें करते हैं। सबको इकट्ठा कर लेंगे और भाषण देने लगेंगे, "यदि इन भगी, चमारो, धोबियों, गोडों वगैरह को बाँभनों, ठाकुरो और बनियों के बच्चो से अपने बच्चों की बराबरी करनी है तो सबकुछ बेच-बाचकर अपने बच्चों को कान्वेण्ट स्कूल में पढाओ। तभी जबान-मरोड़ अंग्रेजी बोलकर उनके बच्चो को पछाड़ेंगे। नही तो उनके बच्चो की जबान मुड़ी रहेगी और तुम्हारे बच्चो की और भी सीधी होती जायेगी। विलायत से आयी जवान हो या मेम, हम उसे अपनी माँ बना लेते हैं। तुम भी बनाओ। अगर कान्वेण्ट मे वैसे दाखला न हो तो अस्थायी तौर पर मेरी और क्रिस्ट नाम रख लो''' यह हिन्दू-निरंकुशता तभी काबू आयेगी। भगत बनकर कबीर के निर्गुन गाने से काम चलनेवाला नही। ये लोग तो चाहते हैं तुम निर्गुन गाते रहो और वे क्लबों मे बाल-डान्स करते रहें। तुम्हें राम मिले भी गया तो किस मूल्य पर? सारी जिन्दगी बन्धुआ बने रहकर। बच्चे से बच्चा लडा दो। तुम गाँधी की बात करते हो'''अरे मैं कहता हूँ कि उसने ऊँची जातवालों को हमारे गुस्से से बचाने के लिए यह सब नाटक किया था। बाबा साहब भी चक्कर में आकर अनजाने ही उन लोगों के समर्थक बन गये। जब होश आया तो बात बिगड चुकी थी। हम लोगो का आक्रोश पीछे धकेला जा चुका था। उन्होंने हम लोगों को हरिजन नही बनाया, हरिजन का खिताब दिया। वह भी इसलिए नही कि हमारा हक था'''बल्कि इसलिए कि सवर्णों की स्थिति अक्षुण बनी रहे।" रामउजागर जब गुस्सा हो जाते हैं, अंग्रेजी और हिन्दी के मिश्रण पर उतर आते हैं। उनके बोलने का जवाब नही। पर वे इधर इतना क्यों पीने लगे? कही उनकी सारी तेजी इसी की नजर न हो जाये।

बाबूराम ने एकाएक कहा, "रामउजागर दादा के कमरे मे चलोगे?"

अनुकूल को आश्चर्य हुआ। उसने पूछा, "तुम भी उन्हों के बारे मे सोच रहे थे!"

"नही, सोच तो नही रहा था। लेकिन वे बहुत सही आदमी हैं। सबका ध्यान रखते हैं। आज एक-दो लडके बता रहे थे कि हम लोगो के जूठे बर्तन साफ करने की बात को लेकर पहले कभी मेस मे काफी झंझट हो गया था। दूसरे लोगों का कहना था कि हम लोग अपने बर्तन अपने आप साफ करें'''रामउजागर दादा ने कहा,

अगर सब अपने-अपने बर्तन साफ करेंगे तो हम भी करेंगे। उन्ही के कारण हम लोगो की बात रह गयी।"

अनुकूल की आँखें एकाएक नम हो गयी और रोंगटे खड़े हो गये। खँखारकर बोला, "मेरा ख्याल है आत्म-सम्मान आदमी से भी बड़ा होता है।" फिर धीरे-धीरे शान्त होकर कहा, "लेकिन मैं सोचता हूँ हमें वक्त को देखकर चलना चाहिए। बातें ऐसी नहीं होनी चाहिए कि दूसरे लोगों की भावनाओं को चोट पहुँचे। इससे हम लोगों का संघर्ष और भी बढ़ सकता है।"

"कब तक बचा जायेगा?"

अनुकूल ने उसके चेहरे की तरफ देखा लेकिन कहा कुछ नही। पार्टनर ने पूछा, "तो उनके कमरे में नही चलोगे?"

"इस समय कमरे में जाकर बैठने का मतलब'''बटलोई में पुन. समा जाना। उबल-उबलकर वही बिखरते रहना'''और अपने-आपको जलाते जाना।" वह हँस दिया।

वे दोनो चलते रहे, बोले कुछ नही।

होस्टल के दूसरे छोर तक वे इसी तरह टहलते चले गये। काफी संख्या में लड़के कमरों से बाहर निकले हुए थे। खेल रहे थे या गप्प लड़ा रहे थे। कुछ कहकहों में मशगूल थे। अनुकूल हँसते हुए लड़कों को बहुत चाव से देख रहा था। उसे शुरू से ही हँसता हुआ व्यक्ति पसन्द था। कहकहे लगानेवाले लड़कों से उसे अभी भी ईर्ष्या होती है। उसकी जिन्दगी में इस तरह से हँसने के अवसर बहुत ही कम आये थे। हँसने को वह इन्सान की अपनी खूबी नहीं मानता था, बल्कि उसे ईश्वर की कृपा का प्रतिफल ही मानता था। अपने घर में भी उसने बहुत कम लोगों को इस तरह हँसते हुए पाया था। बाबू कभी-कभी हँसते थे। पर लगता यही था कि उनका अन्तर वैसा ही गुमसुम है। उनमें किसी तरह का कोई परिवर्तन नही। हँसनेवाले लड़कों में कुछ उसे दिखावा करते महसूस हुए। उनकी आवाजें वास्तव में हँस रहे लड़कों से ज्यादा तीखी थी। दरअसल वे हँसने के नाम पर चीख रहे थे। उसे उन पर गुस्सा आ रहा था। *नहीं हँस सकते तो क्यों हँसते हैं? बाहर से न हँसी थोपी जा सकती है, न रंग।* यह सबकुछ अपने अन्दर का ही खेल है। अगर वास्तव में उसे कोई हँसी लगती थी तो वह सिर्फ एक ही थी। उसके घर में गांधीजी की हँसते हुए एक तस्वीर लगी है। वही हँसी उसे हँसी लगती है। बिल्कुल ऐसी ही हँसी उसके एक मास्टरजी की थी। वे दूसरे गांधीजी थे। वे बच्चों को कभी सजा नही देते थे। कोई बच्चा अगर गलती करता था तो उसी के सामने अपने को सजा देते थे। बच्चे के गलती मान लेने पर वे फूले नही समाते थे। कोई उनसे पूछता कि आप ऐसा क्यों करते हैं तो वह कहते, यही तो सुख की खान है, बाबा। कबीर कह गये हैं – 'कबिरा आप ठगाइए और न ठगिए कोय, आप ठगे सुख होत है और ठगे दुख होय।' भैया, सुख की रीत ही निराली है'''जान जाओगे तो दुख पास नही फटकेगा। दुख में सुख निकालनेवाला ही व्यक्ति वास्तव में सुखी होता है'''उनकी बात बहुत कम समझ में आती थी।

कभी-कभी तो लड़के हँसते थे। वे भी हँसने लगते थे।

बाबूराम ने एकाएक उसे रोककर कहा, "देखो तो वह उधर···?"

अनुकूल के मास्टरजी और उनकी हँसी दोनों विलाय गये। एकदम तो उसे कुछ समझ मे नही आया। दो-चार क्षण लगे। कई लड़के जमा थे। उनमें से एक उन दोनों की तरफ इशारा करके अंग्रेजी में कह रहा था, "इस गन्ध को पहचानने के लिए इन दोनों से अच्छा कौन हो सकता है?"

दूसरे लड़के ने उसका समर्थन किया, "एकदम ठीक! इनसे पूछा जाय, चूहा मरा है या आदमी?"

तीसरा लड़का बोला, "वैसे आदमी होने की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।"

पहले ही ने जवाब दिया, "जब विशेषज्ञ की राय उपलब्ध हो सकती है तो हम लोग इस बहस-मुबाहसे में बेकार समय खराब कर रहे हैं।"

अनुकूल ने कतराना चाहा। लेकिन पहलेवाले लड़के ने उन्हें पुकारा, "मिस्टर अनुकूल एण्ड कम्पनी' जरा यहाँ आइए। हमें आपकी एक्सपर्ट-ओपिनियन की बहुत सख्त जरूरत है।"

एक क्षण को वे दोनो ठिठके रहे। फिर उन लोगों की दिशा में बढ़ गये। अनुकूल का मन झुंझलाहट मे भर गया था। ये लोग क्या अंग्रेजी मे ही रोते हुए पैदा हुए थे। शायद हम लोगों की बेइज्जती करना चाहते हैं।

वे जाकर खड़े हो गये। अनुकूल ने मुस्कुराना चाहा। लेकिन उसे लगा, भले ही वह मुद्रा धारण कर ले पर अन्दर से वह रुआँसा हो रहा है। बाबूराम ने जाकर सबसे पहले शेक हैण्ड किया और अंग्रेजी में पूछा, "आप कैसे हैं?"

उनमे से एक लड़के ने उससे हाथ मिलाने के बाद अपना हाथ उलट-पुलटकर देखा और जेब में डाल लिया। सब लोग हँस दिये। अनुकूल थोड़ा ठिठक गया। शायस्तगी से पूछा, "किस बात पर हँस रहे हैं?"

पहले तो वे लोग थोड़ा सहमे लेकिन फौरन ही फिर से हँसना चालू कर दिया। अनुकूल मुस्कुराया और उसने धीरे-से कहा, "आप जाकर अपना हाथ धो आइए, नहीं तो इसी तरह हँसते रह जायेंगे!"

दूसरे लड़के ने तत्काल अनुकूल के कन्धे पर हाथ रखकर कहा, "क्या बात करते हो, यार! ये तो मजाक था···मजाक की बात में इतना सेन्सिटिव नहीं होना चाहिए। अगर हँसे-मने नहीं तो यहाँ का यह तनाव ही हम लोगों को खा जायेगा।"

बाबूराम थोड़ा हतप्रभ था। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह क्या करे। अनुकूल ने अपने होश-हवास दुरुस्त रखते हुए कहा, "कहिए, कैसे याद किया?"

तीसरा लड़का बोला, "यार, तुम तो लगता है अभी तक टेन्स हो।" फिर बोला, "यहाँ पर अजब तरह की बदबू आ रही है···हम लोग बहुत देर से परेशान हैं। तुम भी जरा जाँचकर देखो, किस चीज की बदबू है?"

अनुकूल को पहले तो लगा ये लोग बेवकूफ बना रहे हैं, लेकिन जब बदबू आनी

अनुकूल ने पहले उसकी तरफ देखकर हँसने की कोशिश की। होंठ पपड़ाये होने के कारण असुविधा महसूस हुई। फिर वह उसे समझाने लगा, "यह सब कुछ नही! लगता है वही सब बातें दिमाग मे भरी हुई है···निकलते-निकलते देर लगेगी। मैंने पहले कभी नही सोचा लेकिन आज की घटना से मुझे लग रहा है कि हम सब मौत से डरते है···जब हम एक-दूसरे से डरते है तो भी हम एक-दूसरे को जाने-अनजाने मौत ही समझने लगते है। अगर वह न समझे तो न डरे। डरने के साथ-साथ हम उसका साक्षात्कार भी करना चाहते है···पता नही उसमें ऐसा क्या आकर्षण है? अगर मौत का डर और उसका आकर्षण दोनों हमारे दिलो से निकल जायें तो हम स्वतन्त्र हो जाये। बाहर सब कमरो मे बत्तियाँ जली है। हालाँकि रोज ऐसा नही होता। कुछ जलती हैं, बहुत-सी नही जलती। लगता है, हम सब लोग एक-सी ही मानसिक स्थिति में हैं। दूसरे लोगो को धमकाकर अपने डरो से मुक्ति पाना चाहते हैं। हम कमजोर है, ज्यादा डरते हैं। हमे डराना उनके लिए सुविधाजनक और आसान है···।"

"क्या बाहर धमकाया जा रहा है··? तुमको भी धमकाया गया?"

"नही, ऐसे ही।"

"तुम अभी तो कह रहे थे। बाहर कौन धमका रहा है?"

"खन्ना और दिनेश वगैरह है।"

"उन्होंने तुम्हे भी कुछ कहा है! सुना है इन लोगो ने रामउजागर दादा के साथ भी बहुत कुछ किया है पर वे इनके कब्जे में नही आये। खन्ना को सीनेट ने दो बार निकालना चाहा पर बचकर निकल आया। बड़े अफसर का बेटा है!"

"तुम्हे किसने बताया?"

"एक दिन रामउजागर दादा बता रहे थे। एक बार तो इसने अपनी जिन्दा माँ के मरने का बहाना बनाया। दूसरी बार झूठे ही हाथ पर प्लास्टर चढ़वाकर लेट गया था। तुमने बताया नही, उसने तुमसे क्या कहा?"

"कुछ नही 'सिर्फ अपने को सीमाओं मे रखने की और नेतागिरी के पास न फटकने की सलाह दी।"

"तुम तो कह रहे थे, धमकाते घूम रहे है।"

"तुम इसे धमकाना भी कह सकते हो और खुशामद भी।"

"तो क्या तुम डरे हुए हो?"

"नही, डरा तो नही। पर सोच जरूर रहा था कि यहाँ आना क्या इतना जरूरी था? अगर न आते तो क्या बहुत बड़ा नुकसान हो जाता? अब आये हैं तो ऐसा तो नही होगा कि जाना पड़े या···!"

"या क्या?"

"ऐसी संस्थाएँ सबके लिए खुलनी चाहिए। यहाँ तो धक्कापेलवाला चक्कर था, उसी मे हम लोग चले आये। ऐसे मे गिर जाने, कुचल जाने का डर बना रहना है। क्योंकि उसी तरह चलना भी पड़ता है। जो निकल आयेंगे वे बहुत भाग्यशाली होंगे···जो नही निकलेंगे उन्हें उसी पर सन्तोष करना होगा कि उन्होंने प्रयत्न किया···पर सन्तोष हो तो मुश्किल होता है। मोहन को तो सपसना भी सन्तोष

नही दे पायी···!"

"तो क्या तुम वापिस जाने की सोच रहे हो ?"

अनुकूल हँसा। वह कुछ सँभल गया था। गर्दन हिलाते हुए कहा, "नही, चले जाना भी इतना आसान नही। पानी मे उतर भी जायें और सूखे कपड़े निकल भी आयें···दोनो बातें एक साथ नही होती। अच्छा, अब सो जाओ। यही सोच लो कि अपने-आपको मजबूत बनाना चाहते हैं, टूट जायें पर पकड़ ना छूटे।"

"चीटे की तरह !"

"हाँऽ !" वह हँस दिया।

"मुझे बातें करना अच्छा लग रहा है'' और बाते करो।"

"क्यो, नीद नही आ रही ?"

"आँखें बन्द करूँगा तो फिर वही तारो की उलझी शक्ल झनझनाती दिखलायी पड़ने लगेगी ''वही सपने फिर आने लगेंगे।"

"सपनो से क्या डरना ? सपने वास्तविकता थोडे ही होते हैं। पहले भी तो आते होंगे, तब भी क्या तुम जगते रहते थे ?"

"आते थे, पर तब माँ पास सोती थी। अब भी जब घर जाता हूँ तो माँ के पास ही सोता हूँ। वैसे भी हम लोगो मे शहरी लोगों की तरह हर आदमी का अलग-अलग बिस्तर नही होता। छोटा भाई बापू के पास और मैं माँ के पास ''छोटी बहन और दादी सो जाती हैं। बड़ी जिज्जी थी तो हम तीनों जमीन पर ही सो रहते थे। जिज्जी बहुत प्यार करती थी···" उसको जिज्जी की याद हो आयी। वह खामोश हो गया। फिर बोला, "जिज्जी का आदमी बहुत शराबी है···उन्हे मारता है···घर आती हैं तो रोती रहती हैं। कल चिट्ठी आयी थी। लिखा है कि जीजा ने शराब पीकर जुआ खेला और हारते-हारते जिज्जी तक को हार गया। वो तो दूसरा आदमी भला था। उसने बापू को लिखा कि आपकी बेटी को आपके दामाद ने दो सौ रुपये मे छोड दिया ''आप चाहे तो दस दिन के अन्दर चुकता करके छुडा लें नही तो हम जिम्मेदार नही होगे···" वह फिर भावुक हो गया। सँभलने मे उसे देर लगी। लम्बी साँस लेकर कहा, "बापू जिज्जी को घर ले आये है'' जीजा भी पहुँच गये है। बापू मे झगडा कर रहे हैं। जिज्जी ने लिखा है भैया, तू जल्दी से लिख-पढ़ ले पढ़-लिखकर बडा आदमी बन जा। मैं तेरे द्वारे पडी रहूँगी···बडा आदमी होकर तुझे बच्चों की देख-भाल के लिए नौकरानी तो रखनी ही पडेगी। उसकी जगह मैं तेरे बच्चो की देखभाल कर लिया करूँगी। तू मुझे रोटी-कपडा दे दिया करियो ''और बस दो मीठे बोल ' मेरी जिन्दगी टेर हो जायेगी।" बाबूराम फफक-फफककर रो पडा और चिट्ठी··· अनुकूल की तरफ बढा दी। उसमे और भी बहुत-सी बाते लिखी थी, जो उसने कही नही थी।

थोडी देर बाद सँभलकर बोला, "मेरी जिज्जी सुन्दर भी है, गुणी भी पर भाग की हेठी है। जब ब्याह हुआ और डोली मे बैठी तो मेरा हाथ पकडकर छोड ही नही रही थी। मैं भी उसके पीछे-पीछे मील-भर तक रोता चला गया था। बापू ने सोचा था कि लड़का सरकारी नौकरी मे है, रोटी-दाल का डौल रहेगा। पर हमारी जात ही ऐसी है···पीना, खेलना, औरतो को मारना, बेचना···इतना

चलता है कि बापू हमेशा कहा करते थे कि मेरा बस चला तो मैं अपनी राजकुमारी को बिरादरी से बाहर बिहाऊँगा। पर 'पडा !" बीच के शब्द सुनायी नही पड़े।

अनुकूल की समझ में जब कुछ नही आया तो उसने पूछा, "तुम्हारी जिज्जी पढी-लिखी भी है?"

"हमारी जात में लडकियो को कौन पढाता है। पर बापू ने उसे जी के जोरो आठवी तक पढाया था। पढने मे इतनी होशियार थी कि बापू हँसकर कहा करते थे कि मैं तो अपनी बेटी को डिप्टी कलक्टरी तक पढ़ाऊँगा। सच कहता हूँ अनुकूल, जब से चिट्ठी आयी है पढने मे मन नही लगता। जिज्जी की बहुत याद आ रही है। मन हो रहा है जिज्जी को जाकर समझाऊँ कि बहनी, दुखी न हो···।"

जैसे ही बाबूराम चुप हुआ अनुकूल बोला, "अपने बापू को लिख दो कि जिज्जी से प्राइवेट दसवी का इम्तिहान दिलवा दें। दसवी करके कही काम मिल जायेगा। औरतें कमाती नही इसीलिए आदमी तग करता है। हम लोगों का ही क्या पता, यहाँ से क्या होकर निकलें···? तुम्हारी जिज्जी कब तक तुम्हारे आसरे बैठी रहेगी? उनके भी तो बच्चे होंगे?"

"आठ महीने पहले ही तो शादी हुई है और आठ महीने मे ही सब खेल बखेर हो गया।"

अनुकूल का मन हुआ कि वह भी अपनी बहनो के बारे मे बात करे। उसके जीजा लोग भी गाली बकते हैं। हाथ भी उठा देते हैं पर बात यहाँ तक नही पहुँचती। कभी-कभी पीते भी हैं पर चुपचाप आकर सो जाते हैं। छोटे जीजा कभी ज्यादा चढा जाते हैं···छोटी जीजी से भी पीने को कहते हैं···नही पीती तो डाँटते हैं··· एक-दो बार हाथ भी उठाया। बाबू ने डाँटा तो कुछ ढीले पड़े। लेकिन उसने यह सब नही कहा। इतना ही कहा, "बाबूराम, हमे रास्ता चाहिए···तो वे लोग घर मे घुटती रहेंगी और हम बाहर पिटते रहेगे। इतनी जल्दी रास्ता खोज पाना मुश्किल है ··धीरज धरकर बढते रहना पड़ेगा।"

बाबूराम अब धीरे-धीरे सामान्य होने लगा था। वह बोला, "वह मेरी बहन है और हमारी जात मे यह सबकुछ होता है, इसलिए चुप रह जाना पड़ता है···नही तो पता नही क्या कर बैठता!" फिर बोला, "ऊँची जातवाले और भी गिरे हुए हैं। हमारे घर के पास मिसिरजी की कोठी है। बड़ी भारी जमीन-जायदाद। उनका बेटा विलायत से आया। जल्दी-जल्दी उसकी शादी रचायी। माँ बता रही थी कि वहू ऐसी कि हाथ लगाये मैली हो। पन्द्रह दिन बाद सुना कि बिजली का करेण्ट लगा और मर गयी। करेण्ट तो लगाया गया था···अपने आप नही लगा था। मिसिरजी का लड़का किसी विदेशी लड़की से फँसा था और मिसिरजी इस बात से नाराज थे कि लड़के के पिता ने जो वायदा किया था वह पूरा नही किया···बेचारी अकेली पड़ गयी। कम-से-कम जिज्जी घर में तो बैठी हैं···किसी ने करेन्ट तो नही लगाया।"

अनुकूल ने थोड़ी संजीदगी से कहा, "दूसरो से अपनी क्या बराबरी!" फिर रुककर बोला, "अगर तुम्हारी जिज्जी पढ गयी तो अपने पैरों पर खड़ी हो जायेगी। हमारी माँ कहा करती है कि अभागी औरत की जिन्दगी ताड की तरह बढ़ती जाती है और छोटी-पत्ते पतझार की तरह गिरते जाते हैं। किसी का क्या पता, कौन कितना

कर पाता है''!"

"सच कहता हूँ अनुकूल, जिज्जी के लिए मैं सब कुछ करूँगा।"

घडी की तरफ देखकर अनुकूल बोला, "अरे तुम्हारी घडी में दो बज गये'''! सवेरे क्लास मे बैठे-बैठे नीद आयेगी। लडके हम लोगो पर ज्यादा हँसेंगे।" वह मुस्कुरा दिया।

"अनुकूल, यार डर लगता है।"

"हो सकता है डर मुझे भी लगता हो पर डरेंगे कब तक? पन्ना कह रहा था, हमारा कहा मानोगे तो पार लग जाओगे'''नही तो अगली आत्महत्या जरूर देखना।"

"क्या मतलब?"

"मतलब वो जाने। अब तुम सो जाओ'''मैं बत्ती बन्द किये देता हूँ।"

बाबूराम ने इस बार और भी आजिजी से दोहराया, "मुझे बहुत डर लगेगा।"

अनुकूल सोचकर बोला, "तुम ऐसा करो, अपनी खाट मेरी खाट के नजदीक खिसका लो। तब शायद अच्छी तरह सोया जा सके।"

बाबूराम ने अपनी खाट अनुकूल की खाट के पास घसीट ली। वह एकदम किनारे पर लेटा। जिससे अनुकूल की उपस्थिति उसे महसूस होती रहे। अनुकूल अपनी खाट पर एकदम सीधा लेटा छत की तरफ देख रहा था।

थोडी देर बाद बाबूराम बोला, "मैं अपना हाथ तुम्हारे हाथ पर रखना चाहता था।"

अनुकूल और नजदीक खिसक आया और हाथ फैला दिया।

रात किस समय किसकी आँख लगी दोनो मे से किसी को पता नही था। बस सो गये थे। सवेरे सात बजे आँख खुली। साढे सात बजे क्लास मे होना था। अनुकूल ने ही बाबूराम को झकझोरकर जगाया। वह बच्चो की तरह धुत्त सो रहा था। उसके मुँह से जरा-सी राल भी निकलकर बह आयी थी। अनुकूल के मुँह पर हल्का-सा घिन का भाव आया। लेकिन सोते-सोते क्या हो जाये'' इसके लिए सोनेवाला कैसे जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। उसका बनियान भी गन्दा था। शायद वह कई रोज से उसी को पहन रहा था। इस बात ने उसके उस भाव को थोडा और गहरा कर दिया। यह भी तो सम्भव है उसके पास कपडे कम हों। पर धो तो सकता ही है!

बाबूराम को जगाकर निबटने चला गया। लड़को का जमाव देखकर वह समझ गया कि सभी लड़के या तो रात को सो नही पाये या फिर देर से सोने के कारण अब आँख खुली है। बाथरूम के बाहर इतना जमाव पहले कभी देखने मे नही आया था। लड़का अन्दर जाता था। बाहर खडे लडके चिल्लाने लगते थे, "अबे बदबू करता है, निकलता नही'''इतना कब्ज था तो चला आता, ग्लसरीन की बत्ती चढा देते।"

दूसरा चिल्लाता, "अबे हँडिया-सी उलट और चला आ'''या वही बोयेगा, वही काटेगा, वही पीसेगा, वही बनायेगा और वही गर्मायेगा!"

तीसरा कहता, "नहीं भैया, खुदाई डाट लगी है, निकल नहीं रही।"

सब ताली बजाकर हँसने लगते। अनुकूल को गुस्सा भी आ रहा था और हँसी भी। वह थोड़ी देर चुप रहा। फिर बाश बेसिन पर जाकर मुँह-हाथ धोने लगा। बाबूराम आँखें मलता हुआ तेजी से आया और सीधे एक पाखाने का दरवाजा खट-खटाने लगा। खन्ना सिगरेट पी रहा था। कोई भी पाखाना खाली न होने के कारण तेजी से टहल रहा था। बाबूराम को पाखाने पर इस तरह टूट पड़ते देखकर बोला, "यार तुम्हें भी सता रही है"'मैं तो समझता था तुम इस काम के हकीम होगे''' कब्जे मे रखने की तरकीब जानते होगे। सोचा था तुमसे सीखेंगे ''!"

अनुकूल ने उसकी तरफ देखा। दिनेश बोला, "अबे चुप्प, नया गाँधी जन्म ले चुका। कहेगा, सत्याग्रह करो'''तब क्या करोगे।"

सब लोग हँस दिये। अनुकूल बिना कुछ बोले वापिस हो गया। बाबूराम अभी वहीं अटका था। वह दूसरे पाखाने की तरफ लपका। वहाँ पहले से ही खड़ा लड़का बोला, "इतनी ही जल्दी है तो लोटा लेकर उधर फील्ड पर निकल जाओ।"

बाबूराम पर दबाव बर्दाश्त नहीं हो रहा था। पहले तो वह दोनों हाथ टाँगों के बीच दबाये खड़ा रहा। उसके रोंगटे सीधे खड़े थे। जब नहीं रुका गया तो वह बाहर की तरफ भागा।

लड़के जोर-जोर से ताली बजाने लगे।

अनुकूल क्लास में पहुँचा तो प्रोफेसर मुत्तु आ चुके थे। वह जाकर पीछे चुपचाप बैठ गया। प्रोफेसर ने आते ही पढ़ाना शुरू कर दिया। अनुकूल का ख्याल था कि शायद वे कलवाले हादसे के बारे में कुछ कहेंगे। उसकी समझ के अनुसार छात्र के न रहने का अध्यापक को भी उतना ही दु:ख होना चाहिए जितना एक पिता को बेटे के न रहने पर होता है। लेकिन न तो उनके चेहरे पर ऐसे कोई चिह्न थे और न आवाज पर ही कोई असर था। वे फर्राटे से बोलते चले जा रहे थे।

वे केटेलिसिस-प्रक्रिया को धारा प्रवाह अंग्रेजी में भिन्न-भिन्न उदाहरण देकर समझा रहे थे। लेकिन उनका समझाना अनुकूल के अन्दर किसी प्रकार की कोई प्रतिक्रिया उत्पन्न नहीं कर रहा था। उसके और प्रोफेसर के बीच सुनते और बोलते जाने के रिश्ते के अलावा कोई दूसरा रिश्ता नहीं था। उसे आश्चर्य हुआ कि वह अपने प्रोफेसर की उपस्थिति को आज भी रोज की तरह क्यों नहीं महसूस कर रहा है! उसके दिमाग में अचानक एक बात कौंधी कि एक अध्यापक की उपस्थिति एक आवाज के अलावा एक इन्सान की उपस्थिति भी होनी चाहिए।

प्रोफेसर ने इण्डीकेटर से उसकी तरफ इशारा करके पूछा, "समझे?"

"सर-सर'''" अनुकूल हड़बड़ाहट में बोला। उसकी हड़बड़ाहट पर सब हँस दिये।

"क्या?"

"नो सर!" इस बात से और भी ज्यादा हँसी हुई। प्रोफेसर पहले मुस्कुराये फिर गम्भीर होकर बोले, "अगर आप लोग फॉलो नहीं कर पाते तो क्लास में आते

क्यों हो ? और भी इन्स्टीट्यूशन्स हैं, वहाँ जाइए···नानसेन्स !"

अनुकूल की समझ में नहीं आया कि वह आगे क्या करे। उसके मुँह से एकाएक निकला, "सर, मैं समझा था कल का हादसा सब पर सवार होगा···उसी ने मुझे थोड़ा अपसेट कर दिया था। आ'म सो सॉरी सर !"

ही-ही करके हँसते हुए लड़के वहीं-के-वहीं ठिठक गये।

प्रोफेसर की जबान लड़खड़ा गयी, "वास्तव में यह एक अत्यधिक दुखद घटना है···।"

"यस सर !"

"बैठ जाओ।"

वह बैठ गया—क्या कैटेलिटिक एजेण्ट रासायनिक प्रक्रिया को ही उद्दीप्त करता है ? हम लोगों की प्रतिक्रियाओं को तेज करनेवाला ऐसा कोई एजेण्ट नहीं होता ?

प्रोफेसर ने फिर दोहराया, "आप लोग समझ रहे हैं ना···? यह बहुत ही इम्पार्टेन्ट टॉपिक है।"

दो-चार लड़कों ने 'यस सर' कहा, बाकी सब खामोश बैठे रहे। प्रोफेसर बौखला गये। वे जोर से चिल्लाये, 'मैं अपनी पूरी शक्ति आप लोगों को समझाने में लगाये दे रहा हूँ, आप लोग ऐसे बैठे हैं जैसे 'जजेज़' हैं शिट !" और क्लास छोड़कर बाहर चले गये।

अनुकूल की समझ में आखरी शब्द नहीं आया था। लेकिन लड़के हँसते हुए भरभराकर बाहर निकल पड़े थे और एक-दूसरे को 'शिट्' कहकर हँस रहे थे। एक लड़के ने उसके पास से निकलते हुए अंग्रेजी में कहा, "यह असली 'शिट' है, इसी की वजह से सब 'शिट' हो गये।"

दूसरे लड़के ने कहा, "वो खुद शिट नहीं ? वक्त की नजाकत को बिना समझे बकता चला जा रहा था। अनुकूल ने ठीक प्वाइण्ट आउट किया। उसको उसी वक्त क्लास छोड़ देनी चाहिए थी। लेकिन अपनी झेंप मिटाने के लिए उसने यह बहाना ढूँढा।"

अनुकूल को 'शिट' का गाली होना समझ में आ गया था। उसका हिन्दी तरजुमा जानने की इच्छा उसके मन में बढ़ गयी थी।

एक लड़का हँसकर धीरे-से बोला, "लगता है भोला है ! जानता नहीं 'शिट' क्या होता है।"

दूसरे ने हँसकर कहा, "होता क्या है···ए डेलिकेसी···एक बार चख लो तो कभी न भूलो। देखो सब कैसा चटाखा ले रहे हैं···सब तरफ़ शिट-ही-शिट है।"

उसकी बात पर सब लोग जोर से हँस दिये। उनके आनन्द को देखकर अनुकूल के चेहरे पर भी मुस्कुराहट आ गयी।

एक और गुस्से से बोला, "गन्दी बातें मत करो···इट इज़ ब्लडी नो डेलिकेसी ···इट इज़ टट्टी !"

अनुकूल की तबियत घिना गयी। यही इन लोगों की बातचीत का स्तर है ! वह वहाँ से हट गया। बहुत देर तक उन लोगों की हू-हा सुनायी पड़ती रही।

वे लोग उस बात को आगे बढ़ा रहे थे, "इसमें क्या बात है ? कभी-न-कभी तो सभी टेस्ट करते है।"

"ओह नो···"

"जब पवित्र जल का सेवन बड़े-बडे लोग तक करते है तो···!"

सब थू-थू करते हुए हँसने लगे। अनुकूल ने दूर से ही देखा और वही पर पिच से थूक दिया।

लेक्चर हॉल काम्पलेक्स से निकलते ही देखा, बाबूराम तेजी से क्लास पकड़ने के लिए आ रहा था। अनुकूल ने उसे आते देखा तो उसके चेहरे पर हल्का-सा शैतानी का भाव आ गया। एक-आध बार उसने गर्दन हिलायी। फिर उसने बाबूराम को आवाज देकर बुला लिया। पास आते ही उसके चेहरे की शैतानी और गहरी हो गयी। उसने दो-तीन बार मुँह खोला और बन्द किया। फिर एकाएक बोला, "यू आर शिट !" और हँस पड़ा।

बाबूराम चकरा गया। वह बोला, "मैं समझा नही !"

"प्रोफेसर मुत्तु ने 'शिट' कहा और क्लास छोड़ दी। लोगो को 'शिट' कहना बहुत अच्छा लगा और वे सब वहाँ अपने को शिट कहे जाने के उपलक्ष्य मे खुशियाँ मना रहे हैं।"

"शिट क्या कोई टॉपिक था ?"

"अरे नही, शिट था शिट···उसी के लिए उन्होंने क्लास छोड़ी।" अनुकूल कहता जा रहा था और हँसता जा रहा था। उसका पेट दुखने लगा था।

बाबूराम और भी अधिक चक्कर मे पड गया था। वह बोला, "कुछ बताओ तो···तुम हँसे जा रहे हो।"

"टट्टी ··टट्टी !"

"किसी ने क्लास मे कर दी थी ?" बाबूराम ने अकचकाकर पूछा।

"अरे नही यार···किसी ने नही की। शिट माने टट्टी। प्रोफेसर ने गुस्से मे आकर सबको टट्टी कहा और क्लास छोडकर चला गया।"

बाबूराम को यह नया शब्द जानकर खुशी हुई। होठो-ही-होठो मे उसने दोहराया और बोला, "आज हमारी भी शिट निकल गयी···कोई लैटरिन से निकला ही नही। मैं बाहर की तरफ को भागा। फील्ड तक पहुँचते-पहुँचते जाँघिये मे निकल गयी।"

अनुकूल स्वभाव के विरुद्ध कुछ ज्यादा ही हँस रहा था। इस बात पर वह और भी जोर से हँसने लगा। उससे बोला नही जा रहा था। पहले तो बाबूराम का चेहरा उतर गया फिर चेहरे पर खिसियाहट भरी हँसी आ गयी। जब अनुकूल की हँसी का दौरा कुछ कम हुआ तो वह बोला, "तुम हँसते हो···वाकई मुझ पर रुकी नही। यो तो तुम्हारे उस दिन के कहने की वजह से जाँघिये पर पाजामा पहने था ···जाँघिये समेत फेंकनी पडी। बिना जाँघिये के पतलून पहनकर आया हूँ। बस अब एक लँगोट है। बिना जाँघिये के पेण्ट में नगा-नंगा-सा महसूस होता है। चलने-

फिरते भी अजीब लगता है। तुम्हारे पास कोई पुराना जाँघिया हो तो दे दो··· वजीफा मिलने पर गिलवा लूँगा।"

अनुकूल तत्काल अपने चेहरे में वापिस लौट आया। उसे खुद को लगा कि वह बेकार इतना हँस रहा था। हँसने की कोई बात नहीं थी।

बाबूराम बोले जा रहा था, "वो तो किसी ने देखा नहीं···नहीं तो हास्टिल में रहना मुश्किल हो जाता। वहीं पोंछ-पाँछकर···मिट्टी में हाथ साफ करके चला आया। बिना नहाये आने को मन नहीं चाहा। इसीलिए देर हो गयी। जब दबाव होता है तो मुझ पर रोका नहीं जाता। बचपन से ही कुछ ऐसा है।" फिर बोला, "है क्या कोई जाँघिया?"

"एक नया रखा है, वह तुम ले लेना।"

"नहीं, पुराना ही दे दो, नीचे ही तो पहनना है। नया तुम पहन लेना।"

"तुम नया ही पहनो। जब तुम्हारा वजीफा आ जायेगा तो तुम दूसरा खरीद-कर वापिस कर देना। शुरू-शुरू में उसे पहनकर भिचा-भिचा-सा लगेगा, लेकिन बाद में ठीक लगने लगेगा।"

बाबूराम को एकाएक कुछ याद आ गया। वह बोला, "तुम्हें पता है···राम-उजागर दादा को कुछ हो गया है···बहकी-बहकी बात कर रहे हैं। लगता है कुछ ओपरी का असर है। बैठे-बैठे रोने लगते हैं···हेल्थ सेण्टरवालों ने उन्हें कमरे में बन्द करके रखा हुआ है।"

अनुकूल को लगा जैसे उसे किसी ने गर्दन से पकड़कर हवा में झुला दिया। रामउजागर ही तो एकमात्र सहारा थे। इतने हिम्मती, इतने मददगार···उनकी वजह से हम लोगों को भी यहाँ कभी-कभी सिर उठाने का मौका मिल जाता था।

"किसने बताया?"

"अभी आते हुए हरचरन कह रहे थे" वार्ड के जमादार। वे तक रो रहे थे···! हमारे गाँव के हैं। हमें बच्चा कहते हैं। कह रहे थे कि हमारा बेटा बीमार पड़ा तो रामउजागर भैया हमारे घर तक गये। आज उन्हीं के कारण वह जिन्दा है···नहीं तो पता नहीं क्या हुआ होता।"

"देखकर आया जा सकता है। अगला घण्टा खाली है।"

"किसी को नहीं मिलने देते" हरचरन ही बता रहे थे। राघवन वगैरह गये थे। उन्होंने डाइरेक्टर से जाकर कहा कि रामउजागर का अच्छे-से-अच्छा इलाज कराया जाय। डाइरेक्टर ने हामी भर ली है।"

अनुकूल की बोलती ही सूख गयी थी। वह गुमसुम खड़ा था।

बाबूराम बोले जा रहा था, "हरचरन भले आदमी हैं। उनसे जब सवेरेवाली बात कही तो कहने लगे, ऐसे में हमें बता दिया करो बच्चा। कहाँ पड़ा है, हम साफ कर देंगे। मैंने मना कर दिया कि नहीं, घिन आयेगी। वे बोले, बच्चों को धो-धोकर नहीं पहनाया जाता? थोड़ा-सा सर्फ रखा है, उससे बिल्कुल साफ धुल जायेगा। मैंने इन्कार कर दिया। वे चले गये।"

अनुकूल को अपने पार्टनर की बात पर गुस्सा भी आ रहा था और हँसी भी आ रही थी। वह थोड़ा झुंझलाकर बोला, "वह चाहे लाख तुम्हारे गाँव का या परन्तु

तुम्हें उससे कहने की क्या जरूरत थी ? जो हो गया था सो हो गया था। दस कानों में बात जायेगी, फिर कहोगे लडके तंग करते है।"

"नही-नही, वे ऐसे आदमी नही। किसी से जाकर नही कहेंगे।"

अनुकूल फिर कुछ नही बोला। रामउजागरवाली बात उसे अन्दर-ही-अन्दर कुरेद रही थी। कुरेद क्या रही थी, मथ रही थी। वह पार्टनर को लेकर हेल्थ सेण्टर पहुँचा। कई और लडके मौजूद थे। रामउजागर कमरे में बन्द था। खिड़की के पास चुपचाप खड़ा था। आँखें चढ़ी थी। भँवे तनी हुई थी और भारी भी हो आयी थी। उसने अनुकूल को खिडकी के पास बुलाया और कहा, "भाग जाओ, जल्दी भाग जाओ···ये तुम्हे भी बन्द करके मार डालेंगे। ये सब कुत्तामार दस्ते के सदस्य है ··इन सबकी बाँहो मे एक-एक रस्सी छिपी है। मौका मिलते ही गले मे डालकर खीच लेते हैं, आदमी लटक जाता है···मोहन मेरा दोस्त था। उसने मुझे कान मे बताया था।" ···फिर बहुत धीरे-से फुसफुसाता हुआ बोला, "वह मरा नही था, जिन्दा था ···उसके हाथ हिल रहे थे। उसने मेरे कान के पास एक लम्बी साँस छोडी थी। मैंने बहुत गलती की, उमको पुलिसवालो को ले जाने दिया·· ये सब मिले हुए हैं। अगर पुलिसवाले न ले गये होते तो उनकी रस्सी बेअसर साबित हो जाती। फिर उनसे लोग डरना छोड देते···उन्होने इसीलिए मोहन को जिन्दा जलवा दिया। मैं यह सब जानता हूँ। इसलिए मुझे यहाँ बन्द कर रखा है। तुम लोग सब भाग जाओ ···नही तो रस्सी तुम्हे भी लटका देगी। भागो-भागो···रस्सी आ रही है।" वह चिल्लाने लगा।

अस्पतालवालो ने उन्हे वहाँ से हटा दिया।

दूसरे लड़के नसीहत करने लगे। उन्हे उसके पास नही जाना चाहिए था। समझना चाहिए था कि उसकी मानसिक स्थिति अच्छी नही है। वह उत्तेजित हो जाता है। भाईचारा कही भागा थोड़ा ही जा रहा था। बड़ी मुश्किल से शान्त हुआ था···अब फिर उत्तेजित हो गया। वे दोनो गुनाहगार की तरह चुपचाप सुनते रहे।

रामउजागर लगातार चिल्ला रहा था, "मेरे भाइयो को मेरे पास क्यो नही आने देते ? वे मेरे भाई है···तुम लोग कौन होते हो उन्हे रोकनेवाले। जहर का इन्जेक्शन लिये घूम रहे हो···तुम हम लोगो मे से किसी को भी, कभी भी खत्म कर सकते हो। वो रस्सी देखो···?" जंगला जोर-जोर से हिलाने लगा। फिर सन्तुलित ढग से बोला, "मैं तुम लोगो से नही डरता, मै डरता हूँ तुम लोगो की बदनियती से। तुम पूरी तरह मारोगे भी नही···। सिसकाओगे। तुम झटका देकर रीढ़ की हड्डी तोड़ देते हो। मोहन की गर्दन तोड़ दी थी। वैसे वह जिन्दा था। उसने लम्बी साँस ली थी। अपने हाथ हिलाये थे ··मुझे मत जलाओ वह बोलता पर गर्दन टूटी होने के कारण नही बोल पाया। दरअसल तुम बोलते रहने को ही जीना समझते हो···जो बोलते रहें वे तुम्हारी नजरो मे मरकर भी जिन्दा रहते है·हम नही बोल पाये तो जिन्दा भी मरे हुए है। तुम मेरे इन दोनो भाइयो का नाम भी मरे हुओ मे लिखवा दोगे···सो मैं बोलूंगा, खूब बोलूंगा, लिखो मेरा नाम मरे हुओ मे।" उन दोनो की तरफ इशारा करके कहा, "तुम भी बोलो···जोर-जोर से बोलो। तभी तुम

फिरते भी अजीब लगता है। तुम्हारे पास कोई पुराना जाँघिया हो तो दे दो··· वजीफा मिलने पर गिलवा लूँगा।"

अनुकूल तत्काल अपने चेहरे मे वापिस लौट आया। उसे खुद को लगा कि वह बेकार इतना हँस रहा था। हँसने की कोई बात नही थी।

बाबूराम बोले जा रहा था, "वो तो किसी ने देखा नही···नही तो हास्टिल मे रहना मुश्किल हो जाता। वही पोछ-पाँछकर···मिट्टी से हाथ साफ करके चला आया। बिना नहाये आने को मन नही चाहा। इसीलिए देर हो गयी। जब दबाव होता है तो मुझ पर रोका नही जाता। बचपन से ही कुछ ऐसा है।" फिर बोला, "है क्या कोई जाँघिया?"

"एक नया रखा है, वह तुम ले लेना।"

"नही, पुराना ही दे दो, नीचे ही तो पहनना है। नया तुम पहन लेना।"

"तुम नया ही पहनो। जब तुम्हारा वजीफा आ जायेगा तो तुम दूसरा खरीदकर वापिस कर देना। शुरू-शुरू मे उसे पहनकर भिचा-भिचा-सा लगेगा, लेकिन बाद मे ठीक लगने लगेगा।"

बाबूराम को एकाएक कुछ याद आ गया। वह बोला, "तुम्हें पता है···रामउजागर दादा को कुछ हो गया है···बहकी-बहकी बात कर रहे हैं। लगता है कुछ खोपरी का असर है। बैठे-बैठे रोने लगते हैं···हेल्थ सेण्टरवालो ने उन्हे कमरे मे बन्द करके रखा हुआ है।"

अनुकूल को लगा जैसे उसे किसी ने गर्दन से पकडकर हवा मे झुला दिया। रामउजागर ही तो एकमात्र सहारा थे। इतने हिम्मती, इतने मददगार···उनकी वजह से हम लोगो को भी यहाँ कभी-कभी सिर उठाने का मौका मिल जाता था।

"किसने बताया?"

"अभी आते हुए हरचरन कह रहे थे" वार्ड के जमादार। वे तक रो रहे थे···! हमारे गाँव के है। हमे बच्चा कहते हैं। कह रहे थे कि हमारा बेटा बीमार पडा तो रामउजागर भैया हमारे घर तक गये। आज उन्ही के कारण वह जिन्दा है···नही तो पता नही क्या हुआ होता।"

"देखकर आया जा सकता है। अगला घण्टा खाली है।"

"किसी को नही मिलने देते···हरचरन ही बता रहे थे। राघवन वगैरह गये थे। उन्होने डाइरेक्टर से जाकर कहा कि रामउजागर का अच्छे-से-अच्छा इलाज कराया जाय। डाइरेक्टर ने हामी भर ली है।"

अनुकूल की बोलती ही सूख गयी थी। वह गुमसुम खडा था।

बाबूराम बोले जा रहा था, "हरचरन भले आदमी है। उनसे जब सवेरेवाली बात कही तो कहने लगे, ऐसे मे हमें बता दिया करो बच्चा। कहाँ पड़ा है, हम साफ कर देंगे। मैंने मना कर दिया कि नही, घिन आयेगी। वे बोले, बच्चो को धो-धोकर नही पहनाया जाता? थोड़ा-सा सर्फ रखा है, उससे बिल्कुल साफ धुल जायेगा। मैंने इन्कार कर दिया। वे चले गये।"

अनुकूल को अपने पार्टनर की बात पर गुस्सा भी आ रहा था और हंसी भी आ रही थी। वह थोड़ा झुंझलाकर बोला, "वह चाहे लाख तुम्हारे गाँव का था परन्तु

था लड़का आ जायेगा तो सुख की नदी वह निकलेगी'''हजारो साल की विगत भूलकर छन-भर की झूठी अगत मे भुला बैठे थे ! आप लोग हम बेसहारा गरीब लोगो के बच्चों को अपने बच्चो जैसे इन्सान के बच्चे क्यो नही समझते ? हम लोगो ने आपका क्या बिगाडा ?" फिर हाथ जोड़कर कहा, "जाइए, आप हाकिम हैं, आपसे जवान लडाता मैं अच्छा नही लगता ।"

डीन वहाँ से चुपचाप खिसक गया था ।

ये सब सुनी-सुनायी बाते थी । न अनुकूल ने अपनी आँखो देखी थी और न बाबूराम ने । अनुकूल तभी से अन्दर-ही-अन्दर एक तरह की ऊहापोह मे खोया रहने लगा था । वह ऊहापोह थी कि बाकी सबका क्या होगा ?

बार-बार सोचने पर भी इस सवाल का उसे कोई जवाब नही मिल पा रहा था ।

रामउजागर को अपने स्वास्थ्य के कारण एक साल के लिए इन्सटीट्यूट छोड़ना पड़ा । उसे लीव दे दी गयी थी । वे सब लड़के जो रामउजागर को अपना सहारा मानते थे अचानक बेसहारा हो गये थे । अच्छी अंग्रेजी और तैराकी का चैम्पियन होने के कारण वह डिस्को-माहिर छात्रो के वर्ग को अपने-अपने पाजामो से बाहर नही आने देता था । एक-दो बार जब वे बाहर आये भी थे तो उसने उनकी 'गर्ल्स-फ्रेण्ड्स' के सामने स्वीमिंग-पूल मे लुढकाकर उनकी ची बुलवा दी थी । फिर उसी ने उन्हें निकाला भी ।

रामउजागर यही कहा करता था कि हमारा क्या जायेगा, हजारों साल से पिटते चले आ रहे हैं'''अनन्त लात-मुक्के खाये हैं, उसमें चार-छः लात-मुक्के और जुड़ जायेंगे । लेकिन ये हमारे एक ही मे डिस्को नाचने लगेंगे । वे सब लड़के उससे मुँहजोरी न करके हँस देते थे । वैसे भी वह हर एक की मदद के लिए हर वक्त तैयार रहता था । कभी किसी ने उसके सामने सवाल पेश नही किया । आभास मिलते ही वह स्वयं जा उपस्थित हुआ ।

दक्षिण का एक लड़का पन्द्रह दिन अस्पताल में रहकर चल दिया था । उसकी बीमारी के दौरान कुछ लडको ने आरम्भ मे तो चार-चार घण्टे की ड्यूटी बांध ली थी । लेकिन जब बीमारी बढ़ने लगी और उसका कोई ओट नजर आना बन्द हो गया, लड़के खिसकने लगे । उनकी अपनी पढ़ाई का दबाव उसकी बीमारी से ज्यादा बड़ा हो चला । रामउजागर केवल शाम-सवेरे जाता था । मेडिकल कालिज मे दाखिल होने की वजह से चौदह किलोमीटर साइकिल चलाकर जाने मे उसे सिर्फ बीस मिनट लगते थे । उसने अपनी साइकिल के मडगार्ड निकलवाये हुए थे । उसका ख्याल था कि उससे घर्षण कम हो जाता है और साइकिल की स्पीड बढ़ जाती है ।

उन लडको को कन्नी काटते देख रामउजागर बिगड़ गया और उन सबको धकियाकर बाहर निकाल दिया । साथ मे कहनी-अनकहनी सब कही, "आप लोग

बच पाओगे।"

डॉक्टर को बुला लिया गया था। डॉक्टर ने सबकुछ देख-सुनकर अनुकूल और बाबूराम को फिर से खिड़की के पास जाने दिया। शायद उसे शान्त करने में कुछ मदद मिल सके। वे खिड़की के पास पहुँचे तो वह उन दोनों के माथे और सिर पर हाथ फेरने लगा। वह हाथ फेरता जा रहा था और कहता जा रहा था, "तुम इन लोगों के चक्कर में बिलकुल मत पड़ना···तुम्हें कोल्हू में डालकर बैलों को टिटकार देंगे। मेरे परदादा को डालकर बैल टिटकार दिये गये थे···तेल निकल जायेगा। आदमी का तेल इन्हें बहुत पसन्द है। शीशी में भर लेते हैं और ग्राहकों को रहस-रहस कर दिखाते हैं। मेरे भाई, तुम चले जाओ। यहाँ मत रहो···यहाँ कुछ नहीं रखा। ये लोग शुरू में आकर्षित करते हैं फिर मकड़ी की तरह जाल में फँसाकर फोक बना देते हैं···फोक किसी के काम नहीं आता। मुझे देख रहे हो···मैं अब फोक हूँ।" वह हँसने लगा और देर तक हँसता रहा।

अनुकूल का दिल बैठा जा रहा था।

वह बोला, "तुम भी कुछ बोलो···कुछ तो बोलो। तुम नहीं बोलोगे, मैं जानता हूँ। तुम डरे हुए हो। नहीं बोलते तो जाओ···यहाँ से चले जाओ, भागो।"

डॉक्टर ने आकर कहा, "मि. रामउजागर, आप अपने-आपको शान्त रखिए। आपकी तबियत इस लायक नहीं कि आप चिल्लायें। अगर आप चुप नहीं होंगे तो हमें इलेक्ट्रिक शॉक देना होगा।"

वह रोने लगा, "मैं जानता हूँ तुम क्या हो···शॉक क्या होता है! सब कुत्ता-मार दस्ते के एजेण्ट हो···" यह सबकुछ उसने अंग्रेजी में कहा।

डॉक्टर ने उन दोनों को चले जाने का इशारा किया। उनकी क्लास का भी वक्त हो गया था। वे वहाँ से चले गये। अनुकूल का मन क्लास में जाने का नहीं था।

उन दोनों के चले जाने के बाद रामउजागर बहुत उत्तेजित हो गया था और बार-बार चिल्ला रहा था—'अनुकूल आदि सब लड़कों को रस्सियों में बाँधकर लटका दिया गया'''उनके पाँव जमीन से ऊपर उठ गये हैं। वह उन्हें बचाने के लिए सीखचों को जोर-जोर से हिला रहा था और लग रहा था कि वे टूटकर गिर जायेंगे।

अन्ततः उसे इन्जेक्शन देकर बेहोश कर दिया गया। शाम को जब उसके घर-वाले आ गये तो उसे मेण्टल हॉस्पिटल में स्थानान्तरित कर देना पड़ा। चलते हुए उसके बापू बोले, "कोयले की खान से निकला एक अनघड़ हीरा सफाई के लिए भेजा था···हीरे का तो कहीं पता नहीं, कोयला लेकर जा रहे हैं।"

डीन कुछ कहने लगा तो उसके बापू ने कॉलर पकड़ लिया, "मत कुछ कहिए··· आप बड़े आदमी हैं सबकुछ करके भी बेदाग छूट जायेंगे, हम कहकर भी दोषी बन जायेंगे। हम तो अपनी सब उम्मीदें, खुशियाँ यहीं दफन करके जा रहे हैं। हमारे दिल से पूछिए···जिस पौधे को इसलिए लगाया था कि छाया देगा अब उसी को जिन्दा रखने के लिए हमें छाया का इन्तजाम करना है। हम कितने मूर्ख थे···सोचा

थे। वे किंकर्त्तव्यविमूढ़-से उनकी तरफ देखते रहते थे। नीलम्मा होती थी तो उनको समझा देती थी। दरअसल नीलम्मा भी उनकी ही भाषा बोलती थी। रामउजागर होता था तो बिना फटकारे नहीं छोडता था दुनिया में ऐसे आदमी अभी भी बाकी है जो बिना अंग्रेजी जाने जिन्दा हैं और रहना चाहते हैं। तब कहीं जाकर लडके हिन्दी बोलते थे। पिता के चेहरे पर अर्ध-परिचितता का भाव उतर आता था।

उस लड़के के पिता वहाँ से चलते समय एक काला धागा साथ ले आये थे, जिसमे कई छोटी-छोटी स्काउटिंग की-सी गाँठे लगी थी। शायद वह धागा दक्षिण के *भगवान वेंकटेश्वर के मन्दिर से प्राप्त किया गया था।* उस धागे को बाँधते ही बेटे के निरोग हो जाने की सम्भावना के प्रति वे पूर्णतया आश्वस्त थे। उन्होंने रामउजागर से यही कहा था कि बस इस बात का ध्यान रखना है कि डोरे मे लगी गाँठें न खुलें।

दरअसल उन्हें पहुँचने मे दो कारणो से देर हुई थी— पैसे का प्रबन्ध और वह धागा! नही तो वे पहले ही पहुँच गये होते। उनकी छोटी-सी दुकान मे इतनी गुंजायश नही थी कि वह उस दुकान से इतनी दूर का किराया-भाडा, इलाज-मालजे का खर्चा निकाल सकते। जो थोडी-बहुत जमीन थी वह बेटे को एक बड़ा आदमी *बनाने के स्वप्न को साकार करने मे चली गयी थी। थी तो वह रहन ही, पर अब* छूटने की कोई आशा नही रही थी। बस इतनी ही खैर थी कि दो बेटियो की शादी हो चुकी थी। सबसे छोटा बेटा था। उसी पर आस लगी थी कि कब पढ़कर आयेगा और कब सुख देगा। दोनो बूढे-बुढिया एक-एक दिन गिनते थे। बस अब राजू के आने में साल-भर रह गया, दस महीने रह गये… छः महीने… बस इससे आगे गिनती खत्म हो गयी थी।

पिता के आने के बाद बेटे ने दो-तीन वाक्य ही बोले।

"माँ कैसी हैं?"

"बहनें कैसी हैं?"

"दुकान का क्या हाल है?"

पिता के मुँह से बोल तो फूटा ही नही था। बस भीगी आँखो गर्दन हिला-हिलाकर हाँ-हाँ करते रहे थे। फिर वह बहुत देर तक अपने पिता का हाथ अपने हाथ मे लिये लेटा रहा था।

नीलम्मा ने रामउजागर को बाद मे बताया कि उसने एक वाक्य नीलम्मा के बारे में भी कहा था। रामउजागर की तारीफ भी की थी। पिता की आँखें बह चली थी और देर तक नीलम्मा के सिर पर हाथ फेरते रहे थे। बाद मे उन्होंने यह भी कहा कि इस परदेस मे भी अपने-से करनेवाले लोग मिल गये, भगवान वेंकटेश्वर की ही कृपा है!

उसके बाद उस लड़के ने न आँखें खोली और न मुँह!

जिस समय राजू के प्राण छूटे उस समय इत्तफ़ाक से पिता के अलावा नीलम्मा और रामउजागर ही उसके पास थे। रामउजागर को शाम से ही खतरा नज़र आने लगा

घण्टों पी लोगे, डिस्को नाच लोगे'''लड़कियों के हॉस्टिल मे घुमे रहोगे'' तब पढ़ाई का दबाव महसूस नही होगा। तुम्हारा अपना भाई-बन्धु आखरी घड़ियाँ गिन रहा है तो पढ़ाई याद आ रही है। तुम सब भागो यहाँ से ' रामउजागर के रहते कोई लड़का बिना तीमारदारी के नहीं मर सकता।" वे लड़के पहले तो झेंपे। बाहर खड़े होकर सलाह-मशवरा करते रहे। लेकिन जब रामउजागर ने दोबारा फटकार लगायी कि अगर रहना है तो मन लगाकर रहो और भूल जाओ कि तुम्हें पैसा कमाने इंग्लैण्ड, अमेरिका जाना है। एक लड़के के मुँह से निकल गया, "रात को तुम रह जाया करना, दिन मे हम लोग बारी-बारी से ड्यूटी कर लिया करेंगे।"

रामउजागर बिगड़ गया, "अगर रात को मुझे करनी है तो दिन का इन्तजाम भी मैं कर सकता हूँ'''अब तुम लोग नजर मत आना।"

वे लड़के विस्मित थे। यद्यपि इस बन्धन से मुक्ति का अहसास भी अन्दर-ही-अन्दर था। वे उसके व्यवहार से थोड़ी तकलीफ में आ गये थे। वे आपस मे बात करते रहे थे कि जिम्मेदारी लेना आसान है और निबाहना मुश्किल।'' ऐसे मे घरवालो को आकर सँभालना चाहिए'' साथ के लड़के तो दो-चार दिन ही निबाह सकते हैं'''जिन्दगी-भर की बीमारी थोड़े ही ओटी जा सकती है।

बीच-बीच मे आपस मे ही रामउजागर पर चोट कर-करके उन सब बातों का बदला भी लेते जाते थे'''रामउजागर का क्या, हो गये तो इन्जीनियर नही तो पैतृक धन्धा है ही। इस पर सब खुलकर हँसते थे।

"पैतृक धन्धा!" कोई एक दोहराता था और वे फिर हँसना चालू कर देते थे।

उसके बाद वह लड़का करीब एक सप्ताह जिया था। इन सात दिनो मे रामउजागर ने उस लड़के की वह सेवा की थी कि सब दाँत-तले उँगली दबा गये थे। बाद मे डॉक्टर और नर्सें जबरदस्ती रामउजागर को आराम करने भेज देते थे और अपने-आप मरीज को ताकते रहते थे। बस नीलम्मा, जो उस लड़के के साथ पी-एच. डी. कर रही थी, रोजाना घण्टा-दो-घण्टा आकर बैठ जाती थी। हालाँकि वह ड्यूटी करने के लिए तैयार थी पर रामउजागर उसे समझा-बुझाकर भेज देता था। नीलम्मा उस लड़के के इतना निकट थी कि इस बात का उसके मन पर बहुत भार था कि वह उसके लिए कुछ नही कर पा रही है। वह कहती थी कि कई बार परिस्थितियाँ अपने कहे जानेवाले लोगो को दूर कर देती है और दूर के लोगो को नजदीक ले आती हैं। लेकिन रामउजागर उसमे यही कहकर समझाता था कि करना तो हाथों-पैरों का होता है और दुआ दिल की होती है ! आपकी दुआ ज्यादा कारगर होगी और हमारी सेवा'' ! वह लौट जाती थी। लेकिन रामउजागर ने उसकी आँखो मे कृतज्ञता का ऐसा भाव देखा था जिसको वह पहचान तो सकता था पर उसका बयान उसके पास नही था।

रामउजागर उस दिन पहली बार हॉस्टिल गया था जब मरने के दो दिन पहले उसके पिता सुदूर दक्षिण के किसी गाँव से आ गये थे। वे टूटी-फूटी हिन्दी जानते थे। कभी बहुत पहले वे बनारस मे रह चुके थे। लड़के आकर उनसे अंग्रेजी बोलने लगते

आमने-सामने हो गये हैं। वह लड़का प्रकारान्तर से एक अनकही जिम्मेदारी उसे दे गया है। हालाँकि वह यह भी समझता था कि उसका यह सोच जरूरत से ज्यादा खीचकर नापने की तरह ही है। फिर भी वह दूसरे-तीसरे दिन नीलम्मा से मिलने जाता था। उसके ठहरे हुए मौन को बच्चो के व्रत की तरह तुड़वाने की कोशिश करता था। कई बार तो उसे अपनी तरफ से ही लम्बी-लम्बी बातें करते रहना पड़ता था। बहुत धीरे-धीरे उसने नीलम्मा को उस एक वाक्य 'ठीक हूँ' की परिधि से बाहर निकालकर दो-चार पग आगे बढ़ाया। दो-चार वाक्यो से बढ़ते-बढ़ते वह बहुत-सी बातें करने लगी। लेकिन उसने राजू की मृत्यु की घटना को कही ऐसी जगह छिपा लिया था जहाँ से उसका अब तक बाहर नजर आना बन्द हो गया था। वह केवल वर्तमान की बातें करने लगी थी। भूत मे वही तक जाती थी जहाँ से वापस लौटने मे वह समझती थी कि कोई ऐसा दृश्य उपस्थित नही होगा जो बवण्डर की तरह उसका सबकुछ उथल-पुथल कर दे।

वह अपने से बाहर आकर और और कामों मे हिस्सा लेने लगी थी। रामउजागर ने ही उसे उन बाहरी बातो से जुड़ने के लिए प्रेरित किया था। वह यही कहता था, जब आदमी अन्दर घिर जाता है तो उसे बाहर आ जाना चाहिए। बाहर इतना विस्तार होता है कि उसमे सब ऊँच-नीच समा जाती है। वह स्वयं भी रामउजागर के हॉस्टिल में चली जाती थी। वहाँ यह एक अजीब बात थी कि लड़के और लड़कियो के सम्पर्क किसी निषेध से संयोजित नही होते थे। लड़के-लड़कियाँ इस बात का गर्व से जिक्र करते थे कि वे प्रतिबन्ध-मुक्त हैं। उन सबसे ऐसी कोई स्थिति उत्पन्न नही होने दी थी कि स्वतन्त्रता-हनन की दिशा में कदम उठाने का किसी को कोई मौका मिले। अपनी सब स्थितियाँ उन्होने अपने ही हाथो में रखी थी। बस एक बार ऐसी स्थिति आयी थी जब गर्ल्स हॉस्टिल मे पुराने दकियानूसी किस्म के एक वार्डन का कुछ समय के लिए प्रादुर्भाव हुआ था। उसने दरवाजे पर एक रजिस्टर रखवा दिया था। जो लड़का अन्दर जायेगा तो नाम और टाइम लिखेगा, बाहर आयेगा तो लिखेगा। यही लड़कियो पर भी लागू किया गया था। उसके लिए भी बाहर जाने और लौटकर आने का समय लिखना जरूरी कर दिया गया था।

स्वतन्त्रता के इस अधिग्रहण पर लड़कियाँ असन्तुलित हो उठी थी। जिस दिन यह आदेश लागू हुआ वह रात काटनी उनके लिए दूभर हो गयी थी। पुरुष-प्रभुत्व का यह आरोपण क्यो? यहाँ तक कि उन्होंने उस रात बिना कुछ कहे उसका सविनय विरोध भी किया था। फोन कर-करके लड़कों को अपने हॉस्टिल मे इकट्ठा कर लिया था। जब उनको रजिस्टर पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा तो लड़कियो द्वारा ही वह रजिस्टर रखनेवाले के ऊपर उछाल दिया। इस पूरे आन्दोलन की अगुआ नीलम्मा थी। रामउजागर पीछे था। नीलम्मा ने बड़े सख्त शब्दो का प्रयोग किया था'''उस बूढ़े वार्डन से जाकर कहना की लड़कियो ने पूछा है कि क्या अभी भी वह उन्हें अठारहवी सदी की औरतें समझता है'''अगर समझता है तो उससे कहना कि हम अपने हस्ताक्षरो को रजिस्टर में बन्द करके मानसिक-विलास के लिए उसके पास भेजने के लिए तैयार नही।

गाँधीजी के नमक तोड़ो आन्दोलन के दाण्डी मार्च की तरह हॉस्टिल की

था। इसलिए वह रात को हॉस्टिल न जाकर वहीं बना रहा था। नीलम्मा भी वहीं रही थी। वहाँ की एक नर्स से उसकी दोस्ती हो गयी थी, इसलिए वह उनके रिटायरिंग रूम में ही बनी रही थी। बीच-बीच में आकर खबर ले जाती थी। उसके पिता बस आँख बन्द किये भगवान वेंकटेश्वर को ही याद करते रहे थे। उसका जबड़ा कसता जा रहा था और शरीर धनुष की तरह मुड़ता जा रहा था। डॉक्टर पहले तो कुछ बोलते भी थे अब बिल्कुल मौन थे। सूरज उदय होते-होते उसने आँखें पलट दीं। उसके पिता अपने बेटे की जगह रामउजागर से लिपटकर रोने लगे। रामउजागर ने बचना भी चाहा पर ऐसे क्षण में वह बच भी कहाँ तक सकता था। पिता का बिलखना किसी ताजा-ताजा अनाथ हुए बच्चे के बिलखने से भी बदतर था। जिस प्रकार वह रामउजागर से लिपटे थे उससे यही आभास होता था कि वे यही समझ रहे हैं कि उसे पुन. जीवित करना रामउजागर के हाथ में है। अगर रामउजागर चाहेगा तो वह उठ बैठेगा। रामउजागर को इतना सम्मान आज तक किसी ने नहीं दिया था। इसलिए वह सब उसे असहनीय लग रहा था। वह उनके हाथों में बुत बन गया था। उसे लग रहा था कि यदि थोड़ी देर और वह इसी तरह उनके विश्वास से खेलता रहा तो वह फट पड़ेगा।

नीलम्मा उसके मृत शरीर को पहले एकटक देखती रही थी, फिर एकाएक सिसक-सिसककर रो पड़ी थी, "तुमने धोखा क्यों दिया ?" इसके आगे वह कुछ बोल नहीं पायी थी।

जब तक आई. आई. टी. खबर पहुँची और लोग इकट्ठा हुए तब तक ये तीनों ही वहाँ बने रहे। तीनों का दुख अपनी-अपनी तरह का था। किसी के दुख की धारा किसी से नहीं मिलती थी। एक को देखकर एक के दुख में ज्वार आ रहा था। रामउजागर ही उसके सम्पर्क में सबसे बाद में आया था। उसे लगातार लग रहा था कि एक जीवन को बचाने का उद्यम करते-करते वह उसे खो बैठा। इससे तो अच्छा था वह आता ही नहीं। जब मर जाता तो एक बाहरी आदमी की तरह वह भी दाह-संस्कार में शरीक हो गया होता। अब अन्दर के आदमी और उसकी मौत के एक चश्मदीद गवाह की तरह शरीक होगा ''कितना जानलेवा हो जायेगा !

उन दोनों ने खोया था। इसलिए वे दोनों खोनेवाले आदमी की गूंगी मनःस्थिति में गहरे उतरे हुए थे'''तुझे कहाँ पाऊँ ?

दाह-संस्कार के बाद पिता तो बेटे के मुट्ठी-भर फूल लेकर चले गये। नीलम्मा अकेली पड़ गयी। कहाँ जाये ? क्या करे ? वह फड़फड़ाती थी और अपने ही अन्तर्मन के एक कोने में शान्त बैठ जाती थी। तब तक बैठी रहती थी जब दोबारा फड़फड़ाने की लाचारी उसे फिर- में नहीं घेर लेती थी। उसे लगता था कि उसके अन्दर धीरे-धीरे बरमा चल रहा है। वह जब ऐसे स्थल पर पहुँच जाता था जहाँ उसके वे प्राण बसे थे, वहीं वह तड़फड़ाहट पैदा हो जाती थी।

नीलम्मा को पता था या नहीं पर रामउजागर को जरूर लगता था कि राजू के कारण नीलम्मा से जो सम्बन्ध बना था, उसके बीच से चले जाने के बाद वे दोनों

है। सोशल लेवल होता है, संस्कार होते हैं··· तुम सिर्फ बोल्डनेस ही चाहती हो, नथिंग ऐल्स ! फिर लडकियाँ डाकुओं से क्यों नही दिल लगाती ? मैं बिल्कुल नही मानता···"

रामउजागर एक बार को कुलबुलाया कि जाकर उससे कहे कि लडकियो के बगल में बैठकर सेक्स की बातें करने से स्टेटस नही बनता। लेकिन नीलम्मा, जो दूसरी लड़कियो से बात करके कल का कार्यक्रम तैयार कर रही थी, लौट आयी। रामउजागर ने उससे थोड़ा आगे चल निकलने के लिए कहा, "हम लोगो के यहाँ बने रहने से और लोगों की बातचीत मे व्यवधान पड सकता है।" वे लोग थोड़ा आगे बढ गये।

रामउजागर ने उस लड़के को कहते सुना, "राम ने सुन तो नही लिया·· मुंह-फट आदमी है ··कल मेरी गर्दन नापेगा।"

लडकी हँस दी, "देखो, यही फर्क है !"

लड़का चुप रहा।

अगले दिन जो प्रतिनिधि मण्डल डायरेक्टर से मिला उसमे रामउजागर सम्मिलित नही हुआ। इस बात से नीलम्मा को चोट पहुँची। सारी योजना रामउजागर की सलाह से तैयार की गयी थी और जब डायरेक्टर से जाकर बात करने का मौका आया तो रामउजागर पीछे हट गया। नीलम्मा ने तो फिर भी उससे ज्यादा जिद नही की। और लड़कियों ने अलबत्ता उसे साथ ले चलने के लिए पूरा जोर लगा दिया। लेकिन रामउजागर पत्थर की तरह गड़ गया था।

उसका एक ही जवाब था कि उसके सम्मिलित होने से आन्दोलन पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। वैसे भी लडकियो को अपनी समस्या स्वयं सुलझानी चाहिए। आदमी और औरतों का आजादी का नजरिया परस्पर विरोधी होता है। अगर वह आपकी आजादी की इस लड़ाई मे सम्मिलित भी होगा तो अपनी आजादी को और अधिक विस्तृत करने के लिए, सीमित करने के लिए नही। इस सलाह से दूसरे लड़के नाराज हुए। वे रात-भर जगे थे, सवेरे क्लासो मे नही गये थे। लडकियो की आजादी को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए उन्होंने हर कुर्बानी की हामी भरी थी। मौके पर राम-उजागर सब उलटा किये दे रहा था। लडकियों का अकेले मार्च करते हुए जाना सबके लिए शरम की बात होती जा रही थी। जिन कन्धो से उनके कन्धों को सटकर चलने की बात थी, रामउजागर की करनी से वे सब कन्धे छूटे जा रहे थे।

रामउजागर से बिना और ज्यादा आग्रह किये नीलम्मा लड़कियो को लेकर चली गयी थी। हालांकि वह मन-ही-मन दुखी थी। पर वह यह भी जानती थी कि इसके पीछे कोई कारण जरूर है। साथ ही लडको को यह भी नही जताना चाहती थी कि उनकी मदद के बिना वे असहाय हो गयी।

फिर भी लडके 'एसकोर्ट' की हैसियत से पीछे-पीछे गये थे। इस बात से सभी खुश थे कि रामउजागर जैसा 'नट' बीच से निकल गया। जरूरत पडने पर अब वे सीधे मुहिम सँभाल सकते हैं।

लड़कियाँ लड़कों के साथ रात-भर छोटी नहर के किनारे टहलती रही थी और गाना-बजाना करती रही थी। यह बात वार्डन समेत अन्य अधिकारियों के पास पहुँच गयी थी कि अगर उधर से पहल हुई तो वे उसका विरोध करेंगी। जरूरत पड़ी तो चार-छः दिन तक वे नहर के किनारे ही रहकर गुजार देंगी। लेकिन तब तक हॉस्टिल में नहीं जायेंगी जब तक यह काला नियम वापिस नहीं ले लिया जाता। गरज कि रात-भर जंगल में मंगल होता रहा था।

उस रात रामउजागर को एक हल्का-सा धक्का भी लगा। हालांकि सब लोग साथ ही थे। परन्तु छोटे-छोटे ग्रुपों में बँटे थे। चूँकि रात गुजारनी थी इसलिए तरह-तरह की बातें और कार्यक्रम करके समय को अनदेखा कर रहे थे। उन लोगों के ग्रुप से थोड़ी दूर पर एक दूसरा ग्रुप था। वे लोग मस्ती से बातें कर रहे थे। रामउजागर के कानों में कुछ भनक पड़ी। अपने-आपको अद्वितीय सुन्दर और योग्य समझनेवाली लड़की के साथ एक लड़का नीलम्मा को लेकर धीरे-धीरे बातें कर रहा था।

लड़के ने नीलम्मा के बारे में अपनी राय जाहिर की, "नीलम्मा ब्रिलियेन्ट भी है और खूबसूरत भी'''लेकिन जरूर किसी मानसिक ग्रन्थी से ग्रस्त है।"

"लड़के छाँटे भी तो ऐसे'''जो शक्ल-सूरत से अच्छे हों या स्तर से लो हों''' लेकिन उसके लिए मरमिटने को तैयार रहते हों। वो लड़का 'ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दे'''नीलम्मा के अलावा उसे कुछ दीखना ही नहीं था। अपने आपमें एक सम्पूर्ण भक्त!"

"तुम बताओ इसका क्या कारण है? तुम तो हर वक्त उसके साथ रहती हो।"

"मैं क्या बताऊँ'''मैंने उससे इस टॉपिक पर बात करना ही बन्द कर दिया।"

"क्या तुम्हें नहीं लगता कि उसका आदर्शवाद और उसके नीचे दबा उसका दमित सेक्स ही उससे यह सबकुछ करा रहा है?"

"ओह नो, तुम लड़कों को हर चीज के पीछे सेक्स नजर आता है मैं जानती हूँ इस मामले में वह फ्रिजिड है। सेक्स के बारे में सब लड़कियाँ बातें करती हैं पर वह कभी नहीं करती।"

"उससे चिढ़ती होगी?"

"नहीं, चिढ़ती भी नहीं। कंजुअली लेती है।"

"फिर उस मरहूम का जिक्र आता है:'''वह उसकी भाषा बोलता था''' उसके आसपास का था। लेकिन अब इस साले एस. सी. को साथ लगा लिया। इसमें ऐसी क्या खूबी है?"

"यह तो तुम्हें मानना ही पड़ेगा कि'''दोनों ही असाधारण रूप से बोल्ड हैं।"

"ह्वाट बोल्ट?"

"अगर ये दोनों न हुए होते तो रजिस्टर चालू हो गया होता। आप लड़के लोग हॉस्टिल के बाहर टहलते और सीटी मार-मारकर जिन्दगी हराम कर देते।" वह हँस दी।

"ठीक है, औरतों को सिर्फ बोल्डनेस ही तो नहीं चाहिए। स्टेटस भी तो जरूरी

आता था। वह चाहता था कि उसकी बात पर अनुकूल अपनी प्रतिक्रिया जाहिर करे। एक दिन जब खन्ना मिला, तो उसने बात को नेतागिरी तक ही महदूद नही रखा। थोड़ा आगे बढ़ाया। नेतागिरी के हालचाल पूछने के बाद तुरन्त बोला, "वही तक रखना जहाँ तक उसकी जरूरत है। दूसरो के इलाके मे फैलायी तो हम कतर-ब्योंत करने मे बहुत होशियार हैं‥ वही पहुँचा देंगे।"

उस रोज अनुकूल रुक गया और बोला, "खन्नाजी, आप बार-बार इसी नेतागिरी की बात क्यो दोहराते हैं? पता नही आपको यह शक कैसे हो गया कि हम सब लोग नेतागिरी करने आये है। हम लोग तो बहुत ही सीमित साधनो के लोग है, आप जैसे बडे घरो के बच्चे नही ।"

खन्ना ने बीच ही मे अपनी उँगली मे उसकी ठुड्डी ऊपर उठाकर कहा, "अगर तुम अपनी सीमाओ को समझते हो तो ठीक है‥‥नही समझने तो समझो। रियाया की स्थिति से ऊपर उठने मे अभी समय लगेगा। अगर हम लोगो की बराबरी करनी थी तो वैसा ही बीज चाहिए था " और हँस दिया।

वह घूमा और चल दिया। थोडी दूर जाकर उसने दो-तीन लड़कों को पुकारा और बुलन्द आवाज में बोला, "अब चलो, यह अपनी औकात को पहचानता है। अभी सिर्फ इन लोगों को निगरानी मे रखे जाने की जरूरत है।"

अनुकूल ने सुना। गर्दन फूल आयी। होठ फड़फड़ाने लगे। वह उस चोट को सहलाकर राहत पाने की स्थिति मे भी अपने को नही पा रहा था।

उस दिन पहली बार अनुकूल ने अपने सब लडकों की एक मीटिंग अपने कमरे में बुलायी। उस मीटिंग को बुलाने का उद्देश्य यही था कि बाहर फैलते जहर से उन्हें अवगत करा दे। उसने इस बात की पूरी एहतियात बरती थी कि वह घटना कही अफवाह न बन जाय। कमरो मे जा-जाकर मीटिंग के लिए आमन्त्रित करते समय जो विचाराधीन विषय बताया था, वह था राज्य सरकारो द्वारा वजीफे का भुगतान न किया जाना। जो दस लड़के आये थे, पैसे की कमी के कारण उनमे से दो छोड़कर जानेवाले थे।

पहले स्कॉलरशिप के बारे मे बात हुई। सभी लड़के पैसे की कमी से परेशान थे। कुछ ने अपने घरवालों को पैसे के लिए लिख दिया था और कुछ लिखने की सोच रहे थे। उनके सामने यही समस्या थी कि वे लोग भेज तो देंगे पर उनका बाल-बाल बिंध जायेगा। एक लड़के के पास पैसा आया था। दूसरे लडके उसी से माँग-माँगकर गाड़ी खीच रहे थे। दो-चार दिन के अन्दर ही वह स्थिति आनेवाली थी जब सब लोगो की जेबें समान रूप मे खाली हो जाने को थी। उन्होंने डायरेक्टर और रजिस्ट्रार के पास डेपुटेशन ले जाने का निर्णय लिया। वे यही कहना चाहते थे कि संस्थान की ओर से उन्हें आंशिक अग्रिम भुगतान कर दिया जाय। जब अनुदान प्राप्त हो जाय तब उसमे से काट लिया जाय। हालांकि वे लोग इस बारे मे पूरी तरह आश्वस्त नही थे कि उनका प्रस्ताव मान ही लिया जायेगा। पर वे अपना पूरा जोर लगानेवाले थे। वे सोचते थे अगर जरूरत पडी तो वे लोग भूख हड़ताल पर

लडकियों की ओर से बोलनेवाली दो ही लडकियाँ थी —नीलम्मा और वह अजहद खूबसूरत लडकी। जो लडके 'एसकॉर्ट' की तरह गये थे वे बीच-बीच मे सहारा लगाते रहे थे। वैसे लडके लगभग खामोश ही थे। वे अपने आपको दूसरी रक्षा पंक्ति की तरह तैयार किये हुए थे। पहली पंक्ति के ढहते ही वे सामने थे। एक-एक बूंद रक्त की जगह सौ-सौ बूंद बहाने के लिए मुस्तैद।

सिर्फ एक लड़के ने उत्तेजित होकर लड़कियों के समर्थन का सीन प्रस्तुत किया था। डायरेक्टर ने मुस्कुराकर चुटकी ली थी, "लड़कियों के सामने लड़के जब कोई बात कहते हैं तो उसमें से फिफ्टी परसेन्ट डिसकाउण्ट उनके लड़के होने का काट देना चाहिए।"

लडके-लड़कियाँ सब हँस दिये थे। लेकिन नीलम्मा गम्भीर रही थी। वह वस्तुस्थिति को भली-भाँति समझ रही थी। हालात की गम्भीरता को रेखांकित करने की दृष्टि से उसे बहुत सख्त बात कहने के लिए मजबूर होना पडा, "सर, हम लोग जाते वक्त आपको यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम वेश्याएँ नही हैं कि आने-जानेवालो का हिसाब रखा जाय और वक्त खत्म होते ही हमें अन्दर बन्द कर दिया जाय...आप हमसे वही व्यवहार करें जो आप लोग पुरुष होने के नाते आपस मे करते हैं।"

उसके इतना कहते ही एक अटूट चुप्पी खिच गयी थी। डायरेक्टर ने धीरे-से कहा, "आप लोग अपनी सीमा के बाहर चली गयी...मैं आपकी इस बात का क्या जवाब दूं? आप लोग जायें और जैसे रहना चाहे रहे।"

दूसरी लड़की बोली, "सर, अगर वह काला आर्डर वापिस नही लिया गया और इतने वर्षों से चलती चली आयी स्वतन्त्रता हमे वापिस नही की गयी तो हम हॉस्टिल में प्रवेश नही करेंगी!"

वह घटना बाद मे भी परिसर के अन्दर 'महिला-क्रान्ति' के नाम से याद की जाती रही थी।

पाँच

रामउजागर का एक साल की छुट्टी पर चला जाना साथ के सब लडको को बेसहारा बना गया था। असुरक्षा का भरपूर माहौल था। गाधी विंग के लडके सामान्य विंगो से गुजरते सनाका खाते थे। अब ऐसा कोई नही रह गया था जो उन लडको की झोक सँभाल सके।

खन्ना जब भी अनुकूल से मिलता था तो मुस्कुराकर पूछता था, "कहो, नेतागिरी कैसी चल रही है? आजकल तो फुल नेता हो।"

अनुकूल मुस्कुराकर बात को टाल देता था। खन्ना को यह टालना पसन्द नही

"आप बात करने तो नही आये···जो कुछ आप करने आये हैं वो करें, मैं सामने खड़ा हूँ।"

"अबे गाँधी का···बनता है।" खन्ना ने पीछे से धकेलते हुए लिंग का भदेस पर्याय उच्चारा।

"आपको जो कहना हो मुझे कहें वैसे एक कमजोर आदमी के पास कुछ बनने की गुंजायश ही कहाँ होती है।"

"अबे फिलासफी बघारता है' कमरा बन्द करके हमारे खिलाफ मीटिंग कर रहा था? इन चूहों को बिलो से निकाल-निकालकर हमसे लोहा लेने के लिए हमारी माँदों मे उतारना चाहता है?"

"आप गलत सोचते हैं···हम अपनी समस्याओं पर बात करने के लिए इकट्ठे हुए थे।"

खन्ना ने उसका फिर से गिरहबान पकडकर जमीन से उसे थोड़ा ऊपर उठाने की कोशिश की, "झूठ बोलता है। ऊपर से हमे नीचा दिखाने और हमारा नाक्ना बन्द करने की साजिश करता है!"

अनुकूल ने पूरे आत्मविश्वास के साथ कहा, "बिल्कुल नही।"

खन्ना ने उसे पीछे धकेल दिया। वह दीवार से टकरा गया! बाबूराम चुपचाप खड़ा थरथर काँप रहा था। आगे बढ़कर बोला, "हम लोग तो स्कालरशिप के बारे में बात कर रहे थे।"

"तो हमसे क्यो नही कहा···? मीटिंग करके प्रस्ताव पास करना चाहते थे? संस्थान को बदनाम करने पर उतारू हो। रियाया का पालन कैसे होना चाहिए, हम ज्यादा समझते हैं या तुम?"

अनुकूल ने तत्काल इस बात का विरोध किया, "ईश्वर के लिए आप इस शब्द का प्रयोग न करें। कोई किसी की रियाया नही। केवल जिन्दगी यापन करने का फर्क है। कोई आराम से बढ़िया जिन्दगी गुजारता है, कोई मध्यम और कोई निकृष्ट··· इसको आप चाहे जो नाम दे लें।"

"हमारी बराबरी करता है?"

"करता नही, करना चाहता हूँ···आपको नीचा दिखाने के लिए नही, अपने को और अपने लोगों को खुशहाल बनाने के लिए।"

एक और लड़का चिल्लाया, "अबे बॉस के सामने जबान चलाता रहेगा···बाज नही आयेगा?"

"बोलना क्या कोई गुनाह है? आप भी बोल रहे हैं, मैं भी बोल रहा हूँ।'

"तो गुनाह कराना चाहता है···हम तुझे रामउजागर नहीं बनने देंगे। अनुकूल बनकर पड़ा रहना चाहता है तो पड़ा रह।"

"मैं अनुकूल ही हूँ, रामउजागर न आप हो सकते है और न मैं हो सकता हूँ।"

"बकवास बन्द!" खन्ना बुलन्द आवाज मे चीखा। फिर धीमी होती आवाज मे कहा, "साला हमारे मुँह लगता है!"

अनुकूल ने बहुत धैर्य से कहा, "कृपया आप ठीक शब्दावली का प्रयोग करें।"

"हम जमीन खोदकर यही तेरी लाश दबा देंगे।"

बैठ जायेंगे।

स्कॉलरशिपवाली बात समाप्त होने के बाद अनुकूल ने शामवाली घटना का सम्पूर्ण ब्यौरा सब लड़कों को दिया। उन सबके बीच सन्नाटा-सा खिंच गया। सन्नाटा देखकर अनुकूल ने अनुभव किया कि ये किसी असम्भावित भय के कारण प्रतिक्रियाहीन हो गये हैं। थोड़ी देर बाद वह स्वयं बोला, "तो इसका मतलब हम इस मामले पर आगे बातचीत न करें ?"

बाबूराम की चुप्पी ने उसे और भी ज्यादा आश्चर्य में डाल दिया था। कम-से-कम उसे तो कुछ कहना ही चाहिए था। अनुकूल का चेहरा तमतमा आया और वह उस मीटिंग को वहीं समाप्त करने के लिए उद्यत हो उठा। कुछ देर बाद उनमें से एक लड़का बोला, *"यह घटना तो तकलीफ़देह है। लेकिन हम लोगों की जो स्थिति* है उसमें चुप रहने के सिवाय क्या किया जा सकता है। हम लोग कमजोर हैं। वे सब लोग ताकतवर है। उनकी शक्ति का भूत हम पर रात-दिन हावी रहता है। उन लोगों के सामने हम डरकर और बचकर निकलते हैं। अगर हम इस सवाल को उठायेंगे तो हमारा साथ कौन देगा ? प्रशासन हम लोगों को पहले से ही अवांछनीय समझता है। उनको बहाना मिल जायेगा और हमें निकाल दिये जायेंगे "

बाबूराम ने बहुत धीरे-से कहा, "अब तो रामउजागर दादा भी नहीं हैं···"

अनुकूल थोड़ा उत्तेजित हो गया, "क्या रामउजागर दादा ही हमको हमेशा उँगली पकड़कर चलाते रहेंगे ? हम लोगों का अपना भी कुछ उत्तरदायित्व है, आत्मसम्मान है। अगर रामउजागर नहीं रहेंगे तो इसका मतलब हम किसी के भी द्वारा दुतकारे जाने के लिए तैयार हैं। हमारे अन्दर अपना कुछ नहीं···?"

"तो बताओ हम क्या करें ? कुछ ही महीने यहाँ आये हुए हैं। कुछ कहने की कोशिश की तो तुमने देख ही लिया कि खन्ना कैसे पेश आया···!"

बात पूरी होने से पहले ही उन सबको लगा कि दरवाजे पर कुछ लोग इकट्ठे है। सब खामोश हो गये। एकाएक दरवाजा भड़भड़ा उठा। वे लोग और भी भयभीत हो गये। केवल अनुकूल उठा। इस बार बाबूराम ने उसे पकड़ लिया। और लोग भी धीरे-से फुसफुसाये - बाहर जाना ठीक नहीं। थोड़ी-थोड़ी देर बाद दरवाजा भड़भड़ाया जा रहा था। फिर गालियाँ शुरू हो गयीं। अनुकूल झटके से उठा और बिजली की तरह दरवाजे पर पहुँच गया। दरवाजे की चटखनी खोलकर वह बाहर निकल गया। खन्ना हाथ में स्टिक लिये था और नशे मे चूर था।

अनुकूल के बाहर आते ही खन्ना ने उसका गिरहबान पकड़कर लड़खड़ाती जबान मे कहा, "क्यों बे, सिस्टम के खिलाफ बगावत करना चाहता है ?"

अनुकूल अपना गिरेबान उसके हाथ मे ही ढीला छोड़े खामोश खड़ा उसकी तरफ देखता रहा। खन्ना ने उसे दो-तीन बार गले से हिलाया। लेकिन वह उसी तरह खामोश रहा।

एक दूसरे लड़के ने दूसरी तरफ धक्का दिया, "अबे बोलता क्यों नहीं···? मुँह में ताला लगा है क्या ?"

अनुकूल ने स्वर को संयत रखने की कोशिश करते हुए धीमे स्वर में कहा,

"आप बात करने तो नही आये···जो कुछ आप करने आये हैं वो करें, मैं सामने खड़ा हूँ।"

"अबे गाँधी का···वनता है।" खन्ना ने पीछे से धकेलते हुए लिंग का भदेस पर्याय उच्चारा।

"आपको जो कहना हो मुझे कहें वैसे एक कमजोर आदमी के पास कुछ बनने की गुंजायश ही कहाँ होती है।"

"अबे फिलासफी बघारता है कमरा बन्द करके हमारे खिलाफ मीटिंग कर रहा था? इन चूहो को बिलो से निकाल-निकालकर हमसे लोहा लेने के लिए हमारी माँदो में उतारना चाहता है?"

"आप गलत सोचते हैं···हम अपनी समस्याओं पर बात करने के लिए इकट्ठे हुए थे।"

खन्ना ने उसका फिर से गिरहबान पकड़कर जमीन से उसे थोड़ा ऊपर उठाने की कोशिश की, "झूठ बोलता है। ऊपर से हमे नीचा दिखाने और हमारा नाक्ना बन्द करने की साजिश करता है!"

अनुकूल ने पूरे आत्मविश्वास के साथ कहा, "बिल्कुल नही।"

खन्ना ने उसे पीछे धकेल दिया। वह दीवार से टकरा गया! बाबूराम चुपचाप खड़ा थरथर काँप रहा था। आगे बढ़कर बोला, "हम लोग तो स्कालरशिप के बारे मे बात कर रहे थे।"

"तो हमसे क्यों नही कहा···? मीटिंग करके प्रस्ताव पास करना चाहते थे? संस्थान को बदनाम करने पर उतारू हो। रियाया का पालन कैसे होना चाहिए, हम ज्यादा समझते हैं या तुम?"

अनुकूल ने तत्काल इस बात का विरोध किया, "ईश्वर के लिए आप इस शब्द का प्रयोग न करें। कोई किसी की रियाया नही। केवल जिन्दगीयापन करने का फर्क है। कोई आराम से बढ़िया जिन्दगी गुजारता है, कोई मध्यम और कोई निकृष्ट··· इसको आप चाहे जो नाम दे लें।"

"हमारी बराबरी करता है?"

"करता नही, करना चाहता हूँ···आपको नीचा दिखाने के लिए नही, अपने को और अपने लोगों को खुशहाल बनाने के लिए।"

एक और लड़का चिल्लाया, "अबे बॉस के सामने जबान चलाता रहेगा···बाज नही आयेगा?"

"बोलना क्या कोई गुनाह है? आप भी बोल रहे हैं, मैं भी बोल रहा हूँ।"

"तो गुनाह कराना चाहता है···हम तुझे रामउजागर नही बनने देंगे। अनुकूल बनकर पड़ा रहना चाहता है तो पड़ा रह।"

"मैं अनुकूल ही हूँ, रामउजागर न आप हो सकते है और न मैं हो सकता हूँ।"

"बकवास बन्द!" खन्ना बुलन्द आवाज में चीखा। फिर धीमी होती आवाज में कहा, "साला हमारे मुँह लगता है!"

अनुकूल ने बहुत धैर्य से कहा, "कृपया आप ठीक शब्दावली का प्रयोग करें।"

"हम जमीन खोदकर यही तेरी लाश दबा देंगे।"

"अगर आपको ऐसा करने से सन्तोष मिलता हो तो जरूर करें। लेकिन मैं चाहता हूँ आप एक इन्सान के साथ इन्सानियत मे पेश आना सीखें।"

खन्ना ने स्टिक तानी। अनुकूल चुपचाप खड़ा रहा। कुछ लोगो की पदचाप सुनायी पड़ी। स्टिक नीची करके खन्ना बोला, "हम सोचने का मौका देते हैं। अच्छी तरह सोच-समझकर तैयार रहना···हम फिर आयेंगे। हमारा काम ही दूसरे लोगो की खिदमत करना है। जरूरत पड़ी तो हम तुम्हारी और तुम्हारे लोगो की हर सम्भव खिदमत करेंगे।"

वे लोग दूसरे बराण्डे से घूमकर तेजी से निकल गये।

उनके चले जाने के बाद अनुकूल अपने कपडे ठीक करके सँभलता हुआ बोला, "अब तो आप लोगो ने अपनी आँखों से देख लिया·· आप लोग भी अच्छी तरह समझ लीजिए। मैं तो जानता हूँ मुझे क्या करना है। यह अच्छा हुआ कि ये लोग आप लोगों की मौजूदगी मे आ गये।"

बाबूराम बोला, "लेकिन इस तरह हम लोग यहाँ कैसे रह सकते हैं?"

"बाबूराम, अब मेरे लिए प्रश्न यही नही है कि यहां रहा जा सकता है या नही···बल्कि हर हालत मे यही बने रहने का है। अगर यहाँ नही रह पायेंगे तो कही भी रहना सम्भव नही होगा। हमे उन्हीं हालातो मे लौट जाना होगा जिनमे हमारे बड़ो ने जिन्दगी गुजारी थी। हमे आगे आनेवाले चेलेंज के योग्य भी बनना है और बर्दाश्त करना भी सीखना है। मैंने अपने सन्दर्भ में यही सोचा है कि जहाँ पहुँच चुके हैं, कम-से-कम उससे पीछे तो न लौटे···।"

दूसरे लडके ने कहा, "इतने तनाव के बीच हम कैसे रह पायेंगे? वहाँ भी हम खरपतवार समझे जाते है और यहाँ भी खरपतवार हैं···"

अनुकूल के मुँह से निकला, "हम लोगों के घर के चारो तरफ पतवार-ही-पतवार थी। खेलते-खेलते अक्सर हाथ-पैर चिर जाते थे। लोग हर साल उसे काट-काटकर ले जाते थे। अगली बार वह पहले से ज्यादा फूलती थी। उसका कभी कुछ नही बिगडा ··भले ही काटनेवालो के हाथ चिर गये हो!"

पहले उसकी नजर अन्धकार मे कही दूर चली गयी, फिर वह आप-ही-आप मुस्कुरा दिया!

दरअसल पदचाप नीलम्मा और उसके दो रिसर्च-स्कालर साथियो की थी। नीलम्मा रामउजागर के बारे मे जानकारी करने आयी थी। उसने रामउजागरवाली दुर्घटना के बारे मे उडती-उडती खबर सुनी थी। साथ ही उसे पता चला था कि रामउजागर के बारे में वास्तविकता का अनुकूल से ही पता चल सकता है।

नीलम्मा ने आते ही अनुकूल को ऊपर से नीचे तक देखा। वह पहले ही से अस्त-व्यस्त था। एक लड़की को इस तरह देखते हुए पाकर उसकी अस्त-व्यस्तता और उभर आयी। नीलम्मा ने अनुकूल को पर्याप्त समय देने के बाद पूछा, "आपको

राम'''यानी मि. रामउजागर के बारे में कुछ मालूम है ?"

हालाँकि सवाल अनुकूल से ही किया गया था लेकिन बाबूराम ने तपाक से जवाब दिया, "उनकी तबियत खराब हो गयी थी'''उनके बापू'' उनके फादर, आकर ले गये है।"

"यह तो मुझे मालूम है। पर उनकी तबियत के बारे में कुछ पता चला कि अब क्या हाल है ?"

"सुना है पहले से बेहतर है। उनके गाँव से खबर आयी थी, चलते हुए अभी भी घबराहट होती है !"

नीलम्मा ने अगला सवाल किया, "उनका पता है आपके पास ?"

बाबूराम ही सब सवालो के जवाब दे रहा था, "अनुकूल के पास है'''"

अनुकूल को बोलना पडा, "उनका पता डीन के दफ्तर मे भी है'' वैसे मैं दिये देता हूँ।" अनुकूल अन्दर चला गया। फिर आकर बोला, "आपका नाम नीलम्माजी है ?"

नीलम्मा ने गर्दन हिला दी। "हाँ !"

अनुकूल बोला, "उनकी एक चिट्ठी भी आयी थी।"

नीलम्मा ने प्रकारान्तर से चिट्ठी देखने की इच्छा प्रकट की, "अगर आप बता सकें कि चिट्ठी में क्या लिखा है तो मैं आभारी हूँगी।"

वह दोबारा अन्दर गया और लाकर चिट्ठी नीलम्मा को पकड़ा दी। पहले तो नीलम्मा को पढ़ने मे संकोच हो रहा था, लेकिन अनुकूल के आग्रह पर वह होंठो-ही-होंठो में चिट्ठी पढ़ने लगी—

प्रिय अनुकूल,

तुम्हारा पत्र मिला। बेकार परेशान होते हो। पढो। यह सोचकर पढ़ो कि पढ़ने का और पढ़े हुए होने का पूरा लाभ उठाना हम लोगो की किस्मत में नही है। सच पूछो तो हम लोगों के लिए पढना और उस पढाई से लाभ उठाने की बात सोचना हरे और कच्चे नीबू मे से रस निकालने की तरह है। हरे नीबू मे से तो शायद फिर भी एक-दो बूंद निकल आये पर इसमें तो छिलका भी सालिम हाथ नही लगता। फिर भी पढना तो है ही।

जहाँ तक मेरी बात है मैं तो अब किसी काम का नही रह गया। मैंने शायद वैसा ही कुछ करना चाहा जो राम के युग मे एक शूद्र ने तपस्या करके किया था। अपने युग की अभिजात्यता का मुँह चिढ़ाने के अपने खतरे होते हैं। वैसे जब भी ऐसा होता है तभी उसके अन्जाम सामने आते हैं। जिस दिन से मोहन को पंखे से उतारा मुझे हर क्षण यही लगता है कि मेरी भी जगह वही है। मैं भी जिन्दा ही लटका हूँ। मुझे भी ये लोग उतारकर जिन्दा जला देंगे। मोहन के साथ भी ऐसा ही हुआ। वह जिन्दा था। मैंने अपने हाथो मे उसे उतारा और जलाने के लिए उन लोगो को सौंप दिया। मैं सच कहता हूँ, उसमे साँस बाकी था। उसने साँस छोड़कर मुझे जताया था। पर मैं समझा नही ! वे सब लोग मुझसे नाराज हो गये'''!

अभी तो मास-भर की छुट्टी ली है। आगे क्या होगा, नही कह सकता।

है'''दबे रहते तो कुछ न हुआ होता। तब पूरे-के-पूरे ही टूट जाते। टाँग तुड़वाकर बाकी सबकुछ तो बचा लिया '','' फिर बोला, ''अच्छा यह बताइए, कुछ खाया-पिया या नहीं ?''

''तुम्हारी माँ ने पराठे बना दिये थे, है साथ में।'' फिर थोड़ा रुककर पूछा, ''यह खन्ना कौन है ?''

''आपको किसने बताया ?''

''एक सौ इकत्तीस नम्बरवालों ने।''

''क्या आप हॉस्टल भी गये थे ?''

''नहीं तो यहाँ कैसे पहुँचता !''

''वही यहाँ छोड़ गया ?''

''नहीं, उसे रोटी खानी थी और पढने जाना था। इसलिए मैंने मना कर दिया था। उसने सड़क पार से ही पूरा नक्शा समझा दिया था।''

अनुकूल ने बाबू के इस जवाब को अतिरिक्त गम्भीरता के साथ सुना। बावनराम ने फिर अपना सवाल दोहराया, ''कौन है यह खन्ना ?''

''वही जो चाहता है कि हम रियाया की तरह रहें। हमारी अपनी कोई राय न हो। हमारी जबान वे लोग इस्तेमाल करें। हम लोगों पर वे लोग निरन्तर आपातकाल लागू रखना चाहते हैं। हमने कभी उनका विरोध नही किया, पर ऐसा भी नहीं हुआ कि अपनी सही राय जाहिर न की हो। खन्ना साहब इसीलिए नाराज हैं। वे हममें से ऐसे सभी लडको को सजा देना चाहते हैं जो उनकी रियाया बनने से इन्कार करते हैं। एक बार तो पहले मेरे कमरे में घुस आये। उन्होंने बिना कुछ कहे मुझे मारना शुरू कर दिया। न मैंने शोर मचाया और न अपनी जगह से हिला'''मैं देखना चाहता था कि इनमे कितनी खूँख्वारी है और अपने उद्देश्य को हासिल करने के लिए ये लोग कहाँ तक बलिदान देने को तैयार हैं। पर ये लोग कायर हैं।'' उसके चेहरे पर घृणा उभर आयी। वह बोला, ''मेरा रूम-पार्टनर बहुत डर गया था''' उसने शोर मचा दिया। उसके शोर मचाते ही वे भाग खड़े हुए।'' उसने खँखारा और चिलमची में थूक दिया।

बावनराम का चेहरा पीड़ा और असहायता के कारण गुचमुच करके सिकुड गया था। वे तैश में बोले, ''तुम्हे पुलिस मे रपट लिखाकर उनको बन्द करवा देना चाहिए था।''

''फायदा ? क्या इससे उनका अत्याचार रुक जाता ? हमारे लडको ने कहा था कि अब हम उन लडको को उन्ही लोगो के कमरो मे जाकर मारेंगे। मैंने उन्हें समझा-बुझाकर रोका। यह समय नही। कमजोर आदमी दूसरे के मारने का उद्यम करने में स्वयं मार खाता है। मैं यह कायरतावश नही कर रहा, बल्कि परिस्थितिवश कर रहा हूँ। हमे तब तक बर्दाश्त करना चाहिए जब तक उनके अत्याचार की सीमा का अन्त नहीं हो जाता। यह तय हो जाने के बाद स्थिति स्वयं काबू मे आ जायेगी। हमारे बडो ने अपने-आपको उन लोगो के पैरो में डाल देने की आदत के कारण उनके अत्याचार करने की सामर्थ्य को कम करने के स्थान पर बढाया ही था। इस तरह का व्यवहार करके वे सब अपने को दिन-पर-दिन छोटा करते जा रहे हैं। ताकत

को घटा रहे हैं। इस बात पर सब मित्र मुझसे नाराज हैं। वे नही जानते जवाबी कार्यवाही करके हम अपने आपको उन्हें सौंप देंगे।"

बाबनराम अनुकूल की बात सुनकर चकित थे। वे बौखलाहट मे बोले, "यह तू क्या कह रहा है भैया? मैंने क्या तुझे इसलिए भेजा था कि पढ़ना-लिखना छोड़कर सुधार करता घूमे? अपने हाथ-पैर तुड़वाये। तेरी माँ तुझे वापिस ले जाने को कह रही थी। तू यहाँ से छोड और चल घर। मेरी ही मत मारी गयी थी जो तुझे यहाँ भेजा।" वे फिर रोने-रोने को हो आये।

"नही बाबू, आप घबरायें नही···ऐसा कभी कुछ नही होगा कि आपको पछताना पड़े।" फिर ठहरकर कहा, "अब आप थोड़ा-बहुत खा-पी लें!"

उन्होंने एक लम्बी साँस ली, "क्या खा लूँ···मुझे तो चारो तरफ अँधेरा-ही-अँधेरा नजर आ रहा है।" बहुत कहने पर वे मान गये।

उस लड़के की एक हल्की-सी चीखनुमा कराहट सुनायी पड़ी। उस कराहट ने उन दोनो को एक-दूसरे के वृत्त के बाहर निकालकर वापिस कमरे मे ला खड़ा किया। वह बुरी तरह छटपटा रहा था। अनुकूल ने पूछा, "क्या बात है?" वह जवाब न देकर और जोर-जोर से कराहने लगा। अनुकूल ने अपने सिरहाने लगी घण्टी बजा दी। सिस्टर आ गयी। अनुकूल ने उस लडके की तरफ इशारा करके कहा, "राजीव बहुत कराह रहा है, कोई दवा दे दीजिए।"

सिस्टर उसके पास गयी तो उसने उसी तरह कराहते-कराहते पूछा, "घर से कोई आया, सिस्टर?"

सिस्टर ने गर्दन हिला दी, "नही···आते ही होगे।" हँसकर बोली, "हम लोग जो हैं।"

वह सुना हुआ ज्यादा जज्ब नही कर पा रहा था। वह कहता जा रहा था, "तार भिजवा दो···लिख दो, अब मेरे पास ज्यादा वक्त नही।"

सिस्टर ने उसे समझाना चाहा, "नहीं, ऐसी कोई बात नही। आप जल्दी ठीक हो जायेंगे।

वह नाराज हो गया, "नो सिस्टर! आप जाइए···मुझे भुलावा देने की कोशिश मत कीजिए···मैं जानता हूँ, मै धीरे-धीरे मर रहा हूँ। सबके घरवाले आ रहे हैं, मेरे घरवाले क्यो नही आते सिस्टर?"

"आयेंगे, जरूर आयेंगे।"

सिस्टर इन्जेक्शन लेने चली गयी। बाबनराम ने उसके पास जाना चाहा। अनुकूल ने इशारे से रोक दिया। वह उस लडके से बोला, "मेरे पिताजी आये हैं, वे पूछ रहे हैं क्या बहुत तकलीफ है?"

वह थरथराती आवाज मे बोला, "अनुकूल, यू आर लकी···मेरे फादर मेरे मरने के बाद आयेंगे।"

शाम को करीब पाँच बजे नीलम्मा आयी। बावनराम को बैठे देखकर वह क्षण-भर को दरवाजे पर ही ठिठकी। उसने अन्दाज लगाने की कोशिश की। फिर धड़धड़ाती चली गयी। अनुकूल कोई किताब पढ रहा था। बावनराम कुर्सी पर बैठे-बैठे सो गये थे। राजीव की भी आँख लगी थी।

नीलम्मा को देखकर अनुकूल को एक बार को असमंजस उभरा, लेकिन फिर तुरन्त ही वह सामान्य हो गया। नीलम्मा ने नजदीक आकर पूछा, "क्या हाल है? डाक्टर आये थे? क्या बताया?"

अनुकूल ने दबी जबान में ही जवाब दिया, "डाक्टर ने एक हफ्ते और इन्तजार करने को कहा है।" फिर बावनराम की तरफ इशारा करके कहा, "ये मेरे पिताजी हैं···आज ही आये हैं।" नीलम्मा ने मुस्कुराकर उनका स्वागत किया।

नीलम्मा ने फिर पूछा, "आर.के. के घर से कोई आया? इसका क्या हाल है?"

"आज बहुत तकलीफ है। पैथेड्रीन का इन्जेक्शन देना पड़ा। उसी के नशे में सो रहा है। आज भी कोई नहीं आया···।" फिर रुककर बोला, "लेकिन ये लोग गहनतम तकलीफ के क्षणों में भी अपनी श्रेष्ठता के बारे में सचेत रहते हैं।" अनुकूल हँस दिया।

नीलम्मा भी हँस दी, "संस्कृति आदि और सब तो मुलम्मे है···यही हम भारतीयों का असल रंग है जो कभी फीका नहीं पड़ता।" इस पर दोनों को हँसी आ गयी।

बावनराम की आँख खुली तो अनुकूल को लड़की के साथ हँसते देखकर हड़बड़ा उठे। अनुकूल भी थोड़ा सकपकाया। लेकिन तुरन्त ही वह बोला, "बाबू, ये नीलम्मा-जी हैं, यहाँ पी-एच. डी. की पढाई पढ़ रही हैं···इन्होंने ही इस समय हिम्मत बढ़ायी और रास्ता दिखाया।"

नीलम्मा ने हाथ जोड़कर मस्तक नवाया, "नमस्कार अंकल···अनुकूल आपको बहुत याद करता था। हर समय लेटा-लेटा आपकी और माँ की बातें करता रहता था। जो बच्चे माँ-बाप से इतना जुड़े रहते है, माँ-बाप तो भाग्यशाली होते हैं पर बच्चे···नालायक!" अनुकूल की तरफ देखकर वह फिर हँस दी।

बावनराम नागवारी के कारण थोड़ा सुस्त हो गये। पर उन्हें कोई जवाब नहीं सूझ रहा था। इतना जरूर हुआ, वे कुर्सी से उठकर खड़े हो गये। नीलम्मा ने उन्हें हाथ पकड़कर बैठा दिया। उनका चेहरा लाल हो आया।

नीलम्मा तुरन्त बोली, "आप इतना संकोच न कीजिए, मैं तो आपकी तीसरी बेटी हूँ। आपका लड़का अभी बहुत भोला है ··पर हिम्मती है।"

इस बार उनका मुँह खुला, "यह तो पहली बार ही घर से निकला है। हिम्मती कहाँ से होगा। घर पर तो यह अँधेरे में जाता हुआ डरता था।"

"अंकल, अब मरने-मारनेवाला, खून-खराबा करनेवाला या तीर-कमाने लेकर जंगल में घुस पड़नेवाला साहसी नहीं कहलाता···बल्कि कुछ मामलों में वह कायर ही होता है। अधिक-से-अधिक सहन कर ले जाना और अपनी आत्मसम्मान की हदों को, बाहरी दबावों के कारण आगे-पीछे न करना ही साहसी होने का प्रमाण है।"

"नहीं बेटी···" बावनराम ऊपर को हाथ जोड़कर बोले, "हमारे बड़भागी

होने की बात है कि इसने हमारे घर में जन्म लिया'''अगर लोग इसे इस तरह तंग करेंगे तो यह क्या कर पायेगा ? हम भी बरबाद, यह भी बरबाद ! छोटे आदमी का एक बडी आसवाला बच्चा इसी में मर मिटेगा ।" सोचता हूँ घर ले जाऊं'''जिन्दा तो रहेगा ।" उनका जी भर आया।

नीलम्मा गम्भीर हो गयी, "वैसे तो आपका लड़का है'''जो चाहे आप करें। लेकिन आप इसे कहाँ-कहाँ से, कब तक हटा-हटाकर घर की चहारदीवारी में सुरक्षित रखेंगे । कभी-न-कभी तो अनुकूल को अपनी परिस्थितियों के अनुसार सब हालात का अकेले सामना करना ही पड़ेगा। मैं तो लड़की हूँ, मैं भी तो घर से हजारों मील दूर रहकर इन सब झझटों से अकेले निबट ही रही हूँ।"

"इसी तरह जूझता रहेगा तो न यह पढ पायेगा और न अपना भविष्य ही सँभाल पायेगा । इसकी माँ तो रो-रोकर मरी जा रही है ।"

"माँ तो माँ है। सन्तान के अहित की जरा-सी आशंका का दाग ही माँओं को बेध डालता है । पहले भी तो आपने माँ की परेशानी को नजरअन्दाज करके अनुकूल को पढने भेजा था । मुझे लगता है माँ तो जो परेशान हैं सो है ही, आप भी इस बार कम परेशान नही ·" कहकर वह हँस दी । बावनराम को नीलम्मा की इस बात का कोई जवाब नही सूझा ।

वह अपने-आप ही बोली, "आपको आये इतनी देर हो गयी, चलिए आपको ले चलकर गेस्ट हाउस में ठहरने का इन्तजाम करा दूं। अनुकूल का तो जब तक प्लास्टर नही कट जायेगा उसे तो इसी तरह रहना है'''आप क्यों इसके साथ तकलीफ भोगते है।" हँसकर कहा, "वैसे यह खूब मस्त है'''आपके सामने कुछ ज्यादा सीधा बन गया।"

उनकी समझ मे फिर नही आया कि वे क्या जवाब दें। अनुकूल ही बोला, "मेरा कमरा तो खाली है, उसी में रह लेंगे'''वहाँ हो सकता है दिक्कत हो।"

नीलम्मा हँस दी, "तुम्हारे कमरे मे अकेले रहकर क्या करेंगे ? तुम तो यहाँ पड़े हो, वहाँ तो इन्हे चाय तक नसीब न होगी।"

नीलम्मा ने इस बार थोडे अधिकार से कहा, "चलिए।"

उन्हें उठकर साथ जाना पडा । थोडा सामान नीलम्मा ने ले लिया । रास्ते मे चलते हुए बावनराम ने कहा "हम लोग छोटी जात के'''छोटे आदमी है। वहाँ लोग नाक-मुँह तो नही चढायेंगे ?"

नीलम्मा ने घूमकर देखा। उनके चेहरे पर निरीहता और एक प्रकार के हल्के-से अपराध-बोध का भाव उभर आया था । नीलम्मा ने सहज होते हुए कहा, "आप कैसी बात कह रहे है अकल ? आप ही अपने को ऐसा कहेंगे तो फिर औरों का मुँह कैसे बन्द होगा ! अनुकूल को भी शुरू मे ऐसा ही लगता था·· लेकिन धीरे-धीरे उसने अपने आपको उस सोच से बाहर निकाल लिया। अब लगता है कि वह फिर इस बिन्दु पर थोडी कमजोरी अनुभव करने लगा है। उसे शायद यही भय है कि कही आपको भी किसी ऐसी-वैसी स्थिति का सामना न करना पड जाये। लेकिन ऐसी परिस्थितियों से बचने का प्रयत्न मनुष्य को कमजोर ही बनाता है। अपने को बचाते-बचाते आदमी ऐसी स्थिति मे आ जाता है जब वह अपने-आपसे डरने

लगता है।"

इतना वोल लेने के बाद नीलम्मा को लगा, वह अचानक एक सुधारक की भूमिका निवाहने लगी और उसी मूड में वह इतना अधिक वोल गयी।

वावनराम उसकी बात गौर से सुन रहे थे। उसके चुप होते ही वे वोले, "हम लोग कम पढ़े-लिखे लोग हैं। वैसे अपने जमाने मे हम ही सबसे पढ़े-लिखे माने जाते थे। आठवी पास की थी पर दसवी तक पढे थे। हमारे पिता ने न जाने कैसे हमे इतना पढा दिया। उन दिनों हम लोगों मे से कोई वाप वच्चों को इतना पढ़ा देता था तो जमीदार नाराज हो जाता था। समझता था हमारी बरावरी करता है। पढ-लिख गये थे तो फैक्ट्री मे नौकरी मिल गयी। वहाँ भी कम वर्दाश्त नही किया। पर मेहनत और रसूख की वजह से प्रमोशन पाते गये। अव बुढापा है···चाहते हैं अनुकूल और भी आगे वढे···पर इन हालातो क्या होगा? मन होता है, जिसने मेरे वेटे का पांव तोड़ा उसका खून पी जाऊँ···अपना ही खून पीकर रह जाता हूँ। उसके वाप मिलें तो पूछूं—तुम बड़ी जात के वडे आदमी हो। क्या तुमने अपने वेटे को यही सिखाया है कि छोटे और गरीवो के वेगुनाह वच्चों को इस तरह से सताओ?"

नीलम्मा को वोलना पडा, "नही अकल, लडने से किसी समस्या का हल नही निकलता। दूसरी तरफ के आदमी चाहे न भी रहे पर समस्या वरकरार रहती है। इरादे के साथ सह लेना आक्रमण को अलवत्ता कमजोर करता है। अगर ऐसा न होता तो इन वडे और शक्तिशाली देशों ने कमजोर देशों की सरहदें मिटाकर अपने मे मिला ली होती। सच पूछिए तो पाशविक शक्ति अपने चरमोत्कर्ष पर ही टूटती है···देखने में लगता है कि वह शक्ति है···पर दूसरो को पलटने मे कई बार अपना ही तख्ता पलट लेती है।"

वावनराम चुप थे। नीलम्मा का चलना वावनराम के हिसाब से था। एक हाथ में वह वावनराम का थैला लिये थी। बीच-बीच मे वावनराम के मन मे पछतावे की लहर-सी उठती थी कि उन्होंने वहाँ आकर गलती की है। न आते तो अच्छा था। लेकिन आते भी कैसे नही। लड़के को आंखो तो देख लिया। नही तो पता भी न चलता उसके ऊपर क्या गुजरी। दूसरे की आँखों से देखा दूसरे की ही आँखों मे देखना होता है और अपनी आंखो से देखा अपनी ही आँखो का देखा होता है। उन्होंने गर्दन उठाकर नीलम्मा की ओर पहली बार इतने ध्यान से देखा। उसका कद लम्वा था। वह गम्भीर गति से धीरे-धीरे चल रही थी। रंग थोडा पक्का, आँखें वडी और चमकदार थी। उन आंखो मे कोई एक बिन्दु था जो सुई जैसा नुकीला और चमकदार था। चेहरे पर स्थिरता और चमक थी। उम्र पच्चीस-छब्बीस वरस की रही होगी। अनुकूल से पाँच-छः साल वड़ी।

नीलम्मा ने वावनराम को अपनी तरफ देखते हुए पाकर पूछा, "क्या देख रहे हैं, अकल?" फिर रुककर इन्तजार किया। उनका जवाब न आता देखकर उसने कहा, "यह तो नही सोच रहे कि गलत रास्ते पर ले जा रही हूँ?" और हँस पडी।

वावनराम उस बात को पी गये। फिर पूछा, "एक वात पूछूं···आप तो ब्राह्मण है ना?"

नीलम्मा को जोर की हँसी आ गयी, "हाँ हूँ, क्यो?" फिर बोली, "अच्छा हो

आप लोग भी हम लोगों को अछूत मानना शुरू कर दीजिए। सबकी अक्ल ठिकाने आ जायेगी।"

"आप लोगों को श्रेष्ठ मानना'''," फिर ताव में बोले, "आप लोगों के नीच कामों को भी ऊँचा दर्जा देना हम लोगों के समाज की मजबूरी है। हम लोग इस स्थिति में नही कि आर्थिक स्तर पर आप माहवान का मुकाबला कर सकें। यह तभी हो सकेगा जब हमारे बच्चे धन और पद के ख्याल से आप लोगों की बराबरी पर आ जायेंगे। लेकिन आप लोग बुद्धिमान लोग है, जैसे ही कोई इस रास्ते पर कदम रखने की कोशिश करता है आप लोगों को तत्काल पता चल जाता है'''आप लोग सक्रिय हो जाते है।"

नीलम्मा का चेहरा हल्का-सा खिल गया। उसकी शक्ल पर आश्चर्य भी था। लेकिन वह बिना कुछ बोले ही, चुपचाप गेस्ट हाऊस में घुसी। पीछे-पीछे बाबनराम थे। वे धीरे-धीरे शान्त हो रहे थे।

स्टुअर्ड बैठा था। नीलम्मा ने जाकर कहा, "एक सिंगल रूम चाहिए। ये हमारे फर्स्ट ईयर के छात्र अनुकूल के पिताजी हैं। इनके लडके के पाँव में चोट लगी है, अस्पताल में भर्ती है। उसे देखने आये है।"

वह बोला, "अनुकूल वही लडका है न जो कमरा बन्द करके कमिश्नर साहब के बेटे खन्ना साहब का खून करने की योजना बना रहा था? खन्ना साहब उसे समझाने गये तो वह भिड़ गया और चोट खा गया।"

"आपसे किसने बताया? क्या खन्ना ने?"

"नही, दो-एक फैकल्टीवाले बात कर रहे थे।"

"बिल्कुल गलत सफेद झूठ'''आपने कभी अनुकूल को देखा है?"

"नही।"

"जाइए और स्टुडेन्ट्स वार्ड के बारह नम्बर बेड पर अनुकूल को लेटे देख आइए। फिर बताइए कि वह कैसा लड़का है!"

"तो फिर उसने रिपोर्ट क्यों नही की?"

"किसको करता? डीन को या डायरेक्टर को? डायरेक्टर थे नही। डीन उसकी कार में घूमते है। वे कहते है कि खन्ना एस. सी. स्टुडेन्ट्स की न्यूसेन्स खत्म करने के लिए ही पैदा हुआ है। खैर छोड़िए, कमरा दीजिए।"

"कमरे के लिए तो आपको ऊपर पूछना पड़ेगा।"

"पहले तो कभी ऐसा नही हुआ।"

"अब तो यही आर्डर है।"

नीलम्मा ने फोन उठाया और डीन को मिलाया, "सुना है आपने अनुकूल के फादर को गेस्ट हाउस मे कमरा देने के लिए मना किया है। हम लोगो के पेरेन्ट्स आयेंगे तो कहाँ जायेंगे।"

"मैंने सुना है कि वे अपने साथ गुण्डों को लाये हैं'''हॉस्टिल-हॉस्टिल घूमने फिर रहे थे। लड़कों को पहचनवा रहे थे।"

उसने अंग्रेजी में और तेजी से बोलना शुरू कर दिया, "मेरी आपसे प्रार्थना है कि आप यहाँ चले आयें और इस बूढ़े आदमी को एक नजर देखने की कृपा करें। किसी की बेसिर-पैर की बातों पर यकीन करके गलत लाछन लगाना ठीक नहीं। आप इन्हें फौरन कमरा दिला दीजिए। ये बेचारे सवेरे से इधर-उधर भटक रहे हैं।"

"अगर कुछ हो गया तो कौन जिम्मेदार होगा?"

नीलम्मा थोड़ी उत्तेजित हो गयी, "अनुकूल को जब चोट आयी तो आपने अपनी जिम्मेदारी समझी कि आप उसके पेरेन्ट्स को सूचित करते? या उन लोगों के विरुद्ध प्रशासनिक कार्यवाही करते? अभी तक उन लोगों के खिलाफ कोई कार्यवाही नहीं हुई जिनके बारे में प्रशासन अच्छी तरह जानता है कि उन लोगों ने उसको चोट पहुँचायी और इरादेतन पहुँचायी! अगर उसके पिता इस बात को लेकर संस्थान के खिलाफ कानूनी कार्यवाही करें और कहें कि इसके पीछे प्रशासन का हाथ है तथा अल्पसंख्यकों पर खुला अत्याचार है तो आप क्या करेंगे?"

"नीलम्मा, तुम राजनीति में न पड़ो। तुम नहीं जानती कि इस प्रदेश के लोग कितने मुकदमेबाज होते हैं। इन्हें आपस में ही निवट लेने दो। मैं यहाँ बीस साल से हूँ, मैं इन लोगों के बारे में तुमसे ज्यादा जानता हूँ। अगर ये लोग एक-दूसरे के साथ व्यस्त रहेंगे तो हम लोगों का जीवन शान्ति से गुजरेगा।" डीन ने हँसने का प्रयत्न किया।

इस बार नीलम्मा का चेहरा भी तमतमा आया था। चेहरा तमतमाया देखकर बावनराम बोले, "रहने दो बेटी, यहाँ आसपास में धर्मशाला होगी''' नहीं तो इस पासवाले गाँव की चौपाल में पड़ा रहूँगा। वैसे भी हम लोगों की ऐसे कमरों में रहने की कहाँ आदत है।"

नीलम्मा ने उन्हें चुप कर दिया और फोन पर बोली, "सर, आप पहले टीचर हैं''' इस या उस स्टेट के बाशिन्दे बाद में। अगर आप यहाँ के लोगों के प्रति यह रुख रखते हैं तो आपको यहाँ रहने का कोई अधिकार नहीं। हम लोग जहाँ रहेंगे उसी के प्रति यह रुख बना लेंगे तो हम देश को भी धोखा देने से बाज नहीं आयेंगे।"

डीन ने दूसरा पलटा लिया, "नीलम्मा, तुम गलत समझ गयीं''' यह तो मजाक था। वैसे यह तो तुम भी मानोगी कि यहाँ पर बहुत जातिवाद है। यहाँ रहकर हम लोग यहाँ की ऊँची जातियों को नाराज करके खतरा कैसे मोल ले सकते हैं?"

"क्या अपनी स्टेट में ऐसा कर पायेंगे? वहाँ तो ऊँची जाति के लोगों का और भी अधिक वर्चस्व है!"

"तुम तो कुतर्क कर रही हो।"

"तो ठीक है, मैं आज स्टुडेन्ट्स सीनेट की मीटिंग बुलाकर पूरा मसला उसके सामने रखूँगी। अगर सीनेट को भी आप लोग प्रभावित करने में सफल हो गये तो जी. बी. एम. बुलाऊँगी।"

कुछ समय तक डीन खामोश रहा। फिर वह रिसीवर पर हाथ रखकर किसी से बात करता रहा। फिर बोला, "अच्छा तो स्टुअर्ड को दो।"

नीलम्मा ने फोन स्टुअर्ड को पकड़ा दिया।

कमरा खोल दिया गया था। लेकिन स्टुअर्ड लगातार स्पष्टीकरण दे रहा था, "हम क्या कर सकते हैं···हमें तो वही करना पड़ता है जो ऊपर के अधिकारी कहते हैं। इनका पता ही नहीं चलता, ये लोग कब किसके लिए क्या कह दें। हम तो आपके कहने से ही कमरा खोल देते।"

उसने कमरा खोलकर चाबी वहीं मेज पर रख दी। बाबनराम से बोला, "बाबा, जब कहीं जाओ तो ताला बन्द करके जाना। ताली दफ्तर में दे देना। किसी चीज की जरूरत हो तो यह बटन दबा देना। पानी मैं अभी भिजवाये देता हूँ।" फिर नीलम्मा से बोला, "तो मैं चलता हूँ, मेम साहब!"

"मेम साहब नहीं, नीलम्मा बहन।"

वह हँसता हुआ बोला, "यहाँ तो सभी मेम साहब आती हैं···मैंने सोचा, आपको भी यही कहना ठीक लगेगा।"

बाबनराम बैठे नहीं थे, खड़े थे। गर्दन घुमा-घुमाकर कमरा देख रहे थे। स्टुअर्ड थोड़ी देर बाद ही फिर लौट आया, "बाबा, बाथरूम बताना तो भूल ही गया था।" उसने दरवाजा खोलकर दिखलाया, "यह बाथरूम है, नहाने, टट्टी जाने दोनों का इन्तजाम इसी में है। नल के नीचे बाल्टी रखी है। निबटकर टंकी खींच दिया करिए। कल सवेरे जमादार आकर साफ कर जायेगा।"

"जमादार!" बाबनराम थोड़ा चौंके। फिर बोले, "नहीं, मैं ही धो लिया करूँगा।"

वह हँसता हुआ बाहर हो गया।

बाबनराम बोले, "ऐसे कमरों में तो दम ज्यादा घुटता है। आपने बेकार इतना झगड़ा मोल लिया···मैं तो कहीं भी पड़ा रहता।"

"नहीं, आपको ऐसा नहीं सोचना चाहिए। जब और बच्चों के माँ-बाप यहाँ आकर ठहरते हैं तो आप क्यों नहीं ठहरेंगे। असमानता की यह स्थिति मुझे अनायास बेचैन कर देती है। जो चीज स्वयं होनी चाहिए वह भी कृपा करके देने की वस्तु मान ली गयी है। इसलिए लड़ना पड़ता है···नहीं लड़ेंगे तो अधिकार जाता रहेगा। जैसे पहले हुआ होगा।"

वे चुप हो गये।

"कोई भी आये तो कमरा मत खोलियेगा। हो सकता है दूसरे लड़के बदतमीजी करने की कोशिश करें।"

बाबनराम हँस दिये, "मुझ बूढ़े आदमी से कोई क्या बदतमीजी करेगा। जैसा अनुकूल वैसे और बच्चे। कुछ कहेंगे तो मैं उन्हें समझा लूँगा···माफी माँग लूँगा। मेरा क्या जायेगा?"

"इस सबकी जरूरत नहीं पड़ेगी। अनुकूल के साथ पढ़नेवालों को आपके साथ वही व्यवहार करना चाहिए जैसा वे अपने माता-पिता के साथ करते हैं। अगर वे ऐसा नहीं करते तो वे आपसे बात करने का अपना अधिकार भी नहीं रखते।"

बाबनराम ने सोचते हुए कहा, "बेटी, तुम तो बहुत पढ़ी-लिखी हो···लेकिन मैंने तो यही देखा है, इन्सान की आर्थिक और सामाजिक स्थिति ही उसके साथ होनेवाले व्यवहार को भी निर्धारित करती है। इसलिए मैं अपनी स्थिति के हिसाब

मे व्यवहार करूँगा, वे अपनी स्थिति के हिसाब से···मुझे अपने बारे मे किसी तरह की कोई गलतफहमी नही।"

"अच्छा अब आप आराम कीजिए, हो सका तो मैं खाने के पहले ही एक चक्कर लगा लूंगी। आप मेरे साथ ही अस्पताल चलियेगा···अकेले मत जाइए। दरवाजा ऐसे ही मत खोल दीजिए।" उसने फिर कहा।

वह चली गयी। जाते-जाते स्टुअर्ड से भी कहती गयी, 'अगर कोई बात हो तो मुझे हॉस्टिल मे फोन करके कमरे से बुलवा लें।"

नीलम्मा के चले जाने के बाद बाबनराम का अकेलापन उनके थके हुए पाँवो से भी कई गुना भारी हो उठा। वे कुछ इस तरह से दबते जा रहे थे जैसे उस कमरे की सम्पूर्ण छत उन पर बैठती चली आ रही है। उन्हें उन दीवारो मे से तरह-तरह की आवाजें आती सुनायी पड रही थी। उन आवाजो मे उन्हें यही लगता था कि उन दीवारो मे अनगिनत मुख फिट है। वे सब मुख उनके कानो मे गर्म शीशे की तरह अपनी आवाजें उँडेल रहे हैं।

"तुम्हारा बेटा यहाँ से जिन्दा नही जायेगा।"

"तुम पिता नही उसके दुश्मन हो।"

"तुमने अपनी आकाक्षाओ पर बेटे की बलि चढ़ा दी।"

"अगर अनुकूल नही रहा ?"

"यह लडकी कौन है ? अनुकूल मे इतना क्यो जुडी है ?"

"हम नीचे लोगो के साथ उसके जुडने का क्या मकसद ?"

"वह क्या अनुकूल के माध्यम से हम लोगों से बदला लेगी ?"

"तुम अपने बेटे को यहाँ से ले जाओ, नही तो वह चक्की मे फँसे दाने की तरह पिस जायेगा।"

"अनुकूल की माँ, बहनें, बहनोई सब तुमसे जवाब-तलब करेंगे।"

यह सब आवाजे रस्सी की तरह बट गयी थी और उनकी देह पर कोड़े की तरह पड रही थी।

बाबनराम ने खिडकी खोल ली। उन्हें लगा कि बाहर बहुत-से कदम चहल-कदमी कर रहे हैं।

"ये सब कौन है ? यहाँ क्यो घूम रहे हैं ?"

"तेरे बेटे के कातिल···" वे आवाजें फिर क्रियाशील हो गयी। "तू अपने बेटे को बचा सकता हो तो बचा ले···नही तो हो सकता है बेटे को ले जाने की जगह तू उसकी लाश को साथ लेकर लौटे···तब कैसा लगेगा ?"

उन्होंने कानो पर हाथ रख लिये। वे दरवाजे की तरफ झपटे। उसे वापिस ले चलना चाहिए। यहाँ रखना ठीक नही। यहाँ का चप्पा-चप्पा उसका दुश्मन है। लेकिन हो सकता है वह लडकी उसे जाने न दे। कही अनुकूल की माँ की बात ही सही न हो" यह जादू जानती हो। नही तो यह लडकी उस पर इतनी मेहरबान क्यो है ? मेरा इतना ख्याल क्यो कर रही है ? आखिर अनुकूल से वह क्या चाहती है ?

बिसात न बनाइए। उसे कुछ हो गया तो हम लोग कहीं के नहीं रहेंगे। मैं आपके पाँव पड़ता हूँ।" वे पाँवों की तरफ झुकने लगे।

नीलम्मा झटके से पीछे हट गयी। वह बहुत क्षुब्ध हो उठी थी। यह सब क्या है! क्या ये समझ रहे हैं, मैं उसे इस राजनीति में झोंक रही हूँ? फिर भी वह शान्त होकर बोली, "अंकल, लगता है कि आपको कोई गम्भीर गलतफहमी है। उन लोगों ने उल्टा-सीधा कहकर आपकी भावनाओं को दूषित करने का प्रयत्न किया है। अनुकूल तो पहले से ही इन लोगों से जूझ रहा था। मैं तो बहुत बाद में आयी। वह भी राम के कहने पर। मैं राम को जानती हूँ। वह अब अस्वस्थ है। पहले वही अपने लोगों के आत्मसम्मान की रक्षा के लिए इन लोगों से लड़ रहा था। मुझे लगा कि अनुकूल की मदद की जानी चाहिए···वह अकेला घबरा ना जाय।"

"पता नहीं इस बुढ़ापे में क्या-क्या देखना पड़ेगा!"

"आप अनुकूल से बात कर लें। अगर अनुकूल जाना चाहे तो उसे शौक से ले जाइए। मुसीबत से एक बार बचकर भाग निकलने के बाद क्या मनुष्य हमेशा उससे अपने को बचा सकता है? अगर हो सकता है तो ठीक है। और ऐसा नहीं है और मुसीबत घूम-घूमकर सामने आकर रास्ता रोकती है तो अच्छा यही होता है कि साथ-ही-साथ हिसाब-किताब निबटाते चलो। आप इस बात को ज्यादा सजीदगी से समझ सकते है क्योंकि दुनिया आपकी नजरों से गुजरी है।" फिर रुककर बोली, "मेरे विचार से तो सबसे ज्यादा तकलीफदेह असम्मान के साथ जीना है। असम्मान छूत की बीमारी की तरह बार-बार पलटता और लिपटता है!"

"ये सब बातें मेरी अक्ल में नहीं आ रही। बुढ़ापे में संसार की हर चीज से ज्यादा महत्त्वपूर्ण सन्तान हो जाती है। इस बात को अभी आप लोग नहीं समझेंगे।"

नीलम्मा ने इस बात से छुटकारा पाने की कोशिश करते हुए कहा, "चलिए, अस्पताल चलें। वहीं अनुकूल से मशवरा कर लीजिए।"

बावनराम बिना कहे, जूता पहनकर बाहर निकल आये। नीलम्मा ने ताला लगा दिया।

बाहर सब बरामदों में रोशनी बिखरी पड़ी थी। एक कोने से दूसरे कोने तक, दूसरे कोने से तीसरे तक और तीसरे कोने से चौथे कोने तक अबाध बह रही थी। वे दोनों उसी के बीच से स्थिर कदमों के साथ निकलते चले गये। उनके चलने से कभी-कभी लगता था कि वे फिसलने के डर से सँभलकर धारा पार कर रहे हैं। बाहर सीढ़ियों के पास पहुँचे तो स्टुअर्ड ने नीलम्मा को एक लिफाफा दिया। ऊपर उसका नाम वगैरह सबकुछ टाइप्ड था।

नीलम्मा को थोड़ा आश्चर्य हुआ। लिफाफे को उलट-पलटकर देखा। पूछा, "कौन दे गया?"

"एक छोटा बच्चा दे गया था। कह रहा था, नीलम्मा दीदी को दे दीजिए।"

नीलम्मा चक्कर में थी। कौन बच्चा हो सकता है? उसने लिफाफा चीरा। एक छोटी-सी टाइप्ड चिट्ठी थी। वहीं रोशनी के नीचे खड़ी होकर पढ़ने लगी। पहले

तो वह उस चिट्ठी को फाड़ने के लिए उद्यत हुई, फिर कुछ सोचकर पर्स में रख ली। चेहरे पर तनाव था। होंठ की एक कोर फड़क रही थी। बावनराम थोड़ा आगे बढ़कर खड़े उसके आने का इन्तजार करने लगे। वे अपने में डूबे थे। उन्होंने न नीलम्मा की तरफ ध्यान दिया और न उस चिट्ठी की तरफ।

नीलम्मा आगे आयी तो वे भी पीछे-पीछे चल दिये। नीलम्मा बीच-बीच में होंठों-ही-होंठों में बुदबुदाने लगती थी। फिर एकाएक उसे लगता, वह बिना वजह, आप-ही-आप बोलती जा रही है। देखनेवाले क्या सोचेंगे! नजर घुमाकर देखती। अँधेरा-ही-अँधेरा होता। केवल बावनराम को चुपचाप चलता हुआ पाती। उसे अपने आप पर आश्चर्य होने लगता कि वह इतनी असन्तुलित क्यों हो गयी! यह तो पूरे खेल का हिस्सा है। राम के साथ हुए उसके सम्पर्क का मुआवजा है। अगर राजू न मरा होता और राम में वह प्रतिभा न दिखायी पड़ी होती तो उसका रास्ता इतना उलझा हुआ न होता।

वह बावनराम की बातों की ओर मुड़ गयी। वे क्या सोचते हैं! जरूर उन लड़कों ने ऐसा कुछ कहा जो वे इतने भावुक हो उठे। बेटे की मुसीबतें पिता को ही बेटा बना देती हैं। उल्टा बेटे को ही बाप की भूमिका अदा करनी पड़ती है। उसे हँसी आते-आते रह गयी। सब पिता एक-से होते हैं। सब सन्तानें एक-सी होती हैं। अन्तर इतना ही होता है कि सन्तान जब तक सन्तान रहती है, उसे उनकी तरफ माता-पिता के रूप में ही देखना पड़ता है। अगर अनुकूल के साथ यह सब न घटित हुआ होता तो राम पत्र लिखकर उसकी मदद के लिए न कहता। वह मदद करती ही क्या है? बस देख-भर आती है! अब तक तो वह राम को भी देख आयी होती। राम के अन्दर स्वतन्त्र आत्मा है। उसका यह स्वतन्त्रता-बोध ही उसे निडर बनाये था। पता नहीं वह कहाँ अदृश्य हो गया? निडर बने रहकर अपनी मान्यताओं का संरक्षणवाला भाव इस समय मँझधार में है। डर लगता है कि कहीं वह उसके अन्दर से नापैद ही न हो जाय। तब क्या होगा? उसका जाना इसीलिए और भी जरूरी है···वह अन्दर में निडर बना रह सके। वह उन लोगों में से नहीं जो निडर होने का दिखावा करके अन्दर से भयभीत बने रहते हैं।

बावनराम रुककर बोले, "इन लोगों ने जैसे अनुकूल को मारा था, मुझ बूढ़े को भी तो मार सकते हैं?" उनकी नजर सामने अन्धकार पर टिकी थी। लग रहा था जैसे वे उधर से किसी को आते देख रहे हों। उनकी आँखों में एक तरह का ठहराव था। उसे नीलम्मा नहीं देख पा रही थी।

"आप ऐसा क्यों सोचते हैं?"

वे कुछ नहीं बोले। नीलम्मा ने ही बात को आगे बढ़ाया, "यह एक शिक्षा संस्थान है···दूर-दूर तक इसका नाम है। आप ऐसा न सोचें कि यहाँ नादिरशाही वातावरण है। लोग तलवारें लिये दूसरों को मारने के लिए घूम रहे हैं। कुछ लोग अपनी विकृतियों के कारण, अपने अन्दर बैठी मूलभूत घृणा के दबाव में कुछ उल्टे-सीधे काम कर बैठते हैं। अगर हम अपने औसान बनाये रखेंगे तो वे हमारा कभी कुछ नहीं बिगाड़ पायेंगे।"

"ये सब किताबी बातें हैं···हमेशा से लोग कहते चले आये हैं। हम लोग सदा

से ऐसे ही दवावो मे जीते आये है। एक तरह से वही हमारा घर हो चुका है। मुझे तो लगता है कि हम सब इसी घृणा के बीज से पैदा होते है। एक-दूसरे को प्यार करने का ढकोसला करते-करते मर जाते हैं। नफरत पालना और प्रेम की बातें करना हमे सुख देता है। ऊँचे लोगो के अन्दर यह बीज और भी गहरा है, क्योंकि ताकत नफरत को परवान चढ़ाती है। गरीब की नफरत उसी के अन्दर सूखकर खक हो जाती है। अगर ऐसा न होता तो हम लोगो की नफरत भी कही-न-कही बिजली बनकर गिरती। अब न हमारे प्रेम का मतलब है, न घृणा का। यही कारण है कि मेरा लड़का उनकी नफरत का शिकार बना है···उन लोगो ने उसे मारा, पीटा, कोई निकलकर तक नही आया। अगर अनुकूल ने किसी को इस तरह छू भी दिया होता तो आप लोग उसकी बोटी-बोटी काट डालते।" वे उत्तेजित हो गये थे।

"मैं आपके सामने खड़ी हूँ, आप जो सजा देना चाहें मुझे दे लें। लेकिन आप यह कतई न सोचें। मेरा लेशमात्र भी स्वार्थ नही।" नीलम्मा की आवाज जरूर तेज थी पर वह हँस रही थी।

"आप अपनी बात क्यो लाती है···? औरतों को नीचा दिखाने के मर्दों के पास बहुत से तरीके होते है। जबान की मार ही औरत के लिए काफी है। मार-पीट के सामने तो उनके पास चिल्लाने और शोर मचाने के सिवाय कोई रास्ता ही नही। जब हम लोगों के घरो पर जमीदारों के कारिन्दे वसूली के लिए आते थे और मर्दों को पकडकर ले जाते थे तो औरतें रोकर, चिल्लाकर रह जाती थी। किसी ने ज्यादा कुछ किया तो भद्दी गालियाँ खायी, कपडे उतरवाकर वेइज्जती करायी। अगर वे कुछ कर सकती तो क्या न करती?"

बावनराम की बातों से नीलम्मा को भी असुविधा होने लगी थी। वह चाहती थी वे चुपचाप चलें। वह नही चाहती थी कि वह उनकी बातो का मुँह-दर-मुँह जवाब दे। वह अपने को समझा लेती थी कि हर कोई अपने अनुभव के हिसाब से ही बात करता है। क्या पता जिन्दगी के अनुभव उसको ही किस तरह सोचना और बोलना सिखा दें! जो कुछ बावनराम ने कहा था उससे उसे तकलीफ हुई थी और वह जल्दी-से-जल्दी उस स्थिति से निकल भागना चाहती थी। उसे फिर चिट्ठी का ध्यान आ गया। उसी मानसिक स्थिति मे वह फिर लौट गयी।

बावनराम की बात शायद अभी खत्म नही हुई थी। वे अभी भी कहते जाने के मूड मे थे, "मैं आपसे हाथ जोडकर कहता हूँ आप मेरे बेटे को वापिस कर दो। वह एक गरीब और नीच का बेटा है, आपके किसी मतलब का नहीं! लेकिन मेरे लिए वह लाखो का है। मुझे उसे यहाँ नही भेजना चाहिए था। पुराने लोग जानते थे कि अपने माहौल से बाहर गया आदमी, कभी नही लौटता। इसीलिए वे भूखे रह लेते थे पर स्वजनो को अपने वातावरण से बाहर नही जाने देते थे। मेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गये···बेटा खो दिया।"

नीलम्मा चलते-चलते रुक गयी। उसने अन्दर-ही-अन्दर तेज होती आवाज को थामा और बोली, "अकल, पता नही आप किस दिशा मे सोच रहे हैं। मैं फिर आपको स्पष्ट किये देती हूं कि आपके बेटे मे मेरी तनिक भी रुचि नहीं। उसे आप जहाँ भी ले जाना चाहे, शौक से ले जायें। मुझ पर अनायास एक जिम्मेदारी आ

गयी…आ क्या गयी, मैंने ले ली। निबाह रही हूँ। इन्सान के रूप में हर व्यक्ति लाखों-करोड़ों का होता है। उसकी यह कीमत समाज के सन्दर्भ में होती है…वह समाज के लिए कितना फायदेमन्द है। अगर नहीं है तो माँ-बाप के लिए चाहे वह कुछ भी क्यों न हो, समाज के लिए कौड़ी में भी महँगा होता है। अगर ऐसा न होता तो गाँधी पैसे में बिक गया होता और एक धनी समार का सबसे महान व्यक्ति कहलाता।"

अस्पताल आ गया तो नीलम्मा ने जल्दी से अपनी बात समेटी, "आप इस बात को दिमाग से निकाल दें कि…अनुकूल से मेरा किसी तरह का कोई सम्बन्ध नहीं।"

बावनराम नीलम्मा के आत्मविश्वास और उसकी आवाज की खनक से चौंक गये। नीलम्मा उनके साथ-ही-साथ अस्पताल में प्रविष्ट हुई। वे धीरे-धीरे चल रहे थे, वह भी धीमे-धीमे ही चलती रही।

अनुकूल अपने बेड पर अधलेटा था। एक-दो लड़के भी पास थे। वे सब लोग किसी बात पर हँस रहे थे। नीलम्मा को आते देख पहले अनुकूल चुप हुआ, फिर और लोग भी चुप हो गये। बावनराम पर नजर गयी तो अनुकूल को लगा कि वे जरूरत से ज्यादा सुस्त हैं। नीलम्मा मुस्करायी जरूर, पर उसके चेहरे पर भी तनाव था।

वह लड़का अभी भी कराह रहा था। उसके पास एक अजनबी व्यक्ति बैठा था। नीलम्मा ने धीरे-से पूछा, "इसके पिता हैं?"

अनुकूल ने भी इतने ही धीरे-से बताया, "नहीं, पिता व्यस्तता के कारण नहीं आ सके। किसी दूसरे आदमी को भेजा है…शायद इसके टीचर है, पढ़ाया करते थे।"

नीलम्मा उस कराहते लड़के के पास बैठे आदमी को गौर से देखती रही। अनुकूल बोला, "इन सज्जन के आने के बाद से यह कुछ शान्त है। लेकिन जब ये आये थे तो वह एकाएक वायलेण्ट हो गया था। चिल्ला-चिल्लाकर पूछ रहा था—'सर, पापा क्यों नहीं आये? उन्हें अपने मरते हुए बेटे को देखने की फुर्सत नहीं? उनसे जाकर कह दो, राजीव मर गया। उन्हें मुझे देखने की फुर्सत नहीं तो मुझे भी जीने की फुर्सत नहीं। अगर बच गया तो उनके मतलब का नहीं रहूँगा…' वह बड़ी अजीब भाषा इस्तेमाल कर रहा था। नर्स को आकर इन्जेक्शन देना पड़ा। तब सोया।"

इन्जेक्शन के बावजूद थोड़ी-थोड़ी देर बाद वह कराह रहा था। वे सज्जन उसके सिरहाने बैठे किताब पढ़ रहे थे। अनुकूल बताता रहा, "ये सज्जन दो-चार मिनट को मेरे पास भी आये थे। पूछ रहे थे, आपकी टाँग कैसे टूट गयी? मैं क्या बताता? टाल गया। फिर राजीव के पापा की बात बतलाने लगे कि वे कितने बड़े आदमी हैं। उनके एक-एक मिनट की कीमत लाखों रुपये है। जरा भी कुर्सी से इधर-उधर हो जायें तो करोड़ों डूब जायें। राजीव की माँ बचपन में ही चल बसी थी। कुछ ही महीने पहले उन्होंने शादी की है। तभी से पता नहीं राजीव को क्या हो गया। सब आराम है, पर यह हर वक्त यही चाहता है कि इसके पिताजी इसके पास बने

रहे। भला वे कैसे इतना वक्त खराब कर सकते है ''! कल ही नयी पत्नी के साथ स्वीट्ज़रलैण्ड मे लौटे है।"

नीलम्मा बोली, "हो सकता है इसके दिमाग पर इसी बात का असर हो'''। जो इस स्थिति से गुजर चुका होता है वही जानता है'''मुझे मालूम है।" आखरी वाक्य को उसने धीमे से कहा। अनुकूल को केवल भनक-सी ही मिली। जब तक वह दोबारा पूछता, नीलम्मा राजीव के बिस्तर के पास चली गयी।

लड़के चले गये थे। बावनराम अनुकूल के बिस्तर पर पाँव लटकाकर चुपचाप बैठे थे। अनुकूल ने उनके बोलने का थोडी देर तक इन्तज़ार किया। वे अपनी तरफ से एक शब्द नही बोल रहे थे। उनका चेहरा एकदम स्थिर था। बीच-बीच मे कभी-कभी माथे पर उर्मियाँ-सी उभर आती थी। अनुकूल ने ही पूछा, "बाबू, तबियत तो ठीक है? कोई बात है क्या?"

"बात क्या होनी थी'''सब अपनी की हुई गलतियाँ है जो चीटियो की तरह चाटे डाल रही हैं। सबने रोका, पर मैंने तुम्हे यहाँ भेज दिया। अब समझ मे आ रहा है कि अपने ही फैलाये जाल मे आदमी कैसे फँसता चला जाता है।"

अनुकूल ने सिर्फ उनके चेहरे की तरफ देखा। जवाब कुछ नही दिया। उसे लगा बात इतनी ही नही, कुछ और भी है।

थोडी देर सोचते-विचारते रहने के बाद बावनराम ने मुंह खोला, "तुम्हारा खन्ना मुझे भी धमकी दे गया। कह रहा था, अनुकूल को यहाँ से ले जाइए'''।"

"अकेला ही था?"

"नही, और भी लडके थे।" नीलम्मा की ओर इशारा करते हुए कहा, "तुम्हे और उनको लेकर दुनिया-भर की बकवास कर रहे थे!" फिर उनका टोन एकाएक बदल गया, "बेटा, तुम यहाँ से चलो। दुनिया मे सब इन्जीनियर ही नही होते'' सबने बडी बात रोटी की है। मेरी भूल थी कि रोटी की बात सोचते-सोचते आसमान के तारों की बात सोचने लगा। उनकी बातो मे मत आओ, बिवाई तो हमारे पैर मे है। ये क्या जाने बिवाई क्या होती है, कैसे टीसती है! ये तो लम्बी-चौड़ी बातें करके भरमाना जानती हैं।"

"आप ऐसा क्यों सोचते है, बाबू? अब मैं यहाँ आ गया हूँ तो मुझे यही रहने दे। इस मौके पर यहाँ से चला जाना मुझे तो हताश करेगा सो करेगा ही, औरो को भी कर देगा!"

बावनराम थोड़ा स्पष्ट होते हुए बोले, "हम तो छोटी बुद्धि के आदमी हैं''' इतना ही जानते हैं'''कि अगर कोई यह जानते हुए भी गहरे पानी मे उतरता है कि वह तैरना नही जानता तो डूबेगा ही।"

"लेकिन बाबू, मै स्वयं तो इस नदी मे नही कूदा''" अनुकूल को लगा उसे यह नही कहना चाहिए था। तत्काल सँभालता हुआ बोला, "मैं भरसक कोशिश करना चाहता हूँ कि अब अपने आप ही तैरकर पार लग जाऊँ।"

बावनराम के चेहरे से लगा, उनका दिल बैठ गया। अनुकूल ने उन्हे उबारना चाहा, "आप जरा भी सोच-विचार न करें। यहाँ पर सब लोग पढ़े-लिखे है। पढ़े-लिखे लोग बन्दर भभकी से अधिक नही लाँघते। ये न जिन्दा जलायेंगे और न जान

से मारेंगे। फिर हम लोगों को कभी-न-कभी तो अपने दिलों के डरों से मुक्त होना ही पड़ेगा। जब तक हम अपने को उठाकर ऊपर न खड़ा कर लें तब तक हर एक क्षण हमको इन स्थितियों का सामना करते रहना पड़ेगा। उनका सामना यहाँ रहकर करूँ या कहीं और ''क्या फर्क पड़ता है?''

बावनराम ने धीरे से धोती के पल्ले से अपनी आँखें पोंछ लीं और पलंग से उठकर कुर्सी पर बैठ गये।

नीलम्मा पहले तो राजीव के बिस्तर के पास खड़ी उसे देखती रही, फिर उसके माथे पर हाथ रख दिया। उस लड़के ने कुछ इस तरह आँखें खोलीं जैसे नहाते समय ठण्डे पानी का छींटा पड़ने पर बच्चा सुबकी लेता है।

"आपको क्या तकलीफ है?"

वह लड़का अध-उठा हो गया। उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व उसकी आँखों में सिमट गया। उसके चेहरे से लग रहा था जैसे भरे ताप में वह किसी शीतल झोंके से ढक गया है। वह एकटक नीलम्मा की तरफ देख रहा था। कराहना बन्द हो गया था।

नीलम्मा ने फिर पूछा, "क्या दर्द है?"

"हाँ···।" उसने गर्दन हिलाकर कहा।

पास बैठे आदमी ने कहा, "जब इनकी माँ का स्वर्गवास हुआ था तब भी इनको इसी तरह दर्द होता था और लगता था कि चलेंगे तो गिर जायेंगे। इनके पिता बहुत बड़े आदमी हैं। वे इन्हें इलाज के लिए अमेरिका ले गये थे। सोलह-सत्रह साल के बाद इन्हें फिर वही तकलीफ शुरू हो गयी। पता नहीं बार-बार इन्हें ऐसा क्यों होने लगा?" अन्तिम वाक्य उसने बहुत ही दुखी स्वर में कहा।

नीलम्मा ने उसे लिटा दिया और बोली, "आप घर क्यों नहीं चले जाते? आपके पिता आपको फिर अमेरिका ले जाकर दिखलायेंगे। बेटे की जिन्दगी से अधिक दौलत थोड़े ही है।"

"हैऽ।" वह लड़का अपने को रोकता हुआ टुकड़ों में बोला, "उनको·· अब फुर्सत नहीं है।"

"फिर भी यहाँ से ज्यादा देखभाल तो घर पर ही होगी।"

"कौन करेगा? इतनी तो यहाँ भी हो जाती है· 'मैं यहीं पड़ा-पड़ा मर जाऊँगा। मेरे मरने से किसी को कोई फर्क नहीं पड़ेगा।"

उस आदमी ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया, "यह क्या कहते हो राजीव भैया? तुम अकेले ही तो उस खानदान के चिराग हो। साहब आना चाहते थे पर "

"सर, यह कहिए अब बेटे के लिए उन्हें फुर्सत नहीं। थोड़े दिनों बाद मुझे भी फुर्सत नहीं रहेगी। मुझे लगता है मेरे ब्रेन में ट्यूमर है जो बढ़कर मेरे सिर के बाहर निकल आयेगा। फट जाये तो मेरी भी छुट्टी हो।'आप भी चले जाइए, सर। आप ही क्या कर लेंगे? दवा मिल जाती है, इन्जेक्शन लग जाता है···खाना मिल जाता है···इसके सिवाय एक मरीज को और क्या चाहिए? मेरी जरूरत यहाँ पूरी हो रही है।"

"मैं तुम्हे लेने आया हूँ, घर चलो।"

राजीव का चेहरा लाल हो आया था, "रिक्शा मे ले चलेंगे या पैदल चलना होगा ?"

"नही, स्टेशन तक तो सस्थान की गाड़ी जा सकती है।" नीलम्मा अब तक चुप थी, वह एकाएक बोल दी।

"यही तो मैं भी कहता हूँ दीदी···" 'दीदी' सुनकर नीलम्मा एकाएक चौकी, लेकिन चौकने का भाव चेहरे पर नहीं आने दिया। वह कहता जा रहा था, "जब सबकुछ सस्थान को ही करना है तो इन लोगो की क्या जरूरत है ? मैं सस्थान ही को अपना पिता समझकर उसी की गोद में मर जाऊँगा ! आप मुझे नही जानती, मैं आपको नही जानता। फिर भी आपने आकर मेरे सिर पर अपना हाथ रखा। मुझे लगा जैसे मेरे मस्तिष्क मे उठते ट्यूमर ने बढना बन्द कर दिया हो···। मैं मरता-मरता जी उठा। सवेरे अनुकूल के पापा आना चाहते थे, पर अनुकूल ने उन्हें मना कर दिया ···उसे लगा होगा कि मैं भी औरो की तरह बदतमीजी कर सकता हूँ। मेरे अपने पिता आना नही चाहते। उनकी···उनकी···अपनी मजबूरियाँ हैं। शाऽऽ···छोडिए, जिस रास्ते नही चलना उसके दरख्त गिनने से क्या फायदा ? वे जो चाहे करे, मैं जो चाहूँगा करूँगा। मरना है तो मरूँगा···" उस लड़के का गला भर आया। फिर सँभलकर कहा, "जब तक मैं यहाँ हूँ थोडी देर के लिए आप मेरे पास भी आ जाया करे·· मुझे लगेगा, कोई पूछनेवाला है।"

उसने दोनो हाथो से सिर पकड़ लिया। उसकी तड़पड़ाहट बढने लगी। वह बोला, "जरा नर्स को बुला दीजिए। इन्जेक्शन लगा देगी। इसी तरह किसी दिन मेरा सिर खील-खील हो जायेगा।" नीलम्मा ने घण्टी बजा दी।

नीलम्मा वहाँ से जाने लगी तो वह बोला, "नर्स को आ जाने दीजिए···अगर इस बीच मौत आ गयी तो मरना कुछ आसान हो जायेगा।" फिर रुककर बोला, "अनुकूल से कह दीजिए···मैं और लडको की तरह नही हूँ·· वह मुझसे परहेज न किया करे।"

दर्द के मारे वह इधर-से-उधर लोटने लगा।

इन्जेक्शन लग जाने के बाद जब नीलम्मा अनुकूल के पास आयी तो बाप-बेटा दोनो चुपचाप बैठे थे। उसे थोड़ा अटपटा लगा। ये लोग इतना चुप क्यों है ?

नीलम्मा ने ही पूछा, "शाम डाक्टर आये थे ?"

"हाँ।" कहकर वह चुप हो गया।

"क्या कहा ?"

"शायद प्लास्टर कल कट जाये।"

वह खडी रही। वह लडका थोड़े-थोडे अन्तराल के बाद कराहने लगता था। इन्जेक्शन लगने के बाद उसके कराहने की रफ्तार हमेशा इतनी ही सुस्त और सम हो जाती थी। वह आदमी वही बैठा उसे देख रहा था। थोड़ी-थोड़ी देर बाद झुक-कर देखता था और फिर कुछ आश्वस्त-सा होकर अपनी जगह जा बैठता था।

नीलम्मा अनुकूल मे बोली, "मैं सोचती हूँ, अकल तो अब तुम्हारे पास आ ही गये···मैं जाकर राम को देख आऊँ। उससे मैंने इतना कुछ सीखा, पर उसी के लिए कुछ नही कर पायी। बहुत दिन से उसकी चिट्ठी भी नही आयी।"

अनुकूल कुछ उलझ-सा गया। उसने नीलम्मा की तरफ इस तरह देखा, जैसे कोई बच्चा नजरो से रुकने का इसरार कर रहा हो कि मुझे इस तरह छोडकर कैसे जा सकती हो! नीलम्मा ने उन नजरो को पहचाना भी। लेकिन हँस दी, "तुम मर्द लोग बहुत जल्दी यह समझने लगते हो कि सामनेवाला व्यक्ति सिर्फ तुम्हारे लिए ही बना है। उसे और किसी के लिए न कुछ सोचना है न करना है।" फिर थोड़ी और गम्भीरता लाकर कहा, "अगर ऐसा सोचते हो तो तुम्हारी भूल है। राम ने अपने विचारो के माध्यम से, अपने से स्वतन्त्र होना सिखाया है। वह तभी सम्भव है जब दूसरो के लिए कुछ करते रहो। राम ने मेरे ही निकट के एक बीमार आदमी की खिदमत मे छुपे सुख से मेरा परिचय कराया था···उसी सुख को तुम दोनो के माध्यम से मैंने आज फिर देखा।"

अनुकूल के स्थान पर बावनराम बोले, "बेटी, थोडे दिन और रुक जाओ। यह यही रहना चाहता है···मेरे साथ नही जाना चाहता। ठीक भी है···जब इसकी माँ इसे यहाँ भेजने मे अडचन डालती थी तो मैं यही कहता था कि अपने प्यार को दूसरे के रास्ते का रोडा न बना, बल्कि आगे बढने के लिए सहारा बना। लेकिन मैं ही बदल गया मैं भी अब इसके रास्ते का अटकन बनता जा रहा हूँ। इसे यही रहना है·· आप ही को इसकी देखभाल करनी है। मैं यहाँ कब तक बना रह सकता हूँ!"

नीलम्मा उन्हे यह सब कहते हुए चुपचाप सुनती और देखती रही। वे अन्दर से आहत थे। कोशिश कर रहे थे, बाहर पता न चले। कभी-कभी लगने लगता था, वे अन्दर-ही-अन्दर बुरी तरह से चोट खाये व्यक्ति की तरह उलट-पुलट रहे हैं। वही छाया अनुकूल के चेहरे पर भी झलक आती थी। लेकिन साबितवाली टाँग सिकोड़े और प्लास्टरवाली टाँग फैलाये, चुपचाप बैठा था।

नीलम्मा ने बात को आगे बढ़ाया, "प्लास्टर खुल जाने पर कुछ दिन के लिए तुम्हें अकल के साथ चले जाना चाहिए। ज्यादा दिन के लिए न सही, कुछ दिन के लिए ही सही। निश्चिन्तता के साथ वहाँ रहकर यह निर्णय लेना आसान होगा कि तुम्हें आगे क्या करना है। अपनी ही परेशानी नही देखनी, तुम्हे इन लोगो की परेशानी का भी ख्याल रखना होगा··"

बावनराम खँखारते हुए बोले, "सन्तान का मोह कोहरे की तरह बुद्धि पर छा जाता है। हम लोग जब छोटे-छोटे थे और सर्दियों मे सवेरे खेतो पर काम करने जाया करते थे तो आग जलाकर रोशनी किया करते थे। नही तो लगता ही नही था कि खेत हैं और उनमे फसल खडी है। सबकुछ छिपा रहता था। यहाँ आया तो रोशनी की वजह से कुछ नजर नही आ रहा था। यह तक नजर नही आया कि अनुकूल अब पौध नही, बढ़ता हुआ दरख्त है। एक जगह से दूसरी जगह रोपे जाने की सम्भावना खत्म कर चुका है। उसकी अपनी जड़ें फूट आयी है। क्या बताऊँ···हर स्थिति मे हम लोग आँखो से ही मजबूर होते है।"

बावनराम की तरफ देखने पर अनुकूल को लगा कि उनका चेहरा दो हिस्सो मे

बँट गया है। एक तरफ माँ की-सी शक्ल है, दूसरी तरफ वही बाबू हैं जिन्होंने उसे यहाँ पढ़ने भेजा था। नीलम्मा चुप थी—अन्दर की चौखट पर ठिठके एक बाहरी व्यक्ति की तरह।

बावनराम ने नीलम्मा से कहा, "आ तो मैं गया था···बेटे से मिलने का *उत्साह बड़ा अजीबोगरीब होता है। वही मुझे ले आया। लेकिन बेटे को ऐसी हालत* में छोड़कर जाना भी मौत से कम बड़ी जहमत नहीं। एक कदम आगे जाऊँगा तो दस कदम लौटने का मन होगा। लौटते हुए उतना साफ भी नजर नहीं आयेगा, जितना आते हुए आ रहा था···" नीलम्मा और अनुकूल उनकी बातों के सामने अपने को स्थिर नहीं रख पा रहे थे। अनुकूल तो विशेष रूप से बार-बार द्रवित हो *आने को हो उठता था।*

बावनराम लगातार बोल रहे थे, "बस, स्टेशन तक पहुँचने का प्रबन्ध हो जाये तो चला जाऊँगा। कोई साथ हो तो उस पर अपनी जिम्मेदारी डालकर चलने का सुख बच्चों-वाला सुख होता है। अकेले सफर करनेवाले को लगता है कि वह अपने आप ही पिता भी है और बच्चा भी। अपनी ही उँगली पकड़कर चलना···!" *कहकर वे कुछ इस तरह हँसे कि आँखों में रुका पानी बह आया।*

नीलम्मा को लगा, उसे बोलना चाहिए, "अंकल, आप अभी दो-चार दिन ठहरें। आपको अच्छा लगेगा। अनुकूल को भी सकून मिलेगा कि उसके बाबू उसके पास हैं। वह पुकारेगा तो सामने खड़े मिलेंगे।" कराहते लड़के की तरफ इशारा करके बोली, "एक वह है, पता नहीं कितने दिन से उसे अपने पिता का इन्तजार है।"

"नहीं, मुझे चला जाने दो। अनुकूल का मोह मुझे फिर जाने लायक नहीं रहने देगा। मैं भी इसकी माँ से कम पागल नहीं हूँ। मैं इसी ऊहापोह में पड़ा रहूँगा कि इसे चलने के लिए कहूँ या छोड़ जाऊँ। यह भी दो पाटों के बीच में पिसता रहेगा—बापू की बात मानूँ या अपनी आवाज सुनूँ। वैसे भी इतनी साफ-सुथरी जगहों में रहने से मुझे डर लगता है। अपना-सा यहाँ एक भी चेहरा नजर नहीं आता। यहाँ हर चेहरा डराता है···इसकी माँ भी रो-रोकर ही वक्त काट रही होगी।"

नीलम्मा चुप थी। अनुकूल अपने अन्दर बहुत गहरे उतरा हुआ था। उसके चेहरे पर कुछ भी न कर सकने की एक असहायता थी। उसकी मुड़ी हुई टाँग खुद-पर-खुद पसरती जा रही थी।

वह लड़का फिर कराहने लगा था। इन्जेक्शन की दवा का असर धीरे-धीरे उतर रहा था।

इस बार अनुकूल ने भरे गले से कहा, "बाबू, एक दिन और ठहर जाइए···!"

बावनराम को ऐसा लगा जैसे उनका साँस अवरुद्ध हो जायेगा। वे बेचैनी के साथ बोले, *"नहीं-नहीं, मुझे चला जाने दो। तुम रुकने के लिए कहोगे तो मैं जा नहीं* सकूँगा।···समझी और नासमझी के बीच तकरार होता रहेगा। चला जाऊँगा तो सोचूँगा मेरा बेटा अब समझदार हो गया···जो करेगा, सोच-समझकर करेगा।" फिर नीलम्मा की तरफ देखकर बोले, "हम लोगों का कोई नहीं, हम लोग अपनी मदद करने की सामर्थ्य नहीं रखते। जो मदद के लिए खड़ा हो जाय उसी को

भगवान समझते है। जब तक अपनी ताकत न हो तब तक मुसीबतो को बुलावा न दें तो अच्छा है। यहाँ भेजने के पीछे यही कारण था कि अपने पैरो पर खड़े हो जाओगे तो अपने काम भी आओगे और चार भाइयो को खड़ा होने मे मदद करोगे। बड़ी जगहों को बडी समझता था, पर यहाँ आकर लगा कि छोटी जगहो से भी ज्यादा छोटापन है। खासतौर से छोटे लोगो को लेकर।"

अनुकूल के लिए उनकी बातें भीगी रजाई की तरह भारी होती जा रही थी। वे स्वयं उनका वजन नही सँभाल पा रहे थे। कभी इधर जाते, कभी उधर! कही वे लड़खड़ाकर गिर ना जाये! वह बोलना चाहकर भी नही बोल पाया। उसे लगा, बोलने का प्रयत्न करते ही उसका संयम टूट जायेगा।

बावनराम नीलम्मा से बोले, "अगर मुझे रात को स्टेशन छुड़वा दो तो मैं कल सवेरे अपने घर जा लगूँगा।"

नीलम्मा ने अनुकूल की तरफ देखा। वह गर्दन नीची किये डूबा हुआ था। नीलम्मा धर्मसंकट में पड गयी थी। अनुकूल ने अपने को व्यस्थित करते हुए कहा, "इतनी जल्दी प्रबन्ध हो पायेगा?"

नीलम्मा ने कहा, "गेस्ट हाउस फोन करती हूँ···। कोई गाड़ी स्टेशन जा रही होगी तो उसी से भिजवाने की कोशिश की जा सकती है। नही तो सवेरे···!"

बावनराम कुछ नही बोले। आगे बढकर अनुकूल के सिर पर हाथ फेरा। अनुकूल को अपने को रोके रखना कठिन हो गया। उसने गर्दन उनके सीने पर टिका दी और अपने को छोड दिया। नीलम्मा दूसरी ओर चली गयी।

उस लड़के की कराहट एकाएक ज्यादा बढ गयी। उसके पास बैठा वह आदमी शायद डॉक्टर को बुलाने गया था। वह कराहट काफी देर तक उन दोनों के बीच ठहरी रही।

रात ही को बावनराम को स्टेशन छुड़वाने का प्रबन्ध करके नीलम्मा अनुकूल को बताने के लिए उसके कमरे मे पहुँची तो वह लेटा छत की तरफ एकटक देख रहा था। नीलम्मा ने आकर धीरे से उसके माथे पर हाथ रख दिया। अनुकूल पहले चौंका, फिर आँखें बन्द कर ली। उसकी आंखो की दोनों कोर भीगी थी। नीलम्मा बिना बोले उसके माथे पर हाथ रखे खडी रही। जब उसने समझ लिया कि अनुकूल उसके आने से होनेवाली अपने अन्दर की उथल-पुथल से उबर चुका है तो बताया, "गाड़ी मिल गयी थी, उसी से बाबू को स्टेशन भिजवा दिया है। ड्राइवर को समझा दिया था, वह टिकट खरीदकर उन्हे ठीक तरह गाड़ी मे बैठा देगा। मैं स्वय चली जाती, पर शायद उन्हे अच्छा ना लगता।" फिर हंसकर कहा, "माफ करना, सवर्णों का जो रुख अवर्णों के प्रति है, पुरुषों का वही रुख महिलाओ के प्रति रहता है! पुरुष यही समझते हैं कि महिलाएँ हर पुरुष को अपने फलने-फूलने के लिए वृक्ष समझती हैं, चाहे वह पुरुष पिद्दी-भर ही क्यो न हो!"

इस बात से अनुकूल थोडा खडबड़ा गया, "बाबू की तरफ से तो ऐसी कोई बात नही हुई।"

"वे बेचारे तो सीधे आदमी है ''पुराने ढंग के। अगर कुछ हो भी जाये तो कोई बात नहीं। हम लोग जो आधुनिकता के अलम्बरदार बने घूमते है और देश को आगे ले जाने के लिए प्रतिवद्ध है'''छि: !"

अनुकूल ने आवाज को थोडा और मुलायम बनाकर फिर पूछा, "कुछ तो बताइए, क्या हुआ ?"

"अरे छोडो · ये सब बातें दिमाग खराब करती है। ऐसी बातो से किसी भी महिला का तब तक कुछ नही बिगडता जब तक वह अपने को और अपने समाज को समझती और जानती रहती है। कभी-कभी यह जरूर लगता है कि महिलाएँ और लडकियां हर समाज मे मृग-चर्म होती है।" नीलम्मा पहले तो अपनी बात पर हँसी, फिर बोली, "तभी.तक सहेजा जाता है जब तक चमक रहती है ''!"

"आखिर आप यह सब क्यो कह रही है ? मेरी तरफ से कोई तो ऐसी बात नही हुई !"

"तुम अभी उस स्थिति में नही हो। जो है वे कहने और करने से नही चूकते।" उसने पर्स मे से वह चिट्ठी निकाली और अनुकूल की तरफ बढा दी, "लो पढो ! खन्ना एण्ड कम्पनी की मार रेंज मे अब हम भी आ गये। उन्होने यही सब बाबू से भी कहा होगा। तभी वे कुछ इस तरह की ही बाते सोच रहे थे'''उन्होंने मुझसे हाथ जोड़कर कहा था कि मैं तुम्हें उनको वापिस कर दूं !" रुकी, फिर कहा, "जैसे तुम चैन मे बँधे मेरे पालतू बन्दर हो !" कहकर खूब हँसी।

"बाबू ने ऐसा कहा !"

"कहा तो क्या हुआ। क्यों कहा, यह इस चिट्ठी को पढकर पता चल जायेगा।" अनुकूल ने चिट्ठी खोलकर पढना शुरू किया--

नीलम्माजी,

आपके नाम के आगे 'जी' हमने शालीनतावश लगाया है। वैसे यह 'जी' का अपमान करना है। आपकी योनि इतनी बडी है कि उसमे एक-एक करके सब कोई समाता जा रहा है'''बचे-खुचे और समा जायेंगे। रामउजागर बड़ा तुर्रम खाँ बनता था, उसका पता ही नही चला कहां गया। मीलो नीचे चला गया। पगलाया घूम रहा है। अब यह अनुकूल ! पिद्दी न पिद्दी का शोरवा। इसका तो कहीं पता ही नही चलेगा। आपको भी यही सब मिलते हैं ! ठीक ही मिलते हैं। परेशान तो नही करते। कभी हम लोगो को भी आजमा के देखा होता। ऊँची जात के है तो क्या हुआ। आपके सामने नीचे ही बनकर रहेंगे।

कान खोलकर सुन लो। आखरी चेतावनी है। अनुकूल को उसके बाप के साथ चला जाने दो। हम लोग सब खूंटागाड हैं। अगर नही सुना और उसे छुपाये रखा तो पन्द्रह-बीस डॉक्टरो को एक साथ आपके अन्तरंग भाग का ऑपरेशन करना पडेगा। कब तक उसे पनाह दिये रहोगी ? लगता है इस बुड्ढे को भी'''

अनुकूल ने चिट्ठी अधपढ़ी फेंक दी, "आप इसे साथ लिये घूम रही हैं ! क्यो ? बताइए, आखिर क्यों ? यह सब मेरे कारण'''मेरे ही कारण आप सबको यह झेलना

पड रहा है। मुझे चले जाना चाहिए था।"

नीलम्मा को हँसी आ गयी, "इस चिट्ठी ने मुझे अपने बारे मे एक नयी दृष्टि दी है। अपनी शारीरिक सीमाओं से मुक्त होने की। उन्हें विस्तृत करना होगा। अगो को एक ऐसी नैतिकता से जोड दिया गया है कि हमारा सम्पूर्ण अस्तित्व ही उसकी बलि चढ गया। हम कहाँ है ? कही नही ! ये लोग समझते है कि शक्ति के बल पर घटित कोई भी अनैतिक अतिक्रमण मेरा मनोबल तोड देगा ! मैं वो नही, जो शरीर को ही आत्मा समझकर, आत्मा को तिरस्कृत करती घूमूं। शरीर पर होनेवाली जबरदस्ती मेरी आत्मा की स्वतन्त्रता को बन्धक नही रख सकती। पुरुष मूलत समझदार मूर्ख है और उसी मूर्खता का प्रयोग हम सब पर किया करता है।"

अनुकूल खामोश और स्तब्ध था, "मैं इस समय लाचार हूँ, नही तो ``।"

"नही तो क्या करते ?" नीलम्मा हँसी, "उन लोगो के चाकू भोंक आते ?"

"नही, मैं उनसे पूछता` अभी भी पूछूंगा``।" ठहरकर बोला, "या फिर मैं आपकी बेइज्जती होने मे पहले ही अपने को यहाँ से हटा लूंगा।"

"तुम फिर वही समझदार मूर्खोंवाली बात करने लगे। मेरी बेइज्जती और इज्जत का तुम्हारे हटने या न हटने से क्या मतलब है? मैं तो इस प्रवृत्ति का विरोध करनेके प्रति कृतसकल्प हूँ ` तुम हट जाओ या रहो,मुझे तो इन स्थितियों का सामना करते ही रहना पडेगा।"

"लेकिन···"

"लेकिन कुछ नही। मैं बुजदिली के विरुद्ध हूँ। राम से मैंने *यही सीखा। वह* अपनी आर्थिक और सामाजिक विषमताओ के वावजूद जूझता रहा। जुझारूपन *खतरो के बावजूद आनन्द का स्रोत होता है।* उस आनन्द के लिए स्वाद का विकसित होना जरूरी है। राम के पास था। जब तक हो सका, उसने उसे जीवित रखा। तुममे भी मुझे उसी की झलक नजर आयी थी। अगर तुम उससे हटने की बात *सोचते हो तो मेरे लिए साठ साल के तुम्हारे पिता और तुम मे* कोई फर्क *नही रह* आयेगा। इन्सान को अपने-आपसे इतना नही चिपक जाना चाहिए कि अलग ही नही कर सके।"

वह एकदम सन्न था। नीलम्मा ने उस खामोशी को महसूस किया। अनुकूल द्वारा फेंकी गयी चिट्ठी उठाकर पर्स मे रखते हुए बोली, "अब तुम लेट जाओ। अपने मन को एक तरफ करो। बाबू के इस तरह चले जाने का तुम्हारे मन पर प्रभाव पडना स्वाभाविक है। मैंने पहले यही सोचा था कि इस चिट्ठी के बारे मे तुमसे कोई बात नही करूँगी। लेकिन फिर इरादा बदल दिया। चूंकि ये सब घटनाएँ एक साथ ही *हुई और तुम उसके अभिन्न अग हो, तुम्हारा जान लेना जरूरी था। बार-बार का* मानसिक तनाव अगर टाला जा सके तो अच्छा है।"

जाते-जाते लौटकर आयी और बोली, "हो सकता है कल मैं एक-दो दिन के लिए राम को देखने चली जाऊँ।"

अनुकूल कुछ बोला नही।

नीलम्मा के जाने के बाद उस लडके की कराहट उसे पुनः सुनायी पड़ने लगी थी। वह धीरे-धीरे बढ़ती गयी। अब तक कहाँ थी ? वह सोचता-सोचता सो गया।

सवेरे उठा तो यह जानते हुए भी कि नीलम्मा रामउजागर को देखने चली गयी होगी, वह दिन चढ़े तक नीलम्मा का इन्तजार करता रहा। जब वह नहीं आयी तो चुपचाप लेट गया।

रात को किसी समय वह लड़का भी वहाँ से कहीं चला गया था। अब वही अकेला था। उसकी कराहट अलबत्ता शेष थी।

आठ

स्टेशन छोटा था। गाड़ी रुकती-भर थी। सवारियों के नाम पर दो-चार-छ सवारियाँ ही उतरती थी। वे भी आसपास के गाँवों से आने-जानेवाले मुसाफिर। अपनी पोटली बाँधे वे लोग पहले स्टेशन पर सुस्ताते थे, फिर जाकर आगे की यात्रा शुरू करते थे। स्टेशन मास्टर ही ज्यादातर सबकुछ था। एक-आध खलासी और था। टिकट बाँटने से लेकर टिकट लेने तक का काम स्टेशन मास्टर ही करता [illegible]।

नीलम्मा उतरी तो स्टेशन की परिकल्पना चूर-चूर हो गयी। [illegible], और गाड़ी के चले जाने के बाद कुछ नहीं। वह थोड़ी देर प्लेटफार्म पर [illegible]ड़ी रही। स्टेशन मास्टर ने ही जाकर पूछा, "बहिनजी, आपको कहाँ जाना है ?"

नीलम्मा ने बताया, "सिरसा गाँव।"

"सिरसा गाँव !" स्टेशन मास्टर ने आश्चर्य के साथ दोहराया।

नीलम्मा ने उसके मुख का भाव देखकर पूछा, "क्यों ?"

स्टेशन मास्टर थोड़ा हकलाते हुए बोला, "वो गाँव तो···" शब्दों की कमी के कारण वह रुक गया। तलाश करके फिर बोला, "छोटे लोगों की बस्ती है, यानी नीचे लोग रहते हैं···कोरी, काँछी, माध, चमार···ये ही सब लोग रहते हैं।"

नीलम्मा हँस दी, "तो वहाँ नहीं जा सकते ?"

वह सकपका गया, "नहीं-नहीं, मैं तो बता रहा था। क्या आप भी ' ?"

पहले तो यह सवाल नीलम्मा को थोड़ा अटपटा लगा। स्टेशन मास्टर ने उससे यह सवाल क्यों किया ! फिर वह बोली, "इस बात का उस गाँव जाने या न जाने से क्या सम्बन्ध ? मैं चाहे जो हूँ, गाँव तक तो जा ही सकती हूँ।"

"किसके यहाँ जायेंगी ? रास्ता अकेला है।"

"रामउजागर हैं···आई. आई. टी. मे पढते हैं। आजकल बीमार हैं।"

"सुवरन चौधरी का बेटा ?" बराबर में खड़ा एक आदमी तड़-से बोला।

"उसके पिता का नाम तो मुझे नहीं मालूम।"

उसी ने आगे कहा, "अजी वो ही है। बीमार है···। चलते हुए उसका जी धक्क-धक्क करता है। है तो हवा का असर, पर शहर के अंग्रेजी डाक्टर का इलाज चल रहा है। बड़ा भारी डाक्टर है।"

स्टेशन मास्टर परिचय-सा कराता हुआ बोला, "यह भी उसी गाँव का है।"

नीलम्मा को न जाने क्यों यह खबर अच्छी लगी। वह थोडे उतावलेपन से बोली, "भैया, कितनी दूर है गाँव ?"

"यही दो-तीन कोसवा।"

"कोई सवारी मिल जायेगी ना ?"

"चली गयी " खलासी ने कुछ खीचकर कहा। स्टेशन मास्टर बोला, "दिखवाता हूँ, हो सकता है खडी हो। बस एक ही इक्का है···" देखने के लिए उसने उसी खलासी को दौडाया। थोड़ी देर बाद आकर बोला, "अब्बे-अब्बे चली गयी बातन में एतना वख्त खो दिया !"

नीलम्मा एक मिनट सोचकर बोली, "अच्छा तो भैया, रास्ता समझा दो··· किसी-न-किसी तरह पहुँच जायेंगे।"

"कभी-कभी जानवर मिल जाते हैं।"

नीलम्मा पहले तो हल्की-सी सहमी, फिर हँसकर बोली, "जानवर कहाँ नही मिलते !"

स्टेशन मास्टर पहले चुप रहा, फिर उस खलासी से बोला, "जाओ, तुम साथ चले जाओ।"

"हम्म !" उसने कुछ इस तरह कहा कि नीलम्मा और स्टेशन मास्टर दोनो मुस्कुरा दिये।

स्टेशन मास्टर हँसकर बोला, "क्यो, क्या हर्ज है ?"

"अकेल ही···"

"हाँ, क्यो ? क्या तुम्हारे साथ के लिए भी एक आदमी भेजना होगा ?" वह थोड़ा सकपका गया और नीलम्मा हँस दी।

काफी देर तक वह सोच-सो मे डूबा खड़ा रहा। स्टेशन मास्टर ने फिर कहा, "चले जाओ। तुम्हें कोई खा नही जायेगा। रोज जाते हो कि नही ?"

उसने एक बार फिर नीलम्मा की तरफ देखा। स्टेशन मास्टर ने हाथ पकडकर उसके साथ कर दिया, "जाओ, देर हो जायेगी।"

उसके चेहरे से लग रहा था कि वह बडी अडदप मे आ गया है। वह नीलम्मा के पीछे काफी दूरी पर चल रहा था। बीच-बीच मे वह नीलम्मा की तरफ देख भी लेता था। उसके एक हाथ में लकड़ी थी और दूसरे कन्धे पर नीलम्मा का छोटा-सा बुगचा।

नीलम्मा ने घूमकर पूछा, "तुम इतनी दूरी पर क्यो चल रहे हो ?"

वह थोड़ा उत्तेजित हो गया, "देखो मेम साहब, हम का चुपचाप चलने दो। हलकान न करो। शहर की पढी-लिखी औरतन से हमें बहुत डर लागत है। हम जानित हैं कि शहरन में जादू की पढाई पढावा जात है।"

नीलम्मा को उसकी बात मे मजा आने लगा। वह बोली, "अरे नही, जादू पढने की जरूरत नही होती, इतना जादू तो वैसे ही जानती है कि आदमी का बकरा बना दें।"

उसकी आँखें छोटी पड़ गयी और भय की छाया गहरी हो गयी। वह बार-

बार मुड-मुड़कर देखने लगा। उसे देखकर नीलम्मा को साफ नजर आ रहा था कि वह किसी आदमखोर जानवर के सामने खड़ा है और पीछे भाग निकलने की घात बैठा रहा है।

नीलम्मा ने आवाज को मुलायम करके पूछा, "डर क्यों गये ?"

वह थरथराती आवाज मे बोला, "हम आपका रास्ता बतायी देत हैं'''।"

"क्यो, साथ नही चलोगे ?"

"नहीं, हम चार वापन मे अकेल है' घरवाली के दुई बच्चा है। हम आपके साथ आगे ना जाब !"

नीलम्मा उसकी बातों से और अधिक आनन्दित हो रही थी। वह बोली, "हमारी बिना मर्जी के कैसे जाओगे, हम तुम्हे बकरा बना लेंगे और साथ ले चलेंगे।"

वह थरथर काँपने लगा। मुँह से आवाज निकलनी बन्द हो गयी। आँखों से पानी बह आया। नीलम्मा ने उसके कन्धे पर हाथ रखना चाहा तो वह कूदकर दूर जा खड़ा हुआ। नीलम्मा हँस पडी। उसके हँसने से वह और घबरा गया। हाथ जोडकर गिड़गिडाता हुआ बोला, "हम आपके गोड लागत है, हमका जाने दें। हमार घर-वाले जिन्दा ना बचब।"

हँसी का दौरा कम हुआ तो नीलम्मा समझाती हुई बोली, "तुम्हें किसी ने गलत बता दिया। शहर मे न कोई ऐसी पढाई होती है और न वहाँ की लडकियो को जादू आता है। जैसी तुम्हारी माँ-बहिन, वैसी ही वहाँ की लडकियाँ है।"

वह खलासी उसकी तरफ अजब नजरो से देख रहा था। उनमे रच मात्र भी विश्वास नही था। वह अपने आपको चौकन्ना बनाये था।

नीलम्मा आगे-आगे चल रही थी। उसने और अधिक दूरी बढा ली थी। नीलम्मा एकतरफा बोलती चली जा रही थी, "बस, इतना ही फर्क है कि हम लोग शहर मे रहते है, पढते-लिखते हैं'''तुम्हारी माँ-बहिनें गाँव मे रहती हैं और घर का काम देखती हैं। पहनने-ओढने मे भी यही फर्क है। तुम रामउजागर बाबू को जानते हो ?"

"जानित काहे नही, हमार पटीदारो मे से है।"

"तुम ऐसा करना, रामउजागर से पूछ लेना कि शहर मे लडकियाँ जादू की पढाई पढती हैं या नही। तुम लोगों को शहर मे दूर रखने के लिए लोग ऐसी अफवाहे फैलाते हैं। वे चाहते हैं तुम लोग जादू के डर मे यहीं पडे रहो।"

हालांकि नीलम्मा की बात उसकी समझ मे नही आ रही थी, फिर भी वह कुछ आश्वस्त जरूर हुआ था। उसके चेहरे पर से भय का दबाव कम होना शुरू हो गया था। नीलम्मा ने कहा, "'''तुम लोग शहरियों मे बेकार डरते हो। शहरियों के कोई चार हाथ नही होते। तुम भी कोई बच्चे नही कि भौ किया और डर गये।"

नीलम्मा की बातो का उस पर कुछ-कुछ असर पडा था। उसकी चाल में गति आ गयी थी। नीलम्मा उसका डर कम करने की गरज मे इधर-उधर की बातें करती जा रही थी। उसने उससे घर-परिवार के बारे मे पूछा। जमीन-जायदाद की खबर ली। परिवार को छोटा रखने की सलाह दी। इस बात से उसका चेहरा लाल

हो गया और वह शर्म से जमीन मे गड़ गया। काफी देर बाद उबरा। उसे लगा कि यह कोई सरकारी दायी है, जो इस तरह की बातें करती घूम रही है। दूरी कुछ कम होती महसूस हुई। बहुत सोच-समझ के बोला, "रामउजागरवा से का रिस्ता है हइए।"

नीलम्मा ने घूमकर देखा तो वह नाराज था और गोल-गोल आँखें करके उसकी तरफ देख रहा था। वह बोली, "जहाँ हम पढते हैं वही रामउजागर पढ़ते हैं··· हमारे दोस्त हैं।"

"दोसत् !" उसने आश्चर्य से दोहराया। फिर बोला, "मरद-मरद की दोसती तो दोसती है ··औरत-मरद की दोसती तो हम नाही जानित का होत है।"

नीलम्मा को उसकी इस बात से थोडी उलझन हुई। उसने बात घुमाने के लिए कहा, "दोस्ती वैसी नही ··एक स्कूल में पढनेवाले लडके-लडकी भी दोस्त ही होते हैं···वे दुश्मन नही होते। रामउजागर बाबू बीमार हैं, हाल-चाल लेने चली आयी।"

"कोई मरद नाही रहा हाल-चाल लिये वास्ते ?"

नीलम्मा फिर सकपका गयी। वह बोला, "मरदो के हाल-चाल लेवे वास्ते मरद आवत-जात है, जनानी नाही।" नीलम्मा को लगा उसे चुप रह जाना चाहिए। अब उसकी वाचा खुल गयी थी, "रामउजागरवा की का बीमारी मेम-साहब, बडे लोगन के चोचले बा। हल की मूठ थमवा दे सब कम्पन-फम्पन निकल जायी। पढाई-लिखाई आदमी को कुदात-कुदात मार डालित है। हम लोगन का हाजमा पढ़ाई-लिखाई के लिए नाही बना बा। जियादा ही कुदबुदात है। ऊका हवा का चक्कर बा। आपको देखे से ऊ हवा और फैलब।"

नीलम्मा को लगा वह कुछ ज्यादा ही बोल रहा है। हालाँकि वह उसे बताना चाहती थी कि रामउजागर को ऐसा कुछ नही हुआ जैसा वह सोच रहा है। पर वह यह अन्दाज नही लगा पा रही थी कि उसका यह सब समझाना पता नही क्या मोड ले ले।

वह अपनी बात और आगे समझाने लगा, "गाँव से दो कोस पच्छिम·· एक बाबा का तकिया बा। ऊ बाबा भूत-परेतन को बाँधकर खडाऊँ से मारित हैं। पर रामउजागरवा हर बात मे टाँग अडात रहे। हम तो समझात रहे···कि बात ना मानी तो किसी रोज ऐसी पटकी देव कि लटकत घूमअ। इनके बाबू के खेत बा। ऊ बा अपुन बिटवा के लगे किसी की न सुनव।"

नीलम्मा उसकी अन्तिम बात से अस्थिर हो गयी। गीली मिट्टी मे पडे लोहे के गोले की तरह एक अनिश्चितता उसके मन मे भी जगह बनाती जा रही थी।

सिरसा गाँव, गाँव जैसा ही गाँव था। बल्कि और भी बदत्तर। वह खलासी नीलम्मा को नीम के पेड के नीचे खड़ा करके सामनेवाले घर में चला गया था। दाहिने हाथ पर घेर मे जानवर बँधे थे। सामने की तरफ का हिस्सा पक्का था। हालांकि ज्यादा-तर झोपडियाँ या कच्चे खपरैलवाले घर बेतरतीब पड़ी कूडे की ढेरियों की तरह फैले नजर आ रहे थे। जहाँ वह खड़ी थी, चबच्चे की तरह की एक कच्ची नाली थी।

चोड़े-से लबालब भरी हुई उसे देखकर यह लगता ही नहीं था कि यह बहती है। कीड़े सिलबिला रहे थे। बदबू के मारे खड़ा होना मुश्किल था। जहाँ वह खलासी नीलम्मा को खड़ा कर गया था वहाँ से उसे थोड़ा हटकर खड़ा होना पड़ा। हट जाने के बाद भी वह नाली उस पर उमड़ी चली आ रही थी।

आसपास जो बच्चे खेल रहे थे, नीलम्मा को खड़ा देखकर वे सब उसके पास सिमट आये। उनमे से कुछ बच्चे एकदम नंग-धड़ंग थे। लड़कों की कमर पर काले धागे में ताईयत बँधे थे। उन नंग-धड़ंग बच्चों में कुछ अच्छे-खासे बड़े थे। वे कमीज ही पहने थे। नीलम्मा की उपस्थिति में भी वे अपने नंगेपन से बखबर ही थे। नीलम्मा को पहले अटपटा-सा लगा फिर उनके भोलेपन पर उसे मुस्कुराहट आ गयी।''' यहाँ लगता है ऐसे ही नंग-धड़ंग घूमने का चलन है। जो अब बड़े हो गये वे भी कभी इसी तरह घूमते होंगे।

एक-आध बच्चे जाँघिया पहने थे। उन्हे देखकर नीलम्मा को तत्काल उनकी माँओं का ध्यान आया। जरूर वह समझदार रही होगी। फिर एक दूसरी बात उसके दिमाग मे आयी कि शायद यह माँ की समझदारी की बात इतनी नही जितनी व्यवस्था हो पाने की बात है। होने पर पहनाना या न पहनाना समझदारी या गैर-समझदारी की बात तय कर सकता है। न होने पर समझदारी भी बहुत ज्यादा मदद नही करती।

नीलम्मा ने उनमें से एक बच्चे को इशारे से पास बुलाया। उसका चेहरा गोल-मटोल था और आँखें चमकदार थी। वह आने मे झेंप रहा था और वहीं खड़ा नीलम्मा को एकटक देख रहा था। शेष बच्चे उसे धकेलते हुए नीलम्मा के पास ले आये। वह धकेलना उनके लिए खेल हो गया था। पहले तो वह खिसियाया फिर धीरे-धीरे मुस्कुराने लगा।

नीलम्मा ने पूछा, "तुम्हारा नाम क्या है?"

पहले तो कुछ देर वह देखता रहा। जब वह नही बोला तो और लड़के चिल्ला-चिल्लाकर बताने लगे। नीलम्मा ने उन्हें रोका, "हम इन्ही से इनका नाम पूछेंगे। हाँ, बोलो तुम्हारा नाम क्या है?"

वह बोला "लाम (राम) लखन।"

नीलम्मा ने उसी की बोली में बोले गये नाम को दोहरा दिया, "तो लामलखन हो तुम!"

उसने सीधे स्वभाव गर्दन हिला दी।

"कहाँ रहते हो?"

एक बार का बोलना हर किसी को मुक्त कर देता है। वह हाथ उठाकर बोला, "ऊहाँ'''" उसके हाथ के फैलने से सम्पूर्ण दिशाओं का विस्तार हो गया था और कोई भी दिशा, दिशा नहीं रह गयी थी।

"पढ़ते हो?"

उसका हाथ उसी तरह फैला रहा बस भारी-भरकम मुड़िया हिला दी "न्ना।"

नीलम्मा ने पूछा, "क्यो?"

वह कुछ नही बोला। दूसरा लड़का, जो थोड़ा बड़ा था और घुटने तक का

कमीज पहने एकटक नीलम्मा को देख रहा था, बोला, "पढे मे मूड़ घूम जात है··· रात-दिन सैतान दौड़ात है।"

"नही तो···किसने कहा ?"

"ऊ रामउजागर काका बहुतई बडी पढाई पढव···अब्बे सैतान नाही छोड़ित।"

नीलम्मा उसकी बात सुनकर चौक गयी। वह जल्दी से बोली, "नही भैया, हम भी तो पढे है, हम ठीक हैं या नही··?"

उस लडके ने अनासूरती मे कहा, "नाऽऽही।"

नीलम्मा को बहुत जोर से हँसी आने को हुई। लेकिन वह उसी लडके को देखती रही। एक बड़ी-सी लड़की ओनी और सुतना पहने आ खडी हुई थी। वह बोली, "काहे बटिया-बटिया मारी घूमित हो ? सैंतान मारय थोड़े ही, झुलात है।"

नीलम्मा की समझ में नही आया कि वह उस लड़की की बात का क्या जवाब दे। फिर भी वह बोली, "नही, हम मारे-मारे नही घूम रहे, हम तो मिलने आये हैं।"

वह लड़की बच्चो से बोली, "चलो-चलो इहाँ का धरा बा !" वह नीलम्मा की तरफ देखती हुई बच्चो को, भेडो की तरह हेरकर चल दी।

नीलम्मा की समझ मे नही आ रहा था कि उसने ऐसी कौन-सी गलती की जिसके कारण ये सब लोग इतने नाराज हो गये ?

खलासी का अभी तक कहीं पता नही था। सामनेवाले घर को देखने से भी यही लग रहा था कि अन्दर आसकता व्याप्त है। कही किसी तरह की हलचल नही थी। नीलम्मा का सोच अब दूसरी दिशा मे काम करने लगा था। शायद उसने इस तरह आकर गलती की ? उसे नही आना चाहिए था। उत्साह हमेशा अच्छा नही होता। खासतौर से जहाँ उसकी जरूरत न हो। गाँवो और हॉस्टिलो में अन्तर है। गाँवो-गाँवो में भी अन्तर है। यहाँ के गाँव और वहाँ के गाँव···आई. आई. टी. और गाँव, शहर और गाँव—ये सब कही नही मिलते। सबके अपने-अपने साँचे है। इन साँचो मे जो फिट हो सके वह निकट का, बाकी बेगाने। बेगानों का कही कोई ठौर नही। उसका सोच उसे सरपट दौडते घोडे की तरह दौडा रहा था। अगर इन लोगो ने न घुसने दिया ? कुछ उल्टा-सीधा कहा ? उसका आना स्वीकृत साँचे में फिट नही हो पा रहा। इन सबकी नजरो में यह एक अतिक्रमण है। हो सकता है राम भी शशोपंज मे हो। मिले या ना मिले ? उसे अपने घरवालो से भी निपटना पड़ सकता है।

उसकी आन्तरिक पीड़ा अन्दर-ही-अन्दर बढ़ती जा रही थी। उसने मुड़कर उसी दिशा में देखा जिधर से आयी थी। उसके पाँव बता रहे थे कि वह सब बहुत दूर छूट गया है। अब वह क्या करेगी ? उसने इधर-उधर देखा। वह लड़की उन बच्चो को लिये एक पीपल के नीचे खडी बिल्ली की-सी नजरों से नीलम्मा को ताक रही थी। नीलम्मा को उसका इस तरह देखना कुछ-कुछ चिढाने जैसा लगा।

काफी देर बाद उस घर से दो औरतों ने झाँका। उनमे से एक बाहर आयी। पहले तो वह अपने घर के आगे ही खड़ी रही। फिर कुछ इस तरह आगे बढी कि या तो दबे पाँव शिकार करने जा रही हों या फिर किसी खूंख्वार जानवर से भिडन्त हो। जो कपड़े इस महिला ने पहने थे वे जल्दी मे तो पहने ही गये थे कोरे भी थे। चलने में खड़-खडा रहे थे। असुविधा अलग हो रही थी। वह एक हल्की काठी की, कमजोर और कम उम्र की लडकी-सी लग रही थी। उसकी और रामउजागर की शक्ल में उसे अनायास समानता महसूस हुई।

वह नीलम्मा के नजदीक आकर खडी हो गयी। नीलम्मा की समझ मे नही आया कि वह उससे क्या कहे ? फिर भी नीलम्मा ने उसे हाथ जोड़कर नमस्ते की। औरत ने नमस्ते का जवाब देने के स्थान पर पीछे मुडकर देखा। दूसरी औरत भी बाहर निकल आयी थी। वे मिट्टी के बिल मे से लाल बर्रों की तरह एक-एक करके निकली थी। पहले डंक, फिर शरीर। मुंह पर आँचल रखे उधर ही देख रही थी।

नीलम्मा के सामने हर क्षण यही सवाल बना था—आगे क्या होगा ? इस सबके बावजूद वह अपने सोच को दूसरी दिशा मे ले जाने की कोशिश कर रही थी। ग्रामीण-महिलाओ के आने-जाने का ढग ऐसा ही होता है। बाहर तो निकलकर आयी ही है। अगर उन्हे नाराजगी होती तो आती ही क्यो ?

दूसरी औरत भी आकर पहलीवाली औरत के पास खड़ी हो गयी। वह कमीज और धोती पहने थी। आंखो मे काजल और गालों पर लाली थी। उसने आकर स्वय हाथ जोडे। नीलम्मा ने उसकी नमस्ते का मुस्कुराकर और हाथ जोडकर जवाब दिया।

नीलम्मा ने ही बात शुरू की, "मैं नीलम्मा हूँ···!"

बड़ीवाली औरत बोली, "ब्याह हो गवा का ?"

नीलम्मा ने हँसकर गर्दन हिला दी। वह बोली, "तो ई अम्मा का बा ?" दूसरीवाली पल्ला रखकर फिस्स-से हँस दी।

"बिन ब्याहे की अम्मा हो का···"

नीलम्मा को हँसी भी आने को हुई और थोडी चिड़चिडाहट भी। लेकिन वह शान्ति से ही बोली, "हम लोगो की तरफ लड़कियों के इसी तरह के नाम होते हैं। यहाँ लडकी को भी अम्मा कहा जाता है।"

वे लोग इस तरह हँसी जैसे इससे बडी बेवकूफी की बात हो ही नही सकती। वह बोली, "कैसा देस बा···बेटिन को कोसत है! अनबिहाई अम्मा···बिहाई फिर का ? कहाँ रहित हो ?"

"मद्रास के पास है हमारा देश।"

"तो मदरासी हौव।"

नीलम्मा को अन्ततः पूछना पड़ा, "रामउजागरजी ठीक हैं !"

बहन का चेहरा उतर गया। बड़ीवाली महिला जो बाद में आयी थी वह भी सुस्त हो गयी, "का ठीक बा···कही जाने तुम लोगन ने का टोटका कर दिहीस··· इत्ते हिम्मती रहे, अब दो-चार कदम चले में धुक-धुकी छूटत है।"

रामउजागर भी बाहर निकल आया था। हाथ के इशारे से बुला रहा था।

बहिन बोली, "चलो, उहाँ भैया बुलात है।"

नीलम्मा को कुछ अजब-सा लगा। रामउजागर पहचाना नही जा रहा था। दाढ़ी उग आयी थी। हालांकि उसका रंग साफ था लेकिन नीलम्मा को दूर से देखकर यही लगा कि काफी उतर गया है!

दूसरी महिला ने कहा, "हमार देवर अकुलात है···" वह हँसी तो उसके मुँह से थूक की फुहार निकलती दिखायी पड़ी। जिस तरह वे लोग हँस रही थी उससे शायद रामउजागर को भी अटपटा-सा लग रहा था। वह अपना हाथ जोर-जोर से हिला रहा था।

वह स्त्री बोली, "देवरजी तुहार नाम लेकर चाची से अकसर कहित रहे कि हम जाकर ऊ से मिलब···।" वह फिर हँस दी।

नीलम्मा को इस बार थोड़ा नागवार लगा। उसके मुँह से रोकते-रोकते भी निकल गया, "आपको बहुत हँसी आती है?" आगे वह बात को सँभाल गयी। यह सब तो उसे पहले ही सोच लेना चाहिए था। अब क्या फायदा। ये सब तो होगा ही। ये लोग तो हँस ही रही हैं, कोई कुछ कह भी सकता है।

नीलम्मा चल दी। वे दोनों पीछे-पीछे एक-दूसरे को देख-देखकर मुस्कुरा रही थी। बोल नहीं रही थी।

नीलम्मा को यह रामउजागर पहले रामउजागर से भिन्न रामउजागर लगा। एकदम कायापलट। सूरत से वह रामउजागर जैसा ही था, और सबकुछ बदल गया था। उसके पीछे वही आदमी आकर खडा हो गया था जो स्टेशन से यहाँ तक साथ आया था। उस आदमी को देखकर नीलम्मा को रास्ते की वे सब बातें एकाएक याद हो आयी और वह हँसते-हँसते रह गयी।

देखते-देखते उन लोगो के पास से थुड-थुड़ करता हुआ सुअरो का एक रेला निकला। पीछे-पीछे दो अधनगे लड़के उन्हें दौड़ाते ला रहे थे। सब कीचड़ में सने थे और बार-बार छितर जाते थे। उनकी चिचियाहट अजीब थी। जब वे पास से गुजरे तो नीलम्मा उचककर एक ऊँचे ढेर पर चढ गयी।

रामउजागर नीलम्मा को देख रहा था। उसके चेहरे पर एक तरह की दयनीयता थी। वह और गहरी हो गयी। वह उससे कुछ कहना चाह रहा था। प्रयत्न के बावजूद वह चुप था। कभी वह नीलम्मा की ओर देखता था और कभी उन लोगो की ओर जो चारों तरफ जमा थे और एक अजीब तरह के कुतुहल से मुस्कुरा रहे थे।

नीलम्मा ही बोली, "राम, तुम यही आकर जम गये···वापिस क्यो नही लौटे?" उसकी आवाज मे एक तरह का भोगापन था।

वह बडी मुश्किल से बोल पाया, "नीलम्मा, मैं···मैं बीमार हूँ ना···कोई जाने नही देता।"

नीलम्मा ने एक क्षण को सोचा और बोली, "तुम तो मुझे बिल्कुल बीमार नजर नही आ रहे···लगभग वैसे ही हो जैसे पहले थे। बस दाढी और बढा ली। अच्छे खासे स्मार्ट लग रहे हो।"

रामउजागर के चेहरे पर हल्का-सा परिवर्तन होता नजर आया। वह आश्चर्य

से बोला, "अच्छा !" फिर मायूसी के साथ कहा, "यहाँ तो सब मुझे बीमार बताते है।"

भाभी बोली, "इत्ते तो बीमार है'''रात-भर सोवत नाही। घुमैया-सी सिर चढी रहत है।"

"क्यों, ये तुम्हारी भाभी क्या कह रही है ?"

राम के चेहरे पर और भी अधिक बेबसी आ गयी। नीलम्मा ने देखा तो मन दुखी हो गया। क्या से क्या हो गया !

अन्दर से एक लड़का खाट और दुतई ले आया था। खाट पर दुतई बिछाकर बोला, "ई पे बैठी। काकी चाह बनाइत है !"

रामउजागर को खाट लाकर बिछाना अच्छा लगा। वह बच्चों की तरह बोला *"बैठो-बैठो, हमारे यहाँ कुर्सी नही।" आखिरी बात कहते उसका चेहरा उतर गया।*

नीलम्मा प्यार से फटकारते हुए बोली, "दुनिया मे कितने घर ऐसे हैं जहाँ कुर्सियाँ है'''मैं नही जानती थी कि तुम भी इस काम्पलेक्स के शिकार हो जाओगे। हम लोगों ने तुमसे ही अपनी-अपनी कुण्ठाओ से लडते रहने का सबक सीखा है''' तुम हो कि उन्हे पाल रहे हो !"

इस बात ने मरहम का-सा काम किया है। उसने हँसना चाहा, लेकिन खुलकर हँस नही पाया। अपनी बहन से बोला, *"सुना तूने'' ? मैं हमेशा से ऐसा नही हूँ !"*

अन्दर से एक बडे लोटे मे कटोरी से ढकी चाय आ गयी। लानेवाला उसे साफे से पकडकर लाया था। उसके दूसरे हाथ में चार-पाँच खाली गिलास थे। नीलम्मा को खाट पर बैठना पड़ा। वे दोनो जमीन मे पसर गयी। आपस मे एक-दूसरे को खोजी दृष्टि से देखती थी और फिर बातें सुनने लगती थी। वे बहुत देर से इस चक्कर मे थी कि उनकी बातो के बीच मे अपनी बात खोस दें, लेकिन उन्हें मौका नही मिल रहा था।

उन दोनों ने गिलास मे चाय डाली। हालाँकि नीलम्मा को चाय की बहुत ज्यादा जरूरत महसूस हो रही थी, चाय पर मलाई का मोटा टुकड़ा देखकर उसका मन बदल गया। तिरमिरे तैर रहे थे। नीलम्मा का मन उलटने को हो आया। वह थोड़ी देर गिलास हाथ मे लिये बैठी रही।

रामउजागर अपनी बहन से बोला, "दो घूँट चाय मुझे भी दे दे।"

बहन बोली, "दादा, पित्तर बिरट जायेंगे।"

"पित्तर क्या ?"

नीलम्मा के सवाल के उत्तर मे वह बोली, "पित्तर ही तो पीछे लगे वा''''"

नीलम्मा ने फिर अन्दर-ही-अन्दर आश्चर्य से दोहराया, 'पित्तर !' भाभी बोलने लगीं, "पित्तर नही जानित। पढ़े-लिखे लोगन का जानें कि पित्तर का होई। हमार बड़े'''ई के बडे'''जो सुरग से देखत हैं कि हमार सन्तान ठीक करत है कि गलत ?"

उसकी बात सुनकर रामउजागर का पहलेवाला चेहरा उभर आया। नीलम्मा ने अपनी चाय उसकी तरफ बढा दी, "लो तुम पियो। मेरा मन बिल्कुल नहीं है।"

वह उन दोनों की तरफ बच्चो की तरह भयभीत नजरो से देखता हुआ बोला, "नही, मुझे रात को नीद नही आती तो ये लोग डाँटते है ''कहते है तुम चोरी से चाय पीते हो।"

"लो तुम पियो, आज रात को नीद आयेगी।"

रामउजागर ने चाय का गिलास हाथ में पकडा और गटक गया। नीलम्मा को अच्छा लगा। राम कितना बच्चा हो गया। चाय पीकर बोला, "नीलम्मा, हम तो बहुत छोटे लोग हैं, '''ना समझ'''बे-पढ़े, यहाँ कैसे रहोगी?" वह अंग्रेजी में आप-ही-आप बोलता गया।

"तुम इतना सब जानते हो, पर यह नही सीखा कि बे-पढे और नासमझ लोगो को कैसे पढाया-लिखाया और समझदार बनाया जा सकता है। तुम हमेशा अच्छी जिन्दगी बसर करने की इतनी हिमायत करते रहे, जूझते रहे, पर तुम्हारी नजर इस बात पर नही गयी। चलो, तुम वही चलो। यहाँ तुम सबकुछ खो दोगे। वहाँ जाकर शायद तुम्हे'''" वह चुप हो गयी।

"कैसे चलूँ नीलम्मा'''? ये लोग कहते है मैं न चल सकता हूँ, न उठ सकता हूँ'' मैं कुछ भी नही कर सकता। मैंने कई बार कहा, मुझे ले चलो'''सबसे मिला लाओ। यहाँ पड़ा-पड़ा सड़ जाऊँगा। ये लोग हँस देते हैं'' डाँट देते है। पहले ये लोग मेरे सामने नही बोलते थे, अब मैं नही बोलता। मुझे यह क्या हो गया, मैं स्वयं नही जानता। मैं निडर होकर जीना चाहता था अब डरकर जी रहा हूँ। क्या अब पिछलेवाला आत्मविश्वास कभी वापिस नही आयेगा? तुम बताओ नीलम्मा!"

"उसके लिए तुम्हे फिर बाहर निकलना चाहिए।"

"कैसे निकलूँ?"

"जैसे पहले निकले थे।"

रामउजागर के चेहरे पर ऐसा भाव उभर आया जैसे वह जंजीरों को तोड़कर उनसे मुक्त होने के लिए पूरा जोर लगा रहा हो। उसके अन्तर की सम्पूर्ण पीड़ा उसके चेहरे पर उभर आयी थी। नीलम्मा के अन्तर मे वह गहरी उतर गयी।

शेष दिन नीलम्मा एक अजूबा बनी रही। आसपास की औरते और बच्चे उसे देखने आते रहे। रामउजागर इस बात पर बीच-बीच मे उत्तेजित होकर टहलने लगता था। कभी-कभी बडबड़ाता भी था। नीलम्मा उसे हँसकर कहती थी, "हम औरतें जिस स्थिति में भी होती है, अन्ततः अजूबा ही बन जाती हैं। लोग देखते हैं तो देखने दो'''हम लोगो को, देखनेवालों की सब तरह की नजरें पढने-समझने और फिर जहाँ तक हो नजर-अन्दाज करने की आदत होती है। तुम परेशान मत हो।"

नीलम्मा के पहुँचते ही रामउजागर के बापू को बुलाने के लिए खेतों पर आदमी दौड़ा दिया गया था। लेकिन वे दिन छिपे तक ही लौट पाये। रामउजागर के बापू सुबरन चौधरी नम्र इन्सान थे। शरीर से लम्बे और छरहरे। शरीर केवल आत्मा को साकार रूप प्रदान करने का निमित्त था। नीलम्मा को आया देखकर उनके मन मे पहला भाव अनुग्रह का आया। फिर वे धीरे-धीरे वस्तुस्थिति के बारे में सचेत

हुए। कैसे खातिर-तवाजे करें? कहाँ ठहरायें? उनकी तरफ देखा और अपने घर की तरफ देखा। घर की औरतो के बीच के तनाव को परखा। वे रामउजागर की परेशानी को भी देख रहे थे। वह लगातार चहलकदमी कर रहा था। उन्होंने घर की औरतों को डपटा। भाग्य से ही किसी के घर पाहुना आता है। वह भी ऐसा। उन्होंने एक कोठा साफ कराया, साफ क्या कराया खुद ही लगे। उसमे ठीक तरह से पुआल बिछायी। घर-भर मे जो सबसे साफ बिस्तर था वही उस पर बिछाया गया। कही से लालटेन का बन्दोबस्त हुआ। अपनी छोटी बिटिया से कहा कि वह नीलम्मा के पास बनी रहे।

बापू के रुख से पूरे घर-भर का व्यवहार बदल गया था। वह वास्तव मे मेहमान हो गयी। सब उसे हाथो पर लेने लगे। जो भावज कुछ पढी-लिखी समझकर बुलायी गयी थी उसे भी बापू ने उसके घर वापिस भेज दिया था। उसके जाने से रामउजागर कुछ सहज हुआ था। उसके चेहरे पर थोड़ी-थोड़ी मुस्कान भी आनी शुरू हुई थी। बीच-बीच मे उसका व्यवहार उसकी आन्तरिक खुशी का आइना बन जाता था। एक अर्से के बाद रामउजागर के व्यवहार मे यह अयाचित परिवर्तन नजर आया। घरवालो का चेहरा उस खुशी का प्रतिबिम्ब हो गया।

नीलम्मा चाय तो पी नही पायी थी पर रात का खाना उसे अच्छा लगा था। हालांकि वह बेतरतीब और मोटा था। पर स्वाद था। वैसे भी इतने वर्षो से रहते-रहते वह उत्तर भारत के खाने को अधिक रुचि से खाने लगी थी। उनमे ज्यादातर चीजें तलकर बनायी हुई थी। उस खाने में उसे एक अजब तरह का सोंधापन महसूस हुआ। शहरो मे इस तरह का सोंधापन कम ही होता था।

खाना खाने के बाद उसने रामउजागर की माँ से बातें की थी। दिये की मद्धम-मद्धम रोशनी में उन दोनों महिलाओ की जगह उन दोनो की उपस्थिति का अहसास-भर था। दिये की लौ किसी को स्थिर नही रहने दे रही थी। यह सब उसे बार-बार रोमांचित कर देता था। बत्ती पर थोड़ी-थोड़ी देर के बाद गुल बन जाता था। नीलम्मा के लिए वह गुड़हल का फूल जैसा था। बीच-बीच मे रोशनी डूबने-सी लगती थी तो माँ उठकर दिये की बत्ती सीक देती थी। रोशनी फिर चेतन हो उठती थी। यह सब उसे अविश्वसनीय-सा लग रहा था···पर था!

दिये का वह सम्पूर्ण चमत्कार धीरे-धीरे उसके जलने पर सिमट आया। माँ का सारा दुख बेटे को लेकर ही था। उसकी बात सुनते हुए नीलम्मा को यह लगता रहा कि दिया तो जल ही रहा है, माँ भी दिया बनी हुई है। माँ ने उससे दिल की सब बातें कही, "बिटिया, हमार भाग, तुम आयी। कहाँ तुम कहाँ हम। तुम ठैरी ऊँची जात, ऊँचे घर की···हमार द्वार आने का कौन मौका था! तुम्हारी किरपा रही जो रामउजागर को देखे वास्ते चली आयी। पर हमार करेजवा तो एसकी बिमारी ने ऐसा फूँका कि बस का कही···कोख भी जली, भाग भी जला। जेका बेटा ई हालत मे हो, ऊ ना सुरग का ना नरक का। जिन्दगानी जिन्दा धूँ-धूँ जलत है। साँस लेत धुआ फूटत है। ओ तो बापू ठहरे बा, मुँह तक नाहो खोलित। हमहू महतारी बा···जबान नाही काटे बनत। औ तो महात्मा हुई गये। कहत हैं, रामउजागिर की माँ क उप्परवाला भी तो कुछ है कि नाही···या हम तुम ही सबकुछ

करित है। सुख-दुख हम काते ना कति है···ऊ कातेगा तो कतेगा। पर सच कहूँ···
हर क्षन तो अपने ऊ बिटवा का ध्यान रहित है, ऊपरवाले का ध्यान ऊ रीते तो
जाई। मन वोरा नाही ना की जो चाहे ठूस ठूस भरी।" माँ शहरी भाषा बोलने
का प्रयत्न करते-करते बहकने लगती थी। फिर सँभलती थी, फिर बहकती थी।

नीलम्मा माँ के मन मे उतरकर उनकी वेदना को समझने की कोशिश कर रही थी। वह समझाती हुई बोली, "माँजी, आप सच माने, रामउजागर को कुछ नही हुआ। वातावरण के बदलते ही सबकुछ बदल जायेगा। रामउजागर बहुत बहादुर है। वह इस बीमारी के सामने जल्दी हिम्मत नही हारेगा। हर इन्सान की जिन्दगी मे ऐसे मौके आते हैं। मेरी माँ नही रही, पिताजी ने दूसरा विवाह कर लिया··· मैंने सबकुछ उनसे दूर रहकर पढा। इधर रहकर। आप तो जानती ही हैं कि बहता हुआ जल कही जमीन को छूता है, कही सीचता है और कही काटता है। दुख-सुख भी निरन्तर बहते रहते हैं, कभी कोई छूता है, कभी कोई। कभी एक काटता है दूसरा भरता है। आप यही समझे, जो कट रहा है वह भरेगा भी। आपको इतने योग्य और हिम्मती बेटे की माँ होने का गौरव तो प्राप्त है ही।"

एकाएक बत्ती की लौ हिली। उसके हिलते ही दोनो काँप गये।

माँ बोली, "ठीक कहित हो। ऐसी आल अइ है कि भीतर तक उतर गयी बा। ई भवन का भवन ही ना कही ढह परी। कहाँ जायी? हमार तो छाजन ही राम वा। कहत रहा, माँ वस मुझे कुछ हो जान दे तुझे और बापू को मोटर से पाँव नीचे ना रखवी पड़ी। मूरख बा! मोटर का सपना बोवत रहा। ई बजर मे का उगी? वैसे तो बेटी, सब लोगन मे सब होते हैं। रामउजागर को तो ई बडी जातवालो की हाय खा गयी। किसी के पूत को कोसो, अपने को ही कोसने पड़े है···"

"ऐसा मत सोचिए। जात-बात कुछ नही होती। अगर मैं आपके घर पैदा हो जाती और रामउजागर हमारे घर पैदा हो जाता तो हम लोग उसी को अपनी जात समझने लगते। यह तो जन्म का बन्धन है जो अन्तत. जीवन-भर के लिए हमारी नियति हो जाता है। जन्म के समय न कोई जात लेकर पैदा होता है और न नाम। यही आकर मिलते हैं। हम उसी को अपना समझने लगते हैं।" फिर हँसकर बोली, "नाम और जात तो देह के हैं···जब तक देह तब तक नाम और जात। देह छूटी ·· ना किसी का नाम और ना किसी की जात।"

एकाएक दिये से काला-कीचट धुआँ निकलने लगा। माँ ने उठकर बत्ती सीक दी और तेल छोड़ दिया। नीलम्मा की नजर माँ की परछाईं पर गयी· ·नाक लम्बी हो गयी थी। नीलम्मा का सिर चोड़ा हो गया था। नीलम्मा को हँसी आने लगी। माँ ने दिये का रुख बदल दिया। वे दोनो ओट मे हो गयी।

माँ बैठती हुई बोली, "तुम ही बताओ का रास्ता बा? के के आगे अँचरा पसारी?"

"माँजी, आपके बेटे राम को हम इतना ही जानते हैं कि अपनी मुसीबत के समय हमने उससे हिम्मत रखना सीखा। राम को अब इस रूप मे देखकर दुख होता है। आप रामउजागर को फिर पढ़ने भेज दें · मेरे विचार से वह थोड़े दिन बाद ठीक हो जायेगा। यहाँ रहकर राम का ठीक होना मुश्किल है।"

रामउजागर की माँ खामोश हो गयी। थोड़ी देर चुप बैठी रही। फिर बोली, "वही से तो यह सब्बे बाँधकर लावा रहा। हमार बिटवा का ई हालत···" उनका गला रूँध गया फिर बोली, "बड़बडात है, घूमित है, सोवत नाही···हम का कालीदह मे डूब मरी!"

"सब ठीक हो जायेगा···मेरा कहना मानकर आप राम को वही वापिस भेज दें।"

माँ चुप हो गयी। दिया बीच-बीच मे कुछ स्थिर हो जाता था। नीलम्मा को नींद आने लगी थी। पिण्डलियाँ चस-चस कर रही थी। माँ ने कहा, "थकी बा··· *हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता। ई पराया दुख सुनि-सनि कहाँ बटोरी? जा बेटी,* सो जा।"

नीलम्मा उठकर जाने लगी तो माँ बोली, "कभी-कभी तो डर लागत है···जब बहुत पगलात है···। लटककर जान देवे की बात से कलेजा बहुत दरकत है। अकेल बिटवा, ई के भाग मे भी का लटककर पिरान देना लिखा बा? निपूति ही भली थी। सबर तो रही, भगवान नें निपूति रखा। पाके खोये का जहम ना भरी, जिन्दगी-भर रिसब। बिरवा लगाओ" सींचत-सींचत बढी, फिर काटे का परी"!"

नीलम्मा खडी ही रही। माँ ने बिटिया को पुकारा, "जा बिट्टी, लिवा ले जा" बहिनी थकी होई।"

नीलम्मा नमस्कार करके बाहर आयी तो सबकुछ चाँदनी के जादू की गिरफ्त मे था। दरख्त से लेकर मैदानो तक सब जगह उसी का निजाम था। गाय के बिखरे दूध के अलावा उसे कुछ सूझा ही नही। चाँदनी ने कूडे के स्थलों तक को सँवारकर एक नयी शक्ल दे दी थी। नीम के नीचे की जिस नाली में चोड़ा-ही-चोड़ा भरा था उसी में बहता हुआ पानी चाँदी की किरचो की तरह यहाँ-वहाँ चमक रहा था। पता नही उसमे कितनी चाँदी की किरचें बिखरी पड़ी थी! घेर में बँधे जानवरों को देखकर उसे लगा कि *इन जानवरो का असली नहान ऐसी ही रातों में होता है।* कान झुकाये निरन्तर भीगते खड़े थे। उसने एक भरपूर नजर चारो तरफ डाली और चाँदनी में डूबे उस माहौल को अपने अन्दर समेटे सोने के लिए कोठे मे चली गयी। बाहर के मुकाबले अन्दर गरम था। बाहर की सिहरन ज्यादा सुहावनी थी। कोठें की कच्ची दीवार में एक छोटा-सा चिडियादान था। उसी मे से एक सफेद *चिड़िया अन्दर आ बैठी थी। उसका वहाँ उपस्थित होना उसे अच्छा लगा।* वह उसके निकट खिसक गयी। उस चिड़ियादान को गौर से देखते हुए पाकर वह लड़की मुस्कुरा दी। वह बोली, "ई झरोखा हमार बाबू ने सब कोठन मे बनवावा रहा। का तुहार बाबू ने नाही बनवावा?"

नीलम्मा बीच ही मे बोली, "घर है ही नही···!"

वह हँस दी, "इत्ते बड़े मनई और घर नाही···हसत हो।"

नीलम्मा ने पूछा, "तुम पढ़ने जाती हो?"

"गाँव मे कोई लड़की नाही पढ़त···महतारी कहित है सोंचन लग जात है।"

"हम तो पढ़ते हैं।"

वह नीलम्मा की तरफ देखने लगी। थोड़ी देर बाद बोली, "पढ़ै का होत है?"

"डर निकल जाता है।"

नीलम्मा बिस्तर पर लेटी तो एक क्षण को लगा कि वह नीचे को धँस गयी। दो-चार बार करवट लेकर देखा। जिधर करवट लेती थी उधर ही धसक जाती थी। लेकिन कुछ देर बाद वह स्थिर हो गयी। घास चुरचुराने की आवाज भी थोड़ी देर तक तो उसे तंग करती रही, फिर उसे सुलाती-सी महसूस होने लगी।

रामउजागर की छोटी बहन अभी जगी थी, "उहाँ लडकियाँ पढत ही पढ़त है, खेतों मे काम नाही करत का।"

"वहाँ खेत हैं ही नही···पढकर स्कूल, कालिजो और दफ्तरो मे काम करती है।"

"जब खेत नाही तो अनाज कहाँ से आइत है?"

"गाँवों से।"

"लडके-लडको सब साथ पढ़त हैं? कुछ नाही होत?"

"होना क्या है?"

"कहित हैं कि आग लगत है।" हाथो से लपटें दिखाने के लिए वह उठकर बैठ गयी।

"किस मे?"

"ई हम नाही जानित।"

"तुमने लगती देखी है?"

उसने गर्दन हिलाकर इंकार कर दिया। बोली, "हम पढि नाही था।"

"आग देखने के लिए तुम्हें पढ़ना चाहिए।"

"लाँछन ना लगी काऽऽ?"

नीलम्मा ने हँसकर कहा, "तुम यह बात अपने भैया से पूछना।"

उसने कन्धे चढाकर कहा, "डर लागत है। पहले बोलत भी रहे, खेलत भी रहे। अब घुप्प-से बैठ जात हैं। रोना फूटत है।"

"तुम क्या समझती हो कि क्या हो गया?"

"जादू···।"

वह चुप हो गयी।

रामउजागर की बहन बिट्टी तो थोडी देर बाद सो गयी, लेकिन नीलम्मा की नींद उचट गयी। वह लेटी-लेटी पूरे दिन की घटनाओ का पुनरावलोकन करती रही। चिडियादान से आयी चिडिया पहले सरकती रही, फिर घुलने लगी। वह उसे घुलते और छोटी पड़ते देखती रही। फिर सबसे पहले तो उसे उस आदमी के बारे मे सोचकर हँसी आयी जो उसे स्टेशन से सिरसा गाँव तक लाया था। उसे आश्चर्य हो रहा था कि इस जमाने मे भी लोग इतने भोले और डरे हुए हैं। फिर उसे रामउजागर की उस भाभी का ध्यान आया जो काफी वाचाल थी। उसे यह समझने में कठिनाई हुई थी कि वह कहाँ देखती है और कहाँ निशाना साधती है! नीलम्मा आप-ही-आप मुस्कुरा दी। रामउजागर उसकी उपस्थिति से काफी परेशान था।··

रामउजागर की माँ और बाप एकदम भिन्न मिट्टी के बने हुए है। उसके बापू बिल्कुल अन्दर-ही-अन्दर रहते हैं। बाहर से जैसे उनका कोई मतलब ही नही। माँ की करुणा रात-दिन बहती रहती है। उनके दुख में आदमी उतरना शुरू कर दे तो पता ही न पाये। कोई अन्त ही नहीं। अस्वस्थ बेटे की निराश माँ के लिए सम्पूर्ण ससार ही रुग्ण हो उठता है। अपने बेटे को लेकर जो बातें कही थी उन्हें सुनकर लगा जैसे सपाट जमीन मे वेदना की दूर्वा फूट रही हो। कही न गड्ढा था और न टीला, बस बातें अन्दर तक उतरी हुई थी। माँ की बातो से लगता था कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही उनके बेटे मे केन्द्रित हो गया है। बापू बेटे को देखते थे और गर्दन झुकाकर दूसरा काम करने लगते थे। बहन पर रामउजागर का अबूझा-सा प्रभाव था। लड़कियो की पढाई को वह लाँछन मानकर सन्तुष्ट हो चुकी थी। वह यही समझती थी कि लाँछन और पढाई दोनो एक-दूसरे के पर्याय है। उसे उनसे बचना चाहिए। सबसे अधिक आश्चर्य उसे रामउजागर पर हो रहा था। जैसे किसी दहाड़ते शेर को जादू के जोर से भूसे के बोरे में परिवर्तित कर दिया गया हो। क्या वास्तव मे वह जादू है? सबसे उसकी बातें हुई थी पर जिससे वह मिलने आयी थी उससे अभी तक बातें नही हो पायी थी। वह उसे देख-भर रहा था और चुप था। बस शुरू मे ही दो-चार वाक्य बोला था। वह चुप ही नही, भयभीत भी है। अगर वह इतना भयभीत है तो क्या बिट्टी को मैंने गलत बताया? चाय पीने मे डरता है···कही भी जाने से अलग मोहताज है। मन की बात कहना और करना उसके लिए मुश्किल होता जा रहा है। यही रामउजागर उस जबान का मालिक था जिसके बल पर वह बड़े-से-बड़े धुरन्धर बोलनेवाले को उसी तरह ठण्डा कर देता था जैसे युद्ध के समय योद्धा सामनेवाले की तलवार को नाकाम कर दिया करते थे। वही अब इतना असहाय! कौन-सी ऐसी घटना है जिसने उसे इतना निरीह बना दिया? मोहन की आत्महत्या? या मनोबल का ह्रास?

उसे एकाएक लगा कि कोई रो रहा है। चिड़िया गायब थी। बाहर आयी तो चाँदनी की स्थिति बदल चुकी थी। कही पर से अपना कब्जा हटा लिया था और कही पर जमा लिया था। मजबूती मे किसी तरह का कोई अन्तर नही आया था।

उसने रोने की आवाज की टोह लेने की कोशिश की। सामनेवाले कोठे मे आ रही थी। वह उधर बढ़ गयी। अन्दर रामउजागर और उसके बापू थे।

रामउजागर बच्चों की तरह भयभीत था। वह कह रहा था, "मोहन नही मरा, बापू! वह मेरी बाँहो में अभी भी साँस ले रहा है। मुझसे बार-बार कहता है कि मुझे इन लोगो को मत सौंप। ये मुझे जला डालेंगे। लेकिन मैंने उससे गद्दारी की। मार डालने के लिए मोहन को उन्हे सौंप दिया। एक जीवित नौजवान को हत्यारो को सौंपकर मर जाने दिया··· एक सम्पूर्ण दुनिया की सम्भावना खत्म हो गयी। यह मैंने क्या किया बाबू? ये लोग सबको इसी तरह लटकाकर मार देते हैं। ये सम्भावनाओं के शत्रु हैं। जो जिन्दा रहते हैं उनको मिट्टी बना देते हैं। ऐसा क्यो करते हैं? जब बाहर निकलकर देखता हूँ तो लगता है कि पता नही कब से हम मिट्टी के ढेर बने पड़े हैं!"

उसके बाबू बड़े धैर्य से उसे समझा रहे थे, "ऐसा न सोच बेटा, ऐसा न सोच···

ये मेमसाहब कहती हैं मोहन मर गया था'''जब मर गया तब तुमने उसकी मिट्टी उतारी। तुम चाहो तो इनके साथ ही चले जाओ।"

"मुझे लगता है, उन्होने अनुकूल भी मार डाला होगा। जैसे वे मुझसे नाराज थे वैसे ही उससे भी नाराज हैं'''मैं नीलम्मा से पूछना भूल गया'' अनुकूल कैसा है। पता नही मुझे क्या हो जाता है, दूसरो की बात मैं भूल ही जाता हूँ। हरदम अपने ही बारे मे क्यो सोचता रहता हूँ ? बापू, मैं पहलेवाला रामउजागर नही रहा ना ! पहले सब मुझसे डरते थे'''अब मैं सबसे डरता हूँ। क्यों डरता हूँ ? क्या ये सब मिल-कर मुझे फाँसी लगा देंगे ? लोग कहते है छोटी जात का होकर बडी बातें करता है। क्या छोटी-बड़ी बात, छोटी-बडी जात के हिसाब से की जाती है ? बापू, वे लोग मुझे पकड़ तो नही लेंगे। तुम नीलम्मा को बुला दो, बापू। मैं उसी मे ये सब बातें पूछूँगा। वह झूठ कहती है कि मैंने उसे साहसी बनाया ''वह हमेशा की साहसी है !"

नीलम्मा दरवाजे के पास से ही लौट गयी। बापू ने क्या कहा, उसने अपने कानों नही सुना। रामउजागर और जोर-जोर से रो रहा था। उसके इस तरह रोने से नीलम्मा अन्दर तक आहत हो गयी। बिस्तर पर बैठी-बैठी वह अपने को नीचे उतरता महसूस कर रही थी। किसी तरह उसने अपने को उबारा। घेर मे बँधा कोई जानवर रम्भाया। गांव के कुत्तों की आवाज कई गुनी होकर सुनायी पड़ने लगी थी। रात की चिडियो की कुछ तीखी आवाजें भी उसके पास पहुँचने लगी थी। फिर भी उसे लग रहा था, वह अकेली है और रात अन्तहीन है। वह क्या करे ? उसे फिर उस चिड़िया की याद आयी जो बहुत देर तक उसके बिस्तर पर बैठी उसे देखती रही थी।

उसे लगा बाहर कोई है। हो सकता है रामउजागर के बाबू हो। सीधे-साधे, बेपढ़े और संकोची हैं।'''मेमसाहब कह रहे थे। हो सकता है उनकी समझ मे ना आ रहा हो, क्या कहकर पुकारें। अपनी बेटी को भी तो पुकारते होंगे। लेकिन वह तुरन्त ही अपने-आपसे सवाल-जवाब मे खो गयी। अगर उसकी जगह कोई और लडकी होती तो क्या वह यहां आती ? यह भावुकता या अतिउत्साह नही तो क्या है ? नही, यह भावुकता नही। प्रयत्न है। जिस रामउजागर की तस्वीर को वह जानती है वह बिल्कुल अलग थी। उसी तस्वीर के चलते वह यहाँ चली आयी''' उसमें और इसमें जमीन-आसमान का अन्तर है। लेकिन वह अपनी इस तस्वीर को स्वीकार नही कर पा रहा है। इससे निकलकर उसमे जाने के लिए उद्यत है। उसे रास्ता नही मिल पा रहा, कैसे जाये ? अगर राजू की मौत के समय उसका साक्षात्कार उस रामउजागर के साथ न हुआ होता तो वह आत्ममुक्ति के इस अनुष्ठान मे न लगती। रूप, दुख, यश और साहस जिस तरह आकर्षित करते है उसी तरह राम के उस व्यवहार ने भी आकर्षित किया था। आकर्षित ही नही किया, प्रेरणा भी दी। राजू के जाने के बाद रह ही क्या गया था ? घर ? नही, घर से बेघर हो चुकी है। इसने ही मुझे दिखाया कि मेरे अन्दर क्या है। लेकिन अब वह उपले की आग, पानी

मे भीगी राख हो गयी है। अगर राम के साथ ऐसा हो सकता है तो किसके साथ नही हो सकता ?

पदचाप शायद लौट गयी थी। वह समझ नही पायी, कौन था या कौन हो सकता था। नीलम्मा काफी देर तक सोचती रही। बार-बार रामउजागर और रामउजागर की बाते उसके दिमाग में घूमती रही।

लड़की बेसुध सो रही थी। दिन मे जब वह नीम के पेड़ के पास आयी थी तो नये कपडे पहने कुछ बडी-बडी-सी लगी थी। नीद ने उसे बिल्कुल बच्ची बनाकर सुलाया हुआ था। एकदम बेसुध। जब तक इस तरह सोया जा सके तभी तक इन्सान अपने बालपन को सुरक्षित रख पाता है। वरना तो उम्र चील की तरह झपट्टा मार-मारकर एक-एक चीज छीनती चली जाती है। अन्त तक पहुँचते-पहुँचते सबकुछ छिन जाता है। रामउजागर के पास कितना कुछ नही था। अब···'क्या होगा ?' मोर के पंख एक-एक कर गिरते जाते हैं, राम की क्षमताएँ भी धीरे-धीरे उसी तरह नष्ट होती जा रही हैं। यदि यही रहा तो एक दिन आयेगा कि वह अपनी क्षमताओं के मलबे के नीचे स्वय दबा पडा होगा। राजू के साथ भी कही-न-कही यही हुआ था। क्षमताएँ जब अन्दर टूटती हैं तो एटमबम के विस्फोट से भी ज्यादा मलबा छोड जाती है। क्या रामउजागर वापिस संस्थान नही लौट सकता ? उसे लौट चलना चाहिए। वही वातावरण जिसने उसे ऐसा बनाया, सुधार सकने की सम्भावनाओं से वह आज भी सम्पन्न है।

उसे नीद का झोंका आया पर वह फिर जग गयी। वह बुदबुदायी···राम को लौट चलना चाहिए···कल सवेरा होते ही उसे वापिस चलना होगा! नीद के अगले झोके ने उसे सवेरे तक के लिए पूरी तरह दबोच लिया।

जब उसकी आँख खुली तो झोला-मौला था। घर के लोग जानवरो की सानी मे लगे थे! घण्टियाँ टुनटुना रही थी। शाम भी टुनटुनाती रही थी पर इस समय घण्टियों का टुनटुनाना अधिक उतावलापन लिये था और ताजा था। गोबर की गन्ध पूरे वातावरण मे व्याप्त थी। इस गन्ध का आदी न होने के कारण नीलम्मा को अजीब-सी असुविधा का अनुभव हो रहा था। उसने झाँककर देखा, रामउजागर की माँ और उसके बापू दूध दुह रहे थे। बर्तन में पडती धार विचित्र-सा स्वर उत्पन्न कर रही थी। वह उसे गौर से सुनती रही। वह घी·· पूँ···घी···पूँ···जैसी आवाज उसे बड़ी मनोरंजक मालूम पड़ी। पहली बार उसने एक ऐसे अर्थहीन स्वर को सम्पूर्ण वातावरण पर इतना हावी होते हुए महसूस किया था। जहाँ गोबर की गन्ध से वह बाधित थी वही इस स्वर मे वह मुदित थी।

धीरे-धीरे उसे सवेरे की आवश्यकताओ के बारे में चिन्ता होनी शुरू हुई। भय-मिश्रित संकोच उसके ऊपर तारी होने लगा। कुछ देर बाद उसे महसूस हुआ कि उस संकोच के कारण उसकी आवश्यकताएँ धीरे-धीरे खत्म होती जा रही हैं। इन नयी परिस्थितियों मे नीलम्मा ने जल्दी-से-जल्दी केवल मुँह धोकर निकल चलने का निश्चय किया। लेकिन उसे बार-बार लग रहा था, अगर रास्ते मे परेशानी हुई

तो ? वह बाहर निकल आयी। गोबर और खल की मिश्रित गन्ध और तेज हो गयी। उसे लगा जैसे झौ आ रही हो। आँखो मे हल्की-हल्की चरपराहट मालूम पड रही थी।

उसकी नजर जानवरों पर गयी। वे सब अत्यधिक एकाग्रता के साथ अपनी-अपनी कूंड में मुंह डाले सानी खा रहे थे। खाते-खाते बीच मे गर्दन हिलती थी तो घण्टी टनटना उठती थी। लेकिन उनपर उसका कोई फर्क नही पड़ता था। वह उन्हें देखती रही ! आदमी मे इतनी एकाग्रता देखने को नही मिलती। उसकी नजर रामउजागर के बापू पर गयी। वे पावडी लिये बैलो के नीचे से गोबर सकेर रहे थे। धोती घुटनो तक चढी थी। देह नगी थी। सिर पर मुड़ासा बँधा था। गोबर तसले मे भरते जा रहे थे।

नीलम्मा ने उन्हें हाथ जोड़कर नमस्ते किया। वे गोबर उठाना छोड़कर हाथ धोने लगे। हाथ धोकर वे वही आ गये जहाँ नीलम्मा थी। गोबर की वही गन्ध उसे उनमें से भी आती महसूस हुई।

अपनी तरह से उन्होंने बात शुरू की, "गाँवों की हालत बहुत खराब है। इतनी भी सुविधा नही कि कोई अच्छा-भला मेहमान आ जाये तो उसे कही ठहराया जा सके। हम लोग तो गोबर में भी पड़े रहे तो भी अच्छा लगता है''' अपना गाँव जो ठहरा। गाँव की धरती और माँ की गोद मे कोई अन्तर नही रहता। लेकिन बाहर-वालों को तो ढंग की जगह चाहिए। आज किसी को शहर भेजकर खाट मँगवा लूंगा। रात को सो नही पायी होगी।"

"नीद तो खूब आयी''' पर मैं सोचती हूँ, मुँह-हाथ धोकर अभी निकल जाऊँ। ग्यारह बजेवाली गाड़ी मिल जायेगी। नही तो शाम तक स्टेशन पर पड़ा रहना पड़ेगा।"

"नही जी, एक-आधा दिन तो और ठहरिए''' आपके आने से रामउजागर को भी सहारा-सा महसूस हुआ।"

"मैं तो केवल देखने आयी थी''' सो देख लिया। मेरा ख्याल है कि आप राम को वहीं भेज दें। वातावरण बदलेगा तो मन भी बदलेगा।"

"इसकी माँ को तैयार करना होगा' सोचता हूँ, इसे बाद में मैं ही लेकर चला आऊँगा। यहाँ और सब इलाज तो हो जाते है, पर डॉक्टरी इलाज नही हो पाता।"

उसके बापू ने घर मे पुकारा, "सुना तुमने'' मेमसाहब अभी जायेंगी''' दूध-चाय का बन्दोबस्त जल्दी कर दो। साथ के लिए दो परांठे भी एक बोहिये मे रख देना।" मेमसाहब शब्द उसे अखरा पर वह चुप रही। थोडी ही देर की तो बात है।

अन्दर से दूध बिलोने की आवाज आ रही थी। वह रुक गयी।

सुबरन चौधरी बोले, "मैं जरा गोबर खत्ती मे डाल आऊँ''' फिर रामउजागर को तैयार कर देता हूँ। बिना मदद कुछ करने मे उसे दिक्कत होती है।"

वे झपटते हुए चले गये। तसला उठाकर सिर पर रखा और बाहर निकल गये। माँ आकर बोली, "का तुम अब्बे जात हो ?"

"हाँ माँजी, काम है। राम को देखना था सो देख लिया। अब आप राम को

वहीं वापिस भेजने की तैयारी कीजिए। वहाँ बड़े-बड़े अच्छे डॉक्टर हैं'''ठीक से इलाज हो जायेगा तो राम फिर पहले जैसा हो जायेगा।"

"हाँ बेटी '''" इसके बाद वे कुछ नहीं बोली। उन्होंने कोठे में सो रही बेटी को जगाया और जंगल-फराखत के लिए नीलम्मा को नहर पर ले जाने को कहकर अन्दर चली गयी।

नीलम्मा पहले झिझकी। मना करना चाहा। फिर चुपचाप साथ हो ली। यह भी एक अच्छा अनुभव रहेगा। खुले आसमान के नीचे अपने शरीर को इस तरह बेपर्दा महसूस करने का! शायद फिर कभी ऐसा न हो। वह मुस्कुरा दी।

नहर बहुत दूर तक चली गयी थी। कभी सीध में, कभी मुड़ती-तुड़ती। पानी छोटी-छोटी लहरों में बह रहा था। उसे अच्छा लगा। वह नहर के किनारे एक झाड़ी के पीछे छिपकर बैठ गयी। हर क्षण नीलम्मा को लगता रहा, कोई आ रहा है। कपड़े सँभालना उसके लिए कठिन हो रहा था। गन्दे न हो जायें। घास के तिनके एक अजीब तरह की सुरसुराहट पैदा कर रहे थे। गनीमत यही थी कि रामउजागर की बहन थोड़ी दूर पर चौकन्नी खड़ी पहरा दे रही थी। खैर, किसी तरह वह फारिग हुई। नहर के किनारे लोटा मांजा। कुल्ला किया। ये सब बातें नीलम्मा को एक ऐसे अनुभव की तरह लगी जो इस दुनिया का न होकर किसी और दुनिया का था।

निश्चिन्त हो चुकने के बाद उसे बहुत अच्छा लग रहा था। नहर के दोनों तरफ विस्तार-ही-विस्तार था। ऊँचे-से-ऊँचे पेड़ भी उस विस्तार के सन्दर्भ में बहुत छोटे लग रहे थे। प्रकृति का विस्तार हर एक को अपनी वास्तविकता के निकट रखता है। ऊँट को इसीलिए पहाड़ के नीचे से निकालना जरूरी है। उसे हँसी आ गयी।

रामउजागर की बहन भी निबटकर आ गयी। घर लौटी तो सबकुछ तैयार था। नाश्ता'''रामउजागर और घरवाले!

विदा होते समय नीलम्मा को एक बहुत ही विचित्र स्थिति का सामना करना पड़ा। इस तरह की स्थिति के लिए वह तनिक भी तैयार नहीं थी। उसने पहली बार महसूस किया कि यहाँ आकर उसने अक्षम्य अपराध किया है। रामउजागर बच्चों की तरह व्यवहार कर रहा था। उसका हाथ पकड़कर पूछ रहा था - मेरा क्या होगा? मैं क्या करूँ?

उसके इस व्यवहार पर उसके बापू और माँ को छोड़कर सब खूब हँस रहे थे। उनका हँसना और रामउजागर का इस तरह व्यवहार करना दोनों ही नीलम्मा को तकलीफदेह लग रहे थे। वह उसे बार-बार समझाने की कोशिश कर रही थी कि उसने माँ और बापू को समझा दिया है कि वे उसे जल्दी हॉस्टिल भेज देंगे। वहाँ रहकर तुम बिल्कुल ठीक हो जाओगे। जो संस्थान तुम्हारे संघर्ष का क्षेत्र था वही तुम्हारे लिए अब आरोग्य निकेतन का काम करेगा।

वह और अधिक व्यथित होकर बोलने लगता, "नहीं, वहाँ कुछ नहीं हो सकता नीलम्मा! वे लोग मुझ पर लांछन लगायेंगे कि मैंने मोहन को इन लोगों के सुपुर्द करके जिन्दा जलवा दिया। मैं क्या जवाब दूँगा?"

"लेकिन वह तो मर गया था।"

"नही-नही, वह मरा नही था। उसके हाथ हिल रहे थे। उसने एक लम्बी साँस ली थी। वे लोग उन सबके साथ यही करते है जो कही पहुँचना चाहते हैं।" पहले लटकाते हैं फिर जला देते हैं"

नीलम्मा ने दबंग आवाज मे समझाने की कोशिश की, "तुम बेसिर-पैर की बातें कर रहे हो, राम। यह तुमने अपने लिए एक मनगढन्त घटना बना ली है। पुलिस, डॉक्टर सब आये···पोस्टमार्टम हुआ···लेकिन तुम उन सब वास्तविकताओं को नजरअन्दाज करके अपने लिए एक पलायन का रास्ता बनाये जा रहे हो!"

"तुम तो ऐसा मत कहो नीलम्मा!" उसने एक हताशा-भरी लम्बी साँस ली। फिर बोला, "वह मेरे हाथो में था। उसने लम्बी साँस ली थी···साँस लेता हुआ आदमी मरा हुआ कैसे हो सकता है? अगर वह मरा हुआ था तो मैं कैसे जिन्दा हो सकता हूँ?"

नीलम्मा ने उसे टोकते हुए कहा, "राम, तुम क्यों इस तरह की बातें कर रहे हो? अपने माँ-बाप की तरफ देखो। तुम समझते हो इन बातों से तुम इन्हे सुख पहुँचाते हो। तुम्हारी बातें और तुम्हारे काम दूसरों को सुख देने के लिए होते थे···*अब दूसरो को दुख देकर सुख पाने का तुमने यह नया ढंग निकाल लिया है।* तुम जब तक यहाँ रहोगे इन लोगों को दुख देने के नये-नये तरीके खोजते रहोगे··· वहाँ कोई तुम्हारी बातो से दुखी होनेवाला नही होगा।" वह रुककर बोली, "अच्छा, अब मैं चलती हूँ···"

गला दुखने लगा था।

रामउजागर सामने आकर बोला, "नही, तुम मत जाओ···तुम चली जाओगी तो मुझे ये सब धमकायेंगे, डाँटेंगे···चाय पीने को मना करेंगे। मैं···मैं···"

नीलम्मा तड़पकर बोली, "यही ना कि तुम आत्महत्या कर लोगे। क्यो? उस हालत में मुझे तुमसे कोई सहानुभूति नही होगी। मैं उस रामउजागर को पहचानती हूँ जो आत्महत्या करनेवालों तक को लौटा लाने का इरादा रखता था···उसको नही जो स्वयं आत्महत्या करने की बात करता हो। अगर मुझे मालूम होता कि उस राम के इरादों की भस्म लिये तुम इस तरह खड़े मिलोगे तो मैं कभी न आती। मैं चलती हूँ, तुम आत्मोत्पीड़न के सागर मे गोते लगा-लगाकर सन्तोष पाते रहो।"

नीलम्मा हाँफने लगी थी। वह तेजी के साथ उस घर के बाहर आ गयी। रामउजागर ने भी पीछे-पीछे चलना चाहा पर उसने मुड़कर नही देखा।

रामउजागर के बाबू उसके साथ-साथ कुछ दूर तक गये। उन्होने उससे एक ही वाक्य कहा, "बहुत सख्त बातें कह दी···उसका दिल दुखा दिया। पता नही उसके मन पर इसका क्या असर पड़े। हम सब तो बस इसी के भाग से जुड़े हैं।"

नीलम्मा धीरे-से बोली, "इसका मुझे दुख है बापू! लेकिन इसके सिवाय कोई रास्ता नही। अत्यधिक सहानुभूति इसके लिए खतरा हो जायेगी···मैं चाहती हूँ राम फिर से पहलेवाला राम हो जाये···" वह आगे नही बोल पायी।

दूसरे गाँवो की सवारी लेता हुआ एक ताँगा रोजाना उधर से होकर स्टेशन जाता था। वही सामने से आ रहा था।

नीलम्मा अपने को सँभालते हुए बोली, "राम के हित में यही है कि वह सहानुभूति के इस माहौल से दूर चला जाय। क्षमा करें, मैं उसका दिल दुखाना नहीं चाहती थी पर न चाहते हुए भी दुख गया। अफसोस इस बात का है, लोहे की दीवार देखते-देखते मोम की बन गयी। मैंने यह कभी नहीं सोचा था'''।"

ताँगा नजदीक आ गया था। उसमें आगे की तरफ तीन सवारियाँ बैठी थीं। पीछे गाँव की ही एक औरत थी। नीलम्मा उसके बराबर में बैठ गयी। सुवरन चौधरी ने पूछना चाहा, स्टेशन तक साथ चलूँ। वे बोल नहीं पाये'''तब तक ताँगा चल दिया। रामउजागर के बापू बस बिना बोले हाथ जोड़े खड़े थे। मुँह से एक भी बोल नहीं फूट रहा था। हाथ जोड़े-ही-जोड़े वे कुछ दूर तक गये भी। लेकिन ताँगे की रफ्तार तेज हो जाने के कारण वह पीछे ही रह गये। पीछे छूटता जाता रास्ता नीलम्मा को धुँधला नजर आ रहा था। एक अहसास था कि एक रास्ता पीछे छूटता जा रहा है। बीच-बीच में उसे लगने लगता था कि रामउजागर लड़खड़ाते कदमों से उसे पुकारता हुआ पीछे-पीछे दौड़ता चला आ रहा है। उसे बहुत जोर-से हिचकी आने को हुई। मुँह पर रूमाल रखकर रोक ली।

गाँव ओझल हो गया था। ताँगे में बैठे बाकी लोग नजर बचा-बचाकर उसकी तरफ देख जरूर रहे थे पर बोल नहीं रहे थे। उसका शहरी लिबास उन सब पर हावी था। नीलम्मा ने सोचा, अब शायद ही कभी इस रास्ते पर आना हो। उसने रूमाल से नाक, मुँह, आँखें पोंछकर अपने को व्यवस्थित किया। बीच-बीच में ताँगे का पहिया गहरी लीक में उतर जाता था तो ऐसा झटका लगता था कि अन्दर तक की चूल हिल जाती थी। नीलम्मा सँभलकर बैठी थी। धूल का गुब्बार उठता था और ताँगे में बैठे सब लोगों पर छा जाता था। बाकी सब अप्रभावित बने रहते थे, लेकिन नीलम्मा का गला फँसने लगता था। साड़ी के पल्ले से उसने अपने सिर और चेहरे को और अच्छी तरह लपेट लिया। बीच-बीच में उसे लगता था, साथवाली औरत कुछ बोल रही है। पर वह मात्र उसे देखती होती थी। पक्की सड़क आते ही घोड़े की टाप सुनायी पड़ने लगती थी। आगेवाले आदमी अलबत्ता बीच-बीच में मँहगाई, गरीबी, सरकारी मुहकमों की धांधागर्दी के बारे में बातें करने लगते थे। घोड़े के कच्चे में उतरते ही टाप फिर गायब हो जाती थी। और नीलम्मा सब्र कर लेती थी कि अब आगे का सम्पूर्ण रास्ता कच्चा ही है'''।

स्टेशन पर काफी देर तक वह अकेली ही मुसाफिर थी। स्टेशन मास्टर भी गाड़ी आने के कुछ देर पहले आये थे।

लौटने पर नीलम्मा को कई दिनों तक यही लगता रहा कि वह एक ऐसी दुनिया देख आयी जो उसके लिए बिल्कुल भिन्न और नयी थी। रामउजागर के गाँव की गन्ध का अन्दर-ही-अन्दर सोता-सा फूटा रहता था। उस गन्ध के चलते वह बैठे-बैठे उसके गाँव पहुँच जाती थी। रात को करवट बदलते समय पुआल की सरसराहट महसूस होती। सवेरे उठती तो उसे लगता दूध दुहा जा रहा है और थी'''पूँ'''थी'''पूँ'' की वह आवाज सारे कमरे में भर गयी है। गोबर सकेरते हुए और चलते

समय हाथ जोड़कर खड़े रामउजागर के पिता उसकी आँखों के सामने घूमने लगते थे। दिन की भरी रोशनी मे वह दिया और उसकी बत्ती पर आया गुल साकार हो उठते थे। छोटी नहर के किनारे बैठे हुए जिस तनाव को उसने महसूस किया था वह उसके अन्दर एक हँसी का-सा अहसास भर देता था। फिर वह चारो तरफ फैले उस विस्तार के सन्दर्भ मे उन ऊँचे-ऊँचे पेडों को छोटा पडता हुआ महसूस करने लगती थी। एकाएक दूध विलोने की आवाज उन सबको विस्थापित करके अपने आपको स्थापित कर लेती थी। भरी दोपहरी में चाँदनी थान की तरह अनायास खुलती चली जाती थी' बीच-बीच मे नीलम्मा को लगने लगता कि अभी तक वह पूरी तरह से वापिस नही लौटी है। कुछ वहाँ है, कुछ यहाँ है। लेकिन जैसे ही रामउजागर लड़खड़ाता हुआ उसकी तरफ आता हुआ महसूस होता···वह सब बिखर जाता। नीलम्मा को उसके चारो तरफ एक ऐसा अन्धकार गाडा होता महसूस होने लगता था जिसे वेधना किसी के बस की बात नही थी। फिर वह सोचती, छोटी नहर का किनारा धसक रहा है। डुबाऊ पानी रामउजागर समेत सबको बहा ले जाने के लिए तैयार है। डूबने से उसे कैसे बचाया जाय। उसके माथे पर पसीना आ जाता। उसने क्यो इतना सख्त बोला? राम ने तो एक समय उसे बचाया था और जब नीलम्मा के लिए भी ठीक वैसा ही अवसर आया था···उसने ऐसे कुबोल बोले···।

वह अव्यवस्थित हो उठती ''उसे यही सब कहना था तो वह गयी ही क्यो थी? जख्म देखने···कितने गहरे हैं? उफ् भयानक!

वह अस्पताल गयी तो पता चला अनुकूल डिस्चार्ज होकर जा चुका है। नीलम्मा को थोडा आश्चर्य हुआ। आश्चर्य ही नही हुआ, एक प्रकार की घबराहट-सी भी महसूस हुई। कही वह भी दूसरे रामउजागर मे परिवर्तित न हो जाये? भूख की तरह ही तिरस्कार को भी लगातार सह पाना कठिन होता है। भूख को तो पेट का गढा भरकर भी शायद शान्त किया जा सके पर तिरस्कार से कोई निस्तार नही। निरन्तर बरमे की तरह अन्दर उतरता चला जाता है। शायद इसीलिए स्नायु रास्ता दे देते हैं और फिर यह सबकुछ होता है, जो हो रहा है। लोहा पिघलने लगता है, पत्थर धरती मे उतरते चले जाते है···कही कुछ नही रहता।

नीलम्मा काफी देर तक खड़ी सोचती रही कि वह अनुकूल के हॉस्टिल जाये या नही? हो सकता है वे सब लडके और उत्पात करें। उसे अपने ऊपर आश्चर्य हो रहा था। वह पी-एच. डी. करने आयी थी। लेकिन पता नही कब और कैसे इन सब इतर बातो में फंसती चली गयी। अब कोई और रास्ता नहीं। ये सम्बन्ध साधारण मानवीय सम्बन्ध न रहकर एक दूसरी दिशा मे मुड़ते चले जा रहे हैं। हालांकि उसका कोई मतलब नही। उसे लगा कि आदमी के अन्दर की हिचक ही कभी-कभी मनुष्य के अन्दर एक गड्ढा खोद देती है जिसमें वह स्वय धीरे-धीरे समाता जाता है।

नीलम्मा वही से सीधे अनुकूल के हॉस्टिल निकल गयी। अनुकूल अभी भी

उतना ही अपाहिज था। सहारा लेकर एक टाँग से अलबत्ता चल लेता था। अनुकूल नीलम्मा को आया देखकर अचकचाया था। शायद उसे उम्मीद नहीं थी कि वह इतनी जल्दी लौट आयेगी।

नीलम्मा ने पूछा, "अस्पताल से इतनी जल्दी क्यो चले आये? अभी कुछ दिन रहना चाहिए था।"

"सोचा, आप तो चली गयी ''वहाँ रोज-रोज आकर देखनेवाला और कौन है? अकेले घबराहट-सी हुई तो चला आया।"

अनुकूल का जवाब नीलम्मा को कुछ अजीब-सा लगा, "तुम क्या समझते हो कि मैं सबकुछ छोड़-छाड़कर सबकी तीमारदारी करती रहूँगी? एक दिन में ही घबराहट होगी तो सारी जिन्दगी कैसे गुजारोगे? राम को देखकर लगता था कि साहस का पाठ उससे बेहतर कोई और नही पढ़ा सकता'''तुम्हे देखकर लगा कि तुमसे सहनशीलता सीखी जा सकती है। लेकिन'''" आगे वह चुप लगा गयी।

अनुकूल को यह उम्मीद नही थी कि नीलम्मा इतना उत्तेजित हो जायेगी। उसने यही समझा, नीलम्मा उस चिट्ठी और बाबू की बातों को लेकर अभी भी खिन्न है। उस बात को घुमाने की दृष्टि से उसने पूछा, "रामउजागर दादा कैसे हैं?"

नीलम्मा ने उसके सवाल का जवाब न देकर अपना सवाल ठोक दिया, "यहाँ आने के बाद तो कोई घटना नही घटी?"

"घटी।"

"क्या?"

"खन्ना ने कहलाया है कि रामउजागर की तरह तुम भी यहाँ से चुपचाप चले जाओ। *अपने साथ नीलम्मा को भी लेते जाओ'''मैंने सोचा कि जहाँ भी जाऊँगा* वही लोग भाग जाने के लिए कहेंगे ' कहाँ तक भागता फिरूँगा? हाँ, आपको जरूर मेरी वजह से परेशानी उठानी पड़ रही है।"

"मुझे परेशानी तुम्हारे कारण नही, राम के कारण है। राम के माध्यम से ही मैं तुमसे परिचित हुई ''उसी के कारण मैंने इन सब सवालों का हल खोजना चालू किया। लेकिन वह आधार ही चरमरा रहा है तो आगे क्या हो पायेगा? उसका मनोबल इतना गिर जायेगा यह मैंने न तो कभी सोचा था और न देखा था। उसके घरवाले भी रास्ते मे भटके हुए हैं ' दरअसल राम ही उनके लिए लाइट-हाउस था। जब वह ही रोशनी खो चुका तो वे किसकी तरफ देखें। अब तक वे लोग उसी के प्रकाश में गहरे जलों से भी अपनी नौका खेते चले आ रहे थे। अब उस लाइट-हाउस की रोशनी किसी के लिए भी उपलब्ध नहीं!"

अनुकूल सामान्य होने लगा था, "कोई खास बात है?"

"मुझे लगता है जो बाहर घटित होता है वह पहले से ही अन्दर घटित होता रहता है। राम बहादुर था'''साहसी था'''दूरअन्देश था और भावुक भी था। साहस और भावुकता कभी-कभी एक-दूसरे के आड़े आ खड़े होते हैं। उतने ही अंशों में भावुकता की आवश्यकता होती है'''जो साहस को निरंकुश न होने दे'''नपुंसक बना देनेवाली भावुकता का कोई मतलब नही। मैं तुममें सिर्फ यही कहना चाहती हूँ कि यह जो भी कुछ तुम कर रहे हो सबकुछ अच्छा है। लेकिन तुम अपने आपको

टटोलो कि इसके अतिरिक्त तुम्हारे अन्दर और क्या-क्या है। कही सुरंग बिछती रहे और तुम्हें तब पता चले जब विस्फोट हो चुका हो। अभी समय है। वास्तविकताओं को पहचानकर उन तक लौट आओ। मैं भी अपने को फिर से छान रही हूँ···।"

अनुकूल बिना बोले उसकी तरफ देख रहा था। कुछ देर बाद नीलम्मा बोली, "एक बच्चे से ज्यादा राम में कुछ नही बचा। असहाय बच्चा तो फिर भी भाता है, लेकिन असहाय होता पुरुष सम्पूर्ण समाज को अपग कर देता है · असहाय होने से बड़ी दयनीयता कोई नहीं। खासतौर से उस पुरुष के लिए जो दूसरों के लिए सहारा बनने का ख्वाब देखता रहा हो···।"

नीलम्मा बाहर चली गयी। अनुकूल पहले बैठा देखता रहा, फिर लेट गया। उसके सामने एक यह नया प्रश्न आ खडा हुआ था कि क्या वह असहाय हो रहा है?

नौ

नीलम्मा ने रामउजागर के आने की खबर उसके सब मित्रो को दे दी थी। सब लोगों ने मिलकर यह भी निर्णय ले लिया था कि रामउजागर को पहले साइके-ट्रिस्ट को दिखाकर तब हॉस्टिल ले जाया जायेगा। गाडी के हिसाब से ही साइके-ट्रिस्ट से भी समय तय कर लिया गया था। सभी लोग उसे स्टेशन पर लेने गये थे। उन सबको रामउजागर को देखने और उसके बारे में प्रत्यक्ष रूप से जानने की खासी उत्सुकता थी।

रामउजागर के साथ उसके बापू आये थे। वे केवल नीलम्मा से ही परिचित थे। जब गाडी प्लेटफार्म पर पहुँची तो सुबरन चौधरी दरवाजे पर खड़े बेचैनी के साथ इधर-उधर ताक रहे थे। अगर नीलम्मा नही आयी तो वे रामउजागर को लेकर कहाँ जायेंगे? लेकिन नीलम्मा को आया देखकर वे एकाएक तनाव-विहीन हो गये। चलो, अब सँभालने वाला आ गया। फिर भी यह प्रश्न बना रहा, अगर वह न आयी होती तो क्या होता? यह प्रश्न रह-रहकर उनके दिमाग मे रेंग उठता था। लेकिन नीलम्मा को सामने खड़ी देखकर ठण्डा पड जाता था। रामउजागर कुछ ज्यादा ही खामोश था। वह अजीब से तनाव मे भी था। पता नही क्या होगा? मित्रों मे मिलकर मुस्कुराने मे उसे परेशानी हो रही थी। आदत जैसे छूट-सी गयी थी। उसका हाथ मिलाते समय भी काँप रहा था। बीच-बीच में उसे लगने लगता था कि उसके चेहरे की मांसपेशियाँ एक-एक कर खिंचने लगती हैं। बाकी सब मित्र उसकी इस स्थिति पर आश्चर्यचकित थे। उन्होंने उसकी बीमारी को लेकर सब तरह की कल्पनाएँ की थी, पर कल्पना मे भी वे इस सीमा तक नही पहुँच पाये थे। क्या यही वह रामउजागर है जिससे मिलना मित्रो के लिए आनन्द की बात होती थी?

इसी की जवान में मित्रों के लिए मिश्री घुलती थी और शत्रुओं के लिए लोहा गलता था ! एक वक्त के शेर को क्या समय इस तरह गीदड़ बना देता है ? यह प्रश्न करीब-करीब सभी के दिमागों में अपनी-अपनी तरह से उठ रहा था। उन सबको ऐसे बहुत से किस्से याद थे जब वह प्रशासकीय महाबलियों के ऊपर विडम्बना की तरह छा जाता था और वे लोग भौंकते-भौंकते एकाएक मिमियाना शुरू कर देते थे। उसी रामउजागर को बच्चों की तरह कदम-कदम चलते देखकर वे लोग एक प्रकार की आन्तरिक वेदना से भर उठे।

रामउजागर के बापू पहले नीलम्मा को एक तरफ ले गये और बोले, "मैं तो गांव का एक अनजान और बेपढ़ा-लिखा आदमी हूँ'' शहर के तौर-तरीके भी नहीं जानता। कहा था तो इसको लेकर किसी तरह आ गया। किसी धर्मशाला में जा पड़ूँगा। धर्मशाला में रहने के लिए जरूर कोई और जात बतानी पड़ेगी'''सभी बड़ी जातों की हैं। झूठ बोलना मुश्किल होता है'''" कहकर सुबरन चौधरी के होंठ थोड़े-से फैल गये।

नीलम्मा ने उन्हें समझाया, "ऐसी कोई बात नहीं। रहने के लिए अपने संस्थान का गेस्टहाउस है। आप उसकी चिन्ता न करें। आपको ज़रा भी झूठ नहीं बोलना पड़ेगा। फिलहाल हम लोग राम को डॉक्टर के पास ले चल रहे हैं। अगर जल्दी ठीक होने की बात हुई तो राम को बाहर रखकर ही इलाज कराने की बात सोचते हैं'''ज्यादातर लड़कों के दिमागों में राम के अच्छे दिनों की ही तस्वीर सुरक्षित है'''उसे मिटाना ठीक नहीं होगा।"

रामउजागर के बापू ने हामी भर दी, "जैसा आप ठीक समझें'''मैं तो इन बातों को समझता नहीं।"

बाकी लड़के रामउजागर को घेरे खड़े थे। रामउजागर गुमसुम था। गुमसुम होने का अहसास लगातार उसे परेशान कर रहा था। बीच में जब कोई सवाल याद आ जाता था। तो वह पूछ लेता था।

"इन्स्टीट्यूट का क्या हाल है ?"

जवाब मिल जाने के बाद वह फिर काफी देर के लिए खामोश हो जाता था। काफी अन्तराल के बाद जब फिर दूसरी कोई बात याद आती थी तो वह अगला सवाल पूछता था, "नरेश कहाँ है ?"

नरेश उसके दोस्त का नाम था और वह साल-भर पहले पास कर गया था। उन लोगों में से एक ने बता दिया कि बहुत दिनों से उसकी कोई चिट्ठी-पतरी नहीं आयी। एकाएक उसे अनुकूल का ध्यान आया। पर नाम याद नहीं आया। पहले वह नाम याद करता रहा फिर जब बोला तो यही कहता रहा, "उस लड़के का'''वह जो फर्स्ट ईयर में है'''एम. सी. है ना। उफ, उसका नाम याद नहीं आ रहा। अच्छा-सा नाम है'''लड़का भी अच्छा है'''उसके नाम का अंग्रेजी में तर्जुमा फेवरेबिल जैसा कुछ है'''।"

लड़कों को याद नहीं आया। नीलम्मा आ गयी थी। वह बोली, "तुम मि. फेवरेबिल यानी अनुकूल को पूछ रहे हो ना ?"

वह बच्चों की तरह खुश हो उठा। जोर से बोला, "हाँ-हाँ'''क्या हाल है

अनुकूल का ?"

"ठीक है, उसके पैर में चोट लग गयी थी···कुछ ही दिन पहले प्लास्टर खुला है। नही तो वह जरूर आता···तुम्हें नमस्कार भेजा है।"

रामउजागर ने मुदित होकर दो-तीन बार नमस्कार-नमस्कार कहा। नमस्कार का जवाब देने के बाद वह सुस्त पड़ता गया। उसके चेहरे पर धीरे-धीरे मुर्दनी-सी छा गयी।

रामउजागर के पिता सामान के पास चुपचाप खडे थे। स्टेशन के उस वातावरण मे अपने को उखडा-सा अनुभव कर रहे थे। लड़को ने रामउजागर का मनोबल बढाने के प्रयत्न करने शुरू कर दिये थे।

"जब मे तुम यहाँ से गये हो तब से हम लोग एक अव्यवस्थित भीड का हिस्सा हो गये हैं। हमारी पूछ भी तुम्हारे ही कारण थी।"

दूसरा कहता, "हम सोच रहे थे राम आयेगा तो हम लोगो को पुर्नस्थापित होने मे मदद मिलेगी" पर राम आया तो इतना सुस्त !"

राम के चहरे से लगता कि वह अपने-आपसे उबरने के लिए जोर लगा रहा है। लेकिन कही बीच मे ही रस्सी टूट जाती है।

नीलम्मा सुबरन चौधरी को अकेला खडा देखकर उनके पास चली गयी। पूछा, "राम की तबियत मे कुछ सुधार हुआ या नही ?"

"सुधार क्या होना था"!" बापू बोले, "पहले कहता था, नीलम्मा बुला गयी है, मुझे वही ले चलो। जब चलने का वक्त हुआ तो अपनी माँ का हाथ पकडकर बोला···नही, मैं नही जाऊँगा। मुझे वे लोग जिन्दा जला देगे। माँ का दिल तो माँ का दिल। पसीज गया। उसके रोने-धोने का सामना करना, रामउजागर का सामना करने से भी ज्यादा मुश्किल था। किस्से-कहानियो मे सुना था, पर इस बार आँखों देखा कि माँ के आँसू जहाँ गिरते हैं वही छेद कर देते हैं। लाते-लाते तक दिल छलनी हो गया। पर किसी तरह ले आया।"

नीलम्मा उनकी बात खामोशी-से सुन रही थी। कुछ देर बाद वे भी चुप हो गये। लेकिन उनके चेहरे पर लिख आया कि वे पछतावे मे हैं। थोडी देर बाद बोले, "आप हैं तो हम लोगो से बहुत बड़ी···पर हो बेटी की तरह ही। इसलिए तुमसे यह बताना चाहता हूँ कि मैं इलाज-मालजे के लिए रुपये लेकर नही आया। खर्च का बन्दोबस्त करके चला आया था। इलाज मे कितना पैसा लगेगा ? ज्यादा कीमती इलाज कराना हमारे बस का नही है "अपनी बिसात से बाहर जाकर पढा रहे थे। अब तो सब निबट गया। न पढाई रही, न रामउजागर और न हम।" उन्होंने एक लम्बी साँस छोडी।

"आप उसका फिक्र न करें···प्रबन्ध हो जायेगा। छात्रो को इलाज की मदद सस्थान मे मिलती है। जितना खर्चा होगा वह सब वापिस मिल जायेगा।

"पहले तो करने को चाहिए···"

"उसका इन्तजाम है।"

रामउजागर के बापू बोले, "रामउजागर से भी तो पूछ लेना चाहिए। आपके आने के बाद कई दिन तक कहता रहा था"बापू, नीलम्मा मेरी ही गलती से नाराज

होकर चली गयी।" रुककर बोले, "वह आपको ही मानता है।"

नीलम्मा चुपचाप धरती की तरफ देखती हुई उनकी बात सुन रही थी। कहीं-कहीं दूब उग आयी थी। ज्यादातर जगह में ईंटें बिछी थी या फिर जंगली घास थी। जहाँ कच्ची जमीन थी और सूखी घास जला देने के कारण काली पड़ गयी थी वहाँ पर भी कोपलें फूट रही थी।

नीलम्मा बिना कुछ बोले आगे बढ़ गयी। लड़कों ने रामउजागर का सामान बाहर ले जाना आरम्भ कर दिया। रामउजागर असहाय-सा खड़ा देखता रहा। नीलम्मा ने उसका हाथ पकड़कर कहा, "चलो राम, पहले साइकेट्रिस्ट के पास चलेंगे।"

रामउजागर कुछ बोलने को हुआ तो उसके चेहरे से लगा कि वह अपने दिमाग के एकाएक खाली हो जाने की वजह से परेशान है। या तो वह सोच नहीं पा रहा है या सोचा हुआ कह नहीं पा रहा है।

नीलम्मा ने फिर कहा, "चलो।"

तब तक उसके बापू भी आ गये। उन्होंने उसे हाथ पकड़कर आगे बढ़ाना शुरू कर दिया। नीलम्मा ने धीरे-से उसका हाथ छोड़ दिया। और पीछे-पीछे हो ली। रामउजागर, नीलम्मा और सुबरन चौधरी टैक्सी में गये। नीलम्मा आगे बैठना चाहती थी पर उसे पीछे ही बैठना पड़ा। वह बिल्कुल नाक की सीध में देख रहा था। आँख मिलते ही उसके चेहरे पर परेशानी-सी उभर आती थी। वही कहना चाहकर भी न कह सकनेवाला भाव! बापू किसी सोच में थे। बीच-बीच में उन्हें झपकी आ जाती थी। ड्राइवर जरूर अपनी टैक्सी निरद्वन्द भाव-से चला रहा था। एक-आध बार उसने गाड़ी को इस तरह भी मोड़ा कि वे लोग पलटने को हो गये। एक बार तो रामउजागर के बापू का माथा सामने जा टकराया। उनके मुँह से निकला, "जरा सँभाल के भैया···।"

ड्राइवर ने तत्काल कहा, "खुद भी तो सँभल के बैठना चाहिए।"

रामउजागर ड्राइवर के बोलने के ढंग-से थोड़ा उचका। नीलम्मा ने उसका हाथ दबा दिया। उसी ने उसे समझाया, "भैया ऐसे क्यों बोलते हो···बड़े आदमी हैं।"

वह चुप नहीं रहा। फिर बोला, "मेमसाहब, मोटर में बैठना हर एक के बस का नहीं होता। कार तो कार की तरह चलेगी बैलगाड़ी समझ के बैठोगे तो चोट खाओगे।"

रामउजागर को फिर गर्मी आने को हुई। लेकिन नीलम्मा ने उसे सँभाल लिया। ड्राइवर बोले जा रहा था, "यहाँ क्या है? फौरेन कन्टरी में तो कारें राकिट की तरह चल दो···हैं। यहाँ हौले चलाने पर चलान होता है। इस मुलक के बन्दे बैठने को तो बैठ जात्ते हैं, पर अभी सौ साल सीक्खेंगे तब जाकर कार में बैठना आवेगा। बैलगड्डी जो पिच्छे बँधी है।"

नीलम्मा ने हल्के-से मुस्कुराकर पूछा, "आपने विदेश में भी गाड़ी चलायी है?"

"अजी ब्याह नहीं किता तो क्या शादी में भी ना गये? हमारे घर के कई बन्दे फौरेन कन्टरी विच हैं···ऐसी गड्डी चलौन्दे हैं कि हवा से बात करदी है। जिस

मुलक दा बन्दा गड्डी चढता है सान्नु वैसी ही गड्डी चलानी पडदी सी ।"

नीलम्मा को बात करना अच्छा लग रहा था । वह बोली, "जब हम लोग, यानी हिन्दुस्तानी, बैठे है आप हिन्दुस्तानियो की तरह क्यो नही चला रहे ?"

"ओय जी, सारी सडकाँ तो टुट्टी रहन्दी-सी है" गड्डी चलदी है तो कुदती है । हिन्दुस्तानियों को टुट्टी सडको की आदत होन्दी पई । हम तो हिन्दुस्तानी गड्डी चलान्दे पये । फौरेनवाली चलान्दे तो छत्त से टकरादे ।"

नीलम्मा को हँसी आ गयी । रामउजागर का तनाव भी कुछ कम हुआ ।

क्लीनिक आ गया था । तीनो लोग उतर गये । रामउजागर को उतरने मे थोडी देर लगी । तब तक नीलम्मा ने टैक्सी का भुगतान कर दिया । रामउजागर इधर-उधर देख रहा था पर गुमसुम था । कुछ सामान लड़को ने अपने साथ ले लिया था और कुछ टैक्सी मे था । रामउजागर के पिता ने सामान नीचे उतार लिया था । एक लडका वहाँ पहले से मौजूद था । उसने फटाफट सामान उठाकर वराण्डे मे रख दिया । डॉक्टर साहब के आने मे देर थी । उसके पिता सामान के पास बने रहे । नीलम्मा रामउजागर को लेकर अन्दर प्रतीक्षा-कक्ष मे चली गयी । रामउजागर को बैठाकर वह बाहर आयी और उस लडके को कहा, "अगर तकलीफ न हो तो तुम बापू को कही चाय-नाश्ता करा लाओ ।"

सुबरन चौधरी मना करते रहे । नीलम्मा ने उन्हे जबरदस्ती भेज दिया । उसने लौटते समय रामउजागर के खाने के लिए भी कुछ लेते आने के लिए कह दिया था ।

लौटकर नीलम्मा ने देखा, रामउजागर की बेचैनी बढती जा रही है । वह बैठा-बैठा बार-बार रुख बदल रहा था । उसके चेहरे पर कुछ कहने का भाव था । लेकिन हमेशा की तरह इस समय भी बात उसके कहने मे नही आ रही थी । होठो मे कम्पन होता था । जबान कुलबुलाती थी । आँखें फैलती थी । पर बात वही-की-वही बनी थी । वह तालू में कुछ चिपके होने की-सी परेशानी महसूस कर रहा था । नीलम्मा ने एक बार को सोचा उससे पूछे कि क्या बात है । लेकिन फिर चुप रहना ही उचित समझा । वह रामउजागर के ऊपर बोलने का दबाव और अधिक नही बढ़ाना चाहती थी । लेकिन रामउजागर की बेबसी ने उसके अन्दर एक अजब-सी हलचल पैदा कर दी ।

प्रतीक्षा-कक्ष के दूसरे कोने मे दो-तीन मरीज और थे । वे भी खामोश थे । नीलम्मा को हँसी आयी, डॉक्टर के मतब मे पहुँचते ही मरीज और तीमारदार सभी खुसुर-पुसुर बोलने लगते हैं या चुप रहते हैं । उनके होने से ज्यादा उनका न होना प्रमुख हो उठता है ।

रामउजागर के होठ एक बार फिर हिले । थोड़ा मुँह भी खुला । लेकिन बात नही बढी । नीलम्मा ने धीमे-से कहा, "डॉक्टर आने ही वाले हैं ।" बोलते ही नीलम्मा को कुछ ही देर पहले अपना सोचा याद आ गया । वह अपने ही ऊपर मुस्कुरा दी ।

नीलम्मा के बोलने के कारण रामउजागर के चेहरे पर उपकृत होने का-सा भाव आ गया था । नजरो मे सन्तोष की एक हल्की-सी लकीर खिंच गयी थी । नीलम्मा ने भी उसके इस भाव का संस्पर्श महसूस किया । कुछ रुककर पूछा, "माँ का क्या

हाल है ? तुम बहुत कमजोर हो गये ? लगता है अपना ध्यान ठीक तरह नही रखते।"

रामउजागर ने कमजोर होनेवाली बात पर हल्का-सा हुंकार भरा। फिर बोला, "माँ तुम्हें बहुत याद करती है। उस शाम को तुम्हारे साथ हुई बातो का जिक्र करती है···।" वह आगे भी कहना चाहता था पर सूझना बन्द हो गया था।

"तुम्हारी भाभी और बहन ?"

"हूँ:!" कहकर उसने उनके ठीक होने का भाव व्यक्त किया।

नीलम्मा ने घड़ी की तरफ देखा और बुदबुदायी, "डॉक्टर के आने मे अभी पाँच मिनट की देर है।"

रामउजागर ने भी अपनी घड़ी देखी। वह एक बार खडा हुआ, फिर बैठ गया।

"क्या बात है ?" नीलम्मा ने पूछा।

"कुछ नही···कुछ नही··" उसने कई बार कहा। वह फिर उठा और बोला, "तुम मुझसे नाराज हो···मेरा क्या कसूर है ? मैं ठीक होना चाहता हूँ। कोशिश करता हूँ। पर ऐसा लगता है कि खड़ा होते-होते फिसल गया। फिर शुरू से कोशिश करनी पडती है। पूरा वक्त इसी जद्दो-जहद मे गुजरा जा रहा है। नीलम्मा, मुझे तुम्हारा सहारा चाहिए।" उसका सांस फूल गया था।

नीलम्मा ने उसकी तरफ देखा। वह लाचारी और मायूसी मे डूबा था। नाबीना की तरह लाठी ढूँढ़ता हुआ महसूस हो रहा था। हर बार उसके हाथ आती-आती रह जाती थी। उसका मन हुआ वह उससे कह दे कि वह उसके साथ है। लेकिन लाचार चेहरे ने उसे कुछ भी कहने से बरज दिया। लाचारी से प्रभावित होकर कहना कहाँ तक ठीक होगा ? रामउजागर कुछ देर तक टकटकी बाँधे उसका चेहरा देखता रहा।

थोड़ी देर बाद वह फिर बोला, "नीलम्मा, मुझे माफ करना···हो सकता है मैंने कोई गलत बात कह दी हो। मेरा अपने ऊपर जरा भी कण्ट्रोल नही। मुझे अब लगने लगा है कि जो भी कहता या करता हूँ वह सब गलत हो जाता है !"

उस बार नीलम्मा को अपनी वाचा न खुल पाने की अनुभूति हुई। उसने तीन-चार बार गला साफ किया। होंठो पर जबान फेरी। फिर कहा, "राम, तुम ऐसी बातें क्यो सोचा करते हो ? अगर मैं तुमसे नाराज होती तो मैं उस अनजाने इलाके में तुमसे मिलने तुम्हारे गाँव जाती ? मैं चाहती हूँ तुम अपना आत्मविश्वास वापिस ले आओ। तुम फिर वही राम बन जाओ···मैं ही क्या, सब तुम्हें प्यार करेंगे। दया करना प्यार करना नही होता। प्यार का अधिकार बनाना पड़ता है। उस आत्म-विश्वास को तुम स्वयं ही वापिस ला सकते हो। उसके लिए तुम्हें किसी और की जरूरत नही। तुम अपने अन्दर के स्रोतो को खोलो···बन्द करके न बैठे रहो।"

"नीलम्मा, मै सोचता हूँ··" थोड़ा रुककर कहा, "क्या सोचता हूँ···मैं तो कुछ भी नही सोच सकता। सबकुछ उलट-पुलट हो गया। सबके सपने स्वाह हो गये। माँ के, बापू के···और···और···सबके। कारण मैं ही हूँ। मैंने ही उनकी आशाओं को बलवती किया और मैं ही अब अड़ियल-बैल की तरह सबकुछ लेकर बैठ गया। मेरी समझ मे नही आता मैं क्या करूँ ?"

नीलम्मा धीमे-से बोली, "डॉक्टर का इन्तजार !" और हँस दी।

डॉक्टर, बापू और उसका वह दोस्त लगभग साथ-ही-साथ अन्दर घुसे। डॉक्टर ने नीलम्मा को देखकर मुस्कुराते हुए कहा, "आप अपने मरीज को ले आइए।"

दो-तीन मरीज जो पहले से बैठे थे, उनके तीमारदार भी उन्हे अन्दर ले जाने को लपके तो डॉक्टर ने हाथ के इशारे से रोक दिया, "इनका एप्वाइंटमेंट पहले का है। वैसे भी स्टुडेण्ट्स का टाइम ज्यादा कीमती होता है।"

नीलम्मा रामउजागर को लेकर अन्दर चली गयी। उसने अपनी बात इसी वाक्य से शुरू की, "डॉक्टर, मि. राम की पूरी पृष्ठभूमि मैं आपको पहले ही बता चुकी हूँ। आप इनसे या इनके पिता से जो कुछ पूछना चाहे, पूछ लें। मैं बाहर जा रही हूँ। कहिए तो इनके पिता को भेज दूँ ?"

रामउजागर परेशान हो उठा, "नही नीलम्मा, तुम यही बनी रहो। मुझे घबराहट हो रही है।"

नीलम्मा ने उसे समझाते हुए कहा, "डॉक्टर साहब, तुमसे अलग से बात करना चाहते है। तुम्हें उनसे खुलकर बात करनी चाहिए। जब तुम सबकुछ इनको बता दोगे तभी तुम्हारा इलाज हो पायेगा। मै बापू को अन्दर भेजे देती हूँ।"

डॉक्टर रामउजागर की पीठ पर हाथ रखकर थपथपाते हुए बोले, "मिस नीलम्मा तुम्हारी शुभचिन्तक हैं। जो कुछ कह रही हैं ठीक कह रही हैं। हम लोग डॉक्टर और मरीज न होकर दोस्त है। तुम्हारी उम्र चौबीस-पच्चीस वर्ष होगी···मैं तुम से तीन-चार वर्ष ही बडा हूँगा। हम लोग अच्छे मित्र तो हो ही सकते हैं। जब हम-तुम बात कर चुकेंगे तब इन लोगो को बुलायेंगे।" नीलम्मा की तरफ देखकर कहा, "इनके पिता को आप तभी भेजे जब मैं कहूँ।" नीलम्मा चली गयी।

बापू लॉन मे थे और वह लड़का सड़क पर खडा किसी से बात कर रहा था। बापू के ऊपर युकेलिपटिस के पेड़ की छाया पड़ रही थी। उस साये के कारण वे और भी छोटे हो गये थे। नीलम्मा को लगा, वे गाँववाले सुवरन चौधरी के मुकाबले छोटे और सिकुडे हुए हैं। उनका वहाँ का खड़ापन यहाँ ढीलेपन मे बदल गया था।

नीलम्मा को बराण्डे मे आते देख बापू उसके पास चले आये। पेड के साये से निकलते ही वे दो अँगुल बढ गये। नजदीक आकर उन्होने पूछा, "रामउजागर कहाँ हैं?"

"डॉक्टर साहब बात कर रहे है।"

"अकेले ही।"

"ऐसी बीमारी मे मरीज से अकेले ही बात करना ठीक रहता है। जब तक मरीज डॉक्टर के सामने अपना मन नही खोलता तब तक डॉक्टर के लिए ठीक तरह इलाज करना सम्भव नही होता। आप घबराये नही···।"

"अकेले में वह बहुत जल्दी घबरा जाता है···।"

वह हँसकर बोली, "राम को इस समय घरवालो से ज्यादा डॉक्टर की जरूरत है।"

सुबरन चौधरी थोड़ा रुककर बोले, "मेमसाहब···।"

नीलम्मा बीच ही में बोली, "आपने स्वयं कहा था कि मैं आपकी बेटी की तरह हूँ···फिर बीच-बीच मे यह मेमसाहब क्यो कहना चालू कर देते हैं?"

उन्होने नीलम्मा की बात का जवाब नही दिया। अपनी बात कही, "डॉक्टर क्या बतायेगा ··मैं जानता हूँ उसका रोग। आखिर वह मेरा बेटा है। हजार बार समझाया, भगवान ने जिस जात मे पैदा कर दिया वही अपनी है। उसके लिए किस बात की शर्म! पता नही अपने दुख का कारण जात को क्यो बनाये घूमता है? दुनिया मे हजार बातें हैं दुख मनाने की। हजारो साल से यह जात है···लोग इसी में जिये हैं और इसी मे मरे है। अब तो फिर भी लोग पूछने लगे, तब तो हम लोगो की जिन्दगी एक मौत का कुँआ थी। भूख और जात दोनो की ही मार थी। भूख तो अभी भी मारती है। जात का कोडा भी पड़ता है पर झिल जाता है। मेहनत करेगा तो जात से आगे बढ जायेगा···लोग पीछे-पीछे घूमेंगे। दुख-सुख का मुकाबला हमेशा होता है। हम ही अपने करमों मे दुख को जिताते हैं। पहला जमाना होता तो सच बताइए, आप रामउजागर से बात करती? गांव मे ढोर चराता होता। इसका दुर्भाग्य कि मन बागी है और जात नीच!"

नीलम्मा उनकी बातों से दहल-सी गयी। उसने उस आवाज को उनके बहुत गहरे अन्तर से आता महसूस किया। उसने बहुत धीरे-से कहा, "जात चाहे कोई भी हो, मन बागी हो तो बागी ही रहता है। बगावत की आदत बन जाती है। खोकर भी मजा आने लगता है।"

"नही मेमसाहब···" सुबरन चौधरी बोलते-बोलते आप ही अटक गये। नीलम्मा आगे की बात का इन्तजार करती रही। वे बोले, "मैं बहुत तेज दौड़ा··· पैरों-तले की जमीन नही जाँची। पैरों-तले की जमीन पोली हो तो भला कोई दौड़ता है? धँसना तो था ही, सो धँस गया।"

नीलम्मा ने उनकी बात काटने की कोशिश की, "बापू, आप कुछ अधिक भावुक हो गये। जमीन तो जमीन ही होती है···वैसे भी रामउजागर के लिए आपकी दौड़ पोली जमीन पर दौडी जानेवाली दौड़ नही थी। वह तो सभी को ऊँच-नीच की इस मानसिकता से छुटकारा दिलाना चाहता है। अकेला पड़ गया। अनुकूल के साथ भी यही हो रहा है···वह भी अकेला पडता जा रहा है। उसके सामने भी यही समस्या है। वह लोगों को कैसे समझाये कि जो वे सोचते हैं वह गलत है···उनकी इन्सानियत को लांछित करता है। वे भी लांछित होते हैं जो अपने को नीच समझते हैं और वे भी, जो दूसरो को नीच समझते हैं। इस शब्दावली में सोचना ही नीचता है। कई बार रामउजागर की तरह सोचनेवाला आदमी उत्साह में आगे निकल जाता है। इतना आगे कि लोग उसे पकड नही पाते। आगे पहुँचकर वह दूर-दूर तक अपने को अकेला पाता है। उसकी समझ में नही आता कि वह क्या करे? किसके लिए करे? ऐसे समय मे धैर्य ही एकमात्र सम्बल रह जाता है। अगर धैर्य नही रहता तो बहुत-सी ऐसी बातें सूझने लगती हैं जो वास्तव में होती नही···हम समझ लेते हैं। रामउजागर भी इसी का शिकार है···न जमीन पोली है न सख्त!"

मुबरन चौधरी को अपनी तरफ देखते हुए नीलम्मा को लगा कि वह शायद ज्यादा असम्बद्ध बातें बोल गयी। ऐसी बातें कह गयी जो उसे नही कहनी चाहिए थी। हो सकता है बापू को समझने मे कठिनाई हुई हो। वे धीमे-धीमे बोले, "मेरे लिए तो ये सब बडी-बड़ी बातें हैं। मैं तो यह जानता हूँ कि बातें असलियत को ज्यादा नही बदल पाती। कपड़े मे एक छोटा-सा छेद हो जाता है, धीरे-धीरे वही छेद भम्भाड़ में बदल जाता है।"

नीलम्मा की समझ में 'भम्भाड़' शब्द नही आया। वह चुप रही।

बापू बोलते जा रहे थे, "यह मेरी गलती है'''मुझे वह छेद या तो शुरू मे नजर नहीं आया या उसे पहचानने की मुझ मे अक्ल नही थी। अब जब नजर आया तो उँगली डाल-डालकर उसे इतना बड़ा बना दिया कि अब कुछ नही हो सकता।"

नीलम्मा की नजर दूसरी तरफ गयी। स्टेशन से जो लड़के अलग से चले थे वे अब पहुँचे थे। सडक पर खडा वह लड़का भी उन्ही मे जा मिला था।

नीलम्मा को एकाएक याद आया तो उसने पूछा, "आपने चाय-नाश्ता किया या नही ?"

उन्होंने 'हाँ' भरते हुए कहा, वैसे तो ये लड़के मुझे रामउजागर का पिता समझते हैं पर पैसे देते वक्त छोटा बना देते हैं। उस बच्चे ने पैसे ही नही देने दिये। क्या करता, अपने को छोटा मानकर चुप लगा गया।" फिर रुककर बोले, "लगता है इन सबने अपनी जबान बदलकर अंग्रेजी जबान लगवा ली है। इन बेचारो को कोशिश करके मुझसे हिन्दी में बात करनी पड़ती है। बीच-बीच में गिटपिट करने लगते हैं। फिर ध्यान आता है, अरे यह तो गाँव का आदमी है, तो फिर सँभलकर हिन्दी मे बोलने लगते हैं।"

नीलम्मा हँस दी।

रामउजागर को करीब आधा घण्टा लगा। डॉक्टर ने किसी को अन्दर नही बुलाया। रामउजागर डॉक्टर साहब के साथ ही बाहर आया। जो लड़के बाहर इकट्ठा थे वे सब भी आ गये। लेकिन डॉक्टर ने नीलम्मा को आने का इशारा किया। नीलम्मा सुबरन चौधरी को भी साथ लेती गयी। लडके रामउजागर को घेरकर खड़े हो गये। रामउजागर थक गया था। वह कुर्सी पर बैठ गया। पहले के वे तीनो मरीज अभी तक कोने मे बैठे थे। इस बीच उन्होने एक भी वाक्य नहीं बोला था। उनके तीमारदार अलबत्ता उनसे बीच-बीच में पानी-पेशाब के लिए पूछ लेते थे। वे या तो बोलते नही थे या फिर गर्दन हिला देते थे। उनके चेहरों पर रामउजागर से भी ज्यादा रिक्तता और ठण्डापन था।

रामउजागर पहले तो चुपचाप बैठा रहा। फिर उसने दोस्तों के बारे मे थोडा-थोड़ा पूछना शुरू किया। उसकी बातो से लग रहा था कि कोई बड़ा-बूढ़ा एक लम्बे अर्से के प्रवास के बाद गाँव लौटा हो और याद कर-करके पुराने लोगो के बारे में जानकारी प्राप्त कर रहा हो। कुछ ऐसी-सी हताशा थी कि पता नही आज के बाद फिर कभी आना हो या न आना हो'''रात कहाँ हो जाये ?

उसके मित्र भी उसके साथ बहुत स्लो-पेस पर चल रहे थे। लेकिन उनमें रामउजागर को लेकर तनिक-सी भी निराशा नहीं थी। बीच-बीच में हँसी-मजाक करके उसकी तबीयत बदलने की भी कोशिश करते थे। उनकी मजाक को वह उसी रूप में तो नहीं ले पाता था, जैसे पहले कभी लिया करता था। पर उसके चेहरे पर मुस्कुराहट का एक हल्का-सा अहसास साये की तरह जरूर आ जाता था।

नीलम्मा और सुबरन चौधरी बाहर निकले तो गम्भीर थे।

बाहर आते ही उन दोनों ने अपने-आपको काफी हद तक सामान्य बना लिया। नीलम्मा काफी उत्साह भाव के साथ आयी। उन लोगों के पास आकर बोली, "आप लोगों को यह जानकर खुशी होगी कि राम अब हम लोगों के साथ रहेगा। अगला सेमिस्टर आप लोगों के साथ ही गुजरेगा। राम को अब पीठ कसकर काम में लग जाना है।" सबने ताली बजा दी।

रामउजागर ने पहले सुबरन चौधरी की तरफ देखा। उनका चेहरा प्रतिक्रियाहीन और ठण्डा था। फिर एकाएक बोला, "नहीं, मैं घर जाऊँगा।"

वह बुरी तरह घबरा गया था। नीलम्मा ने उसे सामान्य रूप में लेते हुए, समझाने के ढंग में कहा, "राम, तुम इतना घर रह आये···अब कुछ दिन हम लोगों के साथ रहो। आखिर हम लोगों का भी तो तुम पर हक है। अपने इन दोस्तों की भावना का भी तो ध्यान करो। अभी कुछ दिन बापू भी तुम्हारे साथ यहीं रहेंगे। गेस्टहाउस में रहना और बीच-बीच में हॉस्टिल हो आया करना।"

रामउजागर ने फिर बापू की तरफ देखा। उनकी नजर दूसरी तरफ थी।

"घर का काम कौन देखेगा?"

"उसका इन्तजाम बापू ने कर दिया है।" नीलम्मा थोड़ी दबंग आवाज में बोली, "राम, तुम्हें यह चेलेंज स्वीकार करना चाहिए। इतने लोग तुम्हारे वापिस लौट आने की प्रतीक्षा में हैं। तुम उन सबकी भावनाओं का ख्याल किये बिना वापिस लौट जाना चाहते हो! तुम्हें अपने लिए नहीं तो अनुकूल और अनुकूल जैसे अनेक छात्रों के लिए तथा उन मित्रों के वास्ते लौटना होगा जो तुम्हें एक साहसी और सम्भावनाशील मित्र समझते रहे हैं। गाँव में बहुत रह लिये···अगर तुम बिना डिग्री लिये खाली हाथ लौटे तो न तुम्हें गाँव ही मिल पायेगा और न ये शहर।"

रामउजागर उठकर अपने बापू के पास तक गया और पूछा, "आप क्या मेरे साथ यहाँ रहेंगे?" उन्होंने उसी दिशा में देखते हुए गर्दन हिलाकर 'हाँ' कर दी।

रामउजागर ने असमंजस में भरकर पूछा, "वहाँ का काम?"

"हो जायेगा।" उन्होंने अनचीन्हे स्तर पर आवाज को ले जाकर धीमे-से कहा।

रामउजागर लौटकर चुपचाप बैठ गया। अब वह बिलकुल खामोश था। नीलम्मा ने सबको वापिस चलने का इशारा किया। उनमें से एक के कान में कहा कि वह जाकर गेस्टहाउस में एक कमरा बुक करा दे। एक-एक कर सब चले गये।

लौटते हुए रामउजागर ने नीलम्मा से पूछा, "डॉक्टर ने क्या बताया···ठीक हो जाऊँगा?"

"कुछ नहीं···" वह हँसकर बोली, "तुम बिल्कुल ठीक हो। बस थोड़ी-सी चूड़ियाँ कसी जानी है।"

रामउजागर बिल्कुल सुर मे नही था। वह उसकी बातो के साथ सगत नही कर पा रहा था। वह और गम्भीर हो गया। नीलम्मा ने अपनी बात को किसी तरह की गलतफहमी पैदा होने से पहले ही स्पष्ट कर देना उचित समझा, "शायद तुम गलत समझ गये। मेरा मतलब यही था कि डॉक्टर की देखरेख मे रहते हुए तुम्हे तत्काल काम मे जुट जाना चाहिए। डॉक्टर का भी यही ख्याल है कि ऐसा करने से तुम अपनी सहजता को वापिस पा सकते हो। अकर्मण्यता कभी-कभी मनुष्य को पूरी तरह सुरहीन बनाकर अँधेरे गर्त मे लटका देती है। जैसे भी हो तुम्हे उसमे बचना है।"

रामउजागर के बापू खामोश थे। उनकी समझ मे नही आ रहा था कि वे क्या कहे।

रामउजागर ने अपने बापू की तरफ देखकर धीरे-से कहा, "मेरे बापू गेस्टहाउस का खर्चा नही उठा पायेंगे!"

"उसकी चिन्ता तुम्हें नही करनी है। बापू हमारे मेहमान हैं। जब तक अपने को तुम हॉस्टिल लौट जाने लायक नही बना लोगे तब तक बापू को तुम्हारे साथ गेस्टहाउस मे रहना पड़ेगा। जितनी जल्दी तुम हॉस्टिल लौट आओगे उतनी ही जल्दी बापू की छुट्टी हो जायेगी। बापू को मुक्त करना तुम्हारे हाथ में है।"

रामउजागर बिल्कुल खामोश था। उसके बाद नीलम्मा ने भी कोई बात नही की। बापू अन्दर-ही-अन्दर गहरी असुविधा अनुभव कर रहे थे। वे अन्दर की किसी भी बात को बाहर नहीं आने दे रहे थे।

गेस्टहाउस में कमरा मिलने मे इस बार और भी दिक्कत हुई। उन दिक्कतों की प्रकृति भी लगभग वही थी जो कुछ दिन पूर्व नीलम्मा ने बावनराम को कमरा दिलाने के समय अनुभव की थी। इस बार डीन ने बावनराम के एक दिन के प्रवास को कमरा न देने का आधार बनाया था। वह नीलम्मा को बार-बार यही समझाना चाह रहा था कि गाँव के लोग इस तरह के कमरो मे ठहरने के आदी नहीं होते। कमरो से सलग्न गुसलखानों मे जो सीटें लगी है उनको इस्तेमाल करने मे ये लोग असुविधा अनुभव करते हैं। उसे इन लोगो के स्वास्थ्य का पूरा-पूरा ध्यान था। हम लोगो का पेट एक दिन साफ नही होता तो दिन-भर कैद-सी मालूम पड़ती रहती है। इन लोगों को तो आदत खुले में जाने की होती है। यूरोपियन सीट्स पर बैठकर करना तो बड़े-बड़े शहरियो को नही आता। सीट पर ऊपर पाँव करके बैठते है। छींटे आते हैं, खँरोच पड जाती है। सीट गन्दी होती है सो अलग। तुम ऐसा करो, उन्हे कही और ठहरवा दो। तुम कहो तो मैं किसी से कह दूँ। वह अपने पास ठहरा लेगा। इनकी बिरादरी के भी कई लोग यहाँ होंगे। हँसते-हँसते उसने यह भी कह दिया, डनलप बैड गर्मियो मे इन्हे गर्म लगता है सर्दियो मे ठण्डा। इन लोगो को उन पर लेटना, लेटना-सा नही लगता। लगता है जैसे दलदल मे फँस गये हो। लीनन

वगैरह पर भी कभी-कभी पाँव के ऐसे दाग पड जाते हैं कि छुड़ाये नही छुटते।

नीलम्मा को पूछना पड़ा, "सर, आप इन लोगों के बारे में इतने विस्तार से कैसे जानते है ? आप तो परिवार की तरफ से काफी सम्पन्न और शहरी हैं। शायद ही इस तरह का कोई आदमी आपके परिवार में हो ?"

डीन तत्काल बोला, "तुम भी क्या बात करने लगी ! मेरा मतलब उन पर आक्षेप करने का कतई नही था। मैने तो सामान्य बात कही। वैसे ये सब बातें कौन नही जानता। यह मुल्क ही गरीब, गन्दे और अनपढ लोगो का है।"

"सर, ऐसा मत कहिए। आप जैसे लोग भी तो इस मुल्क में ही रहते हैं जो इस गरीबी और गन्दगी की असलियत को दूर रहकर जानते है। यही कारण है कि आप इस कीचड से कमलवत बाहर है।"

डीन थोड़ा चौका, "तुम्हारा मतलब ?"

"कुछ नही, केवल एक बात कही !"

डीन की समझ में नही आया कि वह क्या कहे। फिर भी वह बोला, "तुम चाहती क्या हो ? नेतागिरी और राजनीति का जज्बा रिसर्च-स्कॉलर्स को बरबाद कर देता है। जल्दी-से-जल्दी काम निबटाकर तुम्हे दफा हो जाना चाहिए।"

"यह तो सर आप रिसर्च-स्कॉलर्स की भलाई की ही बात कर रहे हैं। लेकिन राजनीति जीवन से बाहर कहाँ है ? इससे कौन बचा है ? वैसे न तो यह कोई नेतागिरी है और न पालिटिक्स। एक बीमार साथी की सहायता है। घर से इतनी दूर यहाँ पर हम ही लोग आपस में एक-दूसरे के काम आ सकते हैं। घरवाले तो बैठे नही जो हाथ पकड़कर सहारा दे देंगे। आज वह बीमार है, कल इलाज कराकर फिर मुख्य धारा के साथ हो जायेगा। आप तो छात्र-कल्याण को ही सर्वोपरि मानते हैं'''आप यह भी जानते हैं कि रामउजागर को ऐसी बीमारी नही जिसे हॉस्पिटल में रखकर ठीक कराया जा सके। उसको हॉस्टिल में भी नही रखा जा सकता। इस वर्ग को सरकार ने भी हर तरह की सुविधाएँ देना स्वीकार किया हुआ है'''हम लोग उससे बाहर तो नही।"

डीन एकाएक उखड़ गया, "इतनी खूबसूरत और महान संस्था इन्ही लोगो के कारण रसातल को जा रही है। सारे शैक्षिक-स्तरों को इन्ही के कारण मिट्टी में मिलाया जा रहा है। यह तो यहाँ के योग्य और समर्पित अध्यापकों तथा तेज छात्रों का बूता है कि साख को गिरने नही दिया जा रहा। वरना तो ये लोग इसे चाट गये होते।"

नीलम्मा ने आवाज को थोड़ा उठाकर कहा, "लेकिन मैं तो इन सब बातों के लिए जिम्मेदार नही। जो कुछ स्वीकृत है और लागू है, मैं तो उसी को बेहतर इस्तमाल करने का प्रयत्न कर रही हूँ। आप इन लोगों का दाखला बन्द कर दीजिए मैं कदापि आपके पास नही आऊँगी।"

डीन भी थोड़ा तेश में आ गया, "इसी को पालिटिक्स कहते हैं। एक गलत तार को पकड़ लेना और उसी को तुनतुना-तुनतुनाकर सही सिद्ध कर देना। इतने लड़के यहाँ रहते हैं, सबकी कोई-न-कोई समस्या होती है'''तुम्हें यहाँ एम. सी. मिले हैं, समस्याओं का समाधान करने के लिए ?"

वह हँस दी, "मुझे ये लोग भी इन्सान लगते हैं'''मुल्क के आधिकारिक नागरिक

भी हैं। आप जैसे महान शिक्षकों से शिक्षा पाने का सौभाग्य भी इन्हे प्राप्त है !"

डीन कुर्सी से खड़ा हो गया, "अब मैं आश्वस्त हो गया कि इस सस्थान से पी-एच. डी. की डिग्री प्राप्त करना तुम्हारे बस का काम नही। तुम्हारा दिमाग काम मे न रहकर दूसरी चीजो मे घूमा करता है।"

"मैं समझती हूँ, डीन की हैसियत से यह आपका एक आधिकारिक वक्तव्य नही है···?"

"तुम तो बात का बतंगड़ बना रही हो।"

"अगर आपको ऐसा लगता है तो मैं खामोश रहती हूँ। आप कमरा दिला दीजिए। मैं चली जाती हूँ। एक बुजुर्ग और बीमार का प्रश्न है। यह देश तो उम्र को पूजता है। अतः बुजुर्ग मेरा हो या आपका, अगर वह सड़क पर बैठा हो तो शर्म तो आयेगी ही।"

डीन झुँझलाहट में बोले, "मैं कभी ऐसी महिला छात्र के सम्पर्क मे नही आया जो इतनी जिद्दी हो। खैर, मैं केवल तीन दिन के लिए कमरा दिये देता हूँ···तब तक आप कोई दूसरा इन्तजाम कर लीजिए। यह गेस्टहाउस है, मेण्टल एसाइलम नही।"

नीलम्मा का मुँह खुलता-खुलता रह गया। उसने कागज उठाया और चल दी। डीन ने रोककर कहा, "अगर कमरे मे कोई टूट-फूट हुई तो तुम जिम्मेदार होगी। तुम्हारे वजीफे से काटा जायेगा।"

"वैसे तो सर, यहाँ सब लोग सस्थान द्वारा बनाये गये भवनो मे रह रहे हैं। क्या सब टूट-फूट का भुगतान अपनी जेब से कर रहे है? आप घबरायें नही, अव्वल तो टूट-फूट होगी नही और अगर होगी तो संस्थान के छात्रो से दस-दस पैसे इकट्ठा करके भुगतान कर दिया जायेगा।"

"जितना दिमाग तुम इसमे लगा रही हो, इतना अपनी थीसिस मे लगाओ। यह समझ लो, तुम लडकी हो, इन मामलो मे ज्यादा पडोगी तो···"

आगे के शब्द सुने बिना नीलम्मा तेजी से बाहर निकल गयी।

वे लोग गेस्ट हाउस के बाहर बराण्डे मे बैठे इन्तजार कर रहे थे। नीलम्मा सीधे काउण्टर पर गयी। कमरे का नम्बर लिया और उन लोगो को पीछे आने का इशारा करके कमरे की तरफ बढ गयी। उसके कदम तेजी के साथ बढ रहे थे। उसे तनिक भी ध्यान नही था कि वे लोग चले भी या नही। एकाएक ध्यान आया तो वह रुक गयी। उसने देखा कि वे लोग काफी पीछे हैं और सामान लेकर आ रहे है। उसके चेहरे पर ग्लानि का भाव उभर आया। वह तेजी से लौट पडी। लपकती हुई उन लोगों के पास गयी। रामउजागर काफी पस्त था। थोड़ा सामान उसने अपने हाथो मे लिया हुआ था। उसने उसके हाथों से सामान ले लिया। कुछ सामान बापू के हाथो से भी लेना चाहा। वे हँसकर बोले, "हम लोगो को तो मनो सामान लादकर चलने की आदत होती है। यह तो कुछ भी नही।"

वह चुपचाप उनके साथ-साथ चलने लगी। गलियारे से गुजरते हुए रामउजागर

ने पूछा, "बहुत देर लग गयी ?"

"हाँ।" उसके बाद वह कुछ नही बोली।

कमरे के सामने जाकर वह रुकी तो और लोग भी रुक गये। उसने चाबी लगाकर दरवाजा खोला। उन दोनो को अन्दर ले गयी।

अन्दर जाकर रामउजागर ने पूछा, "हम यहाँ रहेंगे ?"

नीलम्मा ने गर्दन हिला दी।

रामउजागर के बापू पहले तो दरवाजे पर ठिठके, फिर अन्दर आकर चुपचाप खडे हो गये।

नीलम्मा ने कहा, "बैठिए।"

"इसी कमरे मे रहना होगा ?"

नीलम्मा ने पहले तो उनकी बात का जवाब गर्दन हिलाकर ही दिया, फिर पूछा, "राम ने भी यही सवाल किया और आपने भी। क्या यह कमरा आपको पसन्द नही ?"

"नही, ऐसा नही है। मैंने तो यूँ ही पूछ लिया था। ऐसे कमरो मे तो बडे-बडे लोग ठहरते होंगे।"

नीलम्मा ने उन्हें आराम से बैठने के लिए कहा। वे पहले तो इधर-उधर देखने लगे। नीलम्मा ने कुर्सी आगे सरका दी। वे कुर्सी के बिल्कुल किनारे पर टिक गये।

"आराम मे बैठिए !"

वे थोड़ा और पीछे खिसक गये।

रामउजागर ने कुछ देर तक सोचने के बाद कहा, "लगता है कमरे के लिए काफी परेशानी उठानी पडी।"

नीलम्मा अभी तक सामान्य नही हुई थी। वह और अशान्त हो उठी। बोली, "पता नही यह सब क्या हो रहा है ? बस होता चला जा रहा है। मुझे लगता था तुममे एक आग है जिसके सहारे उन सबको उनकी सीमाओ से बाहर लाया जा सकेगा जिनके चारो तरफ कृत्रिम लक्ष्मण रेखाएँ खीच दी गयी हैं···या स्वय खीच ली हैं। लेकिन वह आग सभकी और ठण्डी पड गयी। धीरे-धीरे समझ मे आता जा रहा है कि हमारे यहाँ आत्मसम्मान के साथ रहने के अधिकार कितने अनारक्षित हैं। एक औरत औरत होने की वजह से सीमा के बाहर नही जा सकती। जो आज तक जमीन पर सोता रहा हो उसे खाट पर बिस्तर लगाकर सोने का अधिकार प्राप्त करने के लिए दूसरे जन्म की प्रतीक्षा करनी पडती है। हम लोग भी अपनी सीमाओ को सुरक्षित रखने में अधिक रुचि लेते हैं। हर गड्ढा हम लोगो के लिए आरामगाह हो जाता है। यथास्थिति हम पर इतना हावी है कि उससे बाहर झाँकने को भी हम आपातकाल का उल्लंघन मान बैठते हैं। अनुकूल को भी तुम्हारा सस्पर्श मिला था··· वह भी अपने अन्दर चिंगारी पनपाये हुए है। लेकिन मुझे लगता है कि हम राष्ट्र-स्तर पर ही अपने अन्दर की आग को गहरे जल मे बुझा चुके हैं···वह फिर कभी प्रज्वलित हो पायेगी या नहीं, यह कौन कह सकता है ?"

वे सब लडके भी आ गये थे। उनको देखकर बोली, "आप लोग कहाँ रह गये थे ?"

"रास्ते में ही थोड़ी देर हो गयी।" एक लड़के ने झिझकते हुए कहा।

नीलम्मा पहले हँसी, फिर बोली, "यही तो विडम्बना है कि सब लोग रास्ते में ही अटक जाते हैं!" फिर कहा, "राम आपका क्लास-फेलो है। देख-भाल करना आप लोगों की जिम्मेदारी ज्यादा है। मैं तो एक इन्सानी रिश्ते से इनके साथ जुड़ी हूँ। इसी उम्मीद में कि खोये हुए राम को वह फिर अपने अन्दर से ढूँढ निकालेगा। आप लोग कम-से-कम यह तो देखें कि निर्णायक स्थिति में बैठे हुए लोग किस प्रकार व्यवहार करते है और आपके एक साथी को क्या समझते है। अगर हम नौजवान लोग अपने को व्यवहार और दुर्व्यवहार की कसौटी नही बनायेंगे और उसके प्रति अपनी सवेदना को विकसित नही करेंगे तो वह वक्त कभी नही आयेगा जब हम आपस मे एक-दूसरे को इन्सान की तरह देखने और समझने की स्थिति मे हो सकेंगे। अपने अन्दर इस चेतना को जाग्रत करनेवाले हम स्वय ही हैं···दूसरा कोई नही। लेकिन हम दुर्व्यवहार करने और सहने के आदी होते जा रहे है। घृणा की समीकरण हमे ज्यादा प्यारी है। दूसरो पर उँगली उठाकर अपने आपको विशिष्ट समझने के अलावा हमारा कोई काम नही रह गया। आत्मीयता नाम की चीज चरमराकर दम तोड़ रही है। अनुकूल को उन लोगो ने मारा, हम तटस्थ बने रहे! क्योकि वह हमारी परम्परागत घृणा की परिधि के अन्तर्गत आता है। अगर हम उसे आत्मीयता की दृष्टि से देखेंगे तो हम इन्सानियत के नजदीक आ जायेंगे, उन लोगो से दूर हो जायेंगे जिनकी सत्ता के गलियारो मे पैठ है।"

रामउजागर ने उचककर पूछा, "अनुकूल को उन लोगो ने मारा। उनकी यह मजाल···!" उसकी आँखो मे क्षण-भर के लिए वही लावा फूट आया जो पहले कभी था।

"हाँ, उनका कहना है कि हम दूसरा रामउजागर नही पैदा होने देंगे।"

"मुझे अब तक किसी ने नही बताया।"

लड़के चुप थे। उन्होने इस सबकी आशा नही की थी। फिर भी एक लड़का हिम्मत करके नीलम्मा से बोला, "आप सीनियर है · जो कह रही है ठीक कह रही हैं। लेकिन ज्यादातर छात्र इसलिए आते है कि जल्दी पढाई खत्म करें और अपना कैरियर बनायें। आपकी बात और है, आपको इसमे सुख मिलता है।"

नीलम्मा को देखकर लगा, वह धक्क-से रह गयी है। थोड़ा सँभलकर रुँधे गले से कहा, "आप सँभाल ले, मैं कुछ नही करूँगी।" फिर बोली, "सुख तो आप सबको दिख गया···वह यातना नही दिखी जो मैं निरन्तर भोग रही हूँ। लेकिन उसका क्या कहना! यातना सदा मनुष्य की अपनी होती है। हो सकता है बाद मे चलकर वही अपना सुख भी हो जाती हो···"

बापू की समझ में यह सब कुछ नही आ रहा था। वे ठगे-से बैठे थे। यह क्या हो रहा है? कुछ देर पहले कही गयी सब बातें नीलम्मा के चेहरे पर मौजूद थीं। अन्तर इतना ही था कि उतरती धूप की तरह सिमटती जा रही थी रामउजागर बेचैन हो उठा था। क्या करे? उसके पूरे वजूद से लग रहा था कि अपने उस गड्ढे से निकलने के लिए उसके अन्दर एक उबकास-सी भरती जा रही है।

थोड़ी देर तक उन सबके चेहरे उसी तरह चित्रलिखे-से रहे। न कोई भाव

आया, न गया। नीलम्मा ने ही ठहराव को तोड़ा, 'आप लोगों ने न अभी तक चाय पी है न नाश्ता किया है। बापू भी सोच रहे होंगे कि यह कितनी जबानजोर लड़की है। मैं अभी इन्तजाम करके आती हूँ। तब तक आप लोग आराम करें'''बापू निवटना चाहें, निवट लें।"

एक दूसरा लड़का बोला, "नही, मैं जाता हूँ! आपने तो सवेरे से एक मिनट भी आराम नही किया।"

तीसरा लड़का बोला, "यह बात तो हम लोगों को पहले ही सोचनी चाहिए थी।"

नीलम्मा तपाक-से हँस दी, "यह बात आप नही सोच सकते थे, मैं ही सोच सकती थी। महिला होने का यह अभिशाप भी है और उपलब्धि भी। मरते-मरते भी वह यही सोचती है कि कही किसी का पेट न खाली हो।" जोर से हँसी और बोली, "दरअसल हम अपने लिए भी और औरों के लिए भी अन्नमय होती हैं! इसीलिए अन्नपूर्णा हैं!"

इस बात का समर्थन बापू ने प्रशंसा-भरी नजर से किया। वह लडका चला गया। नीलम्मा भी उठ खडी हुई। वह सब कुछ रामउजागर के चेहरे पर उतर आया। बात चेहरे से आगे बढ़े, उससे पहले ही नीलम्मा वहाँ से चल दी।

दस

सुबरन चौधरी तीन हफ्ते से ज्यादा नही रह सके थे। उनको कमरे में इतने दिन रखने के लिए डीन के पास कई बार दौड़ना पड़ा था। बापू इस बात का अतिरिक्त ध्यान रखते थे कि सब वस्तुएं यथास्थान रहें। न तो उन चीजों की स्थिति में किसी तरह का परिवर्तन हो और न गन्दगी बढ़े। पहले दिन तो रामउजागर के मना करते-करते उन्होंने कमरे को बुहार दिया था। उसने बहुत रोका कि जमादार आयेगा, वही साफ करेगा। उन्होंने तनिक नही सुना और बाहर से झाड़ू उठा लाये।

बापू बोले, "जमादार ही क्या करेगा'''वह भी तो भाई ही है। घर पर रोज गोबर नही उठाते? आदमी का धर्म है, जहाँ रहे वहाँ सफाई रखे। नहीं तो दुनिया ही भिनक जायेगी।"

रामउजागर को गुस्सा भी आ गया था, "यहाँ का यह तरीका नहीं। यह गेस्ट हाउस है। इसका काम है मेहमानों को आराम देना। यहाँ सफाई करने से लेकर खाना बनाने तक, बहुत-से आदमी इसीलिए काम करते हैं।"

बापू की समझ में उसकी बात बिलकुल नही आयी। वे लगातार यही कहते रहे, "जहाँ रहो, साफ करो। साफ करोगे तो सुखी होगे। हममें से ही लोग नौकरी करते हैं। अपना काम भी कर लेंगे तो कौन शान में बट्टा आ जायेगा।"

रामउजागर भुनभुनाता रहा था। वे जमकर सफाई करते रहे थे। आखिर मे उन्होने यही कहा कि अगर मैं इतना भी नही कर सकता तो खाली बैठा-बैठा क्या करूँगा ?"

नीलम्मा के सामने भी यह मसला रखा गया। नीलम्मा हँस दी। रामउजागर उसके इस तरह हँस देने मे थोडा हतोत्साह हुआ लेकिन नीलम्मा ने बापू को ही समझाया।

"बापू, आपका मन नही लगता तो सवेरे-शाम घूम आया करिए। कमरा तो साफ हो ही जायेगा। वैसे अपना काम करने मे कोई हर्ज नही। पर आपको अपने बेटे की बात और उसकी भावनाओ का भी तो ध्यान रखना पड़ेगा।"

बापू चुप हो गये। अगले दिन सवेरे उठे और नहर के किनारे-किनारे दूर तक चले गये। वही जगल-दिशा से भी निबट लिये। यह उनकी रोज की दिनचर्या-सी हो गयी। लौटते समय खेतों मे हल चलता देखकर उन्हें अपने रँभाते जानवरों की याद आती थी। घर ज्यूँ-का-त्यूँ उनकी नजरो के सामने उतर आता था। उस दिन उनका गला भर आया। हल पकड़ने के लिए उनकी मूँठ खजलाने लगी। लेकिन इस बात का उन्होने किसी से जिक्र नही किया।

शुरू-शुरू मे तो रामउजागर को रोज डॉक्टर के पास जाना पड़ता था। बाद मे वह तीसरे दिन जाने लगा था। फिर हफ्ते की बारी बँध गयी थी। उनकी दवा से उसे काफी तेजी से फायदा हो रहा था। वह अपनी बहुत-सी समस्याओं पर अपने आप निर्णय लेने लगा था। नीलम्मा रोज आती थी और पूछ जाती थी कि डाक्टर ने क्या बताया ? क्या खाने को कहा ? जब वह ठीक होने लगा तो नीलम्मा का आना भी कम होता गया। इधर वह कई दिन से नही आयी थी।

रामउजागर ने हँसना भी शुरू कर दिया था। मजाक भी कर लेता था। लाइब्रेरी मे जाकर किताबे भी उलटता-पुलटता था। क्लास मे दिये गये साथियों के नोट्स भी देख लेता था। बीच-बीच मे बापू से भी कहता था कि अब आप चले जाइए। अब मैं ठीक हो रहा हूँ। घर पर बहुत नुकसान हो रहा होगा।

बापू उसकी बात सुनकर शशोपंज मे पड जाते थे। क्या करें? जायें या न जायें? जाते ही तबियत ज्यादा खराब हो गयी तो ? अन्त मे वे यही कहकर टाल देते थे, "दो-चार दिन और देख लेता हूँ···वैसे भी मेरा यहाँ कब-कब आना होता है। कौन जाने अब का आया फिर कभी आ पाऊँगा या नही ?"

रामउजागर और बापू के दिमाग मे नीलम्मा का आना बन्द कर देना अलग-अलग तस्वीरें बनाये था। बापू सोचते थे, नीलम्मा उस दिन की बातों से क्षुब्ध हो गयी है। रामउजागर के दिमाग मे बहुत-सी बातें घूमती थी। जब वह उन बातो से घिर जाता था तो गोली खाकर सो जाता था। उठने पर सुस्ती जरूर रहती थी पर दिमाग उस सीमा तक उद्वेलित न होकर अपेक्षाकृत शान्त रहता था, बल्कि सोने के कारण मिला यह वक्फा उसके दिमाग को पहलीवाली बातो के खिलाफ नये-नये तर्कों मे लैस कर देता था।

उस बीच बापू अलबत्ता खाली बैठे बोर होते थे या घूमने निकल जाते थे। परिसर मे बने भवनो को देखकर उन्हें अच्छा लगता था। इसका सौवा अश भी गाँवों पर खर्च हो तो उनकी शक्ल निकल आये। पर इस बात को वे मुंह से नही निकालते थे। सोचते थे, कौन करेगा ? नर्सरी में लगे फूलों को भी वे बडे मुग्ध भाव से निहारते थे। उन फूलो को देखकर यही लगता था कि शहरवाले चाहे आदमी को आदमी न समझते हों पर फूलो को फूल खूब समझते है। गांवो में ज्यादा खिले, कलकतिया खिल गये या देसी ! पर यहाँ तो गुलावों की इतनी तरह की बास और किस्मे हैं कि इतनी तो धान की भी नही होती। उन्हे फूलो के पास जाने मे डर लगता। किसी ने टोक दिया तो ? बस एक बार एक गुलाब का फूल तोडा था। ले जाकर रामउजागर को दे दिया था। फूल लेकर बहुत खुश हुआ था। वह खुश हुआ तो बापू भी काफी देर तक खुश बने रहे। कई बार उनका मन होता था कि वे किसी से उन फूलो के बारे मे बातें करे। पूछे-ताछे। लेकिन जब यह बात उनके दिमाग मे आती थी तभी एक दूसरी जुड़वां बात आ जाती थी। शहरवालों का स्वभाव मातबर नही होता। अभी खुश है, देखते-देखते बिखर जायेंगे।

सुबरन चौधरी जब तक फूल और भवन देखते रहते थे तब तक भूले रहते थे। लौटने लगते थे तो घर भी याद आने लगता था और रामउजागर की चिन्ता से आ भिडता था। चलते-चलते उन्हे लगने लगता था कि उन्हे रस्से से बांधकर अलग-अलग दिशाओ मे खीचा जा रहा है। वे पसीने से तर हो जाते। पता नही, कहाँ कब क्या हो जाये ? चले गये तो वहाँ जाकर रामउजागर तंग करेगा। नही गये तो यहाँ घर और रामउजागर दोनो मिलकर जोर बांधे हैं। नीलम्मा ने चुप्पी न साधी होती तो भी चले जाते। लेकिन अब ? उनकी समझ काम करना बन्द कर देती।

नीलम्मा क्यो नही आती ? रामउजागर ऊपर के मन से कहता है कि वह अपना काम निबटाने में लग गयी है। शहरी लोग कितनी जल्दी आदमी से छलाँग लगाकर काम पर पहुँच जाते हैं ! बेचारा आदमी खडा-का-खडा रह जाता है। रामउजागर कुछ नही कहता तो नही कहता लेकिन अन्दर-ही-अन्दर उमडता-घुमड़ता रहता है। यह उसकी बचपन की आदत है। कहता कम है, पालता ज्यादा है। कह लिया करे तो अच्छा रहे। उस दिन डॉक्टर भी यही कह रहा था। धरती में बीज ठहरेगा तो पेड़ बनेगा ही। बात अन्दर रुकी और बढ़ी !

लौटते समय वे एकाएक दूसरी राह पर मुड गये। लडकियो का हॉस्टिल पूछते-पूछते वह नीलम्मा की तरफ चल दिये।

बापू को यह तो पता था कि नीलम्मा लड़कियों के हॉस्टिल में रहती है। लेकिन उनको यह मालूम नही था कि हॉस्टिल किधर है। शुरू में तो वे थोडा भटके फिर राह से लग गये। उन्हें करीब-करीब तीन-चार फर्लांग का चक्कर काटना पडा। अगर वे गेस्ट हाउस से सीधे गये होते तो नजदीक पडा होता।

वे काफी देर तक गेट पर खड़े रहे। निकलेगी तो जरूर बात करेगी। नही भी करेगी तो वे उसे रोककर बात कर लेंगे। हर पाँच-दस मिनट बाद दो-दो चार-चार

लड़कियाँ साइकिलो पर या पैदल निकलती थी। कई बार लड़के भी साथ होते थे। बिना रोक-टोक हँसते-बतियाते चलते चले जाते थे। इस बात से उन्हे आश्चर्य होता था। जहाँ लड़कियाँ रहती हों वहाँ लड़के कैसे पहुँच जाते है। लडको के हॉस्टिल मे थोड़े ही इस तरह लड़कियाँ घुसी रहती होंगी? उन्हें याद आया कि यह कलयुग का अन्तिम चरण है। यही सब होगा। फिर उन्हे रामउजागर का ध्यान आया। रामउजागर···? आगे सोचने में उन्हे कठिनाई अनुभव हुई। फिर उन्होने नीलम्मा के बारे में सोचना चाहा। इतना ही सोच पाये – नीलम्मा कहाँ है? क्या वह सवेरे ही कही चली गयी? उन्हे करीब-करीब घण्टा-भर हो गया था। एक-दो बार सोचा भी कि किसी लड़की को रोककर पूछे। लेकिन कैसे पूछेंगे? क्या कहेंगे? आज तक किसी परायी लडकी या औरत से बात नही की। जो कुछ भी बात की वह नीलम्मा से ही की। उन लड़के-लडकियो का इस तरह साथ-साथ निकलकर आना उन्हें बार-बार कुरेदने लगता था। उनके सस्कारो का एक भिन्न प्रकार का ढांचा था। यह सब उस ढांचे मे समा नही पा रहा था। जरूर कही-न-कही कोई गड़बड़ है। लडके गलत हैं या लड़कियाँ। हो सकता है दोनों ही हो। शर्म-लिहाज पहले औरत-मर्द के बीच ही होती थी। अब किसके बीच रहेगी? मर्दों-मर्दों के बीच? इन बातों ने नीलम्मा को लेकर भी उनके मन मे कुछ सलवटें पैदा कर दी। ये सलवटे पहले भी थी, लेकिन नीलम्मा का आना-जाना बन्द हो जाने के कारण वे कुछ कम हो गयी थी।

उन्हें एकाएक लगा, उनका इतनी देर से वहाँ इस तरह खड़ा रहना ठीक नही। पता नही कोई क्या समझे। वे लौट पड़े। नीलम्मा से बिना मिले लौटना उन्हें अच्छा नही लग रहा था। कुछ भी कहो, जबान और सोच की खरी है। एक जगह का खरापन आदमी को और जगह भी खरा ही रखता है। उसका सोच विपरीत दिशा चलना शुरू हो गया था।

गेस्ट हाउस पहुँचे तो रामउजागर के पास दो लडके बैठे थे। वे बराण्डे मे ही रुक गये। लेकिन रामउजागर ने पुकार लिया, "बापू, अनुकूल आया है। इसी के बारे मे उस दिन नीलम्मा कह रही थी। इसी की टांग मे चोट आयी थी। आज पहली बार निकला है। ये दूसरे रवि है। अनुकूल को साइकिल पर लेकर आये है।"

पहली बार बापू ने सिर्फ उनका नमस्कार ही लिया। फिर एकाएक ख्याल आया तो पूछा, "अब क्या हाल है?"

"बस, चलने मे थोड़ी परेशानी होती है। डाक्टर चलने-फिरने को कहते हैं लेकिन टाँग पर जोर नही पड़ता। लगता है कही गिर न पडूँ और दूसरी से भी जाता रहूँ।" फिर हँसकर बोला, "पता नही क्या सलामत रहेगा और क्या टूटेगा···? अब तो राम द'दा भी यहाँ नही रहते जो टूटे को भी जोड़ दें। इनके सहारे बहुत कुछ सुलझ जाता था।"

बापू के मुँह से एकाएक निकला, "नीलम्मा मेम साहब का कुछ पता है?"

उनका मेम साहब कहना एकाएक सबके चेहरो पर उभर आया। लेकिन वे अपनी धुन मे थे।

रामउजागर ने कहा, "बापू, मै हॉस्टिल जाऊँगा···अब वही रहा करूँगा। ठीक

हो गया हूँ।"

बापू पहले चुप रहे फिर बोले, "तबियत फिर खराब हो गयी तो कौन देखेगा?"

"हम लोग तो यहाँ हैं ही।" अनुकूल तपाक-से बोला।

"तुम तो खुद ही एक टाँग से अपाहिज हो।"

वाक्य खत्म होते-होते अनुकूल के शरीर से एक लहर-सी पार हो गयी। रामउजागर के मुँह से निकला, "कौन है अपाहिज?"

अनुकूल तत्काल सँभल गया, "अपाहिजी ही तो पीछा नही छोड़ रही। पैदा हाथो-पैरोवाले होते है। पर हो जाते हैं अपाहिज।" फिर बोला, "राम द'दा रहेंगे तो हिम्मत बँधी रहेगी। नीलम्माजी का थोडा-बहुत सहारा था, वे भी अचानक चली गयी।"

बापू ने आश्चर्य से दोहराया, "चली गयी?"

"हाँ, अनुकूल के पते पर चिट्ठी आयी है।"

एक ही लिफाफे मे दो चिट्ठियाँ थी। एक अनुकूल के नाम और दूसरी रामउजागर के नाम। अनुकूल के नाम चिट्ठी सक्षिप्त थी—

प्रिय अनुकूल,

मुझे अचानक ही घर चले आना पडा। क्यो चले आना पडा, यह बात इतनी जरूरी नही। तुम यही समझो कि कभी-कभी स्वेच्छा का दबाव भी इतना बढ़ जाता है कि उससे लड़ना असम्भव हो जाता है। तुम लोगो के माता-पिता को देखकर मुझे लगा कि मैं भी कुछ दिन अपने घर के लोगो के साथ रहकर देखूं। लड़कियो के लिए वैसे भी घर नाम की चीज बहुत बडी कमजोरी होती है। मैंने सोचा, स्वेच्छा को नजरअन्दाज नही करना चाहिए। बहुत ज्यादा नजरअन्दाज करने से वह शत्रुता बरतने लगती है। उसकी मर्जी हमे सही अर्थो मे समझनी चाहिए। साधारणतया हम उसकी उपेक्षा करके अन्य दबावो के सामने झुक जाते हैं।

खैर, यह कोई इतनी महत्त्वपूर्ण बात नही कि मैं यहाँ से क्यो चली आयी। हाँ, मुझे तुममे वह चिंगारी जरूर नजर आती है जो दूसरो के लिए रोशनी बनती है। रामउजागर मे तो वह पुंज रूप मे थी और अभी भी है। मैं यह तो नही मानती कि वह लोप हो गयी। दो ही बातें हो सकती हैं, या तो कोई बादल का टुकड़ा आ गया है, छँट जायेगा। या फिर वह इतनी तीव्र और गतिमान थी कि संचित न रहकर बिखर गयी।

कह नही सकती कब लौटूं। हो सकता है जल्दी ही लौट आऊँ। जो पाने आयी हूँ उसके मिलने या न मिलने पर निर्भर करता है। कहा न कि स्वेच्छा के चलते आयी हूँ। कई बार उसमे मार्ग-निर्देशन भी मिलता है। लेकिन उसके लिए आन्तरिक तटस्थता की भी आवश्यकता होती है। इन दोनो का सगम हो जाय, इस बात के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

[illegible] करना। ऐसा भी नही

[illegible]

[illegible] ा और सन्दर्भहीन मन

सकता है। पर उसमे क्या? मैं यह पत्र केवल इसीलिए लिख रही हूँ जिससे आप लोग चिन्तित न हों। बातों को अटपटा या सन्दर्भहीन समझकर हम उन्हे त्याज्य भी तो नही समझ सकते। क्यो?

तुम्हारी,
नीलम्मा

दूसरा पत्र कुछ लम्बा भी था और अस्पष्ट भी। अस्पष्टता भी कई बार बहुत-सी बातो को स्पष्ट कर देने की सामर्थ्य रखती है। पत्र मे लिखा था—

प्रिय राम,

मुझे यहाँ आये तीन-चार दिन हो गये। शुरू के चार-छ. दिन काटने ही मुश्किल होते हैं। बाद मे तो वक्त का काटना आदत बन जाती है। तरीका भी पता चल जाता है और सामर्थ्य भी कुत जाती है। खैर।

मैं ही तुम्हे लायी थी और मैं ही तुम्हे वहाँ छोड़कर यहाँ चली आयी। मैं समझती हूँ कि तुम्हारे बापू को भी तुम्हारे साथ ऐसा ही करना चाहिए। एक मानसिक स्थिति मे जीते रहने के बाद उसे अचानक तोड़ देना कई बार लाभकर होता है। अपने खिलाफ एक तरह का विद्रोह ही समझो। विद्रोह चाहे अपने खिलाफ हो या किसी बाहरी के, दोनो ही झझट पैदा करते है। अपने खिलाफ होनेवाला विद्रोह चाँदी का तार खीचने की तरह सम्पूर्ण व्यक्तित्व को बारीक-से-बारीक सुराख से निकालकर एक-सा बना देता है। न एक सूत मोटा और न एक सूत पतला। बाहरी चीज के खिलाफ होनेवाला विद्रोह देह पर पडता है। लोगों को इस विद्रोह से ज्यादा डर लगता है। लगना भी चाहिए क्योंकि देह के माध्यम मे ही हम सुख-दुख का अहसास पाते है। सच पूछो तो डर अपने ही प्रति, अपने विद्रोह से लगना चाहिए क्योंकि वही पीस डालने की सामर्थ्य रखता है। नही तो हम बाहर से बदलते रहते है अन्दर से खखड़ बनते जाते हैं। कई बार उसके खतरे भी झेलने पड़ते है। जब उसे झेल नही पाते, सामर्थ्य से ज्यादा तीव्र होता है तो बिखर जाते हैं। पता नही तुम मेरी इस बकवास से सहमत हो या नही? वैसे कोई खास जरूरत भी नही। बिना अपने अनुभव का अश बनाये किसी भी बात से सहमत होना कठिन होता है। सहमति की अपेक्षा रखना आदमी की कमजोरी होती है। होती है तो है।

तुम्हारा अस्वस्थ होना तुम्हारे और तुम्हारे घरवालो के लिए एक दुर्घटना है। लेकिन एक साया, एक सीमित-से क्षेत्र पर, छोटा-सा सम्भावित बदलाव बनकर छा गया है। इस बात को तुम जानते हो या नही, मैं इस विवाद से फिलहाल अपने को अलग रखना चाहती हूँ। लेकिन इतना जरूर समझती हूँ कि मजबूती के साथ स्थापित परम्परागत कुलीनता को भयभीत करनेवाले व्यक्तित्व अव्वल तो पैदा ही नही होते, अगर होते हैं तो वे कुलीनता के गुब्बारे में छेद करके ही चैन लेते हैं। जब तक ऐसा नही होता, नये युग की शुरुआत नही होती। परिवर्तन शब्द का इस्तेमाल मैं जानकर नही कर रही।

मुझे हमेशा महसूस होता रहा है कि बर्फ की हर पर्त के नीचे एक तरलता का अक्षुण्ण प्रवाह रहता है। उसका हर कण पर्त-दर-पर्त टूटता जाता है और

तरलता उजागर होती जाती है। फिर वह बर्फ बन जाती है। लेकिन वास्तविकता यही है कि उस तरलता के साक्षात्कार के लिए ऊपर के ठण्डेपन को तोड़कर अन्दर गहरे उतरते जाना अत्यधिक आवश्यक है। नही तो वही हाथ लगेगा जो हम देख रहे हैं। जो नही दिख रहा है उसका आभास मिलना तक दूभर हो जायेगा।

इन बातों को छोड़ भी दो तो मुझे लगता है कि जो वर्ग कुलीनता की चट्टान बना खड़ा है और अकुलीनता को त्याज्य समझकर उसे नष्ट कर देना चाहता है वह मुझे लगता है अपनी ही जड़े खोखली कर रहा है। सम्पूर्ण समाज इस मानसिकता का शिकार है। हर वर्ग ने अपने में ही कुलीन और अकुलीन बना लिये है। इस प्रवृत्ति को पहले भी पहचानने की कोशिश की जा चुकी है। जिसने उसको पहचाना या पहचानने की कोशिश की वही काम आ गया। अपनी असलियत को पहचाननेवालो को यह कुलीनता कभी क्षमा नही करती। जो इससे आगाह कर दिये गये थ उनमें से भी बहुत-से लोग अपनी तरलता को ज्यादा दिन तक नही बनाये रख सके और अन्ततः उस चट्टान का हिस्सा हो गये। हम-जैसे बहुत-से लोग इन चट्टानो मे कंकरो की तरह चिपके पड़े है। तुम उसी को भेद रहे थे। भेदते-भेदते रह गये। तुम्हारा उपकरण तुम्हारा निडर होना था। लेकिन उस कुलीनता का वार तुम पर भी हो गया। तुम्हारे अनजाने ही उसने तुम्हारे उस लाजवाब उपकरण को कुण्ठित कर दिया। वही कुलीनता अनुकूल को भी लील जाने का प्रयत्न कर रही है। ईश्वर उसकी रक्षा करे।

कभी कल्पना की गयी थी कि यह कुलीनता अपने सिंहासन से उतरेगी? एक मौका आया जब कुछ समय के लिए इसका सिंहासन हिला'''लेकिन हुआ उसका उल्टा। नयी-नयी चट्टाने बन गयी। वे सब एक हो जाने की गरज से निरन्तर नजदीक आती जा रही है। वह दिन दूर नही जब ये चट्टाने अपनी परिधि मे पड़नेवाले सभी अकुलीनों को पीस डालेगी। यह हमेशा होता रहा है। नये-नये कुलीन होते गये और पिछड़से कुलीनों को अकुलीन समझकर सीलते गये। लेकिन पराकाष्ठा ही विष होता है। जहाँ-जहाँ से पर्ते टूटेंगी वहीं-वहीं से [illegible] रहेंगी। अगर सोते ही बन्द [illegible] बसानेवाले अपनी [illegible]

मैंने यह पत्र लिखने से पहले कई बार सोचा, तुम्हें यह सब लिखूँ या नही। क्योंकि मैं स्वयं नहीं जानती थी कि मैं क्या लिखना चाहती हूँ और क्या लिख रही हूँ। इसलिए बहुत कुछ अलटप्प भी लिख गयी। फिर भी यही सोचा कि शायद तुम मेरी इन बातों को समझने के लिए अपने को उसी मानसिकता मे ला सको, जिसमें मैं तुम्हें यह पत्र लिख रही हूँ। अगर तुम इन सबका कोई मतलब निकाल सको तो मुझे भी लिखना।

बापू को मेरा नमस्कार कहना। वे जरूर सोच रहे होंगे कि यह कैसी लड़की है, बिना कहे पहुँच जाती है और बिना बताये चली जाती है। मेरे विचार से तुम बापू को गाँव भेज दो और अनुकूल से मिलकर वास्तविकताओं

का सीधा सामना करो।

मुझे लगता है कि मैं वहुत समय तक अपने आपको इतनी वड़ी उलझन मे पड़ा नही रहने दे सकती…।

तुम्हारी,
नीलम्मा

वापू के हाथ कुछ नही पडा था। वे चुपचाप वैठे रहे थे। अनुकूल और रवि पत्र पढा जाने के वाद खामोश हो गये थे। रामउजागर पहले तो अपने पत्र को उलटता-पुलटता रहा था फिर उठकर कमरे में टहलने लगा था।

वापू उठे और अपना सामान वटोरने लगे। सामान वटोरते देखकर रामउजागर को लगा कि उसका दिल वैठ रहा है। लेकिन उसने अपने को यथावत वनाये रखा। चेहरे पर दृढ़ता चिपकाये रहा। उसकी दृढता एक ऐसे वच्चे की-सी थी जो अपनी वहादुरी का प्रदर्शन करने के लिए दांत भीचकर अपनी चोट को डॉक्टर से हँसते हुए साफ कराने का प्रदर्शन करता है। भले ही आँखो मे आँसू आ जायें।

सामान इकट्ठा कर लेने के वाद विना रामउजागर की तरफ देखे उन्होंने कहा, "तुम हॉस्टिल जाना चाहते हो तो ठीक है, चले जाओ। मैं भी यहाँ खाली ही पड़ा रहता हूँ। वहाँ भी खेल-विखेर हो रहा होगा। तुम मुझे स्टेशन छुड़वा दो। हॉस्टिल मे दोस्तो के साथ मन भी और होगा। काम करने की आदत बनेगी। काम से बड़ा इलाज नही।" उनका दिल भर-भरकर आ रहा था।

रामउजागर अन्दर से सन्न होता जा रहा था। अन्दर-ही-अन्दर चीरे का-सा हाल वन गया था। टपकन हो रही थी। हाथ-पाँव भी वह अन्दर-ही-अन्दर पटक रहा था। दांत भिंचे थे। उसने रवि से कहा, "रवि तुम्हे ही वापू को स्टेशन पहुँचाना होगा…मैं भी तुम्हारे साथ चला चलूंगा।"

रवि ने कहा, "दादा, तुम्हें इसकी चिन्ता करने की जरूरत नही। मैं सब कर लूंगा। तुम जाकर क्या करोगे…। वापू को जाते देख तुम और परेशान हो जाओगे। तुम यही रहो।"

वापू ने भी रवि की हाँ-मे-हाँ मिला दी। अनुकूल चुपचाप बैठा रहा। उसे अपने वावू का जाना याद आ रहा था। लेकिन तव नीलम्मा थी।

जाते हुए वापू ने किराये का भुगतान करना चाहा तो पता चला कि हो चुका है। दो-चार क्षण वापू चुपचाप खड़े रहे फिर आगे वढ गये। रामउजागर वही खडे-खडे वहुत दूर तक पीछे-पीछे दौड़ता चला गया। वावू ··वावू···वावू···

गेस्ट हाउस से रामउजागर सीधे अनुकूल के कमरे मे ही गया। अव वहाँ उसका अपना कोई कमरा नही था। कमरे मे पहुँचा तो वह वहुत थका-थका और पस्त था। वार-वार वापू याद आते थे। उनके शरीर की गन्ध पिछले कई महीनो से लगातार उसके आसपास वनी थी। अव एकाएक अन्तर्ध्यान हो गयी थी। फिर भी वह अपनी

समस्त इन्द्रियो में उसका वास पा रहा था। उनका उठना-बैठना, चलना-बोलना और पुकारना सबकुछ उसके अन्दर हर क्षण घटित होता था। बापू अपनी हर मुद्रा मे उसके सामने उपस्थित रहते थे। माँ भी रहती थी। पर बापू ज्यादा! जब नीलम्मा आती थी तो उसके लिए दोनो को सह पाना कठिन हो उठता था। बापू इस तरह चले गये! नीलम्मा उस तरह चली गयी। उसका चला जाना बापू के जाने का कारण बना। नही तो बापू अभी कुछ दिन रहते। उन्होंने उसके सुझाव को अविलम्ब माना। जाने से पहले बापू ने बताया था कि वे नीलम्मा को देखने हॉस्टिल गये थे। हालाँकि उसे कभी महसूस नही हुआ कि बापू नीलम्मा को देखने भी जा सकते है। उन्हे मन-ही-मन नीलम्मा का इन्तजार रहता है। कभी-कभी चलते-चलाते पूछ लेते थे---आजकल नीलम्मा मेम साहब नही आती? उसने भी कभी प्रकट नही होने दिया कि वह बापू के मन की बात समझता था या नही? बापू समझते थे।

जिस दिन रामउजागर अनुकूल के कमरे मे गया उसी रात वह नीलम्मा को चिट्ठी लिखने बैठा। लेकिन उसे लगा कि उसके अन्दर इतना सबकुछ है कि लिखने की दृष्टि से वह उसे क्रम मे नही ला पा रहा। ख्यालात इतनी तेजी से आते हैं कि सर्राते हुए निकल जाते हैं। ठीक तरह नजरदाहनी तक नही कर पाता। उसे फिर कई दिन बाद निराशा का एक झोका-सा आता महसूस हुआ। वह उठ खड़ा हुआ। अनुकूल अपने बिस्तर पर बैठा उसे देख रहा था। रामउजागर को लगा कि अनुकूल ने उसके अन्दर तक झांक लिया है। क्या वह यही सोच रहा होगा कि मैं वैसा-का-वैसा ही हूँ?

अनुकूल ने अपने आप ही उससे पूछा, "द'दा, लगता है कुछ परेशान हो?"

"परेशान! नही, कतई परेशान नही।"

"नीलम्माजी को चिट्ठी का जवाब नहीं दोगे?"

रामउजागर ने उसकी बात का कोई जवाब नही दिया। अनुकूल ने बलवत्ता कुछ देर तक जवाब का इन्तजार किया। फिर बोला, "नीलम्माजी ने जो लिखा है वही हम लोगो के हित मे है। हम लोग उनके ऊपर निर्भर करने लगे थे। लगता है वे हम लोगो की आत्मनिर्भरता को पुनर्जीवित करने के उद्देश्य से ही चुपचाप चली गयी। हमे फिर मे उसे लौटाना है···।"

रामउजागर ने सहमति मे सिर्फ गर्दन हिला दी।

अनुकूल थोड़ी देर चुप रहा। दोनो की खामोश मुद्राएँ लम्बी हो गयी थी। अनुकूल पहले बाहर आया, "द'दा, आप मे जो आग है उसे फिर मे चेतन कीजिए। हम लोग तो लकडी के कोयले हैं, आग के सम्पर्क से दहक उठते हैं। इतना
के बाद फिर से चलना शुरू कर रहा हूँ। सीखना अधिक है, चल
अनुभव हो रहा है। एक जानी हुई चीज को जब पुनः
नये पक्ष उजागर हो आते हैं। पहले अनदेखे रह गये थे।
तो मेरा चलना सीखना, मात्र पैरो का ही
बना रहूँगा। मैं नीलम्माजी की स्वेच्छावाली बात पर
शायद मेरे लिए ही उन्होंने यह निदान सोचा है।

में अपने को पुनः खोजना चाहिए। नही खोजेंगे तो हम और भी बहुत-सी चीजें खो देंगे।"

"अनुकूल, मुझे लगने लगा है कि एक बार खोये हुए को पाना बहुत कठिन है। हम लोग बचपन मे बुढियावाला खेल खेला करते थे। उस बुढिया की सुई किसी अँधेरी कोठरी मे खो गयी थी। लेकिन वह उसे बाहर चांदने मे खोज रही थी। उसे उस सुई से थैली सीनी थी। थैली सीकर उसमे रुपये रखने थे। रुपये जोडकर दूध पीने के लिए भैंस खरीदनी थी। लेकिन अँधेरे में खोयी सुई को वह चाँदने में तलाश कर रही थी। इसीलिए जो लड़का बुढ़िया बनती थी उसे बच्चे चिढ़ाते थे कि दूध नही सूरी का भूत न पी ले। वह उन्हें मारने दौडती थी। लडके हँसकर भाग जाते थे। किसी के द्वारा देखा गया स्वप्न भी बिना यथार्थ से जुड़े साकार नही होता।"

अनुकूल की समझ मे नही आया वह क्या जवाब दे।

रामउजागर ही बोलता जा रहा था, "उस दिनवाली मोहन की लाश मुझे हॉस्टिल के हर एक कमरे में लटकती नजर आती है। कमरे मे ही क्यों, घरो तक में। यही लगता है कि हम सब जिन्दा हैं, मजबूरी में मरे हुए लटके है। मौका मिलते ही चलने लगेंगे। मैं, तुम'''सारे ही नौजवान उन्ही मे हैं। अपनो के बारे मे मुझे यह और भी ज्यादा लगता है। मेज, स्टूल, खाट, पंखा सबकुछ लगाकर हमे उन पर खड़ा कर दिया गया है। हममे से हर एक की गर्दनो से लिपटी रस्सी कमरो की दीवारो में बने अदृश्य सुराखो से गुजरती हुई ऐसे लोगों के हाथो मे थमी है जो जब चाहे खीच सकते हैं। उनके खीचते ही हम मोहन हो जायेंगे।"

अनुकूल की आँखें उबल आयी। उन्ही आंखो से उसने रामउजागर को देखा। उसकी नजर खाट, स्टूल, मेज, कुर्सी, पंखा सब पर से गुजरती हुई बार-बार रामउजागर को देखने लगती थी। जब वह अपने मन की बात कर चुका तब जाकर अनुकूल का भाव सामान्य हुआ। वह बोला, "राम द'दा, हमे उसे स्वीकार नही कर लेना है। अगर हमने उसे नियति समझकर स्वीकार लिया तो वह इतनी मजबूत हो जायेगी कि हम उसे कभी नही तोड पायेंगे। मुझे डर है कि कही हम अस्वीकार की अपनी इस मानसिकता को ही न खो बैठें। आज भी यही लगता है कि हजारों साल पहले हमारे बुजुर्गो ने भी यही गलती की होगी। उनकी उस गलती के कारण ही हम हजारवी सन्तान भी आज तक नही उभर पाये।"

"नही।" कहकर रामउजागर चुप रह गया। थोडी देर बाद उसने फिर 'नही' दोहराया।

अनुकूल ने पूछा, "आप अपनी छुट्टी कैंसिल करायेंगे ?"

रामउजागर कुछ देर तक उसकी बात का जवाब सोचता रहा। फिर बोला, "मैं सोचता हूँ करा लूँ। बस दो ही प्रश्न हैं, छुट्टी कैंसिल कराकर कुछ कर भी पाऊँगा या नही ? और क्या वे लोग करेंगे ?"

"दोनो ही बातें सोचने मे सम्बन्धित न होकर करने से जुड़ी हैं। पहले मैं भी करने से पहले बैठकर सोचा करता था। सोचते-सोचते करने का सारा वलवला खत्म हो जाता था। लेकिन खन्ना ने मेरे साथ यही भलाई की कि उसने मेरा सोचना बन्द कर दिया। इस दृष्टि से वह मेरा रहनुमा है।"

"तुम ठीक कह रहे हो ''तुम्हारा कहना ठीक है ''" इस बात की रामउजागर ने दो-तीन तरह से पुनरावृत्ति की। दरवाजे पर शायद कोई था। खटखटाने की आवाज थी। दोनों ने उसी तरफ देखा। अनुकूल उठना चाहता था, लेकिन रामउजागर ने जाकर दरवाजा खोल दिया।

खन्ना और उसके दो साथी थे। साथी भी लम्बे थे। अपेक्षाकृत छोटे के हाथ में नेहरू-डण्डा था।

खन्ना ने रामउजागर के कन्धे पर हाथ मारकर कहा, "नहाने जा रहा था। सोचा कि तुम आ गये हो तो तुमसे भी मिल लिया जाय। फिर इक्ट्ठा ही नहाऊँगा।" पहले अनुकूल के चेहरे पर प्रतिक्रिया भाँपने की कोशिश की फिर आगे बढ़ा, "तुम्हारा लौटना पूरे हॉस्टिल में एक गर्मागर्म खबर बना हुआ है। लेकिन तुम एकदम ठण्डे होकर लौटे हो। खैर, कोई बात नहीं, तुम्हारा यह चेला अपनी गर्मी बनाये है ''" इतना कह चुकने के बाद खन्ना हँस दिया। जब दोनों की तरफ से कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं हुई तो आगे बोला, "मिलने-जुलने ही आये हो या जमकर रहोगे? वह तुम्हारी डुगडुगी'' क्या नाम है उस लड़की का'' हाँ नीलम्मा, कहाँ गायब हो गयी? पता नहीं अपने को क्या समझने लगी? हमने तो उसे तुम्हारी समझकर कुछ कहा नहीं। सोचा था तुम आये हो तो वह भी आ गयी होगी। एक साथ ही सबसे मुलाकात हो जायेगी। लेकिन लगता है फरार है'' " फिर हँसा, "बस यही गनीमत है कि अपने यहाँ सबकुछ जन्म-जात होता है'''नो कनवर्जन! नहीं तो वर्तमान सरकार की नीति के चलते सभी तुम्हारी तरफ जा गिरे होते। कम्पलीट एक्सोड!"

रामउजागर ने तने चेहरे और लाल आँखों से उसकी तरफ देखते हुए शान्त स्वर में कहा, "मिलने आने और इतनी सारी सूचनाएँ देने के लिए धन्यवाद।"

खन्ना ठठाकर हँस पड़ा, "वाह बेटा, शहरी साँप की तरह हेज तलाश कर रहे हो!"

अनुकूल ने अपनी बैसाखी के सहारे उठते हुए कहा, "खन्ना भाई, आप तो जानते ही हैं ये दो सेमिस्टर के लिए एकेडिमिक लीव पर हैं।"

"मैं तो वो सब भी जानता हूँ जो तुम नहीं जानते। यह भाई-वाई क्या लगा रखा है? खन्ना साहब कहो। समझे।" आँखों की जगह हिकारत में डूबी दो सो जलती नजर आ रही थी। वह उसी तेवर के साथ चमका, "देखो रामउजागर, अब तुम यहाँ वापिस लौटने की कोशिश मत करो। मैं जानता हूँ म नीलम्मा की वजह से लौटना चाहते हो। वह अब यहाँ नहीं रह सकती। उसके माध्यम से सवर्णों को अपमानित करने का ख्याल दिल से निकाल दो। इन चीजों से ज्यादा जिन्दगी कीमती होती है। जाकर अपने घरवालों का पेट पालो। वे सब लोग इन्जीनियर नहीं थे। तुम्हारी दादागिरी के दिन लद गये। अब तुम केवल वही हो जो पैदा हुए थे। हाँ, लाश उतारने का काम अलबत्ता कर सकते हो'''यहाँ के जमादार ज्यादा इज्जतदार हो गये हैं। लाश उतारने से मना करते हैं। तुम चाहो तो तुम्हें दस रुपये लाश उतरवाई का काम मिल सकता है'''इसके अलावा खाने-पीने का भत्ता भी मिल जायेगा। तुम चाहोगे तो एस. सी./एस. टी. होने के कारण और छूटें भी मिल

जायेंगी। पर तुम्हें भी ऐसे छात्रो के मामले में छूट देनी पड़ेगी।" आखिरी बात अनुकूल को देखकर कही।

रामउजागर कांप गया। वह जोर से अंग्रेजी मे चिल्लाया, "निकल जाओ !'

खन्ना पहले तो सन्न रह गया फिर ठठाकर हँस दिया। दोनो साथी चुपचाप खड़े थे। उसकी चीख ने उन्हे भी स्थिर कर दिया था। खन्ना की हँसी सुनकर उसकी तरफ लपके। खन्ना ने रोक दिया, "अभी नही···वक्त आने दो।"

चलते-चलते बोला, "जो कहा गया है उस पर गौर करना···फिर आयेंगे।"

चलते हुए उसने दरवाजा धड़ाम-से छोड दिया।

-

खन्ना के जाने के बाद काफी देर तक दोनो अबोले बैठे रहे। किसी ने किसी से कुछ नही कहा। धीरे-धीरे ठहराव पिघला। तनाव कम हुआ। बातें शुरू हुईं।

रामउजागर ने कहा, "अब मैं यही रहूँगा। अभी तक यहाँ रहने या वापिस लौट जाने को लेकर मेरे मन मे उलझन थी। अब नजर साफ हो गयी। मैं समझ सकता हूँ, इन दरिन्दो के हाथों तुमने कितना सहा होगा!"

"यह कोई सहना है द'दा। सहना तो वो था जो हमारे बुजुर्गों ने सहा या जो कुछ और जगहों पर सहा जा रहा है। हम लोग तो सहनेवाले स्थलो से हटे हुए लोग हैं। असलियत से पलायन किये हुए कहिए! अपने को सहनेवालो की श्रेणी में रखने का हमें कोई हक नही।

"सबसे बडी गलती तब होती है जब इतर कारणो से दी गयी छूटो को कोई व्यक्ति या समाज दाँतो से पकडने लगता है। अगर हमने बराबरी के स्तर पर संघर्ष किया होता तो आत्मसम्मान के साथ रहने की ज्यादा गुंजायश हुई होती।"

"जब नही थी तब क्या इससे बेहतर हालत थी?" कहकर अनुकूल को लगा कि कुछ ज्यादा कह गया।

"ऐसा क्यो सोचते हो? हम लोग तब सेवा करते थे, बदले मे खून चुसवाते थे और पगार मे बेइज्जती पाते थे।"

अनुकूल हँसकर बोला, "वैसे तो अग्रेजी फिल्म देखने का मेरा कोई सवाल ही नही उठता पर एक बार नीलम्माजी ले गयी थी···" रामउजागर ने उसकी तरफ गौर से देखा। वह कहता रहा, "उन्होने ही बाद में समझाया भी। काले-गोरे के बीच संघर्ष था। गोरे कालों को हिकारते की नजर से देखते थे। काले गोरों को नही सेठते थे···लेकिन वहाँ तो काले और गोरे थे लेकिन यहाँ···।" रामउजागर ने धीरे से जोड दिया, "काले-ही-काले हैं।" दोनो हँस दिये। अनुकूल को लगा हँसते हुए रामउजागर मोहक हो जाता है।

"काले-ही-काले होते तो निभ जाती···दूसरी तरफ यहाँ तो कालो में भी काले हैं। जब कोई काला किसी को अपने से भी ज्यादा काला समझने लगता है तो गोरो से भी ज्यादा जालिम हो जाता है। घृणा बिजली की तरह सब तरफ मार सकती है। घृणा फैला दो, जंगल-के-जगल नष्ट। क्या साल, क्या शीशम—किसी का पता नही चलेगा। सब वही कर रहे हैं···नीचे कीचड़ है और ऊपर आग लगी

"तुम ठीक कह रहे हो ''तुम्हारा कहना ठीक है ''" इस बात की रामउजागर ने दो-तीन तरह से पुनरावृत्ति की। दरवाजे पर शायद कोई था। खटखटाने की आवाज थी। दोनों ने उसी तरफ देखा। अनुकूल उठना चाहता था, लेकिन रामउजागर ने जाकर दरवाजा खोल दिया।

खन्ना और उसके दो साथी थे। साथी भी लम्बे थे। अपेक्षाकृत छोटे के हाथ में नेहरू-डण्डा था।

खन्ना ने रामउजागर के कन्धे पर हाथ मारकर कहा, "नहाने जा रहा था। सोचा कि तुम आ गये हो तो तुमसे भी मिल लिया जाय। फिर इकट्ठा ही नहाऊँगा।" पहले अनुकूल के चेहरे पर प्रतिक्रिया भाँपने की कोशिश की फिर आगे बढ़ा, "तुम्हारा लौटना पूरे हॉस्टिल में एक गर्मागर्म खबर बना हुआ है। लेकिन तुम एकदम ठण्डे होकर लौटे हो। खैर, कोई बात नहीं, तुम्हारा यह चेला अपनी गर्मी बनाये है ''" इतना कह चुकने के बाद खन्ना हँस दिया। जब दोनों की तरफ से कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं हुई तो आगे बोला, "मिलने-जुलने ही आये हो या जमकर रहोगे? वह तुम्हारी डुगडुगी'' क्या नाम है उस लड़की का' 'हाँ नीलम्मा, कहाँ गायब हो गयी? पता नहीं अपने को क्या समझने लगी? हमने तो उसे तुम्हारी समझकर कुछ कहा नहीं। सोचा था तुम आये हो तो वह भी आ गयी होगी। एक साथ ही सबसे मुलाकात हो जायेगी। लेकिन लगता है फरार है' " फिर हँसा, "बस यही गनीमत है कि अपने यहाँ सबकुछ जन्म-जात होता है'''नो कनवर्जन! नहीं तो वर्तमान सरकार की नीति के चलते सभी तुम्हारी तरफ जा मिले होते। कम्पलीट एक्सोड!"

रामउजागर ने तने चेहरे और लाल आँखों से उसकी तरफ देखते हुए शान्त स्वर में कहा, "मिलने आने और इतनी सारी सूचनाएँ देने के लिए धन्यवाद।"

खन्ना ठठाकर हँस पड़ा, "वाह बेटा, शहरी साँप की तरह हेज तलाश कर रहे हो!"

अनुकूल ने अपनी बैसाखी के सहारे उठते हुए कहा, "खन्ना भाई, आप तो जानते ही हैं ये दो सेमिस्टर के लिए एकेडिमिक लीव पर हैं।"

"मैं तो वो सब भी जानता हूँ जो तुम नहीं जानते। यह भाई-वाई क्या लगा रखा है? खन्ना साहब कहो। समझे।" आँखों की जगह हिकारत में डूबी दो लौ जलती नजर आ रही थी। वह उसी तेवर के साथ बमका, "देखो रामउजागर, अब तुम यहाँ वापिस लौटने की कोशिश मत करो। मैं जानता हूँ म नीलम्मा की वजह से लौटना चाहते हो। वह अब यहाँ नहीं रह सकती। उसके माध्यम से सवर्णों को अपमानित करने का ख्याल दिल से निकाल दो। इन चीजों से ज्यादा जिन्दगी कीमती होती है। जाकर अपने घरवालों का पेट पालो। वे सब लोग इन्जीनियर नहीं थे। तुम्हारी दादागिरी के दिन लद गये। अब तुम केवल वही हो जो पैदा हुए थे। हाँ, लाश उतारने का काम अलबत्ता कर सकते हो'''यहाँ के जमादार ज्यादा इज्जतदार हो गये हैं। लाश उतारने से मना करते हैं। तुम चाहो तो तुम्हें दस रुपये लाश उतरवायी का काम मिल सकता है'''इसके अलावा खाने-पीने का भत्ता भी मिल जायेगा। तुम चाहोगे तो एस. सी /एस. टी. होने के कारण और छूटें भी मिल

जायेंगी। पर तुम्हें भी ऐसे छात्रों के मामले में छूट देनी पड़ेगी।" आखिरी बात अनुकूल को देखकर कही।

रामउजागर कांप गया। वह जोर से अंग्रेजी में चिल्लाया, "निकल जाओ···!' खन्ना पहले तो सन्न रह गया फिर ठठाकर हंस दिया। दोनों साथी चुपचाप खड़े थे। उसकी चीख ने उन्हें भी स्थिर कर दिया था। खन्ना की हँसी सुनकर उसकी तरफ लपके। खन्ना ने रोक दिया, "अभी नहीं···वक्त आने दो।"

चलते-चलते बोला, "जो कहा गया है उस पर गौर करना···फिर आयेंगे।"

चलते हुए उसने दरवाजा धड़ाम-से छोड़ दिया।

-

खन्ना के जाने के बाद काफी देर तक दोनों अबोले बैठे रहे। किसी ने किसी से कुछ नहीं कहा। धीरे-धीरे ठहराव पिघला। तनाव कम हुआ। बातें शुरू हुईं।

रामउजागर ने कहा, "अब मैं यहीं रहूँगा। अभी तक यहाँ रहने या वापिस लौट जाने को लेकर मेरे मन में उलझन थी। अब नजर साफ हो गयी। मैं समझ सकता हूँ, इन दरिन्दों के हाथों तुमने कितना सहा होगा!"

"यह कोई सहना है द'दा। सहना तो वो था जो हमारे बुजुर्गों ने सहा या जो कुछ और जगहों पर सहा जा रहा है। हम लोग तो सहनेवाले स्थलों से हटे हुए लोग हैं। असलियत से पलायन किये हुए कहिए! अपने को सहनेवालों की श्रेणी में रखने का हमें कोई हक नहीं।

"सबसे बड़ी गलती तब होती है जब इतर कारणों से दी गयी छूटों को कोई व्यक्ति या समाज दाँतों से पकड़ने लगता है। अगर हमने बराबरी के स्तर पर संघर्ष किया होता तो आत्मसम्मान के साथ रहने की ज्यादा गुंजायश हुई होती।"

"जब नहीं थी तब क्या इससे बेहतर हालत थी?" कहकर अनुकूल को लगा कि कुछ ज्यादा कह गया।

"ऐसा क्यों सोचते हो? हम लोग तब सेवा करते थे, बदले में खून चुसवाते थे और पगार में बेइज्जती पाते थे।"

अनुकूल हँसकर बोला, "वैसे तो अंग्रेजी फिल्म देखने का मेरा कोई सवाल ही नहीं उठता पर एक बार नीलम्माजी ले गयी थीं···" रामउजागर ने उसकी तरफ गौर से देखा। वह कहता रहा, "उन्होंने ही बाद में समझाया भी। काले-गोरे के बीच संघर्ष था। गोरे कालों को हिकारते की नजर से देखते थे। काले गोरों को नहीं सेठते थे··· लेकिन वहाँ तो काले और गोरे थे लेकिन यहाँ···।" रामउजागर ने धीरे से जोड़ दिया, "काले-ही-काले हैं।" दोनों हँस दिये। अनुकूल को लगा हँसते हुए रामउजागर मोहक हो जाता है।

"काले-ही-काले होते तो निभ जाती···दूसरी तरफ यहाँ तो कालों में भी काले हैं। जब कोई काला किसी को अपने से भी ज्यादा काला समझने लगता है तो गोरों से भी ज्यादा जालिम हो जाता है। घृणा बिजली की तरह सब तरफ मार सकती है। घृणा फैला दो, जंगल-के-जंगल नष्ट। क्या साल, क्या शीशम—किसी का पता नहीं चलेगा। सब वही कर रहे हैं···नीचे कीचड़ है और ऊपर आग लगी

है। कोई बचे नही। जलकर मरे या धँसकर।"

रामउजागर ने अनुकूल की तरफ प्रशसा-भरी दृष्टि से देखा पर कुछ कहा नही। इतना ही बोला, "लगता है ये लोग हिंसा पर उतारू हैं।"

"उतारू ही नही, उसे फैशन की तरह इस्तेमाल कर रहे हैं। उतारू तो तब हुए थे जब मेरी टाँग तोडी थी।"

"तो तुमने क्या सोचा ?"

"धैर्य रखना और खामोश रहना।"

"लेकिन ये लोग तुम्हारी यह भाषा नही समझेंगे।"

"जानकर न समझें तो बात दूसरी है। वैसे इससे पहले ससार-भर को यह भाषा समझायी जा चुकी है। बडे-बडे उसके सामने हथियार डाल चुके हैं। शायद इसके सिवाय और रास्ता भी नही।"

"अगर ईंट का जवाब पत्थर से दिया जाय ?"

"पत्थरों पर भी इन्ही लोगो का कब्जा है।" वह हँसा, फिर बोला, "द'दा, आप बडे हैं। आपने इनकी ईंटों का जवाब पत्थर से दिया भी है। लेकिन वही हथियार अपना होता है जो स्वभाव के साथ जाता हो। हमारा स्वभाव भी सहन-शीलता रहा है और हथियार भी। दूसरे तरह के हथियार नये होंगे, उनके अनुरूप स्वभाव बनने मे देर लगेगी। आपने देखा ही है कि यह अपना हथियार कितना प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। हम लोगो के हिसाब से हथियार मे बडी-से-बड़ी शक्ति को कुण्ठित करने की सामर्थ्य होनी चाहिए। वैसे भी द'दा, हम लोग पीछे के दरवाजे से आये हैं···आप सामने के दरवाजे से आये थे। मेरा रूम पार्टनर भाग ही गया। वह लड नही सकता था। लड़ भी लेता तो भी अन्तत. उसे भागना ही पडता··· क्योकि सह नही सकता था।"

रामउजागर उसकी तरफ चकित-सा देख रहा था। थोडी देर बाद वह लेट गया। रामउजागर भी लेट गया। उन्हें यह कतई नही लगा कि वे लोग खामोश हैं। थोड देर तक तो यही लगता रहा कि उन दोनो के बीच अभी भी सवाद जारी है। फिर वे एक-दूसरे के बारे मे अलग-अलग सोचने लगे कि दूसरा सो गया।

काफी देर बाद रामउजागर ने ही पूछा, "सो गये अनुकूल?"

"नही तो द'दा।"

"सो जाओ।

"हाँ।"

रामउजागर आप-ही-आप बोला, "तुमने पूछा था ना कि नीलम्मा को पत्र नही लिखोगे.तो मैं पत्र ही लिख रहा था। सोचा बहुत था पर लिखा एक शब्द भी नही गया।"

"थक भी तो गये हैं ना।"

"नही, सब बिखर-बिखरा गया···।"

अनुकूल थोड़ा उठा और बोला, "द'दा, ज्यादा मत सोचो। सो जाओ। नही तो दवा ले लो। मुझे बता दो, मैं दिये देता हूँ।"

"ले ली।"

फिर थोडी देर सन्नाटा रहा। वही अलग-अलग बोलता सन्नाटा। रामउजागर ही उस अपने सन्नाटे से बाहर आकर बोले, "बापू भी पहुँच गये होंगे। अनुकूल, बापू ने सबकुछ किया···अपने को खत्म करके किया। लेकिन मैं खोटा सिक्का निकला। अब न लगानेवाले के पास कुछ है और न लगवानेवाले के पास।"

"द'दा, आप तो मुझसे बड़े है। आप इजाजत दें तो मैं एक बात कहूँ ?"

"हाँ कहो ··बार-बार ऐसा क्यो कहते हो ?"

"कभी-कभी मुझे लगता है कि होना ही सब कुछ नही होता। खोना भी··· होता है।"

"तुम ठीक कह रहे हो। तुम्हारा सोचा ज्यादा सीधा और रचनात्मक है। लेकिन पता नही मुझे क्या होता जा रहा है।"

रामउजागर चुप हो गया। अनुकूल को लगा कि वह उस आखिरी सवाल से घमासान युद्ध कर रहा है। बीच-बीच में नीलम्मा का वह खत फड़फड़ाने लगता था।

अनुकूल एकदम खामोश और सीधा लेटा था···अनेक खन्नाओं के सामने शवासन लगाये हो।

अगले दिन रामउजागर उसी तरह तैयार हुआ जैसे पहले हुआ करता था। हालाँकि उसके पाँवो मे कँपकँपी थी। लेकिन वह अपने को साधे हुए था।

बाहर निकलने से पहले उसने अनुकूल से पूछा, "क्या तुम सोचते हो कि मैं सीधे निदेशक से जाकर मिलूं ?"

"पहले डीन से मिल लीजिए।"

"बापू के लिए गेस्ट हाउस में कमरे को लेकर नीलम्मा से काफी कहा-सुनी हो गयी थी।"

"वह तो तब भी हुई थी जब मेरे बाबू आये थे।"

"लोग इतनी जल्दी भूल नही पाते।"

"तो फिर अपने हेड से मिल लीजिए।"

"हूँऽऽ।" उसने लम्बी साँस ली और आप-ही-आप बोला, "किसी से तो मिलना ही होगा।" फिर अनुकूल की तरफ देखकर कहा, "पता नही मेरा मन क्यो नही ठुकता ? वे लोग जानते हैं कि वे हमारा सब कुछ बिगाड़ सकते हैं, हम उनका कुछ नही कर सकते। हर जुल्माना हविस को पूरा करने के लिए उन्हे हम ही क्यो मिलते हैं।"

"हम कमजोर है और रहे हैं। किसी भी कमजोर समझे जानेवाले के पास अत्याचार से कई गुना सहकर विरोध करने की सामर्थ्य होना जरूरी है। तभी वह महाबली हो सकता है। मेरे बाबू कहते है कि कुछ बन के ही हम इस बाढ पर बाँध बाँध सकते हैं। मैं इससे सहमत नही।"

"क्यो ?"

"वर्तमान को इतिहास के साथ जोड़कर देखना···।"

"तुम अपने लिए क्या सोचते हो ?"

"इस बीच यही सब सोचा है। नीलम्माजी से चोंचें लड़ी है···किताबें मँगा-मँगाकर पढ़ी हैं। उन सबको अभी परखना है।" थोड़ी देर सोचने के बाद अनुकूल ने बात को आगे बढ़ाया, "पहले मैं यहाँ से भाग जाना चाहता था। यहाँ का वातावरण मांसाहारी वनस्पति जैसा है। मुझे भय लगने लगता था, उसके पास से गुजरूँगा, पत्ते बन्द हो जायेंगे और चूस डालेंगे। लेकिन और पीछे मुड़कर देखा तो पाया, हजारों साल से इससे भी बदतर माहौल में लोग रहते चले आ रहे हैं··· उनका अस्तित्व बरकरार है। शक्ति सग्रह की वस्तु है। कितनी भी जोड़ी जा सकती है। वास्तविक संघर्ष में शक्ति का बहुत कम हिस्सा है। उसके लिए आन्तरिक साहस और सामर्थ्य चाहिए। आन्तरिक सामर्थ्य मनुष्य को बड़ी-से-बड़ी शक्ति के सामने ले जाकर खड़ा कर सकती है और अपने स्थान पर सुरक्षित वापिस ला सकती है। आपमें भी मैंने उसी सामर्थ्य का दर्शन किया था। नीलम्माजी में भी। अगर आप दोनों न मिले होते तो मैं भी अपने रूम पार्टनर की तरह भाग गया होता। द'दा, आपसे क्या छिपाऊँ ? मुझे इन्तजार रहता है कि कब ये लोग मुझे बेइज्जत करें। मेरे अस्तित्व को मिटाने के लिए कब हिंसा पर उतारू हों। जब ऐसा करते हैं तो मैं उसी परम्परा से जुड़ जाता हूँ। अन्दर से सहनशीलता और साहस का सोता फूट पड़ता है।" फिर रुककर बोला, "इसीलिए ये लोग मुझे मार नहीं पाते·· उमड़-घुमड़कर आते हैं और बिना बरसे वापिस लौट जाते हैं। हजारों वर्ष चुपचाप संघर्ष करने के बाद जब वे लोग अपनी मंजिल के नजदीक पहुँच गये तो क्या हम लोग नहीं पहुँचेंगे? अब तो हालात फिर भी हमारे साथ हैं।"

"क्या मतलब ?" रामउजागर इतनी सब बातें सुनने के बाद चौंका।

"हम लोगों के पहले हजारों वर्षों तक कितना बड़ा शून्य रहा है फिर भी हम बचे रहे। यह जीते रहने का ही नतीजा है कि हम लोगों ने इस तरह सोचना सीखा। अपने-आपको नष्ट हो जाने दिया होता तो···नहीं होते। इसी बात ने मुझे फिर से खड़ा कर दिया···कब तक खड़ा रहूँगा ? खड़ा भी रहूँगा या नहीं ? यह अलग बात है।"

"तुम भाग्यशाली हो। कभी मैं भी सोचा करता था···पर इतनी गहराई तक जाकर नहीं। कभी-कभी लगता है कि अन्दर वाद्य में कोई तार था जो अचानक बजना बन्द हो गया। अनेक स्वर बजते हैं पर वह नहीं बजता। उसी अकेले के ना बजने से ही वाद्य के सारे पर्दे बेकार हैं। मुझे प्रसन्नता है कि तुम अपने सब स्वरों को जीवित रखे हो। मैं अपने खोये हुए जगत को तुम्हारे अन्दर पाने की कोशिश करूँगा। अगर···सका···"

वह तेजी से चला गया। अनुकूल उसी स्थान को टकटकी बाँधे खड़ा देखता रहा जहाँ वह खड़ा था। एक रामउजागर अन्तर्ध्यान होता था दूसरा पैदा हो जाता था। देर तक वह इसी खेल को देखता रहा।

सामान्यतः रामउजागर दिन-भर बाहर रहता था।

अनुकूल क्लास मे जाने लगा था। कोई-न-कोई उसे साइकिल पर बैठाकर अपने साथ ले जाता था। क्लास के बाद अन्य लडको के साथ उसने दो-तीन घण्टे लाइब्रेरी मे भी बिताने शुरू कर दिये थे। उसका काम काफी पिछड गया था। उस काम को पूरा करने के लिए अतिरिक्त मेहनत करनी पड़ रही थी। पहला सेमिस्टर समाप्ति पर था। क्विज तो पूरे सेमिस्टर होती रही थी पर सेमिस्टर-एण्ड की यह परीक्षा उसकी पहली परीक्षा थी। कभी-कभी उसे घबराहट होने लगती थी। वह हमेशा सोचा करता था कि जिन लोगो के यहाँ पढाई का काम पीढी-दर-पीढी चलता चला आ रहा है उनके बच्चे पढाई के बारे मे उतना तो जानते ही रहते है जितना एक अच्छे किसान का बेटा फसल और जिन्स के बारे मे बिना बताये जान जाता है। हम लोगो को तो इस क्षेत्र मे फावडे का बेटा पकड़कर चलाने जितना भी ज्ञान नही। बोने और काटने की बात तो बहुत बाद मे आयेगी। उसे थोड़ी चिन्ता तो पढाई के बारे मे खन्ना द्वारा दी गयी धमकियो को लेकर भी थी। दूसरे इस बात की थी कि अगर इस सेमिस्टर मे परीक्षाफल गडबडाया तो अगले वर्ष कोर्स-भार और बढ जायेगा। निकाल दिये जाने की सम्भावना भी बढेगी। निकाल दिये जाने की इतनी परेशानी नही जितनी हार की है। पहले-पहल की हार कई बार बहुत दूर तक पीछा करती है। सीनेट कमजोर लड़कों को एक वर्ष के बाद निकाल देती है। सुना था, सीनेट में बड़े-बड़े प्रोफ़ेसर्स होते हैं, जिनके काटे का इलाज नही होता।

शाम को जब अनुकूल लौटता तो पस्त होता। उसके आने के थोडा आगे-पीछे रामउजागर भी लौट आता। रामउजागर के चेहरे से लगता कि उसकी दिन-भर की यात्रा ऊबड-खाबड़ से होकर गुजरी है। उस दिन रामउजागर पहले आ गया था। जब अनुकूल कमरे में घुसा तो रामउजागर पीछेवाली खिडकी से एकटक बाहर देख रहा था। वहाँ एक लैण्डस्केप था। शाम के अँधेरे मे घडिया की तरह धीरे-धीरे डूबता हुआ। कभी-कभी डूब जाने के भय मात्र से किसी नौका मे बैठे यात्रियो का जो सामूहिक कोलाहल उभरता है ठीक वैसा ही-सा कोलाहल डूबता हुआ यह लैण्डस्केप उत्पन्न करता था।

अनुकूल ने दरवाजे पर से ही पूछा, "कहो द'दा, आज कैसा रहा? कुछ काम बना?"

रामउजागर ने उसकी तरफ देखा। उसकी आँखो मे एक शून्यता थी। उसने धीरे-से खिडकी के बाहर की तरफ उँगली कर दी। वह समझा नही। अनुकूल को उसकी आँखो का खालीपन देखकर थोडी घबराहट हुई। वह थोडी देर उसे देखता रहा।

थोड़ी देर बाद रामउजागर अपने-आप ही बोला, "फर्स्ट ईयर मे यही कमरा मुझे भी मिला था। इस खिड़की से मै अक्सर डूबते हुए दिन को देखा करता था। लेकिन आज का डूबना गहरा डूबना है।" वह रुक गया। फिर बात बदलकर बोला, "अनुकूल, अपनी खोयी हुई पहचान की खोज मे जब कोई उन्ही रास्तो पर फिर लौटता है तो वे जाने-पहचाने रास्ते भी भूलभुलैया-से लगते है। जो दरख्त मुझे आता देखकर जोर-जोर से हिला करते थे···इतने कम दिनो मे या तो वे खत्म हो गये या उन्होंने अपना मुँह मेरी तरफ से फेर लिया। उनमे से किसी को विश्वास ही

नही होता कि मैं वही रामउजागर हूँ जो उन्हें झकझोर दिया करता था। दौड़कर सीढ़ी की तरह उन पर चढ़ जाता था। रामउजागर होने की मेरी वह पहचान खत्म हो गयी। उस पहचान के बिना मैं इन सबके बीच रामउजागर बना कैसे और कब तक घूमता रहूँगा ? मुझे लगता है रामउजागर यह शरीर नही था, वह प्रवृत्ति थी ···वाद्य का वह अकेला तार था जो अब नही बजता।"

"इतना निराश होने की क्या बात है, द'दा ?"

रामउजागर हँसकर बोला, "मुझे लगता है इस नजारे को भी तुमने अपने हिसाब मे एडजस्ट कर लिया है। मैंने इसी खिड़की से इसे दो साल तक देखा है। आज बिल्कुल बदला हुआ है। शायद मैंने ही अपने हिसाब मे बदला हुआ समझ लिया। इस कैम्पस मे मैं बेधड़क घूमा हूँ। अब लगता है सब जगह सुरगें बिछी हुई हैं। पाँव पड़ते ही विस्फोट हो जायेगा। हवा मे आग लगे हवाई जहाज की तरह हम सब चिन्दी-चिन्दी होकर मलबे की तरह दूर-दूर तक बिखर जायेंगे।"

"राम द'दा, मुझे लगता है आप फिर उसी मानसिकता की तरफ लौट रहे हो ···क्या किसी ने कुछ कहा है ?"

"कहना···।" वह थकी-सी मुस्कान मुस्कुराया, "कहना तो बहुत बड़ी बात है, लोगों को सुनने तक मे गुरेज है। लोगो ने अपने चेहरो पर साफ-साफ लिख लिया है कि हम तुम्हें नही पहचानते। तुम चले जाओ। तुम वो नही जो हम हैं।" वह उठा और अनुकूल के दोनो कन्धे पकड़कर जोर से हिला दिये। एक टाँग पर खड़ा होने के कारण अनुकूल गिरते-गिरते बचा। जैसे ही रामउजागर को अपने इस व्यवहार का अहसास हुआ तो वह घुटनो के बल बैठ गया, "माफ करना अनुकूल, मैं एक अजीब-सी बदहवासी का शिकार हो गया था। चोट तो नही लगी।"

"नही, बच गया। वरना एक टाँग की देख-भाल नीलम्माजी ने की थी, दूसरी की आपको करनी पड़ती।" कहकर वह हँस दिया।

रामउजागर का हाथ पकड़े-पकड़े बोला, "ऐसे क्यो बैठो हो ? लगता है जैसे ड्रामे मे पार्ट कर रहे हो। इस तरह तो वे लोग करते हैं जिनकी अपनी जिन्दगी मे कुछ नही होता'' हम लोगो की जिन्दगी मे तो बहुत कुछ है। तबियत से बादशाहत, जेब और पेट से फकीरी।"

रामउजागर उसकी तरफ गौर से देख रहा था कि वह यह सब क्या बोले जा रहा है। अपने आप बोल रहा है या कोई बुलवा रहा है।

अनुकूल का बयान जारी था। वह भी बड़े मुखरित ढंग से, "आपको तो मुझसे ज्यादा अनुभव है। मुझे एकाएक लगा कि साधनहीन और उपेक्षित आदमी को ज्यादा बड़ा अभिनेता होना चाहिए। अगर न हो तो चल न पाये। दो प्यार की बात सुन लेता है तो सम्राट हो जाता है। भूखा हो, या दुत्कारा गया हो तो सन्त··· क्यों ?"

रामउजागर की आँखें सिकुड़कर छोटी हो गयी। चकाचौंध मे अपने से दूर की चीज देखने की कोशिश कर रहा था।

अनुकूल को लगातार बोलना पड़ रहा था, "लगता है, आपको मेरी बात पसन्द नही आयी ? क्या आपको नही लगता कि हम स्वेच्छा के मूल्य पर दरमियानेपन

की ऐसी स्थिति की ओर बढ़ते जा रहे है, जहाँ सुख भी भय का कारण होता है ! दुख तो होता ही है।"

रामउजागर ने उठकर उसके दोनो हाथ पकड लिये, "तुम सोच मे कहाँ-से-कहाँ निकल गये। ईश्वर तुम्हे इसी तरह आगे-आगे बढ़ाता जाय। मैं तो सब कुछ खो चुका हूँ। जो बाँधकर लाया था और जो कमाया" सब ! बीच में लगने लगा था कि अपने आप से उबर सकूँगा। लेकिन गढा बहुत गहरा है। जितना मैं बाहर निकलने की कोशिश करता हूँ, पोली जमीन में बना यह गढा उतना ही और गहरा हो जाता है। मेरी समझ मे नही आता कि लोग आदमी को गिरते समय क्यो नही थामते ? बल्कि उसका वजन बढाकर उसके गिरकर धँसने की गति और तेज कर देते हैं। जब वह गिर जाता है तो लोग कहते है'''मूर्ख था। गिर गया।"

अनुकूल ने रामउजागर को ऊपर बैठाया। बोलना चाहा पर रामउजागर बोलने के मूड में आ गया था, "मोहनवाली घटना के बाद से मुझे लगता है कि यहाँ स्वाभिमानी नौजवान की समस्या का हल केवल मौत है। लेकिन तुम्हारी बात सुनकर लगता है कि नही, उसके अलावा भी कुछ हो सकता है।"

अनुकूल ने रामउजागर की आँखो मे आँखे डालकर यह समझाने की कोशिश की कि "नही दादा, इन सब बातो में मेरा कुछ नही। इस थोड़े-से समय मे तुमसे और नीलम्मा से जो जाना और सीखा वही कह रहा हूँ। शब्दो का अन्तर हो तो हो। तुम भी यही सब नही कहते थे ?"

रामउजागर बोला, "जो यह सब कहता था वह कोई और रामउजागर रहा होगा, मेरा अनुभव अब यह कहने के लिए तैयार नही। इन सब बातो को तुम्हारी बातें मानकर मैं ग्रहण कर लूँ तो कर लूं। वही करना भी चाहता हूँ। मेरी अपनी समझ मे तो पलीता लग गया है। चटक-चटककर बिखर रही है।"

अनुकूल को लगा कि इन बातो का कोई नतीजा नही, केवल कहते जाना मात्र है। मुख्य प्रश्न खो गया और वे दोनो किसी और तरफ निकल आये है। उसने सीधा सवाल किया, "वास्तव मे मैं आपसे दिन-भर की भागदौड के बारे मे पूछना चाहता था और करने लगा लम्बी-चौडी बाते। अगले सेमिस्टर की वापसी के बारे मे कुछ काम बनता नजर आया।"

"कुछ नही ! हेड काउन्सलिंग के पास गया तो उन्होंने उलझे हुए रास्ते को सुगम बनाने के बजाय एकदम नौकरशाहवाला रुख अपना लिया। मुझसे बोले—आप लिखकर दे दे'''डीन वगैरह से बात करने के बाद बताऊंगा। मैंने आगे कुछ बोलना चाहा तो कहा—माफ करना, मेरी एक मीटिंग है और चलते बने।"

अनुकूल को कोई आश्चर्य नही हुआ। खन्ना के साथ हुई पहलेवाली घटना को लेकर वह इन सबके चक्कर काट चुका था। उसे किसी के कान सुनते नजर नही आये थे।

"डीन से मिले ?"

"उन्होंने भी प्रार्थनापत्र देने के लिए कहा है और बोले, अपने हेड से मिलिए। सब लोग उठकर जाने की जल्दी मे रहते हैं।"

"हेड ?"

"हेड ने अपेक्षाकृत सहूलियत से लम्बी बात की। हालांकि प्रार्थनापत्र उन्होंने भी मांगा पर साथ ही यह भी कहा कि मि. राम, अपनी और इस संस्थान की सीमाओं को समझने की कोशिश करो। ऐसी संस्थाएँ तुम लोगो के मान की नही होती। हम लोग आप लोगों की मदद करना चाहते हैं पर जब तक आपकी पृष्ठभूमि मजबूत नही होगी हम लोग ज्यादा कुछ नही कर पायेंगे। तुम जरूर अच्छी स्थिति में आये थे, पर तुम राजनीति में फँस गये। तुम पर पिछड़े हुए लोगो का मसीहा बनने का जुनून सवार हो गया। पढाई में रुचि खत्म हो गयी। जब छात्र समाजसेवी बनता है तो वह न अच्छा समाजसेवी बन पाता है और न अच्छा छात्र। दोनों ही दो पत्नियो की तरह समान समर्पण चाहते है। एक के साथ भेदभाव दोनों तरफ स्थिति डावांडोल कर देता है। वैसे भी इस संस्थान की यह परम्परा रही है कि जो सस्थान की परम्पराओं, मान्यताओं के आडे आता है उसे संस्थान कभी माफ नही करता। लेकिन मैं तुम्हारी मदद करूंगा'''कहाँ तक कर सकता हूँ यह अभी कहना मुश्किल है। तुम्हे अनुकूल से कहना होगा कि वह खन्ना और उसके साथियों के साथ पगा न ले तथा सस्थान छोड दे।"

अनुकूल फौरन बोला, "लेकिन मेरा खन्ना के साथ कोई झगडा नही।" कुछ ठहरकर गम्भीर आवाज मे बोला, "लेकिन फिर भी अगर आपका हेड आपको वापिस लेने को तैयार है तो मैं सस्थान छोड़ दूंगा।"

"यह क्या कहते हो? अब तुम ही तो यहाँ बचे हो।" वह कुछ देर बाद नार्मल होकर बोला "पूरी बात सुन लो। यू. जी. सेक्सन गया। यू. जी. कमेटी के चेयरमैन से मिला। मुझे देखते ही बिना कुछ सुने लिखित प्रार्थनापत्र देने के लिए कहते हुए बाहर निकल गये। मैंने एक प्रार्थनापत्र तैयार किया। उसकी छ-सात कॉपी करायी और सबके दफ्तरो में देता चला गया। प्रार्थनापत्र कितनी जरूरी चीज है! उसके सामने सच्चाई कोई मायने नही रखती।"

अनुकूल हँस दिया, "राम दं'दा, अब तुम दरवाजा खटखटाने का सत्याग्रह चालू करो। इन प्रार्थनापत्र माँगनेवालो के सामने दिन मे चार-चार बार जा खडे हुआ करो। उनको बताओ कि .स प्रार्थनापत्र को तुम चाहे पढो या न पढो, इस जीते-जागते प्रार्थनापत्र को पढना होगा जो तुम लोगो के दफ्तरो मे भूखा-प्यासा चक्कर लगा रहा है। कम-से-कम वे लोग प्रार्थनापत्र की तरफ से अन्धे तो नही हो पायेंगे।"

"वे लोग बदतमीजी से पेश आयेगे।"

"आप उसे उनका सामान्य व्यवहार समझकर अपना सामान्य व्यवहार बनाये रखिए।"

"वह नही हो पायेगा।"

"तो फिर क्या आप गाँव लौट जायेंगे?"

"नही, अब घर नही लौटूंगा। मैं जानता हूँ मेरे इस समय लौटकर न जाने का प्रभाव सब घरवालो के मन पर शेष होगा। माँ ने बापू को झकझोरा होगा कि तुम इस हालत मे उसे वहाँ क्यो छोड आये। हो सकता है नीलम्मा से भी नाराज हो जायें कि अगर वह न आयी होती तो मेरा बेटा घर से बेघर न हुआ होता। मैं लौट-

कर जाऊँगा, वे सब बातें बापू पर लागू हो जायेंगी। इतने दिनों से निरन्तर बैठती जाती यह छान जो थोडी उठी थी इस बार पूरी तरह जमीन से जा लगेगी। जैसे भी होगा मैं यही रहूँगा···"

"तो फिर आपको इन सब दरख्वास्तबाजों के सामने अपना 'दरवाजा खट-खटाओ हत्याग्रह' जारी रखना पडेगा। हमें अपना सहायक स्वयं होना है। यहाँ के जो फैकल्टी मेम्बर हमारी तरफ है वे भी इसी आधार पर हमारे साथ है। अगर बात बन गयी तो उनके प्रगतिशील होने की साख जम जायेगी नही बनी तो हमारी मूर्खता और प्रशासन की पुराणपन्थी और प्रतिक्रियावादिता सामने आ जायेगी। आजकल पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी आर्थिक रूप से अपाहिज लोगो को अपनी बैसाखी बनाकर अपनी प्रगतिशीलता की यात्रा सम्पन्न करते है। टूटे तो बैसाखियाँ, खडे हो तो वो···।"

रामउजागर अनुकूल की पीठ पर हाथ रखकर बोला, "तीन साल रहकर भी जिन बातो को मै नही जान पाया, तुमने छः महीने मे उन सब अँधेरे कोनो मे झाँक लिया!" रुककर सोचते हुए कहा, "तुम्हारी बात सही है, कोशिश करूँगा।"

एकाएक अनुकूल की नजर दरवाजे पर गयी। कोई था। अनुकूल ने पुकारा, "कौन?"

पुकारने ही दरवाजे के नीचे से दो चिट्ठियाँ अन्दर खिसक आयी। रामउजागर झपटकर दरवाजे पर पहुँचा। किवाड़ों पर तीन-चार जगह थूका हुआ था। बाकी कोई नही था। रामउजागर ने पत्र उठा लिये। एक पोस्टकार्ड था और दूसरा अन्तर्देशीय, दोनों अनुकूल के नाम थे। पोस्टकार्ड अंग्रेजी में टाइप किया हुआ था। हस्ताक्षर के स्थान पर से कोरा था। उसमें लिखा था—

गाँधी बनने की कोशिश मत करो। हो भी नही सकते। हर गाँधी बननेवाले का एक ही अंजाम होता है···तुम चाहो तो वही अंजाम बिना गाँधी बने भी हो सकता है। समाज अति बर्दाश्त नही करता। गाँधी ने अपने स्तर पर की थी। उसी को तुम अपने समान टुच्चे स्तर पर कर रहे हो। तुम्हारे जैसे निर्मित होते गाँधी की भ्रूणहत्या आसानी से हो सकती है। तुम दोनो हरामजादो से फिर कहा जाता है कि इस अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त उच्चस्तरीय संस्थान को बरबाद करने से बाज आओ। जाओ, अपना पैतृक धन्धा करो। तुम्हारे माँ-बाप तुम्हारे अन्दर इस तरह के जीवाणु प्रविष्ट करने मे सफल नही हो सके जो इस संस्थान में रह सकने की योग्यता प्राप्त करा सकें। सच पूछो तो तुम उस रास्ते से आये ही नही जिससे दुनिया आती है। पीछे का रास्ता बहुत गन्दा होता है। कोई अच्छा आदमी उसका इस्तेमाल नही करता। हम तुमसे नफरत नही करते। लेकिन हम अपनी संस्था को प्यार करते है। उसके पतन के साथ तुम्हारा उत्थान है पर हमारा पतन है। उसके उत्थान के साथ हमारा उत्थान और तुम्हारा तुम खुद समझदार हो। पतन के कीटाणु मत बनो। वरना उसका इलाज भी हमारे पास है।

तुम्हारे,
शुभचिन्तक।

रामउजागर एक साँस मे पोस्टकार्ड पढ गया। वह स्तब्ध-सा खडा रह गया।

इस तरह बेनामी पत्र पहले तो कभी नहीं आते थे? उसने पोस्टकार्ड को दो-तीन बार उल्टा-पल्टा। कुछ पता नहीं चला। मोहर भी पढ़ने में नहीं आ रही थी। उसने बिना बोले पोस्टकार्ड को अनुकूल की तरफ बढ़ा दिया। अनुकूल अन्तर्देशीय पढ़ चुका था। वह बोला, "आप भी बाबू की चिट्ठी पढ़ लीजिए। यहाँ से जाने के बाद से परेशान हैं। शायद उन्हें लगता है कि उनका इकलौता बेटा सही-सलामत वापिस नहीं लौट पायेगा। लेकिन वह जरूर लौटेगा। यह बात दूसरी है कि अपेक्षित रत्न लेकर न पहुँचे। उसकी झोली में ईंट-पत्थर ही भरे हों।" कहकर वह हँस दिया और पोस्टकार्ड पढ़ने लगा।

रामउजागर ने अन्तर्देशीय पढ़ना छोड़कर एक-दो बार अनुकूल की तरफ देखा। वह शान्त था। पोस्टकार्ड पढ़ लेने के बाद किताब के नीचे दबा दिया और खिड़की के बाहर देखने लगा। वहाँ निचाट अँधेरा था। बत्तियाँ तक गुल थीं। राहगीरों को रास्ता कैसे मिल रहा होगा? जिन्हें अँधेरे की आदत पड़ जाती है उन्हें रोशनी का न होना ज्यादा परेशान नहीं करता। झींगुरियों का संगीत उसे बचपन से पसन्द था। उसे लगता था उसके अपने कानों से वह संगीत निकल रहा है। वह धुन तेज होते-होते मध्यम हो जाती थी तो कान एकदम रुक जाते थे। रामउजागर अनुकूल के पिता के पत्र में लीन था—

प्यारे बेटे अनुकूल,

जब से आया हूँ तुम्हारा ध्यान बना है। जो कुछ वहाँ देखा उसकी पृष्ठभूमि में अपने आपको खगोलता हूँ तो पाता हूँ कि जितने लम्बे समय तक हमने सन्त्रास सहा था, गाँधीजी ने उसे निबटाने में कुछ जल्दी कर दी। अगर उन्होंने ऐसा न किया होता तो शायद हम या तो मिट जाते या फिर अपनी मुक्ति का रास्ता स्वयं खोजते। कभी-कभी हित करते, पिता से भी अहित हो जाता है। जैसा मुझसे हुआ। ये सब तैयारी की चीजें हैं। मेरे पिता ने भी यही किया था। मुझे वहाँ से निकालने के लिए जी-जान लगा दी थी। पर इतनी लम्बी छलाँग नहीं लगायी थी। लालच में पड़ गया। पाना अच्छा लगता है। लेकिन पाना जब कमजोरी बन जाती है तो वह खोने में बदल जाता है।

तुम्हारे संघर्ष की बात सोचता हूँ तो यही होता है कि आखिर किसलिए? क्यों? मैंने ऐसा करके कितनी गलती की? यहाँ किससे कहूँ? इसीलिए तुम्हें लिखकर तबियत हल्की कर रहा हूँ। फिर तुम्हारी बातें याद आने लगती हैं। यह सही है कि जब ताल के नीचे के जल को ऊपर आना होता है या तो नीचे सोता फूटता है या कोई हलचल होती है, गन्दगी भी आती है। आती है तो आती है। उसे रोका नहीं जा सकता। अपने आप बैठ जाती है। लेकिन कितना भी मन को समझाऊँ, मन नहीं मानता। अपनी सन्तान के मूल्य पर कोई महात्मा नहीं बनता। बेटे को प्लास्टर में पड़े देखकर सब जागृति, सब त्याग धरा रह जाता है। दूसरे के बेटे को बदरीनाथ के लिए बिदा करते दिल नहीं दहलता। अपने बेटे को जाना हो तो दिल को चैन नहीं पड़ती। हालांकि तुमसे यह कहने की हिम्मत नहीं होती कि तुम लौट आओ। यह भी कहते नहीं बनता कि तुम वहाँ रहकर इन हमलों को झेलते रहो। मुझे लगता

है कि हम आगे बढ़ने के खतरो को उठाने के लिए अभी तैयार नही। या तो हम छीनकर अपने अधिकार ले या शान्त रहकर सत्रास भोगते रहे और अपने हक को माँगते रहें। धक्का-मुक्की होगी तो बहुत-से लोग काम आयेंगे। जब मैं इन सब तरीको के बारे मे सोचता हूँ तो तुम नजर आते हो। तब मेरा यह सब सोचा राख हो जाता है। किसी भी वाप का हो जायेगा।

लेकिन मैं निरन्तर अपने को समझाने की कोशिश कर रहा हूँ। यही सोचता हूँ कि गाँधीजी अकेले थे, बाबा साहब अकेले थे जो इन लोगों ने ठीक समझा, उसके लिए अकेले ही मार झेली। लेकिन सब गांधी भी तो नही हो सकते। गाँधी बिना तीन गोली खाये और बिना तीन बार राम कहे नही बन सकता। हम लोग अभी उनमे से नही जो गाँधी उत्पन्न कर सकें। दो जून पेट-भर रोटी नहीं मिली, तन को कपडा नही मिला और इस शरीर को आँख-भर सम्मान नही मिला। इन सब लालसाओ मे लिपटा न तो गांधी पैदा करेगा और न स्वय बनेगा।

इन सब बातो को मैंने बहुत सोचा है और इसी नतीजे पर पहुँचा हूँ कि तुम चले आओ। हालांकि मै जानता हूँ कि यह तीर मेरा ही छोड़ा हुआ है। अब उसे वापिस कैसे लाऊँ? मैंने तुमसे कुछ भी कहने का अधिकार खो दिया। फिर भी पिता का अधिकार है। दशरथ ने भी राम को वनवास दिया था, मैंने भी दिया। लेकिन मैं तुम्हे वापिस बुलाना चाहता हूँ···तुम चले आओ···मैं यह भी जानता हूँ कि तुम नही आओगे। अगर नही आओगे तो मैं इसे तुम्हारी कमी न मानकर अपनी ही कमी मानूँगा।

हाँ, एक बात और बताना चाहता हूँ जो मैने तुमसे तब नही कही थी। मैंने नीलम्माजी से कुछ अनुचित बातें कह दी थीं। उनसे मेरी तरफ से हाथ जोडकर माफी माँग लेना। वैसे झेलना तो तुम्हे अकेले ही है, अगर मुझे भी खबरदार रखोगे तो अच्छा रहेगा।

तुम्हारी माँ हर समय याद करती है। यही पूछती है कि तुमने मेरे बेटे को काहे देश-निकाला दे दिया? मैं क्या कहूँ?

हम दोनो का आशीर्वाद।

तुम्हारे बाबू,
बावनराम।

चिट्ठी पढकर रामउजागर ने अनुकूल की तरफ देखा। वह अभी भी बाहर ही देख रहा था। बिना बोले उसकी तरफ बढ़ा दी। अनुकूल मुस्कराया, "द'दा, आपने एक बात देखी।"

"क्या?"

"चिट्ठी खुली हुई थी। घर से दस रोज पहले चली है। यहाँ छ रोज पहले आ चुकी थी। इत्तफाक से मोहर मे पड़ी तारीख पढी जा रही है।"

"तो कहाँ थी?"

"क्या यह भी बताने की जरूरत है। मि. खन्ना के सेन्सरशिप मे चिट्ठियाँ खुलती हैं···मन हुआ कमरे मे डाल गये और नही तो फाड़कर फेंक दी।" फिर

हँसकर बोला, "ग़ैर कोई बात नहीं, सब चलता है।"

रामउजागर गम्भीर हो गया।

अनुकूल थोड़ी देर बाद बोला, "परसों लाइब्रेरी में एक किताब हाथ लग गयी थी। उसमें एक चेप्टर था कि तानाशाह सरकारें अपनी उच्छृंखल जनता पर कैसे नजर रखती है। अन्य तरीकों में से एक तरीका यह भी था -- चिट्ठी-पत्तरों की छान-बीन।" हँसकर बोला, "खन्ना साहब की भी सरकार ही है।"

रामउजागर खोया हुआ-सा खड़ा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। इस घटना से वह बुरी तरह पस्त हो गया था। उसके चेहरे पर भय था। कुछ देर बाद उसके मुंह से आवाज निकली, "मुझे अपने ऊपर ग्लानि होती है। अगर मैं पहलेवाली मनःस्थिति में होता तो पता नहीं क्या-से-क्या हो गया होता। कभी लगता है जो हुआ सो अच्छा हुआ। फिर पछतावा होने लगता है कि ऐसा क्यों हो गया? नसें तेजी से फड़कने लगती हैं। शरीर पसीने से सराबोर हो जाता है। मुझे महसूस होता है कि मैं निकम्मा हो गया। आदमी का निकम्मा हो जाना मर जाना है। लेकिन मैं जिन्दा हूँ। नीलम्मा के सम्पर्क से मैं सामान्य होने लगा था ···शायद वह उसके व्यक्तित्व का खुलापन और रचनात्मकता थी जो कण-कण करके मेरा पुनर्निर्माण कर रही थी। निश्छल आत्मीयता मनुष्य के बन्द स्रोतों को खोल देती है। लेकिन वह चली गयी। क्यों चली गयी, यह अभी तक नहीं जान पाया। जरूर उसे मुझसे निराशा हुई होगी। वह कहती है कि जीवन के प्रति उसका दृष्टिकोण मेरे ही प्रभाव से बदला। मैं कहता हूँ नीलम्मा ने मेरे मृत जीवन स्रोतों को फिर से प्रवाहमान किया था।"

उसकी आँखों को देखकर अनुकूल को लगा कि नीलम्मा सामने आकर खड़ी हो गयी है। तुरन्त ही वह सँभल गया। वहाँ वे दोनों ही थे। रामउजागर के नजदीक आकर बोला, "द'दा, तुम्हें नहीं मालूम, नीलम्माजी को भी इन लोगों ने गन्दा और धमकी-भरा पत्र लिखा था। जिस अभद्र भाषा का प्रयोग किया था वह धमकी से भी भयानक और शर्मनाक थी। पर वे अडिग रहीं। उस दिन जब तुम गाँव से आये तब भी शायद कुछ बातें हो गयी थीं। मुझे उन्होंने विस्तार से कुछ नहीं बताया। बस इतना ही कहा कि अकेले कुछ भी कर पाना असम्भव होता जा रहा है। दर-असल हमारे साथ के लोग यथास्थिति स्वीकार कर चुके हैं। उन्हें केवल अपनी स्थिति की चिन्ता है, परिवर्तन की जरूरत नहीं। वे रियायतों और सिफ़ारिशों पर ही जिन्दा रहना चाहते हैं। अपना अधिकार अपने लिए इस्तेमाल न करके उसे चन्द सुविधाओं के लिए बेच देते हैं। यह रवैया किसी भी समाज को मुक्त नहीं होने देगा। बन्धक बनाये रखेगा। सामर्थ्य को देवदार और युकेलिप्टिस के दरख्तों की तरह ऊँचा और दूब की तरह विस्तृत किया जा सकता है। लेकिन उसके लिए त्याग, संघर्ष और सन्तोष का ही एकमात्र रास्ता है। दूसरों की कृपा पर आधारित परजीवी होता है। बेल एक बार कटी फिर 'कोंपलें नहीं फूटतीं। जैसे हमारा सम्पूर्ण समाज अपने आपको सरकार पर आश्रित किये दे रहा है, उसी तरह हम दोनों भी अपने आपको नीलम्माजी के कन्धों का भार बनाये डाल रहे थे। मैं सोचता हूँ अच्छा ही हुआ वे बीच से हट गयीं। अब हमें अपने पैरों पर खड़ा होने का अवसर मिलेगा।

अपने अस्तित्व को बनाये रखने के वास्ते कोई ऐसा रास्ता निकालना होगा जो आत्मनिर्भर हो।"

अनुकूल की बातों से रामउजागर के चेहरे पर थोडी बेचैनी उभर आयी। वह अव्यवस्थित-सा पिछलाई पकड़ने लगा। उसने कुछ कहना चाहा पर न कह पाने की स्थिति फिर लौट आयी। अनुकूल की आँखों से एक तरह की रोशनी आती नजर आ रही थी। अनुकूल उसको ऐसी जगह खड़ा नजर आ रहा था जो उसकी पहुँच से बाहर थी। वह इतना ही कह पाने में सफल हो सका, "अनुकूल, तुम हर कोण से सोचने की आदत बनाते जा रहे हो'''कभी मैं भी इसी तरह सोचने की कोशिश करता था।"

"नही द'दा, ऐसा नही। मैं कुछ नही करता। मुझे लगता है कि मेरे अन्दर कोई यह सब बोलता रहता है और मैं उसे दोहराता रहता हूँ। यह समझने मे मुझे समय लगेगा कि यह मैं ही हूँ। मेरे अन्दर कोई आ बैठा है और मैं यह सब सोचने और कहने के लिए बाध्य हो जाता हूँ। वरना तो मैं भी उसी मिट्टी का बना हूँ, उसी वातावरण मे पला हूँ जिसमे और सब पले-बढे हैं। पता नही कब हम अपने आपसे आगे निकलेंगे। किसी भी समाज, संस्कृति और सभ्यता को, उसके अपने स्रोतो से काटकर दूसरे स्रोतो से जोड देने का मतलब है समूल नष्ट कर देना। मुझे लगता है हम लोग इसके पहले शिकार हैं, अब यह पूरा देश हो रहा है। व्यक्तिगत रूप से हम दोनो उसके प्रमाण हैं। नीलम्माजी इसीलिए चली गयी'''खतरा उनके सामने भी था।"

रामउजागर के अन्दर अग्नि की तरह कुछ ऐसा प्रज्वलित होने लगा जो उसे निरन्तर झुलसाये जा रहा था। वह उससे बचना चाहता था। लेकिन अपने अन्दर की तपिश से कोई बच सका है? उसने अपने को झुलसने के लिए छोड़ दिया। थोडी देर बाद उसे दिवास्वप्न का-सा आनन्द आने लगा।

वे लोग देर तक चुपचाप लेटे रहे। सवेरे उठे। उनमे कोई विशेष बात नही हुई। रामउजागर तैयार होकर फिर निकल गया।

उस दिन वह सबसे पहले प्रोफेसर मलकानी से मिला। प्रोफेसर मलकानी के बारे मे वे सभी लोग यही मानते थे कि उनके दिल मे उन लोगों के लिए आत्मीयता है। इस बीच प्रोफेसर मलकानी विदेश मे थे, इसलिए उन्हें उन सब स्थितियो के बारे मे ज्यादा जानकारी नही थी जो उनके पीछे विकसित हुई थी। वापिस आने पर उन्हे रामउजागर के बारे मे पता चला था। विस्तृत जानकारी के लिए किसी के कहने पर उन्होंने अनुकूल को भी बुलवाया था। तब वह प्लास्टर मे पडा था। नीलम्मा की बात हुई हो तो हुई हो! वह बिना किसी से मिले चली गयी थी। रामउजागर को तनिक भी पता नही था कि वे अब उसके बारे मे क्या सोचते हैं!

रामउजागर पहले तो प्रोफेसर मलकानी के घर के बाहर चक्कर लगाता रहा। वह निश्चय नही कर पा रहा था, घण्टी बजाये या लौट जाये। पता नही प्रोफेसर क्या सोचें? कही वे नाराज ही न हों और बात करने से मना कर दें।

लेकिन जब तक वह उनसे मिलेगा नहीं तो उसे क्या पता चलेगा कि उनका इस स्थिति के बारे में क्या रुख है। अगर प्रोफेसर मलकानी की सहायता नहीं मिल सकती तो फिर यहाँ उसकी सहायता और कौन कर सकता है? पहली बार जब नीलम्मा उसके साथ प्रोफेसर से मिलने आयी थी तो उसे भी झिझक हुई थी और वह दो मनों में बँट गयी थी। रामउजागर ने उस पर तन्ज किया था—अगर आत्महत्या करनी हो तो भी एक मन होकर करनी चाहिए। तुम तो प्रोफेसर से मिलने की बात को लेकर ही इस तरह बँट गयी हो जैसे देश के बँटवारे के समय कांग्रेस बँट गयी थी। इतनी छोटी बात के साथ इतनी बड़ी घटना से बराबरी करने के पीछे छिपी हास्यास्पदता पर वह हँस दी थी।

उसके मन में कचोट-सी उठी। उसे यह उलझन क्यों होती है? स्पष्टवादिता और सीधे सोच सकने की सामर्थ्य कहाँ चली गयी? तेजी से गया और घण्टी बजा दी। प्रोफेसर स्वयं आये। देखते ही बोले, "अरे राम, तुम! आओ-आओ, मैं जब से आया हूँ तब से तुम्हें तलाश कर रहा हूँ। तुम्हारे बारे में बहुत कुछ सुनने को मिला, पता चला था कि तुम कैम्पस में ही हो।"

"जी!" उसने धीरे-से कहा। लेकिन उसे आश्चर्य हुआ कि इनको कैसे पता चला कि वह कैम्पस में ही है। कौन लोग आकर उसके बारे में इनसे चर्चा करते हैं? क्या वे ही''?

प्रोफेसर मलकानी ने उसका हाथ पकड़ा और बोले, "बाहर क्यों खड़े हो''' अन्दर आओ। यह तुम्हें क्या हो गया। चेहरे से इतने थके और मायूस क्यों लग रहे हो? जब मैं गया था तो तुम्हें एक ऐसे नौजवान के रूप में छोड़कर गया था जिसके अन्दर जिन्दगी और साहस हर समय उबलते रहते थे। मैं तो विदेश में भी नीग्रर युवकों से बातें करते समय तुम्हारा उदाहरण दिया करता था।"

रामउजागर सुनते हुए पीछे-पीछे चला जा रहा था। स्टडी में जाकर वे दोनों आमने-सामने हुए। एक-दूसरे को देखा। वह खड़ा रहा। प्रोफेसर मलकानी ने उसका हाथ पकड़कर सोफे पर बैठाया।

वह बैठ गया। प्रोफेसर कुछ देर उसकी तरफ देखते रहे। फिर स्वयं भी उसके पास ही बैठे। रामउजागर चुप था। प्रोफेसर भी पहले तो चुप ही रहे फिर बोले, "कहो राम'''कैसे हो?"

"जी!" उसने चौककर देखा।

"यह तुम्हें क्या हो गया, जरा-जरा-सी बात पर चौकते हो? तुम्हारी वह चुस्ती कहाँ चली गयी? तुम्हारी असाधारण बुद्धि ने तुम्हें योग्य से योग्य छात्र से भी ऊपर ले जाकर खड़ा कर दिया था। नीलम्मा ने तुम्हारे बारे में एक पत्र में संकेत दिया था। मैं यह नहीं समझता था कि स्थिति यहाँ तक पहुँच गयी होगी।"

रामउजागर बड़ी कठिनाई से सामर्थ्य सँजो पाया, "सर, मैं वापिस आना चाहता हूँ। प्रार्थनापत्र लिखकर हेड को दे दिया'''उसकी कापियाँ डीन को, एस. यू. जी. सी.* के चेयरमैन आदि सबको दे दी। अब मैं ज्यादा दिन छुट्टी पर

* सीनेट अण्डर ग्रेजुएट कमेटी

नही रह सकता। सर, मैंने अपना सबकुछ खो दिया।"

"यह तुम्हे क्या हो गया राम ?" उन्होने दुख और आश्चर्य से कहा।

"मैं नही जानता'''" फिर अपने आप ही बोला, "मुझे सारे नौजवान मोहन नजर आते है'''चाहे हम लोग हो या वो लोग। उसी तरह लटके हुए। सर, उसके शरीर को मैंने ही उतारा था। कोई उतारने को तैयार नही था। कहते थे, बदबू आ रही है। अपने शरीर मे से भी किसी को बदबू आती है। उसके हाथ हिले। उसने लम्बी सांस ली'''वह मेरे कन्धे से भाई की तरह लग गया था। वह जिन्दा था। अगर वह नही था तो हम भी नही है। उसे फूंक दिया, हमे भी फूंका जा सकता है। उनका काम यही है—लटकाना और फिर उतारकर फूंक देना। बस हम लोगो को भी उतारा जाना ही शेष है'''फिर जहाँ जगह मिलेगी वही फूंक दिया जायेगा।"

"ओह'''!" प्रोफेसर मलकानी के मुंह से एक दर्दभरी आह निकली। उन्होंने इस विषय पर आगे बात करना उचित नही समझा। वे फौरन बोले, "मुझे मालूम है तुमने दरखास्त दी है। जो कुछ भी मुझसे बन पडेगा, करूँगा। लेकिन तुम तो अपने को इस लायक बनाओ कि तुम यहाँ के सब तरह के दबाव सहन कर सको। पहले भी तो करते ही थे।"

"कोशिश कर रहा हूँ सर, मैं पूरी कोशिश कर रहा हूँ। अब पहले से ठीक भी हूँ। पहले तो जरा-सी भी भाग-दौड करने लायक नही था। नीलम्मा ही मुझे गाँव से लिवाकर लायी थी। मैं काफी ठीक हो गया था'''अब भी ठीक हूँ। उसके लिवाकर लाने और इलाज करवाने मे आत्मीय संस्पर्श था। लेकिन वह एकाएक चली गयी। वह चाहती है कि हम स्वतन्त्र रूप से जीना सीखें। सामाजिक या व्यक्तिगत स्तर पर हम हमेशा गाँधी नही पा सकते। उसका कहना था, सबको अपना गाँधी अपने-आप बनना होता है। उसी कोशिश मे लगा हूँ'''।"

प्रोफेसर मलकानी भावुक हो उठे। उनके मुंह से अंग्रेजी मे निकला, "मेरे बच्चे।"

रामउजागर और ज्यादा बिखर गया, "सर, मैं क्या करूं? कहाँ जाऊँ? मैंने कभी अपने अन्दर झांककर नही देखा। पूरी लड़ाई को बाहर की लड़ाई समझता रहा। अब समझा कि बाहरी लड़ाई मे तो बाहरी उपकरणो से निबटा जा सकता है पर अन्दर की लड़ाई में यह सब कुछ नही चलता। मैं इस लडाई को अपने विरुद्ध ही लड रहा हूँ'' जब से नीलम्मा चली गयी तब से तो मैं और भी अकेला पड़ गया। पता नही कब तक चलेगी? आखिर तक लड भी पाऊँगा या नही?"

प्रोफेसर ने उसका कन्धा थपथपाया। उसकी नजर मे वे एकाएक और बड़े हो गये। पहले वह उन्हें देखता रहा, फिर बोला, "अगर मुझे वापिस आने का मौका मिल गया तो शायद मैं अपनी इस लड़ाई को दूसरे ढंग से लड़ सकूं। नीलम्मा को भी बता सकूंगा कि मैं लौट आया हूँ।"

"हो सकता है अब नीलम्मा वापिस न आये।"

रामउजागर को लगा जैसे दूध का भरा कटोरा हाथ से छूटकर दूर गली मे जा गिरा हो, "क्यों? उसकी पी-एच. डी.? क्या उसने आपको कुछ लिखा है?" उसने सब सवाल एक साथ पूछ डाले।

"हाँ, वह सब है ''पर वह वापिस नहीं आना चाहती। उसने वही काम ले लिया है। फिलहाल अपनी स्टेट के केन्द्रीय-विश्वविद्यालय में एक लीव-वेकेन्सी में पढा रही है। वह अपने घर मे भी चली आयी। जल्दी ही उसकी नौकरी नियमित हो जायेगी।"

रामउजागर स्तब्ध था। जब उसके अन्दर की वह स्तब्धता टूटी तो बोला, "मैं सोचता था कि मैं ठीक हो जाऊँगा। नीलम्मा लौट आयेगी। इन सबके खिलाफ उसकी आवाज में आवाज मिलाकर मैं भी अपनी बात कह सकूँगा। अनुकूल, मैं और हम जैसे अनेक साथी अपना रहबर पा जायेंगे। लेकिन उसने ऐसा निर्णय ले लिया! उसने ऐसा क्यो किया, सर? वह तो हमेशा औरो के बारे मे सोचती थी।"

"कभी-कभी जब मनुष्य के अपने अन्दर के सोते सूखने लगते हैं तो वह अपनी तरलता खोता जाता है। सूखा उगने देना बन्द कर देता है। बल्कि उगा हुआ भी सूखने लगता है। मैं नही कह सकता, नीलम्मा के साथ क्या हुआ! उसने ऐसा क्यो सोचा? विदेश से लौटने के बाद मैं उससे नही मिला। यह सब कुछ उसकी चिट्ठियो में पता चला है।"

रामउजागर कुछ नही बोला। उठा और चल दिया। प्रोफेसर मलकानी उसे बाहर तक छोडने आये। विदा लेते हुए उसने बिना बोले हाथ जोडकर नमस्कार किया और सड़क पर दौडने लगा।

प्रोफेसर की नजर काफी दूर तक उसका पीछा करती रही।

रामउजागर अनुकूल के कमरे मे चुपचाप लेटा रहता था। शाम को खिडकी के पास कुर्सी पर बैठकर बाहर का नजारा देखा करता था। इत्तफाक था कि जब से अनुकूल का पार्टनर कमरा छोड़कर गया था उसकी सीट खाली पड़ी थी। या तो आवंटित नही हुई थी या हो नही पायी थी।

अनुकूल का चलना सहज होता जा रहा था।

रामउजागर के अपने आपको कमरे तक महदूद कर लेने के कारण उसके मामले की पैरवी का सारा बोझ भी अनुकूल के ऊपर आ गया था। जब समय मिलता था तो वहएस. यू. जी. सी. के छात्र सदस्यों से मिल आता था। छात्र सदस्यो मे से दो रामउजागर की छुट्टी कैंसिल करके उसे आने देने के पक्ष मे थे। शेष दो छात्र प्रतिनिधियो का उनसे मतैक्य नही था। रामउजागर के विरोध में बेनामी चिट्ठियाँ भी प्राप्त हो रही थी। उन चिट्ठियो मे मुख्य रूप से इसी प्रकार के आरोप थे कि रामउजागर गुण्डा है। उसने अनुकूल जैसे झगडालू और जातिपरस्त छात्रो को बढ़ावा दिया है। ये लोग नॉन एस. सी. छात्रो को नीचा दिखाने के लिए योजनाबद्ध रूप से काम करते है। ऊँची जाति की लडकियो को फँसाते हैं'' व्यभिचार करते हैं, पैसा ऐंठते हैं ''नतीजा यह होता कि उन बेचारी लड़कियो को अधबीच मे भाग जाना पड़ता है। उसी तरह की बातो को एस. यू. जी. सी. के अध्यापक सदस्य सही मानकर रामउजागर का विरोध करते थे। प्रोफेसर मलकानी ही केवल रामउजागर के पक्ष मे थे।

जिस दिन एस. यू. जी. सी. इस मामले पर विचार करनेवाली थी उसके पहली
रात को अनुकूल ने रामउजागर को समझाया, "द'दा, तुम्हारे जाने की बात अच्छा
है, एस. यू. जी. सी. के सदस्यों से जाकर मिलोगे तो उन लोगों का दिल कुछ
मुलायम पड़ेगा। तुम्हारी बात मानेंगे।"

रामउजागर कुछ नही बोला। अनुकूल को फिर कहना पड़ा, "मेरे दिमाग में
मिल आने में कोई हर्ज नही। काम अपना है। दुनिया दुश्मन है। हम [illegible]
नही हैं कि अधिकार की हक के तौर पर माँग कर सकें। केवल अपनी बात बताकर
और आरोपों को निराधार सिद्ध करके ही हम कुछ प्राप्त करने में सफल हो
सकेंगे।"

रामउजागर ने सवाल किया, "किसलिए?"

"जिसलिए आप यहाँ ठहरे है। कल आपके बापूजी की चिट्ठी भी आयी है।
वे यही सोच रहे हैं कि आप ठीक हैं···पढाई का काम चालू हो गया है। उनके इस
सोच को सच्चाई मे बदलने का एक ही रास्ता है कि हम जल्दी-से-जल्दी अपने
उद्देश्य मे सफल हों।"

रामउजागर ने आँखें बन्द कर ली। इशारे मे कहा कि वह चुप रहे [illegible]
फिलहाल चला जाय। उसने अन्तिम प्रयत्न किया, प्रोफेसर मलकानी [illegible]
में कोई हर्ज नही। वे तो आपके हितु है। इत्तफाक से अपने विभाग [illegible]
प्रोफेसर चन्द्रा के बाहर चले जाने के कारण वे ही एस. यू. जी. सी. [illegible]
है।"

वह पत्थर हुआ बैठा रहा।

अनुकूल थोड़ी देर तक बैठा देखता रहा फिर उठकर बाहर [illegible]
समझ मे नही आ रहा था कि रामउजागर दादा क्या चाहते हैं। [illegible]
कराने के प्रति गम्भीर नही तो आये ही क्यो? मनुष्य को कदम [illegible]
टटोल लेनी चाहिए, नही तो पता नही रहता आदमी कहाँ [illegible]
वादिता और निर्भयता के कारण आज जो तस्वीर उनकी [illegible]
वह एक झूठी तस्वीर है। उनकी तरफ से कोई प्रयत्न नही [illegible]
किया जाय। रात को देर तक बाहर बैठा रहा। जब लौटा [illegible]
तरह चुपचाप बैठा था। चूंकि अभी उसके पैर मे लग थी [illegible]
लेटकर, घुटने पर पाँव टिकाकर, हाथ मे दबाने और [illegible]

कमेटी के सामने केवल रामउजागर का ही मामला [illegible]
थे। दो मामले नॉन एस. सी. छात्रो के थे। उनको [illegible]
थी, क्योकि वे लोग खास तरह के ऐसे राजनीतिक [illegible]
मिजाज से मेल नही खाते। एक छात्र ने अपनी थीसिस [illegible]
मातृ-भाषा में लिखी थी। उस पर एस. पी. जी. सी.* [illegible]

* सीनेट पोस्ट ग्रेजुएट कमेटी

चारिक रूप से मिलकर विचार करना था। यह मामला अलग से लिया जाना था। जिन लड़कों का राजनीतिक विचारों की भिन्नता का मामला था उनके बारे में सबसे बड़ा आरोप यही था कि उनकी उपस्थिति के कारण विदेशों में संस्थान की साख गिरी है। इन छात्रों के बने रहने से अन्य छात्रों के रोजगार और पढ़ाई सम्बन्धी भविष्य पर प्रभाव तो पड़ ही सकता है, साथ ही हमारे प्रति उनकी नाराजगी भी बढ़ सकती है। लेकिन इन लड़कों की पीठ पर एक अच्छा-खासा गोल था। वह गोल उनके हितों को लेकर एक लम्बी लड़ाई छेड़ सकता था।

अनुकूल जाकर कमेटी रूम के बाहर बेंच पर चुपचाप बैठ गया था। और लड़के भी मौजूद थे। उनमें से एक से उसने बात की, "यह सब क्या हो रहा है? अगर लड़कों को नहीं आने दिया तो वे कहाँ जायेंगे? न विद्या ही जोड़ पाये और न अनुभव हो।"

वह लड़का हल्का-सा मुस्कुराया और यह कहकर हँसता हुआ चला गया, "यह सब तुम हम पर छोड़ो। सरकार के दिये हथियारों से सरकार के विरुद्ध नहीं लड़ा जा सकता है···!" थोड़ी देर तक वह उसकी बात को पकड़े बैठा रहा। हो सकता है इसकी बात ठीक हो। राजनीति के हथकण्डे व्यक्ति से भिन्न होते हैं। सिर और जूता जब दोनों एक ही के होते हैं तब वे अलाप लेते हैं। अपनी इस बात पर अनुकूल को भी हँसी आ गयी। अगर वह लड़का सामने होता तो वह इस बात को कहे बिना ना मानता।

सदस्य आने शुरू हो गये थे। अनुकूल जिस सदस्य को भी आते देखता था, लँगड़ाता-लँगड़ाता उसके पास पहुँच जाता था। उसे समझाने की कोशिश करता था कि रामउजागर वैसा लड़का नहीं जैसा कि लोगों ने उसके बारे में फैला रखा है। उसका दिल बड़ा है। उसमें एक महान व्यक्ति होने की सम्भावनाएँ हैं। दुख के समय वह हर एक का दोस्त है। अगर उसमें यह गुण न हुआ होता तो उसने मोहन की लाश न उतारी होती। यदि आप उसे आने देंगे तो उसे एक नयी जिन्दगी मिल जायेगी। कुछ ध्यान से सुनते थे। कुछ हाँ-हाँ करते अन्दर घुस जाते थे। एक-दो लोग जो पक्के टोरी थे, उन्होंने उसे डपट दिया, "जाकर पढ़िए। यह प्रोफेशनल इन्स्टीट्यूट है। डिग्री कालिज नहीं। यहाँ कोई राजनीति नहीं चलेगी। अगर करोगे तो उसी तरह मुश्किल में पड़ जाओगे जैसे रामउजागर पड़ गया। कभी किसी इन्स्टीट्यूशन को नुकसान पहुँचाने की कोशिश मत करो। नहीं तो इन्स्टीट्यूशन तुम्हें कुचल देगा।"

अनुकूल अपनी स्थिति स्पष्ट करने की कोशिश करता, "नहीं सर, मैं आप पर किसी तरह का दबाव नहीं डाल रहा। केवल रामउजागर के हालात से अवगत करा रहा हूँ। वह और कुछ नहीं चाहता, सिर्फ छुट्टी कैंसिल कराना चाहता है। यह उसके लिए बहुत कठिन समय है। उसे सिर्फ आपकी सहानुभूति चाहिए।"

"लफ्फाजी ज्यादा काम नहीं आती। पढ़ो। अगर वह पढ़ा होता तो आज यह दिन नहीं आया होता। जिन्दगी एक कठिन प्रतियोगिता में बदलती जा रही है। उसे सहानुभूति से जीतने की कोशिश करोगे तो अपने को ज्यादा दिन तक नहीं बचा सकोगे। किसी दिन यह तुम्हारी रोप-वे टूट जायेगी और तुम सब लोग···

लुढ़कते हुए'''कहीं ऐसी जगह जा गिरोगे कि जहाँ अपने आपको खोज पाना कठिन हो जायेगा।"

जब मलकानी आये तो वह उनके पास भी गया। मलकानी ने उसके कन्धे को थपथपाते हुए कहा, "आशा कभी नहीं त्यागनी चाहिए'''तब भी नहीं जब सब रोशनियाँ गुल हो चुकी हों।" और अन्दर चले गये।

अनुकूल फिर जाकर बेंच पर बैठ गया और अपनी टाँग सहलाने लगा।

मीटिंग शुरू हुई।

पहले वह अकेला ही चुपचाप बैठा था। फिर दो लड़के और आकर बैठ गये। उनके मामले भी विचाराधीन थे। लेकिन वह चुपचाप बैठा रहा। वे लड़के हँसी-मजाक करते रहे और आपस में बोलते-बतियाते रहे। उनको किसी प्रकार की चिन्ता नहीं थी। वे चिन्तामुक्त थे।

अनुकूल ने जेब में हाथ डाला तो उसके हाथ में नीलम्मा का खत आया। उसने रामउजागर से उस खत का जिक्र अभी तक नहीं किया था। वह जेब में पड़े उस खत को मुट्ठी में दबाता और छोड़ता रहा। उसका वह क्या करे?

अन्दर की आवाज बाहर आने लगी थी। उनमें से एक लड़का पहले दीवार के पास खड़ा सुनता रहा फिर आकर दूसरे से बोला, "अपने को तो ज्यादा फिक्र नहीं। नहीं तो बिजनेस में लग जायेंगे। बाप जान ने कह दिया है कि किसी के सामने झुकने की जरूरत नहीं। मेरे पास इतना रुपया है कि तुम्हारे लिए एक समानान्तर संस्थान खुलवा दूँ। जितने वहाँ पढ़ाते हैं सबको अपने यहाँ नियुक्त कर लूँ।" रुक-कर धीरे-से बोला, "कल आये थे, सबको डिनर पर बुलाया था। इस साल न्यू-इयर पर वी. वी. आई. पीज को फैक्ट्री की तरफ से जो गिफ्ट्स दिये गये थे'''एक-एक सूट लैम्प''मेटस'''पाइप्स, लाइटर्स, पार्कर जूनियर, एशट्रे वगैरह, एक-एक ब्रीफ केस में बन्द करके इन सबको भी पकड़ा दिये।"

दूसरा बोला, "यार, तुम बनते हो दोस्त और जिक्र कर रहे हो इतने दिन बाद! अबे, हमें पता होता तो हम भी देते समय डैडी के हाथ में उसी तरह हाथ लगा लेते जैसे संकल्प करते समय घर के बड़े के हाथ से हाथ छुआकर संकल्प में भागीदार बना जाता है। जब हम फैक्ट्री खोलते तो आधे लौटा देते। आधे-आधे में पड़ता पड़ जाता।"

दोनों जोर से हँस दिये।

पहलेवाले ने दूसरेवाले की तरफ रुख किया, "अबे तुझे क्या फिक्र, वो डिप्टी डायरेक्टर तो तेरा रिश्तेदार है। चेयरमैन तक को साधे है। सुना है चेयरमैन अपनी एम्पायर में उसे भी हिस्सा देनेवाला है। तुझे यहाँ से बैठायेगा, वहाँ निकाल देगा।"

वह मुस्कुराकर बोला, "पर बेटा, चाँदी के जूते से जबरदस्त मार किसी दूसरे हथियार की देखी है? आँख भी चौंधियाता है और अक्ल भी कुन्द करता है। खोपड़े पर टोपी की तरह जमकर बैठ जाता है। आदमी बोलना कुछ चाहता है बुलवाता कुछ है। हम तो फिफ्टी-फिफ्टीवाले हैं। सेण्ट-परसेण्टवाले तो तुम हो।"

दूसरेवाला लडका ही बोला, "मुश्किल रामउजागरवाले में पड़ेगी। खन्ना भी पेले हुए है। खन्ना के सामने डायरेक्टर की भी घिग्घी बोल जाती है। उसने सबको अल्टीमेटम दे दिया है कि खबरदार, जो रामउजागर के साथ जरा-सी भी सहानुभूति दिखलायी गयी। अगर किसी तरह की छूट दी गयी तो एक-एक एस. सी./एस. टी. को कटवा डालूँगा। खन्ना पर भी तो उन्ही का हाथ है'''जिनका तुम बताते हो कि हमारे ऊपर है'''। जितने उद्योगपति हैं सब उन पर जान कुर्बान करते है। रिसर्च हुई यहाँ और फैक्ट्री लगी वहाँ। एक-एक के कई-कई प्लाण्ट चल रहे है। वे चाहें जिस इण्डस्ट्रियलिस्ट के यहाँ जाकर डायरेक्टर बन जाये। इतना कमवा दिया है कि उनकी तनख्वाह किसी को नही खलेगी। दरअसल ये इण्डस्ट्रीवाले भी इन लोगो के खिलाफ हैं। नफरत करते है'''! सच पूछिए तो यही लोग हम लोगो के हितो के वास्तविक सरक्षक हैं। क्यू. ई. डी.।"

पहलेवाला बोला, "तो फिर इण्डस्ट्रियलिस्टों को गाली क्यों देते हो? हम खिलायें-पिलायें भी और गाली भी खायें। तुम्हारेवाले भी तो सुना है सी. आई. ए. की गोद चले गये।"

दूसरा हँस दिया, "गनीमत है माफिया नही कहा।"

वे लोग अनुकूल की तरफ से बेखबर थे। हो सकता है पहचानते ही न हो। अन्दर रामउजागर के मामले पर बहस शुरू हो गयी थी। आवाज साफ नही आ रही थी। एक खिड़की जो खुली थी, वह भी बन्द कर दी गयी थी।

वे लडके उठे और बोले, "चलो, अब रामउजागर का मामला उठ गया है। एक-डेढ़ घण्टा तो लगेगा ही। हम लोगों का तो हो ही गया होगा। न होने की बात होती तो हम लोगों के मामले पर भी इसी तरह जोर-खरोश के साथ बहस हुई होती।"

दूसरा बोला, "तुम्हारा तर्क मानने लायक है। इसका मतलब रामउजागर गो, वेण्ट, गॉन! लोगो के लिए सबक होगा और रामउजागर जैसे लड़के के साथ ट्रेजेडी।"

"पुरानेवाला बंगाली डायरेक्टर कहा करता था कि प्रशासन बुलडोजर होता है। उसकी बात मायने रखती है। देख लो, बुलडोजर चालू है। अब रामउजागर टिल्ड लैण्ड मात्र रह गया।" फिर रुककर कहा, "उसकी जबान ही बुरी थी। स्वयं बुरा नही था। उसकी पीठ तुम्हारेवाले ने ही जमीन से लगा दी। वही उसके पीछे पड़े थे। तुम लोग जब किसी को खाने पर आते हो तो बिना कांटा-छुरी के खाते हो। मासाहारी कौम जो ठहरे।"

दूसरा हँस दिया, "अमाँ यार, खाते समय काँटा-छुरी से क्या मतलब? रोमास क्या कभी दुभाषिये के सहारे हो सकता है?"

वे लोग हँसते हुए कैण्टीन की तरफ बढ़ गये। पहलेवाले की कार वही खड़ी थी।

अनुकूल अनजान बना बैठा था। उसने उनकी बातें गौर से सुनी थीं। इन बातों ने उसे अन्दर तक उथल-पुथल कर दिया था। क्या ये सब लोग हमें इन्सानो की श्रेणी में

नही रखते ? दूसरे इन्सान क्या इन लोगो कि लिए जानवरो से भी बदतर हैं ?

बीच-बीच मे जब हवा तेज होती थी तो अन्दर की आवाज काफी स्पष्ट सुनायी पडती थी। नही तो छुपती-छुपती-सी आती थी। अग्रेजी मे भाषण चल रहा था। जरूर कोई प्रोफेसर बोल रहा है। अनुकूल ने अपने कानो को थोड़ा चेतन किया। उसकी अग्रेजी विलायती अंग्रेजी थी। उत्तेजित था। जितना कुछ वह समझा उससे यही लगा कि वह रामउजागर की छुट्टी कैंसिल करने के विरुद्ध है। उसका कहना था, उसने गुण्डई अभी नही छोडी ! पहले ही की तरह वह अभी भी डराता-धमकाता है। पूरे संस्थान को वह एस. सी./एस. टी. देशम् मे परिवर्तित कर देना चाहता है। वह किसी भी सीमा तक जा सकता है। छुट्टी खत्म होने के बाद उसके मामले पर विचार किया जाना चाहिए। वह भी तब जब मेडिकल बोर्ड उसकी पूरी तरह से जाँच कर ले। इस समय उसका प्रवेश सस्थान के हित मे नही होगा। अन्त मे उसने एक वाक्य और जोड़ा---रामउजागर ने अपने से हर तरह से वरिष्ठ एक लड़की को बेइज्जत करके संस्थान छोड़ने के लिए मजबूर कर दिया। मैं उस लड़की का नाम लेना आवश्यक नही समझता।

अनुकूल उसके आरोपों को सुनकर दग रह गया था। एक बार उसको उत्तेजना हुई कि वह दरवाजा धकेलकर अन्दर घुस जाये। उसे इस सफेद झूठ का प्रतिरोध करना चाहिए। अगर वह नही करता तो वह निकम्मा है। इन सबको नीलम्मा का पत्र दिखायें। लेकिन उससे क्या होगा ? लोग हँस देंगे। किसी भी बात का व्यर्थ जाना एक अवसर का व्यर्थ हो जाना है। नीलम्मा का पत्र निकालकर वह दोबारा पढने लगा—

प्रिय अनुकूल,

जो बातें सुनने को मिलती है उनकी जाँच-पडताल करने का मेरे पास कोई साधन नही। मैं चाहती थी कि जो कुछ भी घटित हो रहा है उससे अपने को अनजान बनाये रखूँ'''होने दूँ। ऐसा कभी-कभी तो सम्भव हो जाता है पर हमेशा और हर एक सन्दर्भ मे सम्भव नही होता। कुछ लोगो के साथ ऐसे सम्बन्ध बन जाते हैं, जब तक वे बच्चो की तरह सोते रहते हैं अपने को उनके प्रति तटस्थ बनाये रखा जा सकता है। लेकिन जहाँ उन्होने कुनमुनाना, रोना या चिल्लाना शुरू किया फिर चाहे कोई कितना भी सन्तुलित क्यों न बना रहना चाहे, अपने को अलग बनाये रखना सम्भव नही हो पाता। कभी-कभी मुझे लगता है कि इस तरह की बाते लिखना और कहना मेरी आदत हो गयी है। लेकिन तुम्हें ज्यादा माथापच्ची करने की जरूरत नही। हाँ, जो पूछूँ उसका सही-सही जवाब देना।

क्या राम तुम्हारे पास है ? वह क्या वास्तव में फिर से संस्थान लौट आना चाहता है ? वह क्या ऐसी मानसिक स्थिति में है कि फिर से अपने बिखराव को समेटकर एकाग्रता के साथ पढ़ सके और पहलेवाले स्तर को प्राप्त कर सके ? अपने साथियों की समस्याओ मे वह पहले की तरह भागीदारी कर पाता है या नही ? छुट्टी कैंसिल करके उसे अगले सेमिस्टर मे पढ़ने की इजाजत देने के बारे मे सस्थान का क्या रुख है ?

अगर इन सब सवालों का उत्तर नकारात्मक है तो मेरा सुझाव मानो। प्रोफेसर मलकानी राम को बहुत मानते हैं। तुम और राम उनमें मिलो। हो सकता है समस्या का समाधान निकल आये। मैं जानती हूँ तुम लोगों का साथ देने के कारण प्रशासन ने उन्हें प्रशासन विरोधी करार दे रखा है। इसलिए फैकल्टी भी उनसे बचती है। उस सबके बावजूद वे राम जैसे छात्रों की मदद करने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। मैंने इन दोनों से ही बहुत कुछ सीखा है। यही कारण था'''मैं राम की बिगड़ती स्थिति को और अधिक बिगड़ते जाने के कारण मौन दृष्टा बनकर नहीं देखती रह सकती थी। जिस व्यक्ति ने दूसरों को अपनी उँगली पकड़ाकर चलना सिखाया हो उसी को केवल अपने सहारे लड़खड़ाते, डगमगाते, गिरते-पड़ते चलते देखना कितनी बड़ी यन्त्रणा है। उसके अपने लिए भी और दूसरे के लिए भी। मैं नहीं चाहती कि इन सब बातों को राम से कहो। मैं जानती हूँ मेरे इस तरह अचानक चले आने का राम के मन पर विपरीत प्रभाव पड़ा होगा। लेकिन मैं मजबूर थी। एक सूरमा को घिसटते देखना अपने आप में विडम्बना होती है। उस सम्पूर्ण स्थिति के सन्दर्भ में मैं अपने को अप्रासंगिक बनाकर पूरी तरह अर्थहीन भी नहीं बन जाना चाहती थी।

वहाँ के सब हालात से सूचित करते रहा करो। राम की जिम्मेदारी, छोटे होते हुए भी, तुम्हारे कन्धों पर आ पड़ी है। शायद यह तुम्हें कुछ सिखा जायेगी। तुम्हारे आत्मविश्वास को और बुलन्द करेगी। मुझे तुम्हारी सामर्थ्य और सहनशीलता का थोड़ा-बहुत अन्दाज है। फिलहाल तो मैंने अपने इस पक्ष को समेटकर अपने अन्दर ही बन्द कर दिया है। मैं झाँककर देखना तक नहीं चाहती। देखूँगी तो आत्मग्लानि का एक पहाड़ उठता चला आयेगा। फिर भी तुम मेरी जब भी जरूरत समझो, तत्काल सूचित करना। मैं तत्काल पहुँचने की कोशिश करूँगी। हालाँकि वक्त के बाद उपस्थित होना महज औपचारिकता की ही पूर्ति होती है।

शुभकामनाओं सहित,
नीलम्मा।

चिट्ठी पढ़ते समय अन्दर की जो आवाजें तनक-मनक सुनायी पड़ रही थी, चिट्ठी पढ़ना खत्म करते ही वे स्पष्ट होने लगीं। प्रोफेसर मलकानी बोल रहे थे। इतने स्पष्ट ढंग से बुलन्द आवाज में बोलनेवाला उनके अलावा कोई और नहीं हो सकता। अनुकूल ने और गौर से सुनने की कोशिश की। बुलन्द आवाज में बोलते हुए भी मलकानी साहब की आवाज उत्तेजनाविहीन थी। एक-एक शब्द तोल-तोलकर कह रहे थे—"'''रामउजागर के बारे में जो भी लोग यह कहते हैं कि वह गुण्डा है, उसने अपने से वरिष्ठ और श्रेष्ठ जाति की लड़की के साथ बद-सलूकी की तथा उस लड़की को संस्थान छोड़ देने के लिए मजबूर किया वे महज अपनी जातीय घृणा को अभिव्यक्ति दे रहे हैं। जब आक्षेप का आधार तथ्य नहीं होते तो घृणा होती है। घृणा और विद्वेष का कोई प्रतिकार नहीं होता। थोड़ी देर को आप वह पौराणिक बन्दर (लीजेण्ड्री एप) बन भी जायें और घृणा और विद्वेष की मूर्छा को

दूर करने के लिए सत्य का पहाड उठाकर ले भी आये तो भी उस मूर्छा का टूट पाना सम्भव नही होगा। यदि मुझे ऐसा लगे कि मेरे प्रमाण प्रस्तुत करने पर आप अपना यह पूर्वनिश्चित विचार बदलने के लिए तैयार हैं तो मै इस बात को झूठ साबित करने के लिए तथ्य प्रस्तुत कर सकता हूँ। पर ऐसा नही है। मैं रामउजागर को भी जानता हूँ और उस लडकी को भी, जिसका नाम लेने मे यहाँ लोगो को झिझक महसूस हो रही है। बड़ा अजीब जमाना आ गया है। हम सच्चाई की शक्ल पहचानना भूल गये। झूठ को सच्चाई की तरह प्रस्तुत करना हमारा शेवा हो गया। हम लोग बातो के दो पक्षो को जानते है। एक वह जो हमारे हितो से मेल खाता है, दूसरा वह जो नही खाता यानी हमारे हित का विरोधी है। वह जो हमारे हित मे होता है उसे हम सच्चाई मानते है और जो विरोधी होता है वह झूठ। इस बात को समझने की सामर्थ्य हममे रही ही नही कि विरोध भी अपने मे सच्चाई हो सकता है।

"जो कुछ मैं कह रहा हूँ, उन सबकी नजरो मे वह झूठ हो सकता है जो इस इरादे के साथ आये है कि रामउजागर को संस्थान मे नही रहने देना है। वे लोग इस बात पर अडिग हैं कि उससे समकक्ष बनने का स्वप्न छीनकर उसी समाज को वापिस भेज दिया जाय जहाँ से वह आया है, जिससे कि वह नीच और दलित बनकर रहने की नियति के सुपुर्द किया जा सके। अगर आप क्षमा करे तो मैं कहना चाहूँगा कि वही समाज सवेदनशील, मानवीय और विकासशील होता है जिसमे हर इन्सान के पास अपनी मेहनत के सहारे अपने भविष्य को सँवारने का अधिकार हो तथा जहाँ पर लोगो के जन्मजात खूँटे न गड़े हो। हम एक छोटे स्तर पर वही सब कर रहे हैं जो बडे और शक्तिशाली राष्ट्र अविकसित देशो के साथ करते है। उन्हे उसी हालत मे रहने के लिए मजबूर करते है जिनमें सदियो से रह रहे है। आप यह समझ ले कि हम न तो शक्तिशाली राष्ट्र है और न ये शक्तिविहीन देश। कभी भी उठ खड़े होगे। और हमे तब यह सोचने के लिए स्वयं मजबूर होना होगा कि दोनो के बीच क्या रिश्ता था और क्या होना चाहिए।"

एकाएक बीच में किसी ने दखल दिया, "यह कुतर्क है। इन दोनो स्थितियो के बीच कोई समानता नही।"

प्रोफेसर मलकानी ने अपनी बात जारी रखी, "क्या वे लोग भी हमे अस्पृश्य समझकर हमारे खिलाफ घृणा के बीज नही बो रहे? वे हमे बराबरी का दर्जा नही देना चाहते। क्या हम उनकी नजरो मे पढ़े-लिखे, वैज्ञानिक और तकनीकी धन-लोलुप मजदूर नही है? जब उन्हें जरूरत होती है तो दिहाड़ी पर हमे बुला लेते है और हम खुशी-खुशी दौड़े चले जाते है। कसकर काम कराते हैं और फिर डालरो मे भुगतान करके बैरग वापिस भेज देते है। मै स्वय उन्ही मे हूँ। क्या हमने कभी कोई ऐसा पौधा लाकर अपनी धरती पर रोपा जो हमारे देश को समृद्ध कर सके? काम पूरा होने पर वे इस तरह झटक देते है जैसे हम लोग बाँह पर चढी चीटी को झटक देते हैं। यहाँ आकर हम अपने लोगों की वास्तविकताओ के प्रति अपने आपको इतना असहिष्णु बना लेते हैं कि हमारा मुँह फालिज मारे चेहरे की तरह टेढा बना रहता है। हर उस आदमी को दुतकारते है जो हमसे मानवीय व्यवहार की

आशा रखता है और हर उस आदमी के जूते चाटते हैं जो हमे दुतकारने की क्षमता रखता है। राम ने ऐसा क्या किया कि वह आपकी नजरो मे एक गुण्डा और गिरा हुआ इन्सान हो गया? उसने किसके साथ गुण्डई की? आपके···? आपके···? आप-के···? यहाँ कोई भी व्यक्ति अगर यह कह सके कि उसने उसके साथ दुर्व्यवहार किया तो मैं यहाँ से इसी वक्त चला जाऊँगा। वह पढ़ने में कब पिछड़ा? सिवाय उन दिनो के जब वह अस्वस्थ हो गया था। फतवेबाजी से आप घृणा को भड़का सकते हैं पर सत्य का मुंह काला नही कर सकते। मानसिक रोग से ग्रस्त एक नौजवान को आप और अधिक रोगी बनाना चाहते है···उसके साथ संवेदनशीलता बरत कर उसे दुर्भाग्य से छुटकारा दिलाने मात्र से आपको परहेज है। मैं पूछता हूँ अगर उसने छुट्टी न ली होती तो क्या आप उसे इस बिनाह पर निकाल सकते थे? वह अपना इलाज करवाता रहता और यहाँ बना रहता। मैं जानता हूँ कि ये सब बातें कहकर अपने प्रति आपकी नफरत को और गहरा कर रहा हूँ। लेकिन इसका मुझ पर क्या प्रभाव पड़नेवाला है? कुछ नही। अगर आप लोगो ने उसे वापिस नही आने दिया तो मैं खामोश नही बैठूंगा। अगर मुझे इस संस्थान को भी छोडना पड़ा तो आप मुझे पीछे हटता नही पायेंगे···।"

थोड़ा और बोलने के बाद प्रोफेसर मलकानी की आवाज थम गयी थी। अनुकूल को लगा, उनके भाषण ने उन सबके चारो तरफ सन्नाटे की एक अभेद्य दीवार रच दी है। वे उसे तोड नही पा रहे हैं। उनके धड़ो पर रखी गर्दनें पत्थर की हो गयी हैं।

काफी देर बाद आवाजें लौटी। केवल कमेटी के अध्यक्ष ने दो-चार वाक्य बोले—मामला गम्भीर विचार की माँग करता है। कोई भी निर्णय लेने से पूर्व चेयरमैन सीनेट से मशवरा करना जरूरी होगा। वैसे भी हमारी यह कमेटी सीनेट की ही उपसमिति है। हमारा काम सीनेट को निर्णय लेने मे सहायता करना है। यहाँ पर हुई चर्चा को ध्यान मे रखते हुए श्री रामउजागर के प्रार्थना-पत्र पर निर्णय स्थगित करना ही उचित होगा।

मीटिंग समाप्त हो गयी। कुर्सियाँ खिसकने की आवाजें सुनायी पड़ी। अनुकूल एक तरफ हटकर खडा हो गया। सबसे पहले प्रोफेसर मलकानी बाहर आये। वे तेजी के साथ चले गये। उसका मन था कि वह उनसे बात करे। लेकिन वह उतना तेज चल पाने मे असमर्थ था।

फिर और लोग बाहर आये। उनमें से कुछ लोग चेयरमैन को बधाई दे रहे थे। उन्होने स्थिति को बहुत अच्छी तरह सँभाला था। हो सकता था प्रोफेसर मलकानी के भाषण ने कुछ लोगो को इतना प्रभावित कर लिया हो कि वे उनके पक्ष मे ही हाथ उठा देते। कुछ लोगों के चेहरो से लग रहा था कि उनके चेहरे रामउजागर के लिए सहानुभूति के भाव से भर गये हैं।

चेयरमैन मुस्कुरा रहे थे। उन्हें अपनी समझदारी का अहसास था।

लोगो के विदा हो जाने के बाद चेयरमैन अकेले हो गये थे। जैसे ही वे मुडे किसी ने

प्लाण्ट को ठण्डा रखने के लिए निरन्तर चलते फुहारों की आवाज उसे अब तक महसूस क्यो नही हुई थी ? अब वह एकाएक सुनायी पड़ने लगी थी। ताल के ही पानी की फुहारें उसी ताल मे गिर-गिरकर आवाज कर रही थी। वह उसके नजदीक आकर खडा हो गया। अस्त होते सूरज की किरणे ऊपर जाती बारीक-बारीक जल-धाराओं पर इन्द्रधनुष बना रही थी। अनुकूल को यह इन्द्रधनुष आकाश के इन्द्रधनुष से ज्यादा नजदीक महसूस हुआ और गहरा भी। अगर वह बच्चा हुआ होता तो अवश्य उसे छूने या पकड़ने की कोशिश करता। भले ही पानी मे डुबकी लगा जाता। सोचकर उसे हँसी आ गयी।

इन्द्रधनुष से गुजरकर ताल की सतह पर पारे की गोलियो की तरह गिर-गिरकर बिखरती बूँदे धीरे-धीरे उसे भी ताल का हिस्सा बनाये ले रही थी। किनारे पर ही खड़ा-खड़ा वह उस इन्द्रधनुष और उन बिखरती बूँदो मे समा गया था। धीरे-धीरे खड़िया खिंची रेखाओ की तरह इन्द्रधनुष मिटने लगा। टूटती-बिखरती बूँदो मे डूबते दिन के साये नजर आने लगे। उसने घूमकर देखा, सूरज ऊँची-ऊँची इमारतो के पीछे डूब रहा था। उसे एकाएक लगा कि अब कुछ नही हो सकता। रामउजागर इन्तजार कर रहा होगा। लेकिन उसे बताने के लिए उसके पास है ही क्या ?

परिसर खामोश था। लोग अपने-अपने घर लौट चुके थे। लाइब्रेरी की बत्तियाँ पूरे जोर-शोर के साथ रोशन थी। दिन मे बत्तियाँ अन्दर ही रहती है, अब सबकी सब बाहर निकल आयी थी। सीढियो पर चढ़ते और उतरते लड़के नजर आ रहे थे। अनुकूल लाइब्रेरी की तरफ मुड़ गया। लाइब्रेरी मे दोपहर थी। हर रोशनी दूसरी का सहारा लेकर और चमक रही थी। लडके अपनी-अपनी सीटो पर गर्दन झुकाये बबुआ बने बैठे पढ रहे थे।

वह कोने में जाकर बैठ गया। घुटने मे दर्द बढ गया था। थोडी देर तक वह घुटना सहलाता रहा। फिर फाइल में से कागज निकालकर नीलम्मा के पत्र का जवाब लिखने लगा :—

आदरणीय नीलम्माजी,

आपकी चिट्ठी आज सवेरे बोर्ड पर लगी मिली। गनीमत है उस पर किसी की नजर नही पडी। सामान्यतः चिट्ठियाँ बिना सेंसर हुए मुझ तक नही पहुचती। यहाँ तक कि घर से आनेवाली चिट्ठियो तक को खन्ना साहब के सेंसर विंग मे होकर गुजरना पड़ता है। लेकिन खैर, मुझे क्या फर्क पडता है। इनी-गिनी चिट्ठियाँ आती हैं। बस यह है कि कोई जरूरी सन्देश हुआ और न मिल पाया तो जरूर अफसोस होगा। चिट्ठी बोर्ड पर लगी मिल जाने का यह भी कारण है कि चिट्ठी छांटनेवाला बाबू नया है। वैसे भी आज मैं लंच से थोड़ा पहले ही हॉस्टिल पहुँच गया था। खैर !

आपका पत्र पढकर मुझे लगा कि आप रामउजागर दादा को लेकर चिन्तित हैं। मुझे स्वय आपको उनके हालचाल मे अवगत कराते रहना चाहिए। कभी-कभी आलस्य कर जाता हूँ। आपका जो पत्र रामउजागर दादा के नाम आया था उसका यह प्रभाव हुआ कि दादा ने मेरे साथ हॉस्टिल मे रहने

का निश्चय कर लिया। उनके बापू भी उसी दिन वापिस गाँव चले गये। आपकी चिट्ठी से उनके बापू को भी निर्णय लेने मे सहायता मिली। दादा का अब यही रहने का इरादा है। लेकिन यही एक परेशानी है कि आपके सामने उनकी मानसिक स्थिति जितना सँभल गयी थी अब उसमे उतनी गिरावट आ गयी है। फिर अपने मे डूबे रहने लगे है। उनके प्रवेश को लेकर भी काफी झझट है। अगर उन्हें अगले सेमिस्टर में रजिस्ट्रेशन की इजाजत मिल जाती तो शायद स्थिति कुछ संभल जाती। लेकिन कोई आशा नजर नही आती। उनके विरुद्ध ऐसे-ऐसे आरोप लगाये जा रहे है कि कल्पना तक नही की जा सकती। गुण्डई करते हैं ऐसे लडको की उपस्थिति इण्डस्ट्री के लोगों को नाराज करती है तथा होशियार लडके कुण्ठित अनुभव करते है उन्होने किसी सवर्ण लड़की के साथ बदसलूकी की और उस लडकी को सस्थान छोडकर जाने के लिए मजबूर होना पडा। प्रोफेसर मलकानी अकेले आदमी थे जो चट्टान की तरह अड़कर खड़े हो गये। घण्टा-भर बोले।

अभी कुछ देर पहले एस. यू. जी. सी. की मीटिंग खत्म हुई है। लेकिन कोई निर्णय नही हो पाया। अगर वोटिंग हो गयी होती तो दादा जीत जाते। प्रोफेसर साहब ने ऐसा समाँ बाँध दिया था कि एस. यू जी. सी. के चेयरमैन अठावले साहब तक उनके भाषण से प्रभावित हो गये थे। इसीलिए उन्होने बहाने से निर्णय स्थगित कर दिया। मैंने डिप्टी डायरेक्टर को कहते सुना था कि मीटिंग तब तक न बुलायी जाये जब तक मलकानी साहब कमेटी से हट न जायें। हालाँकि अठावले साहब की अपनी राय यही है कि दादा की प्रार्थना मान ली जानी चाहिए। नही तो वैमनस्य ही बढेगा।

मुझे पूरे वक्त यही लगता रहा कि अगर आप यहाँ हुई होती तो स्थिति भिन्न हुई होती। मैं पैर से भी मजबूर हूँ और नया हूँ। छोटा भी पड़ जाता हूँ। राम दादा अकेला भी महसूस करते हैं और उन्हे किसी से मिलने जाने मे घबराहट भी होती है। कभी-कभी वे इस हद तक सोच जाते हैं कि या तो परशुराम की भाँति फरसा लेकर पूरी पृथ्वी को हम सवर्णविहीन कर दें या फिर वे हमको नेस्तनाबूद कर डालें। लेकिन जब मन शान्त होता है तो कहते हैं कि मैं उत्तेजना मे हिंसा का पक्षधर हो जाता हूँ। हिंसा की कोई उपयोगिता नही होती। देश अलबत्ता बरबाद हो जाता है। पेड काटो तो पेड तो कटता ही है उसकी छाँह भी कट जाती है। देश की तो सभी सन्तान हैं। वे सब जो अपने लिए और अपने बच्चो के लिए सम्मानजनक जीवन पाने के लिए सघर्परत हैं, सबकुछ इसीलिए तो कर रहे हैं कि वे और उनकी आनेवाली पीढियाँ सही मायनों में जिन्दा रह सकें। सघर्ष ही संघर्ष की कुंजी है। ऐसे-ऐसे वाक्य बोलते हैं कि दिमाग खाली हो जाता है। इनका सोच बहुत गहरा है। पर वक्त की मार!

मेरे दिमाग मे एक और सवाल घूमता रहता है। अगर उन्हें अगले सेमिस्टर मे रजिस्टर करने की अनुमति मिल गयी तो क्या वे उसे सँभाल पायेंगे? दादा ने यह निश्चय कर लिया है कि वे अब इस रूप में घर वापिस

नही लौटेंगे। लोग यह भी चर्चा करते है कि मेडिकल-बोर्ड बैठाकर वर्तमान मानसिक हालत की बिनाह पर उन्हे संस्थान से हमेशा के लिए निकाल दिया जायेगा। डिप्टी डायरेक्टर भी गिरते हुए स्तर के लिए हम लोगो को ही उत्तरदायी मानते हैं। इसलिए स्तर बनाये रखने के लिए सबकुछ करने को तैयार है। ये सब बातें दादा को पता चलेंगी तो उनके दिल पर क्या गुजरेगी? उनके पिताजी की चिट्ठी भी कभी-कभी मेरे पास आती है। वे ज्यादा तो नही लिखते···पिछले पत्र मे, जो कुछ ही दिन पहले आया है, उन्होने लिखा है कि मैं यह समझ चुका हूँ कि अब मैं अपने बेटे को उस रूप मे कभी नही देख पाऊँगा। दूसरो की हिरस मे बेटे को लाठ साहब बनने के ख्वाब देखे थे। लेकिन हुआ उल्टा। उसे हमेशा के लिए खो दिया। मेरे लिये लिखा है कि जिस तरह तुम रामउजागर की देख-भाल कर रहे हो इससे मैं आश्वस्त हूँ कि उस पर तुम्हारा ही अधिकार है। जब तुम ऊबने लगो तो यही समझना कि समस्या का कही कोई समाधान नही। मुझे लिख देना मैं आकर उसे ले जाऊँगा। अब तो वह जहाँ भी रहेगा, जिन्दगी को एक सजा की तरह ही काटेगा। मुझसे जो भी कोई अपने बच्चो के बारे में सलाह लेता है तो मैं यही कहता हूँ कि जैसे मछली का जाया पानी मे रहकर खुश रहता है उसी तरह मिट्टी के जाये को मिट्टी मे ही रहना चाहिए। ऐसे बच्चो के अन्दर सपने भरना बारूद भरने की तरह होता है।

हालांकि उन्होंने चिट्ठी किसी और के द्वारा लिखवायी थी पर उसमे बापू का दिल उतर आया था। मेरे बाबू भी आजकल कुछ ऐसी ही मानसिकता के शिकार हैं। शायद एक स्तर पर पहुँचकर सारे पिता एक ही तरह सोचने लगते है। खन्ना वगैरह की भाग-दौड देखकर यही लगने लगा है कि इन लोगों ने हमारे उन्मूलन का निर्णय ले लिया है। हम लड नहीं सकते पर सह सकते हैं। इसलिए उन्मूलन इतना आसान नही पड़ेगा। दरअसल मैंने कही पढ़ा था कि सहनशक्ति मे अनन्त सम्भावनाएँ होती है। वह मनुष्य को एक बार को तो मृत्यु के सामने भी ताल ठोककर खड़ा कर देती है। अगर आवश्यकता पड़ी तो हमारा बलिदान ही हमे आगे ले जायेगा।

सादर,
अनुकूल

अनुकूल ने एक संक्षिप्त-सी चिट्ठी रामउजागर के पिता को भी लिखी :

पूज्य बापू,

आपकी चिट्ठी ने मेरे मर्म को छू दिया। रामउजागर दादा एक बहादुर इन्सान है। मैंने एक बार महाराणा प्रताप की कहानी पढ़ी थी। जब वे अकबर की सेनाओ से बुरी तरह हार गये तो उनके सामने भी ऐसे ही निराशा के क्षण आये थे। वक्त ने उनका साथ दिया और निराशा के उस गहन अन्धकार से बाहर निकल आये। हर वीर आदमी के साथ ऐसी स्थितियाँ आती हैं।

हम लोग जिस कुएँ में लटके थे उससे निकलने के लिए किसी को तो सीढी का नीचेवाला डण्डा बनना ही पडेगा। हमे आपके आशीर्वाद की जरूरत

है। आपका आशीर्वाद ही हमारी वास्तविक हिम्मत है।

जब तक मै यहाँ हूँ आप जरा भी चिन्ता न करें। अब मेरी टाँग भी काफी ठीक है। काफी चल लेता हूँ। राम दादा ठीक होने के लिए अपनी इच्छा शक्ति लगा रहे है। हालाँकि मैं उनसे छोटा हूँ फिर भी वे मुझसे अपने मन की बात कह लेते है।

कोशिश जारी है। अगर अगले सेमिस्टर मे नाम लिखाने की इजाजत मिल गयी तो वे पूरी तरह ठीक हो जायेंगे। हम लोगो को हर उस छोटे-से-छोटे काम के लिए सघर्ष करना पडता है, जो दूसरो के लिए साधारण-सी बात होती है।

घर मे मेरा सबको प्रणाम। रामउजागर दादा आप लोगो को हर समय याद करते रहते हैं। उनका इरादा कुछ करके ही आने का है।

आपका,

अनुकूल

चिट्ठियाँ लिख लेने के बाद बन्द की और उन्हे डालने चल दिया। उसके पाँव का दर्द बढता जा रहा था।

रामउजागर अपनी कुर्सी पर बैठा खिड़की के बाहर अँधेरे लैण्डस्केप के आरपार देखने की कोशिश कर रहा था। इस अँधेरी चादर के बीच कही-कही सुराख बाकी थे। अँधेरे की गहनता और उसके बीच के वे सुराख उसे सगीतमय लग रहे थे। आरोह-अवरोह।

अनुकूल अन्दर घुसा तो रामउजागर के अन्दर एक अजब हलचल-सी पैदा हो गयी। वह झटके के साथ खड़ा हुआ। अनुकूल थोड़ा सहम-सा गया। लेकिन बिना कुछ कहे वह तुरन्त ही फिर कुर्सी पर बैठ गया।

अनुकूल ने ही पूछा, "क्या बात थी?"

"कुछ नही। ऐसे ही।"

अपनी फाइल वगैरह मेज पर रखकर वह रामउजागर के पास जा खड़ा हुआ। रामउजागर के पाँव लगातार हिल रहे थे। वह अपने हाथ की उँगलियो को बराबर करके उन पर अँगूठा फेर रहा था। होंठ सूखे थे। आँखे अजीब तरह से फैली हुई थी।

अनुकूल ने फिर पूछा, "द'दा, क्या अँधेरे मे भी खिड़की के बाहर देखते रहोगे? वहाँ क्या देखा करते हो?"

"चाहे दिन का अंधेरा हो या रात का' हमे तो अँधेरे मे ही देखना है। सोचता हूँ कही कोई किरण फूट पडे और रास्ता निकल आये।" फिर वह अपने-आप ही बुदबुदाया, "लेकिन ऐसा कहाँ होता है मन बहलाने के लिए सोचा करते हैं कि कभी ऐसा होगा।"

"होगा···लेकिन धैर्य चाहिए।"

रामउजागर ने फौरन कहा, "धैर्य का कोई मतलब नही होता। धैर्य अनन्त

नही हो सकता। चाहे कितना भी दीर्घ क्यों न हो पर उसकी कोई एक सीमा तो होगी ही। अनन्त तो केवल सब्र है जिसके आ जाने पर सब विकल्प और आशाएँ समाप्त हो जाते हैं।"

"ऐसा क्यों कहते हैं? आज ही मलकानी साहब ने कहा था कि अपने देश के नौजवानों को निराशा की गोद मे मत जाने दो। उन्हें बचाओ। निराशा की एक भी बूंद अन्दर पैठ जाती है तो धीरे-धीरे वह पत्थर की ऐसी चट्टान बन जाती है जिसे डाइनामाइट से भी नही उड़ाया जा सकता। उसी पर सिर पटक-पटककर दम तोड़ देना पड़ता है। उसी के बाद से मेरे दिमाग मे यह प्रश्न उठ रहा है कि कहीं अनजाने ही हम सब किसी ऐसे ही पत्थर के नीचे ही तो नही दबे हैं? जब तक सब मिलकर जोर नही लगायेंगे उससे मुक्त होना असम्भव है। दिन-पर-दिन वह भारी होता जायेगा। शायद सदियों से बनती यह चट्टान हमारी जिन्दगी का हिस्सा हो गयी है। उस दिन मलकानी साहब ने कहा तो मुझे ध्यान आया।"

रामउजागर की आँखों मे चमक की एक-एक सुई उभरी।

"क्या प्रोफेसर मलकानी ने ऐसा कहा?"

"हाँ, कुछ ऐसा ही कहा।"

अनुकूल के देखते-देखते वह चमक फिर बुझ गयी। अनुकूल ने बात बदलने के लिए उससे पूछा, "द'दा, तुमने पूछा नही आज मीटिंग मे क्या हुआ?"

"मैं जानता हूँ कुछ नहीं हुआ होगा। न कुछ होना है।"

"होना क्यों नही? प्रोफेसर मलकानी के भाषण से सारी कमेटी थर्रा गयी। निर्णय स्थगित करा दिया गया। अगली बार···"

"अगली बार···।" वह हँसा, "अगली बार न कभी आती है और न आयेगी, कम-से-कम मेरे सन्दर्भ मे तो नही आयेगी।"

"द'दा, निराशा आप पर बुरी तरह हावी होती जा रही है?"

"नही, सब्र।" फिर रुककर पूछा, "नीलम्मा का कुछ पता चला।"

"हाँ, आज एक चिट्ठी आयी है।"

"हूँऽऽ।" कहकर रामउजागर चुप हो गया।

अनुकूल ने चिट्ठी बढ़ा दी, "पढ़ लीजिए।"

"तुम्हे लिखी है। मुझे पढ़ाना होता तो मुझे लिखती।"

"पूरी चिट्ठी आपके बारे मे ही है।"

"नीलम्मा को लिख देना कि मैं तो एक ऐसे कोरे हाशिये की तरह हो गया हूँ। जो खाली छोड़ दिया जाता है। उसके बारे मे क्या बात करनी? मुझे इस बात से अफसोस होता है कि नीलम्मा का और तुम्हारा समय व्यर्थ मेरी चिन्ता मे बरबाद होता है।" थोड़ी देर चुप रहा। फिर कहा, "कल डाकखाने जाओ तो दो-एक अन्तर्देशीय लेते आना। बाबू को चिट्ठी डाल दूँगा।"

"लिफाफा है।"

"नही, कल अन्तर्देशीय ही लेते आना। पैसा-पैसा कठिन हो जाता है। एक रोज मैं प्रोफेसर मलकानी के पास भी जाना चाहता हूँ। उनसे कहूँगा, कोई छोटा-मोटा काम दिला दें। इस तरह ज्यादा दिन नही चल पायेगा।" फिर हँसा, "और कुछ

नही तो अपना खानदानी काम तो कर ही सकता हूँ। हो सकता है शुरू मे उतनी कुशलता से न हो पाये। कुछ तो कर ही लूँगा।"

"लेकिन यहाँ तो उस तरह का कोई काम नही।"

"तो फिर उठाने-धरने का या झाड़-पोछ का ही कोई काम मिल जायेगा।"

अनुकूल को लगा कि वह अपने-आपको रोक नही पायेगा। उसकी आँखें चिरपिरा उठी। वह भरे हुए गले से बोला, "क्या कह रहे हो द'दा···?" वह और आगे नही बोल पाया।

"काम की बात !" हँस दिया। फिर बोला, "कुछ तो करना ही होगा। पिता हो या कोई और ··पाने के लिए आदमी सबकुछ बेचकर भी लगा देता है, डुबाने के लिए लाखो की जमा का हजारवाँ हिस्सा भी लगाने मे दिल दरकता है। लौटकर घर जाऊँगा नही, बापू मे माँगूँगा नही। कटेगी तो कैसे कटेगी ?"

"अच्छा चलो खाना खा आयें ··।" अनुकूल की समझ मे कुछ नही आया तो उमसे यही कहकर वात को मोड दिया।

"हाँ चलो, यही अच्छा करते हैं कि शुरू मे ही खा आते है, साहब लोगों के डिनर पर आ जाने के बाद पता नही क्या हाथ लगे·· ?"

अनुकूल मुस्करा दिया।

खाना खाने वे लोग सीधे न जाकर अँधेरे गलियारो से निकलते हुए, लम्बा चक्कर काटकर डाइनिंग हॉल मे पहुँचे। अँधेरे मे चलना उन्हें ज्यादा अच्छा लग रहा था। रास्ते-भर शायद ही उन्होंने एक-आध वाक्य बोला हो।

डाइनिंग हॉल मे सबसे पहले पहुँचनेवाले वे दोनो ही थे।

अनुकूल ने कहा, "खाना हो गया हो तो खा लें।"

मैनेजर बोला, "आप लोगो को सबसे पहले भूख लगती है।" और हँस दिया। अनुकूल थोडा-सा मकपका गया।

रामउजागर सभी को जानता था। बोला, "ठीक कहते हो लेकिन भूख हमेशा नही लगती। कभी-कभी भूख लगने के डर से भी खा लेना पडता है।"

वह झेंप गया। लेकिन बोला, "आज वार्डन साहब आये थे। कह रहे थे कि किसी को आठ बजे से पहले न परोसा जाय। लड़के आपत्ति करते हैं।"

रामउजागर लौट पडा, "तो फिर चलो।" चलते-चलते रुककर पूछा, "और कुछ तो नही कहा ?"

"कहा था।" कुछ देर तक वे उसकी ओर देखते रहे। अनुकूल ने ही पूछा, "क्या कहा था ?"

"कह रहे थे कि खाने मे हीरो, पढ़ने मे जीरो···।" हँस चुकने के बाद बोला, "पन्द्रह दिन से ज्यादा गेस्ट बनाने पर पाबन्दी लगानेवाले है। पन्द्रह दिन से ज्यादा गेस्ट रखने के लिए मैनेजर के 'थुए' वार्डन से इजाजत लेनी पडेगी।"

"हूँऽऽ।" रामउजागर ने लम्बी सांस ली।

अनुकूल ही बोला, "यहाँ तो बहुत-से लोग स्टुडेण्ट भी नही, पर मेस मे सालो

से खा रहे हैं।"

एक दूसरा कर्मचारी चुपचाप खड़ा रहा था। उस पर रुका नहीं गया तो टपक पड़ा, "आप लोगों की बातें करते है, अरे बहुत-से वार्डनों के घरवाले, आये-गये सब यहीं से खाते है फर्क इतना ही है कि उनके लिए वहां जाता है।" उसने मैनेजर की तरफ जलती नजरों से देखा।

मैनेजर एकदम बदल गया, "अरे यह नियम कोई तुम्हारे लिए थोड़े ही है। तुम्हारे तो कमरे मे रख आया करेंगे, रामउजागर भैया!"

"नहीं ऐसा मत करना, और भी मरन हो जायेगा···कुछ-न-कुछ इन्तजाम तो हो ही जायेगा। बिना किये खाना तो चोरी है ही और छुपाकर खाना तो और भी बड़ी चोरी हो जायेगी। इसकी आग से कौन बचायेगा?"

वे दोनों फिर लौट पड़े। लौटते हुए उन्हें अँधेरा और गहरा महसूस हुआ। दीवारें तो दीवारें थीं ही·· बराण्डों का एक तरफ का खुलापन भी दीवार-जैसा ही लग रहा था।

उन दोनों ने कैंटीन मे जाकर एक-एक प्याला चाय पी और दो-दो डबल रोटी के टुकड़े खाये। और सो गये।

ग्यारह

अनुकूल क्लास मे गया हुआ था। रामउजागर कमरा बन्द किये टहल रहा था। बार-बार उसके दिल में यही सदा उठती थी कि अब कुछ नहीं हो सकता। सब खत्म। न कहीं ठहरने का और न खाने का हिसाब। उसने खिड़की भी बन्द की हुई थी। बाहर की तरफ से अपने को काटा हुआ था।

किसी ने खटखटाया। रामउजागर ठिठका। दो बार खटखटाया। वह दरवाजे की तरफ बढ़ा। फिर वही खुराफात! उसने चटखनी खोल दी। तारवाला था।

"अनुकूल नाम के बाबू इसी कमरे में रहते है?"

रामउजागर ने गर्दन हिलाकर 'हाँ' कर दी। वह बोला, "तार है।"

रामउजागर थोड़ा चौंका। बिना कुछ कहे तार ले लिया और दस्तखत कर दिये। कमरे में आकर वह एक-आध मिनट उसे लिये खड़ा रहा। हो सकता है नीलम्मा का हो? वह आ रही है? पहले उसने बिना खोले मेज पर रख दिया। थोड़ी देर बाद वह गया और खोल डाला।

अनुकूल की माँ की अचानक तबियत खराब हो गयी थी। रामउजागर के हाथ-पांव फूल गये। पहले तो उसकी समझ मे नहीं आया कि वह क्या करे। फिर ध्यान आया कि अनुकूल को घर जाना पड़ेगा। उसका क्या होगा? लेकिन तुरन्त ही उसने अपने-आपको सँभाल लिया। तार लेकर वह तत्काल उसकी क्लास की ओर चल

दिया। पहुँचा तो उसकी क्लास खत्म ही हुई थी। अनुकूल एक तरफ पड़ के नीचे अकेला खड़ा सुस्ता रहा। रामउजागर को देखकर वह उत्सुक हो उठा।

उसके पास आकर बोला, "कैसे आये द'दा ?"

रामउजागर को बताने मे परेशानी का अनुभव हुआ। उसने तार बढा दिया। अनुकूल तार पढ़ते ही रुआंसा हो गया, बल्कि उसकी आँखों से आँसू भी बह आये।

वह रामउजागर से बोला, "क्या करूँ द'दा ? माँ की हालत जरूर बहुत खराब होगी, तभी बाबू ने तार दिया है। माँ मेरे ही गम मे बीमार पडी है।"

"चले जाओ।" उसने लडखडाती आवाज मे कहा।

"कैसे जाऊँ ?"

रामउजागर पहले तो समझा नही। जब अन्दाज हुआ तो उसे नीलम्मा की याद सबसे पहले आयी। ऐसे समय वह अन्नपूर्णा हो जाती थी। लेकिन उसके बारे मे अब क्या सोचना। बीती हुई घड़ी है। उसके पास तीस रुपये थे। लेकिन·· वह क्या करेगा ?

वे दोनों साथ हॉस्टिल आये। रामउजागर रास्ते-भर उधेड़-बुन करता रहा। आखिर उसने अन्दर-ही-अन्दर अपने को तैयार कर लिया। कमरे मे आकर सबसे पहले उसने अपने बक्से से रुपये निकाले और उसकी तरफ बढा दिये।

"द'दा, तुम क्या करोगे ? पता नही मुझे वहाँ कितने दिन लग जायें। पीछे पता नही क्या जरूरत पड़ जाये ! खाने का इन्तजाम तक डावाँडोल है। पास पैसे होगे तो न सही दो वक्त, एक वक्त तो खाकर सो रहोगे।"

रामउजागर उसकी इस बात से और परेशान हो उठा। उसको लगा, अनुकूल अन्तर समझता है। वह बोला तो कुछ नही पर काफी देर तक चक्कर लगाता रहा। कोई उसे अपना नही समझता। आखिर वह उसके कमरे मे क्यों टिका है ? अनुकूल इतनी मुसीबत के समय भी उससे पैसे लेने में परहेज बरत रहा है ! कोई और रास्ता खोजना चाहिए···कोई और रास्ता खोजना चाहिए···कोई और रास्ता खोजना चाहिए···!

वह इसी बिन्दु पर अटका रहा। कौन-सा रास्ता खोजे ?

-

मेस-मैनेजर सूद पर रुपया चलाता था। अनुकूल ने उससे पहले भी रुपये उधार लिये थे। वह उसी से रुपये उधार लेकर चला गया। जाते हुए उसने रामउजागर को बता भी दिया।

"द'दा, आप परेशान न हों, मैनेजर साहब से रुपये का इन्तजाम कर लिया है। आपको जरूरत पडे तो आप भी उसी से ले लीजियेगा। लौटने पर हिसाब हो जायेगा। तकलीफ बिल्कुल न उठाइयेगा।"

रामउजागर ने इस बात का कोई जवाब नही दिया। अन्दर उतरते हुए उस बात ने जरूर एक नाली-सी काट दी।

अनुकूल को विदा करते समय बोला, "माँ की जितनी सेवा हो सके करना।" फिर कहा, "निरर्थकता का बोध अब और गहरा होता जा रहा है। मैं न किसी के

काम आ सकता हूँ और न किसी के दुःख-सुख में ही खड़ा हो सकता हूँ। अपने ही दुख को संसार का सबसे बड़ा दुख बनाये घूम रहा हूँ। कोई-न-कोई रास्ता निकालना पड़ेगा। अगर माँ ठीक हो जाये तो जल्दी चले आना। इस बीच मैं अपनी समस्या का कोई हल निकालने की कोशिश करूँगा।"

अनुकूल चला गया तो रामउजागर नितान्त अकेला हो गया।

रामउजागर को पहली बार महसूस हुआ कि अकेलापन कितना व्यस्त रखता है। एकान्त तो और भी ज्यादा। अनुकूल के आने की इन्तजार भी व्यस्तता का कारण थी। लेकिन व्यवधानहीन यह अकेलापन और भी ज्यादा व्यस्त रखने लगा। गोदी के बच्चे की तरह वह बीच-बीच में मुस्कुराने लगता था। कभी अतिरिक्त रूप से गम्भीर हो जाता था ''बहुत बार रुआँसा होकर घुटनों के बल बैठकर बँधे हाथों आसमान की तरफ देखने लगता था। बस अब रहम करो!

पहले जब अनुकूल के आने की बात होती थी, अँधेरा देर से उतरता था। अब वह उसी क्षण से उतरना शुरू हो जाता था जैसे ही उसे ख्याल आता था कि अनुकूल को आज नहीं लौटना है। अँधेरा दम घोटनेवाली गैस की तरह भरता जाता था। रक्त तक में घुल जाता था। कभी-कभी तो स्थिति यहाँ तक आती थी कि कमरे में जलती रोशनी तक अँधेरे में बदल जाती थी और वह कमरे से बाहर दौड़कर चला जाता था। रामउजागर और उस पूरे अँधेरे में कोई भेद नहीं रह गया था। दोनों एक-दूसरे में दो धाराओं की तरह सम्मिश्रित होते रहते थे।

खाने के वक्त जब उसे खाने का ख्याल आता था तो अन्दर-ही-अन्दर अनुकूल प्रकट हो जाता था। चलो खाना खाने। यहाँ वह उसका पिता था। पालन करनेवाले असली पिता का ख्याल एक कुप्पी की तरह उसके अन्दर उतरता जाता और वह सम्पूर्ण याद को उसके अन्दर उड़ेलने लगता। वह कभी कुछ नहीं था'''पिता ने ही उसे बनाया जब बनने लगा तो वह निर्माण का ताप सहन नहीं कर पाया। आवे में पकते-पकते खील-खील होकर बिखर गया। जिसके आवे में एक ही बर्तन हो और वही बिखर जाये तो ''क्या हो? नीलम्मा का वह सब कहना कि राम यह है'''। वह है'''राम कुछ नहीं है। वह बहकावा था। थोथा और अव्यावहारिक! सब धोखे में थे। अब भरम टूट रहे हैं।

धीरे-धीरे कमरे का दबाव बढ़ता जाता। कमरे में रखी चीजें उगे उठती, खड़ी होती'''मनुष्य का रूप धारण करती नजर आने लगतीं। वे उससे उसका परिचय पूछतीं ''तुम कौन हो? किस हैसियत से हो? यहाँ तुम्हारा अब क्या है? उसे लगता कि खन्ना की तरह वे भी उससे कह रही हैं कि तुम अश्लीलता का वही प्रतीक हो। जिसे सामने देखकर भद्र समाज शर्म से मुख मोड़ लेता है।

वह खिड़की के पास जा खड़ा होता। बाहरवाला लैण्डस्केप उससे जुड़ने लगता। वहाँ का सन्नाटा उसे बर्फ की चट्टान की तरह सर्द और अभेद्य महसूस होने लगता। उसे लगता कि वह सड़क कूटनेवाले इंजन की तरह उसकी तरफ धड़धड़ाता हुआ चलता चला आ रहा है।

पहले दिन रामउजागर कमरे में ही लेटा रहा। मेस के आदमी ने दरवाजा खटखटाया तो रामउजागर ने दरवाजा खोला। वह एकाएक समझ नही पाया कि वह क्यों आया है! अपने आप ही बोला, "अनुकूल बाबू तो घर गये, उनकी माँ बीमार है।"

वह आदमी बोला, "अनुकूल बाबू जाते हुए कह गये थे कि वे जा रहे हैं और आपके खाने का ध्यान रखूँ। आप खाना खाने नही आये तो मैं देखने चला आया।"

"मैंऽऽ!" रामउजागर ने आश्चर्य के साथ कहा। फिर बोला, "मैं तो बाहरी आदमी हूँ। लडके मेरे खाने पर एतराज करेंगे।"

वह हँसा, "रामउजागर भैया, किसन के होते किसकी हिम्मत है जो एतराज करे। यहाँ के लडके और हम लोग खाना खाकर सो जायें और आप इसी हॉस्टिल मे खाली पेट तड़पते रहें यह किसन के होते नही चलेगा। जो हो गया सो हो गया, अब ऐसा नही होगा।"

"वार्डन साहब के नये आदेशों का मैंनेजर साहब जिक्र कर रहे थे।"

"आने तो दीजिए उन आदेशों को। पहले उनका खाना बन्द होगा तब दूसरो का खाना रुकेगा। जैसे पिछली बार जाते हुए आप अनुकूल बाबू को सुपुर्द कर गये थे इसी तरह अनुकूल बाबू आपको हमारे सुपुर्द कर गये हैं। चलिए, खाना खत्म हो जायेगा।"

"चलूँ?" कहकर रामउजागर कुर्सी पर बैठ गया।

"हाँ-हाँ चलिए···। बैठ क्यों गये?"

"वहाँ और भी बहुत-से लड़के होगे···कहेंगे कि ···।"

"होगे तो क्या हुआ? हम भी तो होगे। कहने को उन्ही के पास जबान है, हमारे पास जबान नही!"

"तो चलूँ?"

"बार-बार क्यों पूछते है? आप वो ही राम बाबू हैं, मेस मे घुसते ही लडके घेरकर खड़े हो जाते थे।"

"अगर किसी ने टोक दिया?"

"तो हम उसे ठोक देंगे। आप हमारे आदमी है···आपकी तरफ आँख उठाकर देखेगा तो यहाँ खा और रह नही पायेगा। हमने तो अनुकूल बाबू को भी कहा था कि आप क्या ये खन्ना-वन्ना को बढावा देते हैं? उनकी बात तो हमारी समझ मे ही नही आती ···" हँसकर बोला, "ऐसी बात करते हैं जैसे इस दुनिया से उन्हें कुछ लेना-देना ही न हो। कहते है—अपना दुख अपने को सालता है। दूसरे को दिया दुख दोनों को सालता है। दो से अच्छा एक ही भोगे। दो क्यों भोगें? हैं तो छोटे पर पता नही बुद्धि की जड कहाँ तक फैली है! उनकी समझ मे इतना नही आता कि दुख से अपने को बचाने के लिए यह सब धन्धा होता है। आप भी तो तुरान की सोचा करते थे। वार्डन तक सलाह लेने आते थे···" वह चौंका। लेकिन किसन बोलता जा रहा था, "अब आप ऐसी बात करते हैं जैसे नया-नया दाखला लिया हो। आपने हमें भाई कहा। 'हाउस एलाउन्स' दिलवाया। छुट्टियों के लिए खाना-भत्ता बँधवाया। यहाँ का एक-एक मेसवर्कर आपके अहसान से दबा है। और आप

भूखे सोयेंगे ! लानत है हम पर । आपके दिल में ही हमारा दर्द रह सकता है, हमारे दिल में आपका दर्द नहीं रहना चाहिए ? रामउजागर भैया, आपको देखकर दिल दुखता है।"

रामउजागर उसे एकटक देख रहा था । किसन ने सहारा देकर उठाना चाहा। वह उठा । लेकिन फिर बैठ गया, "नहीं किसन, मत ले जाओ । टुकड़ा गले से नहीं उतरेगा । ऐसा करो, कैण्टीन में डबल रोटी और दूध ला दो ।" उसने पाँच रुपये का नोट उसकी तरफ बढ़ा दिया ।

"तो मैं यहीं थाली लाये देता हूँ ।"

"नहीं-नहीं, थाली मत लाना । सबकुछ तो हो गया, अब अपनी ही नजरों में चोर मत बनाओ । इस सृष्टि में सभी एक-दूसरे को चोरी करके खाते हैं--जानवर, वृक्ष, लता, पौधे, बादल'''केवल इन्सान को मेहनत करके खाने की अक्ल मिली है। अगर चोरी ही करके खिलाना होता तो ईश्वर मुझे इन्सान न बनाता ।"

किसन पहले खड़ा देखता रहा फिर पाँच रुपये का नोट लेकर चला गया ।

रामउजागर को नींद नहीं आ रही थी । रह-रहकर अन्दर बेचैनी की लहर-सी उठती थी । उसका मन होता था, वह जोर-जोर से चिल्लाये । बाहर निकलकर फ़ोहश-से-फ़ोहश गालियाँ बके । उन सबके कमरों के बन्द दरवाजे लात मारकर तोड़ दे जो दूसरों की सम्मान के साथ रहने की आजादी के दुश्मन हैं । उनसे कहे कि वह ऐसा नहीं होने देगा'''।

वह बार-बार उठता था । दरवाजे तक जाता था और लौट आता था । लौटकर उसकी परेशानी और बढ़ जाती थी । एक सवाल जमीन पर लेटे अजदहे की तरह पैरों से चढ़ना शुरू करता था और उसे कुण्डली में लपेटता हुआ सिर से ऊपर निकल जाता था । क्या वह आजादी के मुकाबले अपने जिन्दा रहने को ज्यादा तरजीह नहीं दे रहा है ? एक के बिना क्या दूसरी का कोई मतलब है ? इन प्रश्नों की कसावट उसको अन्दर से तोड़ने लगती थी । हड्डियाँ चटकती महसूस होती थीं । वह मेज पर मुक्के मारने लगता । नहीं, यह नहीं हो सकता । आजादी आजादी है, उस पर कोई गुञ्जलक मारकर नहीं बैठ सकता । अगर मैं चोरी से खाने से डरता हूँ तो मुझे जानवर की जिन्दगी बिताने की स्थिति से भी बचना होगा । ईश्वर के भय की तरह । नहीं तो यह अजगर चारों तरफ से जकड़कर मार डालेगा । वह अपने बाल खींचने लगता । कपड़े फाड़ने लगता । फिर नहीं'''नहीं'''करता हुआ फूट पड़ता ।

वह रोना उसके अन्दर एक दूसरी शुरुआत कर देता था । हताशा एक बिन्दु से शुरू होती और होते-होते इतनी विशालकाय हो जाती है कि जैसे जैनेटिक्स की प्रयोगशाला में कोई नया दरिन्दा छूटकर उसके अन्दर घुस गया है और उसके अन्दर निरन्तर विस्मार मचाये है । उसके हाथ-पैर ठण्डे पड़ने लगते और पेट छूटने लगता। बाहरवाला गहन अन्धकार कमरे में ही नहीं भरता बल्कि उसके अन्दर भी भर जाता । वे सब सुराख भी नजर आने बन्द हो जाते जिनके कारण तनक-मनक रोशनी का आभास बना रहता था ।

रामउजागर धीरे-धीरे अनुकूल के कमरे के रूप में उस कमरे की प्रतीति बिसार बैठा। वह मोहन का कमरा होता गया। पखे मे लटका मोहन'''नही यह मोहन नही ''अनुकूल है'''अनुकूल भी नही'''वह खुद है। हाथ हिल रहे हैं। वह अपने कन्धो पर उसे उतारने की कोशिश कर रहा है। इधर से थामता है तो उधर चला जाता है उधर से पकडता है तो इधर आ जाता है। पसीने से तर-ब-तर है, गला सूख गया है। कानो मे फुसफुसाहट पैदा होती है मत छुओ। यह तुम्हे लील जायेगा।

रामउजागर को अनायास लगा कि वह हिला और उसने उछलकर दोनो लातें उसके सीने पर ठोक दी। वह पूरी तरह उलट गया। फिर वह हवा मे उठने लगा और मोहन की जगह ले ली। न वहाँ मोहन है, न अनुकूल न कोई और। किसन खाना ले के आया तो उसने उसके साथ वही हरकत की जो उसके साथ हुई थी। थाल झनाझनाकर गिर पड़ा और जमीन पर घूमने लगा। किसन वहाँ नही था। उसके अन्दर से बदबू आने लगी सब भाग गये। अन्तत उसे अपने आप, अपने को उतारने के लिए मजबूर होना पडा। उस पर बड़े-बड़े कीड़े रेंग रहे हैं'' चेहरा गड्डमड्ड हो गया है। वह उसे पहचानने की कोशिश करता है'''अपने ही हाथो से वह छूटकर जमीन पर बिखर जाता है। दरोगा चिल्लाता है—झाड़ू-पंजर मँगाओ। बिखरकर बह रहा है'''जमीन पर लिहस जायेगा।

लोग इकट्ठे होने लगते हैं। बाहर से झाँकते हैं। सबकी नाक पर कपड़ा रखा है। वह पुकारना चाहता है कि चले आओ, अन्दर चले आओ'''यहाँ कुछ नही। उसकी जबान मोटी हो गयी। आवाज गायब। हाथो के इशारे से बुलाने की कोशिश करता है। हाथ लक्कड़ हुए-से मालूम पड़ते हैं। मोड़ जाम हो गये। अब मैं क्या करूँ? क्या मर जाऊँ? कोई मुझे पहचानने की कोशिश क्यो नही करता? यह जानने की कोशिश क्यो नही करता कि जिन्दा हूँ या मर गया? जिसे यह बदबू कह रहे है *जिन्दा होने की गन्ध है! जिन्दा होते हुए निरर्थकता की गन्ध!*

वह पागलो की तरह मेज की तरफ दौड़कर गया और मेज पर बैठकर नीलम्मा को चिट्ठी लिखने लगा। उसका हाथ सर्र-सर्र चल रहा था—

प्रिय नीलम्मा,

शायद अब तक मुझे भूल चुकी होगी। मैंने पहले पत्र का जवाब भी इसीलिए नही दिया था। लेकिन भूलने का सवाल ही कहाँ है? सवाल तो मेरे होने या न होने का है। अनहुए इन्सान को याद रखने या न याद रखने की बात ही नही होती। तुम समझती थी कि मेरे अन्दर कोई ऐसी छिपी रोशनी है जो अँधेरे मे दिशा-ज्ञान करा सकती है। वह रोशनी थी या आग मैं नही कह सकता ''जो कुछ भी था आत्महन्ता था। अब तो मैं अपने को तत्काल बुझी दियासलाई का फूल हूँ जो राख होने से पहले चमक रहा है। तुम और अनुकूल भुलावे मे थे और हो। दरअसल मैं वही था जो तुमने मुझे बाद मे समझा। एक रौ थी जो बरसाती थी'''निकल जाने के बाद फिर वही सूखा तल है। दरअसल तल ही रौ के निकल जाने का अहसास कराता है। एक छोटी बिसात की गंगाजली सम्पूर्ण नदी को अपने अन्दर भरकर उसे खाली कर देने का अहसास कराये तो तुम उसे क्या कहोगी? उस पर हँसी ही आयेगी ना?

हँसो'''मुझ पर हँसो।

बहुत ज्यादा लिख पाने की स्थिति में मैं अपने को नही पा रहा। पर लिख रहा हूँ जिससे यह न हो कि मैंने तुम्हारे पत्र का जवाब अपने ऊपर उधार रखा। तुम हमेशा मुझे याद आती रही हो। उसी दिन से जब से राजू गया। यह सम्पूर्ण विडम्बना मेरी अपनी ही रची हुई है। इस विडम्बना को समाप्त करने की जिम्मेदारी भी मेरे ऊपर ही है। जैसे-जैसे मुझे अपनी वास्तविकताओं का अहसास होता गया वैसे-ही-वैसे यह मेरे कब्जे के बाहर होती गयी।

हम हिन्दू हैं। हिन्दू ही पैदा होते हैं। जितना लेकर पैदा होते हैं उसमे रत्ती-भर भी घटा-बढा नही पाते। लेकिन कभी-कभी बहुत भारी पड़ जाता है।

लेकिन एक आशा भी बँधती है कि इस चौरासी लक्षी यात्रा में शायद कभी कही भिन्न परिस्थितियों में पैदा होने का सयोग मिल जाये।

तुम्हारा,
रामउजागर।

उसी के तत्काल बाद एक चिट्ठी अपने बापू को लिखी—

पूज्य बापू,

आपको याद होगा जब हम छोटे-छोटे थे तो आप एक छकडे मे बैठाकर मेला दिखाने ले जा रहे थे। छकडे मे घर का ही बछड़ा जुता था। बिजली की-सी तेजी से दौड़ता था। मुंडेर देखता था और न खेत। पैंनी तो उसे बर्दाश्त ही नही थी। सच पूछिए तो सडक से भी आगे-आगे चल रहा था। आप उसे थामने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन नयेपन का जोश! रस्सी की बन्दिश को कहाँ सेठता? उस रास्ते पर वह पहली बार खुला था। आपने सबसे कह दिया था कि सँभलकर बैठो। आप समझ रहे थे, क्या होनेवाला है। एक गड्ढे में पाँव डाल बैठा। गड्ढा गहरा था। हम लोग तो इधर-उधर बिखर गये। थोड़ी-बहुत चोटें भी आयी थी। लेकिन वह पैर गड्ढे मे फँसा लेने के बाद भी एक बार छकडे समेत उछला। उसी मे टाँग तोड बैठा। अब भी जब घर जाता हूँ और उस आग की लपट की तरह दौड़नेवाले बछेरे को दोनो पैर घसीटकर चलते देखता हूँ तो मुझे लगता है, हम दोनो मे बहुत फर्क नही। अनावश्यक शौर्य-प्रदर्शन के दौरान लगी इस तरह की चोटें कभी ठीक नही होती। मैं सोचता हूँ अगर वह उसी वक्त खत्म हो गया होता तो शायद उसे ये दिन न देखने पड़े होते।

कई बार कोई-कोई लौ कई रगो में जलने की कोशिश करती है। लेकिन उन रगो को बनाये रखना मुश्किल पडता है। अन्त मे काला धुआँ छोडती हुई बुझ जाती है। इन्ही बातो को लेकर ईश्वर से'''घृणा तो नही कहूँगा 'शिकायत होने लगती है'। ईश्वर के बारे मे घृणा शब्द से लोगो की भावनाओ को ठेस पहुँचती है। हमारा अनुकूल कहता है, अपने को चाहे कष्ट पहुँच जाय पर दूसरो को अपने मे कष्ट न पहुँचे। इसीलिए शिकायत शब्द का ही प्रयोग किया है। वैसे मन घृणा करने को ही होता है। इस ईश्वर

ने इस प्रकृति के लगभग हर हिस्से को ईर्ष्या, घृणा से मुक्त रखा। ईर्ष्या से चाहे न भी रखा हो घृणा से तो रखा ही। एक वृक्ष दूसरे वृक्ष से कभी ईर्ष्या नही करता। दूसरे वृक्ष को अपने निकट न उगने दे या सोचे कि वह क्यो लम्बा हो रहा है। जानवर दूसरे पर तब तक नही झपटता जब तक उसका हित सुरक्षित है। दूब कभी नही सोचती है कि दूसरी ओर की दूब को पानी न मिले। लेकिन मनुष्य को घृणा, ईर्ष्या, द्वेष का पिण्ड बनाकर धरती पर उतारा है। इस समय मुझे यही सब बातें तंग कर रही है। हो सकता है अपने भावातिरेक के कारण ठीक परिप्रेक्ष्य मे न सोच पा रहा हूँ। पर जो कुछ भी मैं सोच रहा हूँ वह इस समय बिल्कुल सही ही लग रहा है। जीवन का परम सत्य!

मेरी कमियो को अब तक आपने नजरअन्दाज किया इस गलती को भी नजरअन्दाज कर दे। जब आदमी सघर्ष के लिए ताल ठोककर मैदान मे उतरे और संघर्ष भारी पड़ने लगे तो उसे वापिस लौटकर नही जाना चाहिए। वही अपने को ढेर हो जाने देना चाहिए। अगर वह कायरता दिखाता है और बिना निर्णय के अपने को समेट लेता है तो कायरता उस आदमी तक ही सीमित नही रहती। महामारी के कीटाणुओ की तरह उसके कीटाणु भी हर एक पर आक्रमण करते हैं। जहाँ गुंजायश देखते हैं अपना घर बना लेते है। सम्पूर्ण समाज आज इसी का शिकार है। मैं अब किसी सुरक्षित खोह मे पनाह नही लेना चाहता। अपनी कायरता के इन कीटाणुओ को दूसरो पर घात लगाने के लिए हरगिज खुला नही छोड़ूँगा। आप माँ को समझा दें···।

आप हमेशा मेरे सिर पर आकाश की तरह रहे और माँ मुझे धरती की तरह सँभाले रही है। लेकिन मैं न आपकी अनन्तता को समझ पाया और न माँ की विशालता को। अपनी क्षुद्रता मे ही खोया रहा। यह-अवस्था समय की तरफ से अन्धी रहती है। जब आँखे खुलती है तो समय निकल चुका होता है। यह सबकुछ लिख लेने के बाद मुझे फिर लगने लगा कि इस सबका मतलब ही क्या है? खासतौर से अब! खैर!

बापू मुझे माफ करना। माँ तुम भी···

आपका बेटा,
रामउजागर

एक पत्र उसने अनुकूल को लिखा—

प्रिय अनुकूल,

आशा है माँ ठीक होगी। माँ-बाप बहुत बड़ी नियामत होते है। लेकिन अपनी आपाधापी मे हम उन्हे भूल जाते हैं। वे हमे कभी नही भूलते। हम-तुम भाग्यशाली है कि हमारी जिन्दगी मे अभी तक बाप सूरज और माँ चाँद की तरह उगे हैं। तुम तभी आना जब माँ ठीक हो जायें। माँ को बीमार छोड़कर तुम्हे किसी भी हालत मे यहाँ आने की जरूरत नही।

हाँ, तुम अक्सर मुझसे पूछा करते थे कि मैं खिड़की के पार उस अँधेरे लैण्डस्केप में क्या खोजा करता हूँ। दिन डूबने लगता था तो मुझ पर अजीब

जुनून-सा सवार होता था। कल्पना करने लगता था'''कल्पना क्या करने लगता था, वास्तव मे सोचने लगता था'''यह अँधेरा दिन-भर मेरे अन्दर निर्मित हुआ करता है और शाम होते-होते मेरे अन्दर से निकलकर बाहर फैलने लगता है'''पेड़ों पर, पत्तों पर, रास्तों और इमारतों पर'''यहाँ तक कि आकाश में से सूरज को ढकेलकर उसकी जगह स्वयं को स्थापित कर देता है। इस भावना को तुमसे बताता तो तुम सोचते, यह पिद्दी-सा आदमी अपने को न जाने क्या समझता है। वास्तव में मैं अपने अन्दर से निकलकर सम्पूर्ण सृष्टि मे फैलते उस अँधेरे को देखा करता था। जैसे प्रकाश सूरज से आता है''' इसी तरह अन्धकार भी किसी बिन्दु से ही आता है'' किसी भी कण से निकलना शुरू होकर और सारे संसार को ढक लेता है। वह मैं ही हूँ। मैं चाहता हूँ तुम प्रकाश के स्रोत बनो, वह तुमसे उपजे और'' अन्धकार को काटता हुआ सारे मे फैल जाये। वही बनना, बनना है।

अनुकूल तुम जानते हो और समझ भी सकते हो 'हम लोगो को विरासत में न तो हिम्मत मिली और न आत्मसम्मान। दूसरों की घृणा और अपनी निर्बलता व असहायता का घेरा हमे हमेशा से कसता रहा। किसी ने कभी तोड़ने का प्रयत्न किया ? नही। इसलिए हमे उसकी व्यूह-रचना सिखानेवाला भी कोई नही मिला। हर नौजवान मेरी ही तरह यही सोचकर आता है कि वह इस तिलिस्म को तोड़कर सब बन्धकों को मुक्त कर देगा। लेकिन किनारा छोडते ही मझधार तक पहुँचते-पहुँचते, वह एक ऐसी टूटी नाव हो जाता है जिसे किनारे पर वापिस लौट जाने के सिवाय कुछ नही सूझता। तुम उन नौजवानो से भिन्न हो। मैं उत्साह से जूझ रहा था, तुम समझदारी से लड़ रहे हो। उत्साह दियासलाई के पास ले जाया जानेवाला पटाखा मात्र होता है। तुम और नीलम्मा ने जो भी मेरे अन्दर देखा था, वह वही था।

तुम्हारी बात कहूँ तो तुम में अपनी परिस्थितियों के प्रति घृणा न होकर, बदलने की बेचैनी है। तुम्हारे अन्दर चिंगारी का-सा विद्रोह न होकर एक लम्बे संघर्ष का धैर्य है। तुम अन्दर से बदलने को बदलना समझते हो, मैं बाहरी परिवर्तन को परिवर्तन समझता था। मैं हर शुरुआत दूसरो के माध्यम से करना चाहता था, तुमने अपने आपसे की है। तुम्हारे कारण मैं गहराई में भी झाँककर देख सका। नही तो मन पर से ही बुहार लेने को पर्याप्त समझ बैठा था। लेकिन अब'''काफी देर हो चुकी।

ये बातें मैं नीलम्मा को भी लिखना चाहता था पर अब नही लिख रहा हूँ। मैं जानता हूँ मेरी अंजुली के लिए वह बहुत विशाल है। ठीक ही किया जो चली गयी। लेकिन तुम उसे समझाना कि वह लौट आये और अपनी पी-एच. डी. पूरी कर ले। इस समय मेरे सामने तुम और नीलम्मा दोनों ही हो। तुम पर्वत-खण्ड हो'''एक ठण्डी ज्वाला परतों को तोड़ती हुई बढ़ रही है। नीलम्मा एक अजस्र बहनेवाली धारा है। हर एक को शीतल करती बहती चली जा रही है। कही रुकना पसन्द नही करती। रुकावट आती भी है तो उसे पछाड़कर दूसरी तरफ से बचकर निकल जाती है।

जहाँ मैं जा रहा हूँ वहाँ से मैं तुम्हें निरन्तर देखता रहूँगा। मैं प्रसन्न हूँ कि तुम अपने रथ को एक कुशल सारथि की तरह निषेधों की हदों को लाँघते हुए बढ़ाये ले जा रहे हो। ईश्वर तुम्हें सफलता दे।

तुम मेरे बापू और माँ को समझाना और बताना कि मैं उनके ऋण से उऋण होने को आतुर था "लेकिन समय कम था। फिर आयेगा। नीलम्मा को मेरा स्मरण कराते रहना। शायद उससे मुझे और मेरी अन्तरात्मा को अच्छा लगे।

माँ के स्वास्थ्य के बारे में सूचना नही मिल सकी'''हो सकता है कल तुम्हारी चिट्ठी आये ''उसके लिए भी प्रतीक्षा करने का समय नही।

तुम्हारा,
रामद'दा

आखिरी चिट्ठी लिखकर उसने जेब मे रख ली—

मैं एक ऐसी यात्रा पर जा रहा हूँ जिसका रास्ता और स्वरूप आरम्भ में किसी भी यात्री को पता नही होता। या तो रास्ता खोजना पड़ता है या हो सकता है मिलता चला जाता हो। संन्यास के पहले जैसे सासारिक वस्त्र त्यागने पड़ते है उसी तरह इस यात्रा पर जाने का निश्चय करनेवाले को भी सम्बन्धो की लिपटी हुई रस्सी को ढीला करके उतार देना होता है। उस शरीर तक को जो मनुष्य के अस्तित्व का प्रतीक है। मेरा जाना स्वेच्छा से है। गवेषणात्मक है। हालाँकि उसका प्रतिफल दूसरो मे बाँट पाना सम्भव नही होगा।

किसी घृणा या शिकायत के कारण नही, एक आत्मीयता और आत्म-सन्तोष के कारण मेरा केवल यही प्रश्न है कि जब यह प्रकृति, जिससे हम सबकुछ पाते है, घृणामुक्त है तो मनुष्य मुक्त क्यो नही? हम जब कही कुछ नही पाते तो प्रकृति की शरण जाते हैं। वह हमे सबकुछ देती है। आप उन लोगो की आँखो मे आँखें डालकर देखें, निश्छल प्यार पाने के लिए वे कितना आतुर हैं। उसी की आशा में वे अपने भविष्य के स्वप्न बुन रहे हैं। लेकिन घृणा का सैलाब चिड़ियों के घोसलो की तरह उनका सबकुछ बहा ले जाता है। वे फिर बुनते है'''।

मुझे आगे बढने का अवसर नही मिला तो कोई बात नही। मैं एक बड़े अवसर की खोज मे अपने यान को प्रज्वलित कर चुका हूँ। जो लोग यहाँ के अवसर की लौ लगाये है उन्हे वे अवसर मोहैइया कराकर आप बडे होंगे। बहुत बडे। मेरी शुभकामनाएँ!

रामउजागर

वह कमरा खोलकर बाहर गया। आसमान स्वच्छ और निर्मल था। एक प्रकाश था जो दिशा-दिशान्तर मे फैला था। पता नही चल रहा था, कहाँ से आ रहा है। विस्तार-ही-विस्तार था। पहली बार ही उसने इस प्रकाश को देखा और अनुभव किया था। वह होठो-ही-होठो मे मुस्कुराया और बुदबुदाया'''चारो ओर आलोक-ही-आलोक है! यात्रा सुगम होगी। उसने एक चिट्ठी डाली और लौट पडा। ज्यादातर कमरो की रोशनी गुल हो गयी थी। दो-चार कमरो मे थी। उसे हँसी आयी। ऐसे

मे ऐसी रोशनियाँ कई बार अँधेरे स्थलों का काम करती है। यह महाप्रकाश इन सब अँधेरे विन्दुओ को आलोकित कर देगा !

लौटकर उसने कमरा वन्द किया और खिडकी से आसमान की तरफ देखने लगा। प्रकाश उसके अन्दर जा-जाकर जज्ब होता जा रहा था। उसने खिड़की भी वन्द कर दी। पर्दे गिरा दिये। पर्दों को आलपिनों से जड़ दिया। वह काफी देर तक अनुष्ठान की-सी तैयारी करता रहा। फिर स्टूल पर खड़ा हुआ। खडा रहा···खड़े-ही-खडे स्टूल एक तरफ लुढक गया।

अनुष्ठान पूरा हो गया था।

बारह

तत्काल चले आने के लिए अनुकूल का तार मिलते ही नीलम्मा चल दी थी।

अनुकूल को खबर पहुँचने मे दो दिन लग गये थे! अगर लड़के को न भेजा गया होता तो शायद हफ्ता-भर लग गया होता। अनुकूल पहुँचा तो सबकुछ निबट चुका था। घटना के बाद के अवशेष थे। आवेश, उत्तेजनाएँ और अवसाद। स्थानीय अखवारों मे रामउजागर ही रामउजागर था। संस्थान के अधिकारी कुछ नही बोल रहे थे। वे केवल यही कह रहे थे कि रामउजागर के प्रार्थना-पत्र पर विचार चल रहा था। अन्तिम निर्णय लिया जाना शेष था। उसने निर्णय पर पहुँचने का मौका ही नही दिया। जो कुछ हुआ उसके पीछे व्यक्तिगत कारण हैं। किसी के व्यक्तिगत मामलों के लिए कोई संस्था जिम्मेदार नही ठहरायी जा सकती।

नीलम्मा के आ जाने पर गतिविधियों में तेजी आ गयी थी।

नीलम्मा को स्टेशन से लाने के लिए प्रोफेसर मलकानी ने स्वय अपनी ड्यूटी लगा ली थी। वे अनुकूल को भी अपने साथ लेते गये थे। गाड़ी से उतरने के बाद नीलम्मा ने उन दोनो को चुपचाप खड़े देखा तो वह समझ गयी। वही-की-वही खड़ी रह गयी। वे दोनो उसके पास तक गये। प्रोफेसर मलकानी ने उसकी पीठ पर हाथ रखा तो उसके मन का शक और पक्का हो गया। वह कुछ देर तक उनकी बाँह पकड़े चुपचाप खडी रही। प्रोफेसर मलकानी की आँखें भी नम हो आयी थीं। अनुकूल आगे बढकर इंजन तक चला गया था। इंजन चूँकि नयी चलन का था इसलिए ऊपर से ठण्डा था। न धुआँ निकल रहा था और न किसी तरह की आवाज थी। ठहरा हुआ-सा खड़ा था। छत मे जरूर धुएँ का बारीक-सा शोशा था। वह

बहुत ही हल्की-सी सिसकारी के साथ निकल रहा था। जैसे दाँत भिंचे हो। लौटा तो नीलम्मा की आँखो मे एक तरह की तरलता शेष थी, जिसे उसने दबी नजरो से पहचाना। जब नीलम्मा ने उसकी तरफ देखा तो वह जमीन की तरफ देख रहा था।

प्रोफेसर मलकानी ने अनुकूल की तरफ इशारा करके कहा, "आज तीसरा दिन है अनुकूल को आये। मुझे नही लगता उसने कुछ खाया-पिया है। अगले दिन ही राम के पिता आ गये थे। आते ही यह उनकी देख-भाल मे लग गया। कल शाम ही गये है।"

नीलम्मा ने उसके पास जाकर कहा, "अनुकूल, तुम कुछ खा लो···इन्सान आदमी के बिना तो जिन्दा रह लेता है खाने के बिना ··नही ! कुछ मायनो मे खाना नजदीक-से-नजदीक आदमी से भी ज्यादा जरूरी होता है।"

अनुकूल कुछ नही बोला। नीचे किये-किये ही गर्दन हिलायी। वह उसका मतलब नही समझी।

प्रोफेसर ही बोले, "यह बेचारा तो अपनी माँ की बीमारी के कारण घर गया हुआ था। आदमी भेजकर बुलवाया गया है। बीमारी की हालत मे ही छोडकर आया है।"

"अब माँ कैसी है ?"

सिर्फ हाथ घुमाकर जवाब दिया—पता नही सब लोग खामोशी अख्तियार किये थे। जो कुछ बोल भी रहे थे मुँह से आधी-अधूरी बात ही बाहर आ रही थी। कुछ देर बाद अनुकूल ने थोडा-थोडा बोलना आरम्भ किया, "दादा एक लिफाफा छोड गये हैं···आपकी भी चिट्ठी है। अपने बापू को शायद वे स्वयं डाल गये थे··· उनके यहाँ आने के बाद घर से आदमी लेकर आया था।"

"मेरी चिट्ठी · !" कहा और चुप हो गयी।

प्रोफेसर मलकानी बीच ही मे बोले, "नीलम्मा, तुम चाहो तो मेरे घर पर ठहर सकती हो।"

नीलम्मा ने पहले कोई जवाब नहीं दिया। थोडी देर चुप रहने के बाद कहा, "हॉस्टिल का कमरा अभी छोड़ा नही था।"

मलकानी साहब ने सुझाव दिया, "अनुकूल, नीलम्मा को पहले सीधे वही ले चला जाय !"

"जी।" कहकर उसने गर्दन हिला दी।

नीलम्मा पहले तो चुप रही फिर वह उत्तेजना मे बोली, "नही, मैं वहाँ नही जाऊँगी। यह वह राम नही था जिसे मैं जानती थी। घुटने टेकनेवाला और पलायन करनेवाला राम मेरे लिए अपरिचित है।"

अनुकूल इस बार बोला, "नही नीलम्माजी, ऐसा नही। उसने किसी के सामने घुटने नही टेके। वह अन्य लोगो से भिन्न था। वह स्वयं अन्दर मे दहक रहा था। उसके सम्पर्क मे आनेवाले लोग उसकी झाँ महसूस करते थे। जो रास्ता उसे मिला उसी पर चल पड़ा। मौके पर चीज के मिल जाने की और बात के सूझ जाने की बात मुख्य होती है !"

प्रोफेसर ने अनुकूल को गौर से देखा और बोले, "अनुकूल ठीक कहता है। मौके पर जो भी सूझा ''वैसे वह काफी जूझा !"

"नही प्रोफेसर, यह सब मत कहिए। राम की जो तस्वीर मेरे दिमाग में आज भी है, यह सब कहकर उसे धुंधला मत कीजिए। मैं उसे अपराजेय मानती रहना चाहती हूँ। मुझे हमेशा से लगता है कि यह रास्ता सबसे आसान रास्ता है''कष्टकर चाहे हो।"

अनुकूल रोककर बीच में बोला, "कुछ लोग जाँच की माँग कर रहे है।"

"क्या खन्ना वगैरह ?"

"खन्ना तो उसी दिन से बाहर है।" रुककर बोला, "सुना है अब आनेवाला है।"

"तुम लोगो ने क्या सोचा ?"

"अगले बलिदान की तैयारी'''।"

नीलम्मा को लगा, उसके पाँव काँपने लगे। वह बेंच पर बैठ गयी। मलकानी साहब ने गम्भीरता से कहा, "मैं भी सोचता हूँ जाँच होनी चाहिए। इस घटना के बाद भी लोग जाग सकें तो रामउजागर का प्रयत्न सफल हो जायेगा।"

"कौन जागेगा ? हम लोग या वो लोग। जागना या सोना'''जो कुछ भी करना होता है वह वही करता है, जिसकी बाध्यता होती है। वैसे भी जागे हुए को जगाना मुश्किल होता है।"

प्रोफेसर बोले, "अच्छा चलो, पहले बाहर तो निकला जाय।"

वे लोग बाहर निकल आये। प्रोफेसर मलकानी की अपनी गाडी थी। खुद ही चला रहे थे। रास्ते-भर कोई कुछ नही बोला, बिना बोले परिसर पहुँच गये।

नीलम्मा अनुकूल के हॉस्टिल नही गयी तो नही ही गयी। अनुकूल ने चिट्ठी पढानी चाही। उसने वह भी नही पढ़ी। वह आते ही काम मे लग गयी। एक-एक अध्यापक से मिली। वह जिससे भी मिलती यही कहती थी कि राम ने तो आप सबको माफ कर दिया, आप लोग भी अपने गुनाह के प्रायश्चित के लिए कुछ करें। उसके चले जाने के बाद कुछ लोग हँसते थे। मजाक उड़ाते थे। वह बुखार ही कुछ ऐसा होता है कि दवा किये बढ़ता है। उसके रहते तो उतरने की कोई गुजायश थी ही नही। अब चले जाने के बाद भी कोई बात बन नही आती, कहा नही जा सकता क्या हो ! कही सरसाम न हो जाये। कुछ लोग सारा दोष राम पर ही थोपते थे। उसके अपने कर्मों का फल दूसरे भोग रहे हैं।

लेकिन उस माहौल मे भी कुछ लोग ऐसे थे जो इससे आगे भी सोच रहे थे। वे इन्सान को दो मुट्ठी मिट्टी और एक गाँठ लकडी तक ही सीमित नही रखना चाहते थे। कुछ लोग तो यह भी कहते थे -यह राम द्वारा की गयी आत्महत्या नही, समाज द्वारा की गयी हत्या है। वे अपने-आपको टटोलने के लिए बेचैन थे। ऐसे लोगों मे से कुछ छात्र और अध्यापक नीलम्मा के साथ राजधानी तक भी गये। अनुकूल ने कही भी जाने को मना कर दिया था। वह अपने साथियों और उनके

बिखरे हुए साहस को बटोरने लग गया था। जगह-जगह उसे आहत रामउजागर खडा नजर आता था। उसके लिए वह प्रेरणा भी था और भय भी। अनुकूल भय की उठती हुई उस चट्टान को काट डालना चाहता था। इस घटना के बाद दो-एक लड़को के घर वापिस लौट जाने की घटना ने उसे चिन्तित और परेशान कर दिया था। उसने अपने हथियारो पर पकड और मजबूत कर ली। उसके लिए यही रास्ता बचा था कि रास्ते से भय को कांटो की तरह बीन दे।

नीलम्मा और उसके साथियो के प्रयत्नो का नतीजा जल्दी निकल आया। एक वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी जांच करने के लिए नियुक्त कर दिया गया। फल की दृष्टि से अनुकूल बहुत पीछे छूट गया था। उसका दूर-दूर तक कही पता नही था। उसे अकेले ही चलना पड़ रहा था। रास्ते मे पडनेवाली बड़ी-बड़ी चट्टानो को काटकर रास्ता बनाना पड रहा था। वह नीलम्मा से यही कहता था, "नीलम्माजी, जांच से न कोई वापिस आ सकता और न इस तरह जानेवालो को ही रोका जा सकता है। सच पूछिए तो हम सभी रामउजागर है! रामउजागर बने रहकर हम मौत के इस शिकजे से कैसे बच सकते है? यह बात दूसरी है कि वह हमारी तरफ बढे ही नही। अगर बढी तो कोई बचाव नही। हमारी सबसे बड़ी जरूरत है कि उसे हम अपने लिए एक खेल बना ले।"

वह यह भी कहता था कि उसे तो ये सभी लोग पहले से ही वहां पहुंचे नजर आ रहे हैं। इन सबके और उस शिकजे के बीच मखनातीस का रिश्ता है। छोटी-छोटी लोहे की चिप्पियो की तरह चिपकने को उद्यत रहते हैं। यह रिश्ता ही टूटना जरूरी है।

नीलम्मा अनुकूल की बात सुन लेती थी और चुप हो जाती थी। उसे लगता था कि अनुकूल इस समस्या से कही बहुत गहरे जूझ रहा है।

इस बीच अनुकूल के पिता भी आये। उन्होने अनुकूल को बहुत कुछ कहा। नीलम्मा को भी बीच मे डाला। लेकिन अनुकूल अटल रहा। वह यही कहता रहा कि घर वापिस लौटकर अपने को सुरक्षित महसूस करने के स्थान पर हम लोग और अधिक अरक्षित हो जायेंगे। यह दूसरी तरह की आत्महत्या होगी। यह वक्त यही बने रहने का है। अपने अन्दर खुदे भय के इन कुओं से अपने को निकालकर उन्हें पाटने देने का है। राम द'दा को इसलिए छोड़कर चले जाना पडा क्योकि उनके पास कोई रास्ता नही बचा था। उससे बाहर निकल पाने के सब साधन समाप्त हो चुके थे। जब तक बाहर की लडाई लडते रहे, मैदान उनके हाथ रहा। अन्दर प्रवेश करते ही वे घिर गये। बाहर निकलने के सब रास्ते बन्द हो गये। अगर मैं यहां सुरक्षित नही रह सकता तो वहां भी नही रह सकता। यही वह खेत है, जहां हमे अपने-आपको खाद के रूप मे खपा देना है।

बाबनराम ने मृत्यु-शैया पर पड़ी मां का वास्ता भी दिया। अनुकूल ने गर्दन

झुकाकर आँखें पोंछ ली और बोला, "राम द'दा भी अपनी चिट्ठी में लिख गये हैं कि माँ-बाप से बड़ी नियामत दूसरी नहीं होती···लेकिन मैं क्या करूँ?"

नीलम्मा दंग थी। बावनराम नीलम्मा की ओर देख रहे थे। आखिर बावनराम को *खाली हाथ लौट जाना पड़ा। जाते हुए उन्होंने नीलम्मा से इतना ही* कहा, "लड़का हमारा नहीं रहा 'परिस्थितियों का हो गया। सब्र कर लेने के सिवाय रास्ता ही क्या है?"

नीलम्मा बिल्कुल खामोश हो गयी थी। कोई भी बात उसे बोलने के लिए प्रेरित नहीं करती थी। खासतौर से रामउजागर और अनुकूल के सन्दर्भ में।

जाँच-रिपोर्ट आने में लगभग छ: महीने लगे।

लगभग सभी ने अपने-अपने पक्ष में प्रमाण और गवाहियाँ दीं। नीलम्मा के नेतृत्व में छात्रों ने कोशिश की कि वे अपने पक्ष को मजबूती से रख सकें। लेकिन अनुकूल तटस्थ था। नीलम्मा के बार-बार जोर देने पर भी वह जाँच-अधिकारी के सामने उपस्थित नहीं हुआ। प्रशासन ने भी अपने पक्ष को प्रस्तुत करने के लिए कुछ उठा नहीं रखा।

जाँच-अधिकारी भी अपने आपको तटस्थ सिद्ध करने की जी-तोड़ कोशिश कर रहा था। लेकिन वह तटस्थता अन्त में तब टूटी जब प्रो. मलकानी की गवाही के समय उसने उत्तेजित होकर कहा कि कारण कुछ भी हो, पर एक ऐसे लड़के के लिए एक *संस्था को हाराकीरी के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। संस्था व्यक्ति से* बड़ी होती है। उसने प्रोफेसर के इस तर्क को भी नामंजूर कर दिया कि यदि एक व्यक्ति हत्या के लिए गुनहगार ठहराया जा सकता है, तो आत्म-हत्या के लिए समाज को दोषी क्यों नहीं ठहराया जा सकता? आत्महत्याएँ समाज के कारण होती हैं। उसके पीछे समाज न हो तो व्यक्ति क्या चीज है? तो आप पूरे समाज को फाँसी पर लटकवा देना चाहते हैं? *समूह या बहुमत कभी दोषी नहीं होता। उसका* फैसला चाहे एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों के हित में न भी हो। पर वह रिवायत बन जाती है।

प्रो. मलकानी ने अन्त तक हार नहीं मानी। उन्होंने अन्तिम तर्क दिया कि नौजवान अपने आपमें दिशाएँ होते हैं। एक नौजवान का चला जाना एक सम्पूर्ण दिशा को अन्धी गली में परिणित कर देता है। रामउजागर जैसे होनहार छात्र की मृत्यु एक सम्भावना की मौत है। रोशन होती दिशा का अँधेरे में खो जाना है। क्या इसलिए *इस तथ्य को नजरअन्दाज कर दिया जाना चाहिए क्योंकि उसने एक ऐसे* वर्ग में जन्म लिया या जहाँ किसी भी सम्भावना के जन्म लेते ही ''माँ-बाप उसका गला घोंट देने के लिए बाध्य हो जाते हैं या कर दिये जाते हैं?

जाँच-अधिकारी उठ गया था।

जब जांच-रिपोर्ट[1] आयी तो वह वही थी जिसकी आशा थी।

नीलम्मा को रिपोर्ट प्राप्त करने मे काफी परेशानी उठानी पडी। पहले उस रिपोर्ट का प्रोफेसर मलकानी और नीलम्मा ने मिलकर अध्ययन किया। फिर जी. बी. एम.[2] का आह्वान करके मुख्य-मुख्य मुद्दों को वहाँ स्पष्ट किया गया। जी. बी. एम. मे न चाहते हुए भी अनुकूल को सम्मिलित होना पडा।

नीलम्मा ने सबसे पहले अनुकूल को ही बोलने के लिए कहा। खन्ना ने तत्काल आपत्ति की, "यह जी बी. एम. एक साथी की मौत के सम्बन्ध मे की गयी जाँच की रिपोर्ट से अवगत करने के लिए बुलायी गयी है। लोगो के भाषण देने-सुनने के लिए नही।"

नीलम्मा ने उसे यह कहकर बैठा दिया, "मैं इस साथी के लिए आपकी भावनाओं से पूरी तरह परिचित हूँ। आपका सरोकार आपके हर व्यवहार से परिलक्षित है। आपकी भावनाओ की कदर करते हुए मैं आपसे यही निवेदन करूँगी कि अपनी भावनाओ को नियन्त्रित करके दूसरे साथियो की बातो को सुनने का धैर्य बरतें।"

लेकिन खन्ना ने फिर आपत्ति की, "अपने स्वार्थों के कारण एक ऐसे सकुचित विचारवाले व्यक्ति को 'लाइम-लाइट' मे लाकर हमारे लिए एक दूसरी त्रासदी उत्पन्न की जा रही है।"

अनुकूल उठकर जाने लगा तो नीलम्मा ने हाथ पकडकर रोक लिया और कहा "आप बेबुनियाद शकाओं को अपने दिल से निकाल दें। अनुकूल का ध्येय रोशनी में आना नही ''बाहर रहना है। आप चाहे तो.आप सारी रोशनी अपने ऊपर केन्द्रित कर सकते है।" लड़के हँस दिये।

अनुकूल को बोलने खडा होना पड़ा। उसका किसी जी. बी. एम. में बोलने का पहला मौका था। आरम्भ में वह चुपचाप खडा रहा जब अपने को संयोजित कर चुका तो बोला, "रामउजागर इंदा की मृत्यु के मसले पर इतनी लम्बी इन्तजार के बाद जो यह रिपोर्ट हमारे सामने आयी···अगर यह न आयी होती तो बेहतर होता। हम लोग तो सब्र कर ही चुके थे। अगर इतना ही होता कि हम लोग अपने-अपने गिरेबाँ मे झांक-झांककर देख लेते तो ज्यादा अच्छा होता। उसके लिए न इतनी इन्तजार की जरूरत थी और न इतनी मेहनत की। यह रिपोर्ट केवल हम लोगों की कमजोरियो और कमियों की तरफ इशारा करती है। यानी हम ही लोग उसके लिए जिम्मेदार ठहराये गये हैं। असली शिकायत उन्हे यही है कि रामउजागर नाम के लडके ने अपने-आपको तिल-तिल मरने देने के लिए उन लोगों के सुपुर्द क्यो नही कर दिया ? हालांकि वे पिछले कुछ महीनो से यही कर रहे थे। उनके हाथो तिल-तिल करके मर रहे थे। हम शायद उन्हे उस रूप में मरते देखने की मानसिकता बना चुके थे। चूंकि उन्होंने एकाएक ऐसा करके हमारी मानसिकता को झकझोर दिया इसलिए हम उनसे बेहद नाराज है। नाराजगी की बात भी है।

1. परिशिष्ट
2 जनरल बॉडी मीटिंग

किसी की भावनाओ और इच्छाओं को ठेस पहुँचाने का उन्हें या मुझे या किसी को भी क्या अख्तियार है ? उन्होंने अपने चिराग को इस उम्मीद में बुझाया है कि उनके बाद किसी और चिराग को इस तरह न बुझना पड़े। *यह* उनकी खामख्याली थी और सदाशयता भी। यही हालात रहे तो एक-के-बाद-एक इसी तरह सब चिराग बुझते जायेंगे…।" अनुकूल ने आगे बोलना बन्द कर दिया। थोडी देर चुपचाप खडा रहा फिर उसने अपना अन्तिम वाक्य कहा, "इस रिपोर्ट का आना एक साधारण-सी घटना को अतिरिक्त महत्त्व देना है। उन सब लोगो को यह रिपोर्ट और नाराज कर देगी जो पहले से ही नाराज हैं। अच्छा हो हम उसे भूल जायें "पर्दा डालकर हमेशा के लिए उसे ढांक दें। अगर कुछ करना चाहते हैं तो *बस एक बार अपने-अपने गिरेबाँ में झाँककर देख लें। वहाँ जो लहू-लुहान धरती है, उसे पोछ दें।* उन्होंने भी अपने सन्देश में यही सब कहा है।"

वह उतर आया। उतरा ही नही, बल्कि चुपचाप चला गया। नीलम्मा भी उठी और मच से उतरकर धीमे-से चली गयी। सब चुप थे।

परिशिष्ट

एक : जांच रिपोर्ट का खुलासा

दो : जांच-अधिकारी के नाम रामउजागर के पिता सुवरन चोधरी का पत्र

एक

जांच-रिपोर्ट लगभग छप्पन पृष्ठो की थी। दो मे लेकर चार-चार, छः-छः पृष्ठो के सात संलग्नक थे। चूंकि नीलम्मा ने उस रिपोर्ट का गम्भीरता से अध्ययन किया था इसलिए कही-कही हाशियो पर प्रतिक्रियास्वरुप एक-दो पक्तियां भी लिखी थी। रिपोर्ट का संक्षिप्त-सार और नीलम्मा की तत्सम्बन्धी टिप्पणियां इस प्रकार है—

पहले दो पैरा भूमिका को समर्पित थे। उनमे लिखा था कि 1980 की जनवरी में सस्थान के शासन द्वारा नियुक्त जांच अधिकारी को निदेशक ने अनुसूचित जाति के एक छात्र स्व. श्री रामउजागर द्वारा की गयी आत्महत्या के बारे में जांच करने के लिए आमन्त्रित किया था। उस निमन्त्रण के साथ इस दुखद घटना के बारे में एक सक्षिप्ती भी सलग्न की गयी थी। उसका उद्देश्य यही था कि जांच अधिकारी भी वस्तुस्थिति से अवगत हो सके।

प्रति-उत्तर में जांच अधिकारी ने निदेशक महोदय का ध्यान निम्नलिखित बातो की ओर आकर्षित किया—

आत्महत्या जांच का विषय नही हो सकता। केवल उसमे सम्बन्धित कुछ स्थितियो के बारे मे जांच की जा सकती है। जैसे :

(1) उक्त आत्महत्या मेहनत न कर पाने के कारण अपेक्षित परीक्षाफल की आशा समाप्त हो जाने के फलस्वरूप की गयी ? अथवा,
(2) संस्थान उसकी शैक्षिक समस्याएँ सुलझाने के प्रति उदासीन था ? अथवा,
(3) भेदभाव की नीति ने उसे ऐसा करने के लिए मजबूर किया ? अथवा,
(4) आत्महत्या के पीछे पारिवारिक कारण थे ? तथा
(5) यह दुर्भाग्यपूर्ण घटना भविष्य के लिए कोई सीख देती है या नही ?
[नीलम्मा ने हाशिये पर अपनी टिप्पणी दी थी कि जांच अधिकारी ने अपनी जांच के लिए स्वयं मुद्दे निर्धारित करके सस्थान को मुसीबत से बचा लिया।]

अनुच्छेद दो, चार-पांच पैरा का था। उसमे जांच अधिकारी द्वारा अपनायी गयी प्रक्रिया का खुलासा था। पहले पैरा में तो केवल सूचनाएँ संकलित की गयी

थी। मसलन पहली बार जांच अधिकारी संस्थान में कब पधारे? संस्थान ने उनका किस गर्मजोशी के साथ स्वागत किया! सम्बन्धित पत्राजात उपलब्ध कराकर उनकी कितनी मुश्किल आसान कर दी! जांच अधिकारी के आग्रह पर निदेशक ने जांच की सूचना का किस प्रकार संस्थान-भर में सामूहिक ऐलान कराया। तथा पहली बार में कितने लोग जांच अधिकारी से मिलने आये।

[निदेशक शब्द पर प्रश्नचिह्न लगा था और नीचे लिखा था—निदेशक ने क्यों? जांच अधिकारी ने क्यों नहीं?]

उसी तारतम्य में जांच अधिकारी ने शिक्षा मन्त्रालय के अधिकारियों का अनुग्रह स्वीकार किया था। शिक्षा मन्त्रालय के अधिकारियों ने रामउजागर से सम्बन्धित सम्पूर्ण पत्रावली उन्हें उदारतापूर्वक सौंप दी थी। रामउजागर की मृत्यु के बाद जो भी पत्र उसके पिता के द्वारा मन्त्रालय को लिखे गये थे वे सब भी मन्त्रालय ने संस्थान द्वारा नियुक्त जांच अधिकारी को सौंप दिये थे। जांच अधिकारी ने नम्रतापूर्वक स्वीकार किया था कि बिना उन पत्रों के जांच अधूरी रह जाती।

तीसरे अनुच्छेद में रामउजागर की व्यक्तिगत, पारिवारिक और शैक्षिक पृष्ठभूमि दी गयी थी। पारिवारिक पृष्ठभूमि के बारे में केवल दो पंक्तियां दी गयी थीं। रामउजागर का सम्पूर्ण परिवार कम पढ़ा परिवार है। चूंकि आजकल समाज के हर वर्ग में बच्चों को इंजीनियरी और डॉक्टरी में भेजने का फैशन-सा हो गया है, इसलिए उसके पिता ने भी इंजीनियरी के बारे में कुछ जाने-समझे बिना उसे ऊंचे स्तर के संस्थान के दाखले के लिए आयोजित संयुक्त-परीक्षा में बैठा दिया। इत्तफाक से रामउजागर उसमें सफल भी हो गया। यहीं से उसके दुर्भाग्य की कहानी आरम्भ हुई। श्री रामउजागर का दाखला 1975 जुलाई में हुआ था। हालांकि वह गरीब परिवार का बच्चा था। लेकिन अनुसूचित जाति के बच्चों के स्तर को देखते हुए रामउजागर सामान्यतः मेधावी बच्चा था। उसके पिता गांव के साधारण खेतिहर हैं। गांव में रहनेवाला हर व्यक्ति अपनी सन्तान को गांव से बाहर भेजकर एक सम्मानजनक पेशे में लगाने की उतावली में होता है। वही उसके पिता के साथ भी हुआ।

उसके आगे पांचों आई. आई. टी. में सामान्य छात्रों के प्रवेश की पद्धति और तत्सम्बन्धी नियमों का सविस्तार उल्लेख था। एक तालिका दी गयी थी जो यह प्रदर्शित करती थी कि पिछले पांच वर्षों में प्रवेश के लिए परीक्षा की सामान्य पद्धति से प्रवेश पानेवाले छात्रों के विभिन्न वर्गों के छात्रों की प्रतिशतता क्या है। पांच वर्षों में से चार वर्षों में तो अनुसूचित जाति के छात्रों की प्रतिशतता शून्य थी। केवल एक वर्ष में दशमलव पांच प्रतिशत का उल्लेख था। उस वर्ष अनुसूचित जाति में से अकेला रामउजागर परीक्षा में उत्तीर्ण होकर आया था। इन वर्गों के बच्चों के प्रवेश के लिए सीटों के आरक्षण की नीति निर्धारित करने के लिए आई. आई. टी. काउन्सिल द्वारा नियुक्त एक कमेटी की संस्तुति का जिक्र किया गया था। उक्त कमेटी ने कमजोर वर्गों के लिए स्पेशल कोचिंग का प्रबन्ध करने की बात कही थी। उसके लिए इन पांचों संस्थानों को जिम्मेदार बनाया था कि वे इसका प्रबन्ध करें। ऐसे बच्चों को प्रवेश के लिए आयोजित होनेवाली संयुक्त परीक्षा से

भी छूट दी गयी थी। दाखले का माध्यम उनके रिकार्ड को ही मान लेने की सस्तुति की थी।

इस सम्पूर्ण पृष्ठभूमि के बाद वे रामउजागर की 'पर्फोर्मेन्स' पर आ गये थे। उन सब कोर्सो का विस्तार मे उल्लेख था जिनमे रामउजागर की उपलब्धि नीचे स्तर की थी। यह भी बताया गया था कि इन कोर्सो की कमजोरी दूर करने के लिए रामउजागर को सस्थान के द्वारा कितने अवसर प्रदान किये गये। यहाँ तक कि उसके लिए स्पेशल कोचिंग तक का प्रबन्ध किया गया पर रामउजागर उन अवसरो का उचित लाभ उठाने मे असमर्थ रहा।

[एक पक्ति यहाँ पर भी टँकी थी—आश्चर्य! उन कोर्सेज का कोई उल्लेख नही जिनमे उसे 'ए' मिला है? वन साइडेड ऐडवायस्ड!]

चतुर्थ वर्ष के दौरान रामउजागर के अनपेक्षित व्यवहार के बावजूद सस्थान द्वारा बरती गयी सदाशयता, छुट्टी के मामले पर एस. यू. जी सी. और सीनेट के उदार निर्णयो पर लगभग दस पृष्ठो में चर्चा की गयी थी। शिक्षामन्त्री के द्वारा सस्थान के चेयरमैन को लिखे गये पत्र का अश भी उद्धृत था :

"यह पत्र अनुसूचित जाति के छात्र श्री रामउजागर के सम्बन्ध मे लिखा जा रहा है। उन्होंने अपनी अस्वस्थता के कारण संस्थान से छुट्टी ली थी। लेकिन पहले ही स्वास्थ्यलाभ कर लेने के बावजूद उन्हे छुट्टी निरस्त करके फिर से पढ़ने की अनुमति नही दी जा रही है। इस बारे में अल्पसख्यक आयोग के अध्यक्ष ने श्री रामउजागर के पिता के द्वारा लिखे गये पत्र की प्रतिलिपि भेजते हुए लिखा है कि सस्थान का प्रशासन भेद-भावपूर्ण नीति बरत रहा है। ऐसे मामले में सरकार की नीति के अनुसार सहानुभूतिपूर्ण रुख अपनायें तो मुझे प्रसन्नता होगी। जहाँ तक हो श्री रामउजागर की सहायता करने का प्रयत्न करें।

शिक्षामन्त्री के उपरोक्त पत्र को भी एस यू. जी. सी. को भेज दिया गया था। इस मामले पर विचार चल ही रहा था कि श्री रामउजागर ने एक गलत निर्णय लेकर अपनी जान गँवा दी। जाँच अधिकारी ने इस बात पर भी आश्चर्य प्रकट किया था कि उसने अपने इस निर्णय की भनक अपने निकटतम लोगो तक को नही मिलने दी।

["दिस इज नॉनसेन्स!" फिर आगे लिखा था। "और किसी को नहीं तो कम-से-कम जांच अधिकारी को तो बता ही देना चाहिए था। वे बेचारे इस परेशानी से तो बच जाते। पर जाँच अधिकारी तो बाद मे नियुक्त हुए!" उसके नीचे कलम से एक दाढ़ी-मूँछवाले आदमी का भोंडा-सा रेखाचित्र खिंचा था।]

रिपोर्ट मे आगे लिखा था कि रामउजागर ने आत्महत्या के पहले कुछ पत्र लिखे थे। उनमें से जो पत्र पढने को मिले उनसे पता चलता है कि वह आत्महत्या के लिए कटिबद्ध था। वह एक पूर्वनियोजित निर्णय था जिसको उसने अपने मेजबान श्री अनुकूल के घर जाते ही कार्यरूप मे परिणित कर दिया। उसके उन पत्रों में अनुसूचित जाति के छात्रो की समस्याओ का भी सकेत है पर उसका इस आत्महत्या से कोई मतलब नही जुड़ता। सिवाय इसके कि उसने अपने अन्तिम पत्र के अन्त मे

सभी लोगो से एक जनरल अपील की है कि वे ऐसे लोगो को अपनी सहानुभूति दें। श्री रामउजागर के उद्गार सराहनीय और अनुकरणीय है।

[लेकिन अनुसूचित जाति से जुडी समस्याओ का उसकी आत्महत्या से कोई सम्बन्ध नही ?]

रामउजागर की आत्महत्या के बारे मे इण्टेलिजेन्स की एक रिपोर्ट मन्त्रालय को भी प्राप्त हुई थी। इसी के चलते जाँच करना अनिवार्य हो गया। इस बारे मे केवल दो-चार पंक्तियाँ लिखी थी।

[कहाँ है वह रिपोर्ट ? बिना सलग्नक बनाये उसका उल्लेख कैसे कर दिया ?]

जाँच अधिकारी ने रामउजागर के मामले को वही छोडकर आई. आई. टी. के शिक्षण और उसकी विशिष्टताओ की पन्द्रह-सोलह पृष्ठो मे विवेचना की थी। विवेचना ही नही की थी, उसकी भूरि-भूरि प्रशसा भी की थी। इतनी सब प्रशंसाओ के बाद उन्होने यह स्वीकार किया था कि यह दुर्भाग्यपूर्ण घटना सम्पूर्ण सस्थान को हिला देनेवाली घटना साबित हुई। उससे पहले की आत्महत्याओ का भी उन्होने सरसरी तौर पर जिक्र किया था। लेकिन यह स्पष्ट कर दिया था कि अनुसूचित जाति के छात्र की वह पहली ही आत्महत्या थी। हर ऐसी घटना के बाद सम्बन्धित सस्थान को जवाबदेही के लिए कटघरे में खडा होना पड़ता है। चाहे उसका दोष हो या न हो। सस्था कभी व्यक्ति से शत्रुता नही निबाहती। संस्थान के सामने यह प्रश्नचिह्न अभी भी यथावत है कि जो कुछ उसके द्वारा किया जाना चाहिए, वह किया गया या नही ?

एक पैरा में यह सब लिखने के बाद फिर सस्थान में प्रचलित मूल्यांकन-पद्धति के विवेचन पर आ गये थे। एक और तालिका प्रस्तुत की गयी थी, जिसमे अन्य अनुसूचित एव जनजाति के छात्रो की उपलब्धियो की तुलना रामउजागर की उपलब्धियो से की गयी थी। उससे यह निष्कर्ष निकाला गया था कि सस्थान ने रामउजागर की ही सहायता नही की बल्कि सभी ऐसे छात्रो के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए संस्थान द्वारा समुचित प्रयत्न किये गये। यदि सस्थान की भाँति ही छात्र भी गम्भीर होते और अवसर का लाभ उठाते तो ऐसी स्थिति से बचा जा सकता था। पहले भी इस वर्ग के छात्र वक्तन-ब-वक्तन पढने आते रहे। यदि वे यहाँ के स्तर की समानता नही कर सके तो या तो स्वय चले गये; और निकाल दिये गये तो इस तरह नादानी के शिकार नही हुए।

[शिट ! दूसरे की ईमानदारी पर प्रश्न-चिह्न लगाना और निहित स्वार्थों के बावजूद अपने को ईमानदार साबित करना"'नानसेन्स !"]

जाँच अधिकारी ने सस्थान के अधिकारियो की उदारता की तथा शिक्षण एव मूल्याकन पद्धति की श्रेष्ठता की स्थान-स्थान पर दिल खोलकर प्रशसा की थी। और यह लिखा था कि रामउजागर के हर पत्र मे, चाहे वह निदेशक को लिखा गया हो या मन्त्रालय को, बराबर यही शिकायतें रहती थी कि सस्थान की शिक्षण एवं मूल्याकन पद्धति मे कमजोर वर्ग के बच्चो के लिए कोई स्थान नही है। यह पद्धति

उन्ही परिवारो के वच्चो को ध्यान मे रखकर निर्मित की गयी है जिन परिवारो मे उच्च एवं तकनीकी शिक्षा की परम्पराएँ है और जिन्होंने विरासत में इस तरह के संस्कार पाये है। यह पद्धति पिछडे-वर्ग के वच्चो के मस्तिष्क मे हीन-भावना पैदा करती है। उनको इस पद्धति मे परिचित होने मे ही पर्याप्त समय लग जाता है। जब तक वे इस पद्धति को समझ पाते है तब तक दो-तीन सेमिस्टर गुजर चुके होते हैं। उनके कन्धो पर 'बैकलॉग' का जुआ लद चुका होता है। ऐसी स्थिति मे न तो वे अगले सेमिस्टरो के कोर्सेज के साथ न्याय कर पाते है और न बैकलॉग से ही पीछा छुडा पाते है।

अपने पत्रो मे रामउजागर ने यह भी कहा था कि अध्यापक योग्य है। व्यवहार-कुशल हैं। लेकिन व्यक्तिगत स्तर पर इन छात्रो के साथ उनका व्यवहार वह नही रहता जो उच्च-वर्ग के छात्रो के साथ रहता है। वे उनके साथ आत्मीयता अनुभव नही करते। सभी अध्यापक विदेशों मे पढे हैं। अंग्रेजी भाषा ही पढाने और बात-चीत करने का माध्यम है। बचपन मे ही अग्रेजी स्कूलो मे पढनेवाले लडके ही उनके नजदीक पहुँच पाते हैं। उनका उच्चारण भी सीधा-सादा नही। वे लोग जबान मोड़कर अग्रेजी बोलते है। गाँवो और नीची आर्थिक स्थिति से आनेवाले लडके न तो उस उच्चारण को समझ पाते है और न ही उनके नजदीक पहुँचने की हिम्मत ही जुटा पाते हैं। क्योंकि अग्रेजी मे बात करना ही अभिजात्यता और योग्यता का चिह्न मान लिया गया है, इसलिए ऐसे सब छात्रो को हिकारत की नजर से देखा जाता है जो उस भाषा में पटु नही। वे लोग उनकी अकृपा के शिकार हो जाते हैं।

अंग्रेजी स्कूल में आनेवाले लडको का अध्यापको के बीच बँटवारा हो जाता है और वे अध्यापक अपने-अपने हिस्से मे आनेवाले बच्चो के 'गॉड-फादर' हो जाते हैं। उनमे से कुछ छात्र उच्छृखलता की उस सीमा को छूने लगते है जिसके तहत उन्हे किसी के साथ भी अमानुषिक व्यवहार करने मे हिचक नही होती। उन्हें अपने 'गॉडफादर' से संरक्षण मिलता है। वे जानते हैं कि उनके होते हुए उनका कोई कुछ नही बिगाड़ सकता। वैसे भी इस तरह की सस्थाएँ तब तक कानून की पहुँच से मुक्त हैं जब तक कानून का दरवाजा बार-बार न खटखटाया जाय। सामान्य जगहो की कानून अपने आप चक्फेरी लगाया करता है। कानून न भी खटखटाये तो भी उसका भय उन पर तारी रहता है।

रामउजागर के पत्रों का साराश देने के बाद जाँच अधिकारी, रामउजागर द्वारा उठाये गये उन सब प्रश्नो को नजरअन्दाज करके फिर सस्थान की शिक्षण और मूल्याकन पद्धति पर आ गये थे। उनका मत था कि एक छात्र के इस तरह के आरोपो के आधार पर सस्थान की अन्तर्हित खूबियो और उसके उच्च-स्तर पर प्रश्नचिह्न लगाना अनुचित होगा। उनका स्पष्ट मत था कि जिस तरह की पद्धति लागू है उसके आधार पर स्पष्ट कहा जा सकता है कि उसमे किसी भी प्रकार की निरकुशता की गुंजायश नही। सस्थान से निकले हुए छात्र बड़े-बड़े पदो पर आसीन हैं। विदेशों मे उनकी इतनी पूछ है कि इतनी पूछ कम सस्थाओ के छात्रो की होती है। स्वयत्तता सम्पन्न होने के बावजूद अनुसूचित एव जनजातियो के छात्रो की सहायता करने तथा उनका स्तर उठाने के लिए सस्थान ने अपनी वर्तमान पद्धति मे भी परि-

वर्तन किये है और कोशिश की है कि वे भी अन्य छात्रों के समान पढाई कर सकें। यदि सस्थान के अधिकारियो का ऐसे छात्रो से किसी प्रकार का वैमनस्य होता तो वे इन छात्रो के लिए अपने स्तर और पद्धति मे परिवर्तन न करते। फिर लिखा था कि स्व. श्री रामउजागर को इस तरह के आरोप रचते हुए इस बात का ध्यान रखना चाहिए था कि आई आई. टी. शिक्षण-पद्धति की शक्ति उसकी आत्म-निर्भरता, तटस्थता और निष्पक्षता है। यही कारण है कि जब पूरे राष्ट्र मे शिक्षा का ढाँचा चरमरा रहा है। आई. आई. टी. शिक्षण-पद्धति को सम्मान मिल रहा है। लोग इसे एक ऐसी पद्धति समझते है जिसके सहारे देश मे साइस और टेक्नालॉजी का विकास हो रहा है और आगे भी होगा। इन संस्थाओ से पढे छात्रों के लिए इनमे से हर एक सस्थान एक 'लाइट-हाउस' की तरह काम करता है।

[यह जांच अधिकारी नाम का इन्सान समस्या से जुडे मानवी तत्व की तरफ से पूरी तरह अन्धा है ''इसको नजरो मे दुर्व्यवहार कुछ नही। इन ह्यूमेनऽ!]

जांच अधिकारी ने एस. सी./एस. टी. छात्रो के बारे मे तैयार की गयी स्टेटस-रिपोर्ट का भी उल्लेख किया था। रामउजागर के आरोपो और उक्त स्टेटस-रिपोर्ट का साथ-साथ अध्ययन यही बताता है कि रामउजागर का अपना रुख संस्थान की गरिमा को कितना नीचे ला देता है। जांच अधिकारी निश्चित मत का था कि सस्थान के द्वारा किये गये प्रयत्नो से ऐसे छात्रो का स्तर उठा है। सुधार के लिए भी क्षमता की आवश्यकता होती है। जो लोग कुछ भी कर पाने मे असमर्थ होते हैं, सामान्यतः वे ही दूसरे पर कीचड उछालते है।

["अनकाल्ड फार'''क्या यह वही नही कर रहा है?"]

जांच अधिकारी ने रामउजागर के पिता की भेंट का भी उल्लेख किया। यह भी लिखा था कि उनके जांच अधिकारी नियुक्त हो जाने के बाद रामउजागर के पिता के भी एक-दो पत्र उन्हे मिले थे। (हालांकि उन दोनो मे से एक भी पत्र रिपोर्ट का संलग्नक नही बनाया गया था। किसी तरह एक पत्र उपलब्ध हुआ है जो परिशिष्ट-2 के रूप मे सलग्न है।) जांच अधिकारी ने अपनी बात कहने के लिए उनको संस्थान के खर्चे पर आमन्त्रित किया था। सुबरन चौधरी के आने-जाने का खर्चा देने के लिए प्रशासन की मुक्त कण्ठ से प्रशसा की गयी थी। उनके ठहरने का प्रबन्ध भी सस्थान द्वारा ही किया गया था। रामउजागर के पिता ने सस्थान के छात्रो द्वारा प्रकाशित एक बुलेटिन भी जांच अधिकारी के सामने पेश किया था। जांच अधिकारी ने लिखा कि ऐसा लगता है कि इस बुलेटिन का प्रकाशन राजनीति से प्रेरित छात्र-वर्ग करता है। उस बुलेटिन मे एक छोटा-सा उद्धरण भी दिया था :

"इस सस्थान मे वैसे तो वे सभी छात्र एस सी एम. टी. हैं जो गरीब, साधन-हीन और साधारण परिवारो से आने के कारण अपने रहन-सहन का स्तर अन्य उच्च-वर्ग के छात्रों के समान बनाये रखने मे नितान्त असमर्थ हैं। फिर भी एस. सी. एस. टी. छात्रो का जीवन यहाँ शोषण और दमन की कथा कहता है '''रामउजागर की आत्महत्या उसका ज्वलन्त प्रमाण है।"

कुछ अध्यापकों के नाम का उल्लेख भी किया गया था जो उस सम्पूर्ण दमन चक्र के पीछे थे। उसके बाद रामउजागर के पिता से हुई बातचीत का विवरण दिया था :

"स्व. श्री रामउजागर के पिता श्री सुबरन चौधरी अपने बेटे के बारे मे यह मान्यता बनाये है कि उनका बेटा असाधारण रूप से एक मेधावी छात्र था। उसके मेधावी और स्पष्टवादी होने के कारण कुछ प्रभावशाली छात्र और उनसे जुड़े अध्यापक उनके बेटे स्व. रामउजागर से ईर्ष्या करते थे। श्री सुबरन चौधरी अपने बेटे की आत्महत्या के इस घृणित काम को बलिदान की सज्ञा देते है। उनका कहना है, उनके बेटे का बलिदान सम्मानजनक और बराबरी के स्तर पर जीने के अधिकार की मांग को लेकर तथा भेदभावहीन समाज के निर्माण की जुस्तजू मे हुआ है। उन्होने उससे पहले एक सवर्ण छात्र स्व. श्री मोहन की आत्महत्या का भी उल्लेख किया। आत्महत्या के तीन-चार दिन बाद जब मोहन के शव को कोई उतारने के लिए तैयार नही हुआ तो उनके बेटे रामउजागर ने ही पखे से लटके शव को नीचे उतारा था। यही वह बिन्दु था जहां से रामउजागर के मानसिक असन्तुलन का आरम्भ हुआ। परन्तु यह घटना उन सब आरोपो मे अलग है जो स्व. श्री रामउजागर या उसके पिता ने संस्थान पर लगाये थे। सस्थान की इस तथाकथित ज्यादती से इसका कोई मतलब नही जिसका जिक्र वे लोग करते रहे है। इससे यह निष्कर्ष जरूर निकलता है कि रामउजागर ने मानसिक असन्तुलन के आलम मे आत्महत्या की थी। श्री खन्ना एव अन्य छात्रो के बयानो से पता चलता है कि स्व. श्री रामउजागर ने आत्महत्या किसी सवर्ण छात्रा के प्रेम में असफल हो जाने के फलस्वरूप की है।"

[इसके नीचे लिखा था—"अगर झूठ मे कोटियाँ होती है तो इसे किस कोटि मे रखा जाना चाहिए मि. जाँच अधिकारी ? कैलस एण्ड इन ह्यूमेन !"]

जहां तक मि. रामउजागर के मेधावी और योग्य छात्र होने का प्रश्न है यह बात रिकार्ड्स से उस हद तक सिद्ध नही होती जिस हद तक उसके पिता श्री सुबरन चौधरी मानते है। इन सस्थाओ मे देश-भर के मेधावी छात्र आते है। उनकी प्रतिशतता अस्सी-नब्बे प्रतिशत से कम नही होती। रामउजागर खींच-तानकर प्रथम श्रेणी के आसपास के छात्र थे, जो इस तरह के संस्थानो के बारे मे अत्यधिक साधारण घटना होती है। यह बात जरूर है कि स्व. श्री रामउजागर अपने वर्ग की दृष्टि मे जरूर मेधावी छात्रों की श्रेणी मे आते रहे होगे। जांच के दौरान स्व. श्री रामउजागर के विरुद्ध कई और भी बातें सामने आयी। गवाही देते समय कई सम्माननीय एव वरिष्ठ अध्यापको तथा मेधावी छात्रो ने यह बात कही कि रामउजागर गुण्डागर्दी करता था। ऊँची-जाति के लोगों को जानकर बेइज्जत करने की उसकी आदत पड़ गयी थी। वह ऐसा कोई अवसर नही चूकता था जो उसके इस उद्देश्य मे सहायक हो सके। उसने सस्थान-स्तर पर अपने वर्ग के लड़को को लेकर एक गुरिल्ला-दस्ता बना लिया था जिसका काम नियोजित ढंग से अन्य जाति के लड़के-लड़कियों के बीच भेदभाव पैदा करना और उन्हे अपमानित करना था। उसका नेतृत्व फर्स्ट-इयर के एक नये लडके श्री अनुकूल के हाथ मे था। अनुकूल राजनीतिक रूप मे एक मजबूत व्यक्ति है तथा वह अपने माथे पर बिना शिकन आने दिये ठण्डी तरह हत्या करने

तक की सामर्थ्य रखता है। उसने और उसके साथियों ने श्री शशि खन्ना और उसके साथियो को अपने कमरे मे बुलाकर उन पर आक्रमण किया। इस बात की पुष्टि कई वरिष्ठ अध्यापकों ने अपने बयानों में की। श्री रामउजागर का मन पढाई मे नही रहा था, वह अपना समय गुण्डागर्दी तथा गुटबन्दी मे लगाने लगा था। प्रेम में मिली असफलता ने उसे और अधिक बिखेर दिया। स्वभावत: वह मानसिक रूप से असन्तुलित हो गया।"

जांच अधिकारी ने रामउजागर के पिता श्री सुवरन चौधरी से मिली सूचना के आधार पर उनकी पारिवारिक स्थिति का ब्यौरा भी अपनी इस रिपोर्ट मे दिया था। उन्होने लिखा था :

"यदि इस घटना से अलग करके देखा जाय तो यह कहना पड़ेगा कि स्व. श्री रामउजागर अपने परिवार की रीढ था। उसके बेवक्त चले जाने से वह टुकड़े-टुकड़े हो गयी। किसी ऐसे परिवार का इकलौता बच्चा यदि इन परिस्थितियो मे उस परिवार को छोड जाता है तो यह समझ पाना कठिन होता है कि वह परिवार किस आशा पर अपने को जिन्दा रखेगा। श्री सुवरन चौधरी के परिवार मे उनकी पत्नी के अतिरिक्त पांच बेटियां है। बेटा केवल रामउजागर ही था। पांच बेटियां रामउजागर से छोटी है। हालांकि उनमे से तीन लडकियो की शादी हो चुकी। एक लडकी अपने नाना के पास रहती है। सबसे छोटी लड़की श्री सुबरन चौधरी के साथ है। रामउजागर की मां इधर अस्वस्थ रहने लगी है। जब से स्व. श्री रामउजागर की मृत्यु हुई तब से तो वे पूरी तरह बिस्तर से लग गयी। श्री सुवरन चौधरी रह-रहकर यही कहते है कि इस सस्थान का भेद-भाव उनके बेटे को खा गया। उन्हे और उनके परिवार को मिट्टी मे मिला दिया। इसमे कोई शक नही कि उनकी आर्थिक स्थिति एक ऐसे बिन्दु पर पहुँच गयी है जहां परिवार के सात प्राणियो का जीवित रहना तक कठिन हो सकता है। उनका भविष्य रामउजागर के भविष्य मे जुडा था। उन्होंने बीघा-बीघा जमीन बेचकर उसकी पढाई का खर्चा उठाया था। लेकिन देखते-देखते सबकुछ चला गया। रामउजागर के पिता ने स्पष्ट रूप से तो कुछ नही कहा। लेकिन उनकी बातो से यह निष्कर्ष निकलता है कि वे अपने बेटे की मौत का उचित मुआवजा चाहते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि कुछ माध्यमों से उन्हे कुछ आर्थिक सहायता भी मिली है। लेकिन वह इतनी अपर्याप्त है कि उससे चार-छः महीने का खर्चा चलना भी कठिन है। वे चाहते है कि इस पृष्ठभूमि मे ऐसी संस्तुति की जाय जिससे यह डूबता हुआ बेड़ा पार लग जाय। चूंकि जांच अधिकारी के नाते मैं इस तरह का कोई आश्वासन देने की स्थिति मे नही हूँ, इसलिए इतना ही आश्वासन दिया जा सका कि ईमानदारी और सच्चाई से संस्तुति तैयार की जायेगी। उनके साथ पूरा न्याय होगा। इस बात पर श्री सुबरन चौधरी नाराज होकर चले गये।"

[ईमानदारी, सच्चाई और न्याय शब्दो को लाल रोशनाई से रेखांकित किया गया था और उन पर एक-एक प्रश्नचिह्न टंका था।]

रिपोर्ट के अन्त में जांच के निष्कर्ष दिये गये थे :

1. इस तकलीफदेह और दुर्भाग्यपूर्ण घटना और उससे सम्बन्धित सम्पूर्ण

'एविडेन्स' का विश्लेषण करने के बाद यही निष्कर्ष निकलता है कि संस्थान द्वारा उसके या उसके साथ के अन्य छात्रो के साथ किसी प्रकार का भेदभाव बरते जाने का प्रमाण नही मिलता। इसके बरक्स गवाहियो से इस बात की पुष्टि होती है कि श्री रामउजागर और उसके साथी जातीयता के आधार पर सस्थान मे अस्थिरता उत्पन्न करना चाहते थे।

2. स्व. श्री रामउजागर अपने से अधिक योग्य और ऊँची जाति की लड़की से प्रेम करने लगे थे। उस लडकी को जब वास्तविकता का ज्ञान हुआ तो वह सस्थान छोड़कर चली गयी। इस घटना से मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। जिसकी वजह से वह मानसिक सन्तुलन खो बैठा। रामउजागर को मजबूरन छुट्टी पर जाना पड़ा। कुछ महीने बाद ही छुट्टी निरस्त कराकर वापिस आने की पेशकश की। मामला सम्बन्धित कमेटी के विचाराधीन था कि रामउजागर ने अधीर होकर आत्महत्या का रास्ता चुन लिया।

3. संस्था छात्रों के मामले मे सदा उदार रही है। किसी भी साधारण या आरक्षित श्रेणी के छात्र के प्रति कभी सस्थान ने अमानवीय रुख नही अपनाया, बल्कि छात्र ही आपस में एक-दूसरे के प्रति नकारात्मक रुख अपनाते रहे हैं। संस्थान का हर अध्यापक और छात्र मानवीय भावना से ओतप्रोत है। छात्रो और अध्यापको के बीच जितना तादात्म्य इस संस्थान मे है उतना बहुत कम शिक्षा-संस्थाओ मे देखने को मिलता है।

4. यह अवसर मृतक के दोष निकालने का न होकर इस वर्ग के छात्रों की समस्याओं और उनसे उत्पन्न होनेवाली स्थितियो को समझकर उनका हल निकालने का है। इस समस्या पर विचार और पुनर्विचार किया जाना चाहिए कि इतनी उदारता बरतते हुए भी सस्थान को इस प्रकार की समस्याओ का सामना क्यो करना पड़ता है? इससे राष्ट्र की समस्याएँ भी बढती है और विदेशो मे पूजे जाने-वाले जो विद्वान इस संस्थान से अध्यापक के रूप मे सम्बद्ध हैं उनके मन मे भी अनिश्चितता उत्पन्न होती है।"

उसके बाद कुछ सामान्य सुझाव थे।

यदि संस्थान ने इस प्रकार की समस्याओ पर समय रहते विचार करके कोई हल नही निकाला तो संस्थान को कभी भी कठिनाई मे डाला जा सकता है। इससे पूर्व कि इस खूबसूरत और विशिष्ट संस्थान को पिछड़े-वर्ग के मरघट का नाम दिया जाय वह बेहतर होगा कि किसी व्यावहारिक नीति का निर्माण कर लिया जाय। इस तरह के संस्थानो मे उसी स्तर के छात्रो को स्थान मिलना चाहिए जो उसकी गरिमा के अनुरूप हो। उबलते दूध का बर्तन उसी को थमाया जाता है, जिसके पास उसे थामने का साधन होता है। अन्यथा दूध भी बिखरेगा और सँभालनेवाला भी जलेगा। अगर सुधार की दिशा में कोई पहल नही की गयी तो इस मनोरम ताल का सम्पूर्ण जल गदला हो जायेगा।

एस. सी./एस. टी. के छात्रो को प्रविष्ट भी किया जाय तो उनको शुरू से ही उसके लिए तैयार किया जाना चाहिए, यह तैयारी उसी प्रकार की होनी चाहिए जिस प्रकार की तैयारी कैंडेट्स को कमीशन के योग्य बनाने के लिए जरूरी होती हैं।

रिपोर्ट के अन्त मे औपचारिकताएँ निबाही गयी थी। निदेशक तथा प्रशासन के अन्य सदस्यो को धन्यवाद दिया गया था। उनकी सदाशयता और सहयोग के लिए डटकर प्रशसा की गयी थी। जिन कर्मचारियों ने छोटे स्तर पर सहायता की थी उनकी सहायता को भी आभारपूर्वक स्वीकार किया गया था।

रामउजागर की आत्महत्या के कारण सस्थान के सम्मान को होनेवाली क्षति के प्रति खेद प्रकट करके रिपोर्ट समाप्त कर दी गयी थी।

[अन्त मे एक पर्चित चिपकी थी— और पहाड को कम्बल से ढँक दिया गया।]

दो

सम्माननीय जाँच अधिकारीजी,

आपकी चिट्ठी मिली। रामउजागर अंग्रेजी जानता था। अब वो तो रहा नही। बँचवाने के लिए मारा-मारा फिरता रहा तब जाकर बँचवा पाया। हिन्दी मे होती तो किसी-न-किसी तरह पूछ-पूछकर मै ही बाँच लेता।

श्रीमानजी, मै एक गरीब किसान हूँ। मैं जाँच-वाँच क्या जानूँ? किसी तरह मेहनत करके इसी उम्मीद मे अपना और अपने परिवार का पेट पालता था कि एक दिन रामउजागर पढकर आयेगा और हमे भूख और गरीबी के इस नरक से हमेशा के लिए उबार लेगा। हम इन्तजार ही करते रह गये। वह दिन आया ही नही। पता नही कहाँ खो गया? आपकी यह जाँच क्या मेरे बेटे को वापिस ले आयेगी? उसे तो मैं अपने हाथों फूंककर आया था। अगर ऐसा हो जाये तो मैं हजार जतन करके आपके पास पहुँचूँ। पाँच बहनों का अकेला भाई था। चौदह आँखो का तारा। सब रोती हैं तो बाढ-सी आ जाती है। अँधेरा छा जाता है। कोई किसी को राह से नही लगा पता। हम सभी उसी रोशनी की खोज मे भटक रहे है जो अचानक हमे भटकने के लिए छोड़कर हमेशा के लिए लोप हो गयी।

आप ही क्या उनसे अलग हैं जो हमें नीच समझते हैं? आपके लिए भी क्या *कोई हम इन्सान थोडे ही होगे? हमारा मरना-जीना आप लोगो को भी पता थोडे* ही चलता होगा। आप लोगो के बेटा-बेटी सौ साल तक जियें। एक बात बता दे कि अगर आपका बच्चा इस तरह चला गया होता तो क्या इस तरह जाँच करते-कराते *फिरते? सच कहता हूँ,* कालजा फूटकर गले को आ गया होता। पता नहीं आप लोगो के पास है भी या नही! होता तो इतना जरूर सोचते कि हम यह चिट्ठी लिखकर जख्मो पर नमक न छिडकें। हम और हमारे बच्चे आप लोगो की नजर मे जरूर नीच हैं। पर हम अपनी नजर में जरा भी नीच नही। हम जानते हैं कि इन्सान होते हुए हैवान बनकर रहने की परेशानियां क्या होती हैं। आप नहीं जानते। आप तो इसी गुमान मे जीते हैं कि आप लोग इन्सान ही पैदा होते हैं और

जिन्दगी-भर इन्स न ही बने रहते है।

आपके पास हमे देखने की कोई और नजर है ही नही। बस ये नीच है। इन्हे नीचो की तरह रहना चाहिए। इसलिए इस कुएँ से निकलने के लिए उचककर जो भी डाल पकडते है, उसे ही आप काट देते है। अगर मैं और मेरी औरत श्रवण के अन्धे माँ-बाप हुए होते तो आप लोगो को यह श्राप दिये बिना न मानते कि आप भी हम लोगो की योनि मे आकर एक बार हमारी तरह जिन्दगी को जरूर भोगे। बेसहारा आदमी की जबान ही मे जोर होता है। चल जाती है तो लौटती नही। लेकिन हम चुप है। आप हमें चुप भी नही रहने देना चाहते।

आप तो पढे-लिखे आदमी है आप ही बताइए। हमारे खानदान मे सैंकडो साल बाद एक आदमी पढने-लिखने को निकला था। सब लोग आस लगाये बैठे थे। रामउजागर की बहनें झकझोरकर पूछती है'' बापू, आप तो कहते थे कि भैया इंजीनियर बनकर आयेगा तो हम भी इन्सानो की तरह रहने के हकदार हो जायेगे'''बताइए मैं उन्हें क्या जवाब दूं? यही ना कि जाँच अधिकारी साहब जाँच कर रहे है। बतायेंगे। अब तो उसके फूलों तक का भी पता नही'''आप जाँच किस बात की करेंगे?

मैं अपना बयान देता हूँ'' इसी को मेरा बयान समझ लीजिए'' मेरे बेटे को बडे-बडे घरो और ऊँची-जात के लडकों और मास्टरो ने मरने के लिए मजबूर कर दिया। क्या आप मेरे कहे पर यह सब मान लेंगे? नही मानेंगे। तो फिर बुलाते क्यो है? आप भी अपने बच्चो और भाई-बिरादरो पर इलजाम लगाने पर बिदकते है। आप लोग तो यही कहेगे और कहते रहे है कि वह इसी लायक था'' रास्ता चलते लोगो को दौडकर काटता था। उसे जीने कैसे दिया जा सकता था। आप लोग यह कभी मानने को तैयार नही होंगे कि उसको मार डालने के लिए आप सबने फन्दा रचा था। उसे सम्मोहित करके उसी दिशा मे ले गये थे। मेरा यह सब कहना मात्र एक प्रलाप है। मेरी इन गदली आँखों के आंसुओ मे ज्यादा पवित्र आपकी हंसी है। आप सबके चेहरो पर इस हँसी का बना रहना जरूरी है। मैं भी उसे पोंछना नही चाहता क्योकि मुश्किल से मिलती है। वैसे भी हम लोगो की पीढियाँ आप लोगों की झूठ पर पली है। हम हजारो साल से आप लोगो की खैर मनाते आ रहे हैं। इसलिए हम आपका बुरा क्यो चाहने लगे? कभी-कभी यही लगता है कि गाँधी बाबा न आये होते तो अच्छा था। उन्होने ही हमे सोते से जगा दिया'''आशाएँ बढा दी'' नफरत और दमन ने अब यह रूप ले लिया।

-खैर, मैं किसी को दोष नही देना चाहता। अपने फूटे भाग्य की हँडिया को किसी के सिर फोड़ने मे क्या लाभ! पहले तो अपने रामउजागर के आने के चाव मे चीज-वस्त बेचकर हर सेल सेल सकता था। अब सोच भी नही पाता। आपके इस जाँच का सेल देखने आने का तो ना साहस है और न गुजायश। आखिर मुझे क्या मिलना है? जो खोना था सो खो चुका। आप जो अपनी किताब या कॉपी मे लिखना चाहें लिख लें। मुझे न बुलाये। बस एक बात कहना चाहता हूँ कि बाबनराम का बेटा अनुकूल देवता स्वरूप है। उसने मेरे बेटे की मुझसे भी ज्यादा देखभाल की। उसे न कुछ होने दें। अपने माँ-बाप के पास सही-सलामत पहुँच जाने दें।

अगर हम लोगो के होनहार बच्चे इसी तरह हर रोज आप लोगो के इस अनजान 'दाने' की भेंट चढ़ते रहेगे तो हम किसलिए जिन्दा रहेगे ?

आपकी चिट्ठी आती है तो पढनेवाला और जवाब लिखनेवाला ढूंढे नही मिलता। जवाब मे देर हो जाती है। अब न लिखें तो अच्छा है। जख्मो में से चस-सी निकल जाती है।

हाथ जोडकर सबकी सबको राम-राम।

विनीत,
रामउजागर का अभागा पिता
सुबरन चौधरी

०००